गंगानगर जिले में कृषि की नवीन तकनीकी का पारिस्थितिकीय प्रभाव

Impact of New Techniques of Agriculture on Ecology in Ganganagar District

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा
की पीएच.डी. (भूगोल)उपाधि हेतु प्रस्तुत
शोध–प्रबन्ध
सामाजिक विज्ञान संकाय

शोद्यार्थी कमल नावरिया

पर्यवेक्षक

प्रो. एस.सी. कलवार

सामाजिक विज्ञान संकाय
भूगोल विभाग

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा

अगस्त 2018

Registration-No. F6/Res/UOK/2013/16819-20 **Date:** 03/09/2013

Impact of New Techniques of Agriculture on Ecology in Ganganagar District

A

THESIS

Submitted for the Award of Degree of

DOCTOR OF PHILOSOPHY

(Geography-Faculty of Social Science)

Research Scholar Kamal Navriya

Supervisor
Prof. S.C. Kalwar

School of Social Science
Department of Geography
University of Kota, Kota

August - 2018

Candidate's Declaration

I hereby, certify that the work, which is being presented in the thesis entitled **"गंगानगर जिले में कृषि की नवीन तकनीकी का पारिस्थितिकीय प्रभाव"** in partial fulfillment of the requirement for the award of the Degree of Doctor of Philosophy, carried under the requirement for the award of the Degree of Doctor of philosophy, carried under the supervision of ***Prof. S.C. Kalwar*** and submitted to the Department of Geography in the faculty of social science, University of Kota, represents my ideas in my own words and where others ideas of words have been included. I have adequately cited and referenced the original sources. The work presented in this thesis has not been submitted elsewhere for the awards of any other degree or diploma from any Institutions. I also declare that I have adhered to all principles of academic honesty and integrity and have not misrepresented or fabricated or falsified any idea/data/fact/source in my submission. I understand that any violation of the above will cause for disciplinary action by the university and can also evoke penal action from the sources which have thus not been properly cited or from whom proper permission has not been taken when needed.

Kamal Navriya

Date:

This is certifying that above statement made by Kamal Navriya Registration No. F6/Res/UOK/2013/16819-20 is correct to the best of my knowledge.

Date: **Prof. S.C. Kalwar**

CERTIFICATE BY THE RESEARCH SUPERVISOR

I feel great pleasure in certifying that the thesis entitles ''गंगानगर जिलें में कृषि की नवीन तकनीकी का पारिस्थिकीय प्रभाव'' *by Kamal Navriya Under my guidance. He has completed the following requirements as per Ph.D Regulations of the University.*

(a) Course work as per the University ruls.

(b) Residential requirement of the university (200 days)

(c) Regularly submitted annual progress report.

(d) Presented his work in the Departmental committee.

(e) *Published/accepted minimum of two research paper*

(f) *in a referred research journal.*

Date:

Prof.S.C.Kalwar

आभार

जीवन के विभिन्न सोपानों में व्यक्ति सदैव किसी से भी कुछ न कुछ अवश्य सीखता है। यह अनुभव बचपन से अभी तक मुझे प्राप्त हो रहा है। उच्च शिक्षा में अध्ययन एवं शोध की जिज्ञासा अग्रजों के आशीर्वाद का फल है। इस शोध–प्रबन्ध में जिनका प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष सहयोग रहा है, उन्हें स्मरण करना मेरी सहज स्वाभाविक वृत्ति की सकारात्मक अभिव्यक्ति है। सर्वप्रथम मैं ईश्वर के चरण कमलों में नमन करते हुए उनके प्रति अपना आभार प्रकट करता हूँ जिनकी असीम अनुकम्पा ने मुझे शोध कार्य के योग्य बनाया उनकी कृपादृष्टि से ही प्रस्तुत शोध–प्रबन्ध सम्भव हो सका है।

मैं सौभाग्यशाली हूँ कि प्रस्तुत शोध ग्रन्थ मैंने कोटा विश्वविद्यालय, कोटा से पीएच.डी. की उपाधि हेतु भूगोल विभाग के सेवानिवृत्त विभागाध्यक्ष, परम आदरणीय **प्रो. एस.सी. कलवार** के प्रेरक नेतृत्व एवं आत्मीय निर्देशन में कार्य सम्पन्न किया है। उनके विद्वतापूर्ण सुझाव, रचनात्मक प्रवृत्ति, संवेदनशील भाषा, ज्ञान एवं प्रेमपूर्ण प्रोत्साहन के लिए शब्दों में आभार व्यक्त करना मेरे लिए सम्भव नहीं है। आपके निर्देशन एवं प्रेरणा के प्रति मैं हृदय से ऋणी, कृतज्ञ एवं आभारी हूँ। प्रस्तुत शोध कार्य आपकी अर्न्तदृष्टि एवं आशीर्वाद का ही प्रतिफल है।

डॉ. जे.पी. शर्मा, विभागाध्यक्ष, भूगोल विभाग, कोटा विश्वविद्यालय का आभार व्यक्त करता हूँ, जिनके विद्वतापूर्ण सुझाव, रचनात्मक प्रवृत्ति एवं प्रोत्साहन से यह शोध कार्य सम्भव हो सका है। मेरे गुरुजनों डॉ. ओ.पी. ऋषि, डॉ. जे.पी. शर्मा, डॉ. जे.पी. जाट, डॉ. सरीना कालिया, डॉ. अनिल भारद्वाज, डॉ. उषा जैन, डॉ. वन्दना त्यागी, सेवानिवृत्त विभागाध्यक्ष प्रो. बी.बी.एल. शर्मा, डॉ. एस.एस. चौहान निदेशक, क्षेत्रीय विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, भोपाल),

डॉ. एम.एस. खत्री, श्री वेद प्रकाश यादव, श्री पी.आर. बिन्दा, श्री सम्पर्क जी के प्रति अपना आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने समय–समय पर उचित मार्गदर्शन देकर प्रस्तुत शोध कार्य को पूरा करने में सहयोग दिया।

परिवार प्रगति के पथ की प्रथम सीढ़ी होती है। जिनके सहयोग के बिना सम्भवतः कामयाबी के द्वार नहीं खुलते। मैं, आकाश की तरह विशाल हृदय परमात्मा में असीम श्रद्धा रखने वाले ईमानदार व्यक्तित्व सागर की तरह शान्त, धीर गंभीर मन वाले, अपार स्नेहमयी तथा हमेशा जीवन में प्रगति के पथ पर आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करने वाले पूज्यनीय अपने पिता श्री राधेश्याम नावरिया एवं प्रेरणा, स्नेह की प्रतिमूर्ति अपनी ममतामयी माताजी श्रीमती विद्या देवी का भी हृदय से आभारी हूँ एवं जन्म–जन्मान्तर तक ऋणी रहूँगा क्योंकि उन्हीं की प्रेरणा, सहयोग एवं विश्वास से आज मैं शिक्षा की इस वृहद सीढ़ी पर खड़ा हूँ।

मैं मेरे बड़े भाई डॉ. चन्द्रप्रकाश महेन्द्रवारिया, श्री भुवनेश नावरिया, भाभी श्रीमती हेमन्त सामरिया, बड़ी बहन डॉ. मंजू नावरिया, डॉ. अंजू नावरिया का भी आत्मीय रूप से आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने मेरे शोध कार्य में मित्रवत् सहयोग दिया, आत्मविश्वास को बनाये रखा, मेहनत करने की शक्ति प्रदान की है। उनके सकारात्मक सहयोग के बिना शोध कार्य को पूर्णता प्रदान करना असम्भव था। उनका हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ। मेरे मित्रगण डॉ. विजय बेनीवाल, डॉ. राकेश कुमार, डॉ. जितेन्द्र कुमार रावत, डॉ. विनोद कुमार, सुनित पहाड़िया, कमलेश कुमार मीणा, जयपाल गढ़वाल, अरविन्द भैड़ा, विपिन चित्तोडिया, सुनित पहाडिया का असीम सहयोग मिला साथ ही कोटा विश्वविद्यालय के भूगोल विभाग के शैक्षणिक एवं अशैक्षणिक कर्मचारीगणों, कोटा विश्वविद्यालय के केन्द्रीय पुस्तकालय एवं उसके समस्त कर्मचारीगणों के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ जिन्होंने प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के लिए उपर्युक्त आंकड़े उपलब्ध करवाये तथा मेरी सहायता की। मैं अपने परिवार के सभी

सदस्यों के प्रति हृदय से आभारी हूँ जिन्होंने स्नेह एवं सहयोग प्रदान कर गन्तव्य तक पहुँचाया। मैं उन समस्त विद्वानों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ जिनके ग्रन्थों तथा सद्विचारों का अपने शोध प्रबन्ध को पूर्णता तक लाने में सहयोग प्राप्त किया है।

इसके साथ ही मैं श्री राकेश शर्मा कम्प्यूटर ऑपरेटर, मैसर्स टी.वी.के. कम्प्यूटर्स, जयपुर का भी धन्यवाद करता हूँ जिन्होंने समय पर सुरूचिपूर्ण टंकण का कार्य सम्पन्न किया।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में जो कुछ संग्रहित एवं संकलित कर विवेचित किया गया, वह नवीन है और इसकी कमियां मेरी बौद्धिक क्षमता की सीमाऐं हैं।

✍ **कमल नावरिया**

अनुक्रमणिका

अध्याय	विवरण		पृ.सं.
1.	**प्रस्तावना**	:	**1–25**
1.1	सामान्य परिचय		
1.2	कृषि तकनीक का प्रसार एवं विकास		
1.3	साहित्य समीक्षा		
1.4	अध्ययन के उद्देश्य		
1.5	परिकल्पनाए		
1.6	अध्ययन क्षेत्र		
1.7	आंकड़ों के स्रोत विधि तंत्र		
1.8	मानचित्रण की विधियाँ		
2.	**भौगोलिक पृष्ठभूमि**	:	**26–84**
2.1	स्थिति एवं विस्तार		
2.2	भूगर्भिक संरचना		
2.3	भौतिक स्वरूप		
2.4	उच्चावच एवं प्रवाह क्षेत्र		
2.5	मृदा		
2.6	जलवायु		
2.7	बाढ़ व अकाल की स्थिति		
2.8	प्राकृतिक वनस्पति		
2.9	खनिज संसाधन		
2.10	जनसंख्या संसाधन		
2.11	स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व जनसंख्या		
2.12	जनसंख्या धनत्व व वितरण		

2.13 मुख्य कार्यशील, सीमान्त व अकार्यशील जनसंख्या वितरण

2.14 अनुसूचित जाति व जनजाति

2.15 साक्षरता

2.16 जनसंख्या लिंगानुपात

2.17 गणितिय घनत्व

2.18 कृषि घनत्व

2.19 कार्यिक घनत्व

2.20 पोष्टिक घनत्व

2.21 यातायात

3. भूमि प्रारूप : 85–122

3.1 भू–उपयोग

3.2 शस्य गहनता

3.3 स्वामित्व के अनुसार कृषि जोतों की संख्या एवं क्षेत्र

3.4 कृषि

3.5 भूमि अपक्षय

3.6 शस्य संयोजन प्रदेश

3.7 शस्य विधितंत्र

4. सिंचाई स्रोत : 123–156

4.1 सिंचाई की आवश्यकता के कारण

4.2 सिंचाई सुविधाओं का विकास

4.3 सिंचाई के साधन

4.4 फसलों के अनुसार सिंचाई

4.5 शुद्ध सिंचित क्षेत्र

4.6 शुद्ध सिंचाई

4.7 सिंचाई सुविधा

4.8 जल उपयोग हेतु प्रयास

4.9 जल संचयन समय की मांग

4.10 जल संचयन

4.11 सिंचाई प्रबंध एवं प्रशिक्षण

5. कृषि में नवीन तकनीकी का उपयोग : 157–186

5.1 यान्त्रिक शक्ति निवेश

5.2 लोहे के हल

5.3 ट्रैक्टर

5.4 बिजली द्वारा संचालित पम्प सेट

5.5 डीजल पम्प

5.6 यांत्रिक ऊर्जा

5.7 उन्नतम किस्म बीज एवं रासायनिक उर्वरकों का उपयोग

5.8 उर्वरकों का उपयोग

5.9 जैविक कृषि का महत्व एवं जलग्रहण कार्य

5.10 जैविक विधि से पोषक तत्व प्रबन्ध

5.11 बीमारियों का प्रबन्ध

5.12 जीवाणु खाद का उपयोग के लिए प्रशिक्षण

5.13 किसान मित्र कीटों का संरक्षण व वितरण

6. कृषि पारिस्थितिकी : 187–201

6.1 कृषि पारिस्थितिकी

6.2 शुष्क कृषि

6.3 सिंचित कृषि

6.4 कृषि में सिंचाई की आवश्यकता

6.5 सिंचाई के मुख्य स्रोत

6.6 सिंचित कृषि का प्रादेशिक प्रारूप

6.7 सिंचित कृषि की मुख्य समस्याएँ

7. कृषि में नवीन तकनीकी का पारिस्थितिकीय प्रभाव : 202–229

7.1 कृषि में नवीन तकनीकी के तत्व

7.2 कृषि के नवीन उपकरण

7.3 कृषि नवीनीकरण का कृषि पर प्रभाव

7.4 शस्य प्रारूप में परिवर्तन

7.5 शस्य उपज एक उत्पादन में वृद्धि

7.6 कृषि का नवीनीकरण एवं पर्यावरणीय ह्रास

7.7 पर्यावरणीय ह्रास की संकल्पना

7.8 पर्यावरणीय ह्रास के कारण

7.9 पर्यावरणीय ह्रास के चयनित आयाम

7.10 भूमिगत जलस्तर की गिरावट

8. कृषि में नवीन तकनीकी का स्तर मापन एवं कृषि पारिस्थितिकी : 230–240

सारांश, निष्कर्ष एवं सुझाव : 241–269

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची i-xi

परिशिष्ट

मानचित्र सूची

मानचित्र संख्या	मानचित्र		पृ.सं.
2.1	स्थिति एवं विस्तार	:	29
2.2	प्रशासनिक मानचित्र	:	30
2.3	चट्टाने एवं खनिज	:	31
2.4	भौतिक स्वरूप	:	33
2.5	उच्चावच एवं ढ़ाल	:	39
2.6	मृदा	:	41
2.7	औसत वार्षिक वर्षा	:	46
2.8	जनघनत्व	:	63
2.9	मुख्य कार्यशील जनसंख्या	:	64
2.10	व्यवसायनुसार आर्थिक क्रियाकलापों में जनसंख्या	:	67
2.11	अनुसूचित जाति जनसंख्या	:	74
2.12	अनुसूचित जनजाति जनसंख्या	:	74
2.13	साक्षरता	:	75
2.14	जनसंख्या लिंगानुपात	:	76
2.15	यातायात	:	81
3.1	भूमि उपयोग	:	86
3.2	वन	:	93
3.3	पड़त भूमि (चालू एवं अन्य पड़त भूमि)	:	95
3.4	शुद्ध बोया क्षेत्र	:	97
3.5	शस्य गहनता	:	99
3.6	खाद्य फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र	:	108

3.7	गेहूँ के अन्तर्गत क्षेत्र	:	108
3.8	जौ के अन्तर्गत क्षेत्र	:	109
3.9	दालों के अन्तर्गत क्षेत्र	:	109
3.10	चना के अन्तर्गत क्षेत्र	:	109
3.11	तिलहन के अन्तर्गत क्षेत्र	:	109
4.1	नहर प्रणाली	:	130
4.2	गंगनहर प्रणाली	:	132
4.3	नहरों द्वारा शुद्ध सिंचित क्षेत्र	:	134
4.4	नलकूप द्वारा शुद्ध सिंचित क्षेत्र	:	135
4.5	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	:	142
4.6	सिंचाई गहनता	:	149
5.1	लोहे के हल	:	162
5.2	ट्रैक्टरों की संख्या	:	163
5.3	बिजली पम्पसेट्स की संख्या	:	164
5.4	डीजल पम्पों की संख्या	:	165
8.1	कृषि की नवीनीकरण	:	238

तालिका सूची

तालिका संख्या	तालिका		पृ.सं.
2.1	जिला गंगानगरः तहसीलों की स्थिति एवं भौगोलिक विवरण	:	28
2.2	जिला गंगानगरः प्रशासनिक परिवेश	:	29
2.3	तहसीलवार भू स्वरूपों का विवरण	:	36
2.4	जिला गंगानगरः मृदा प्रकार व वितरण	:	40
2.5	जिला गंगानगरः औसत वार्षिक वर्षा (1998–2014)	:	44
2.6	जिला गंगानगरः तहसीलवार वर्षा (2014)	:	45
2.7	विभिन्न स्टेशनों पर वार्षिक वर्षा की संभाव्यता	:	47
2.8	जिला गंगानगरः औसत मासिक सापेक्षित आर्द्रता (2014)	:	50
2.9	जिला गंगानगरः वार्षिक तापमान (2001–2012)	:	51
2.10	जिला गंगानगरः वनों का वितरण (2003–14)	:	54
2.11	जिला गंगानगरः खनिज उत्पादन (2003–2008)	:	55
2.12	जिला गंगानगरः दशकीय जनसंख्या वृद्धि (1931–2011)	:	57
2.13	जिला गंगानगरः स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व जनसंख्या वृद्धि	:	58
2.14	जनसंख्या 2011	:	60
2.15	मुख्य कार्यशील, सीमान्त व अकार्यशील जनसंख्या वितरण (2011)	:	64
2.16	व्यवसायनुसार अथवा आर्थिक क्रियाकलापों में जनसंख्या का वितरण (2011)	:	68
2.17	अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति जनसंख्या (2011)	:	72
2.18	साक्षरता दर (2001–2011)	:	74
2.19	जनसंख्या लिंगानुपात (2011)	:	75

3.1	गंगानगर जिले का भू–उपयोग (2014–15)	:	88
3.2	गंगानगर जिले में वन क्षेत्र (2014–15)	:	93
3.3	गंगानगर जिले में बंजड़ भूमि (2014–15)	:	94
3.4	गंगानगर जिले में पड़त भूमि (2014–15)	:	95
3.5	गंगानगर जिले में कृषि अयोग्य भूमि (2014–15)	:	96
3.6	गंगानगर जिले में वास्तविक बोया गया क्षेत्रफल (2014–15)	:	97
3.7	स्वामित्व के अनुसार कृषि जोतों की संख्या व क्षेत्रफल (2006–07)	:	99
3.8	गंगानगर जिले में प्रमुख फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल (हैक्टेयर)	:	102
3.9	प्रमुख फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल का वितरण (2010–11) हैक्टेयर में	:	113
3.10	वीबर विधि द्वारा शस्य संयोजन की गणना चरण	:	113
3.11	प्रमुख फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल का विवरण (2000–2001)	:	116
3.12	दोई द्वारा निर्धारित शस्य संयोजन हेतु क्रांतिक मान तालिका	:	116
3.13	सामयिक और क्षेत्रीय शस्य सम्मिश्रण	:	117
4.1	गंगानगर जिले में साधनों के अनुसार विशुद्ध सिंचित क्षेत्रफल (हैक्टेयर में)	:	131
4.2	प्रमुख फसलों में जल आवश्यकता (मि.मि.)	:	139
4.3	गंगानगर जिले में सकल सिंचाई (प्रतिशत में)	:	142
4.4	गंगानगर जिले में सिंचाई सुविधा का उपयोग	:	143
4.5	गंगानगर जिले में तहसीलों में सिंचाई गहनता (प्रतिशत में)	:	147
4.6	पानी उपयोग का अपना तरीका बदलें	:	151

5.1	गंगानगर में कृषि यन्त्रों व औजारों की प्रगति	:	160
5.2	प्रस्तावित ऊर्जा (अश्वशक्ति में)	:	166
5.3	गंगानगर जिले में विभिन्न प्रकार की ऊर्जा का उपयोग	:	166
5.4	उन्नत तथा अधिक उपज देने वाले बीजों के अन्तर्गत फसलों का क्षेत्रफल	:	168
5.5	प्रमुख फसलों के अन्तर्गत उन्नत बीजों का क्षेत्रफल	:	170
5.6	रासायनिक उर्वरक का वितरण (मि.टन) वर्ष 2009–2014	:	176
7.1	गंगानगर में कृषि यन्त्र व औजार	:	203
7.2	प्रमुख फसलों के अन्तर्गत उन्नत बीजों का क्षेत्रफल	:	210
7.3	रासायनिक उर्वरक का वितरण	:	211
7.4	कीटनाशकों की खपत	:	212
7.5	बायापेस्टीसाइड का उपयोग	:	215
7.6	भारत में इनसेक्टीसाइड की खपत	:	215
8.1	गंगानगर जिले में नवीन तकनीकी का स्तर मापन (2014–15)	:	232
8.2	गंगानगर जिले की नवीन तकनीकी का मानक विचलन की गणना (2014–15)	:	233
8.3	गंगानगर जिले में ट्रैक्टरों का स्तर मापन (2014–15)	:	234

अध्याय प्रथम

प्रस्तावना

1.1 सामान्य परिचय

भारत का औद्योगिक एवं आर्थिक विकास कृषि की नींव पर टिका है। कृषि की रीढ़ भारत का किसान है। भारत में कृषि संरचना में पिछले कुछ दशकों के दौरान बड़े परिवर्तन आए हैं। देश में जोत छोटी हो रही है और धीरे–धीरे अधिकांश जमीन औसत दर्जे और छोटे किसानों में बंट रही है। कुल मिलाकर देश में छोटे किसानों का प्रतिशत 83.5 है।

मरू प्रदेश राजस्थान में भूमि सुधार की वजह से ही बदलाव स्पष्ट रूप से नजर आ रहा है। अब यहाँ भी विभिन्न राज्यों की तरह खेतों में फसलें लहलहा रही है। आजादी के बाद शुरू हुए भूमि सुधार अभियान अभी भी जारी है। भूमि सुधार के तहत पारित किये गये विभिन्न अधिनियमों का असर है कि राजस्थान में ज्यादातर परिवारों के पास कृषि भूमि है। कृषि योजनाओं के विस्तार और भूमि सुधार के लिए किये प्रयासों से अब राज्य में दो तिहाई से अधिक भूमि सिंचित हो गयी है। क्षेत्रफल की दृष्टि से यह सबसे बड़ा राज्य है। राज्य का उत्तर–पश्चिमी इलाका रेतिला है तो मध्य पर्वतीय एवं दक्षिण–पूर्व का हिस्सा पठारी है, सिर्फ पूर्वी हिस्सा मैदानी है। इसके बाद भी इलाके के हर हिस्से में खेत लहलहाते हुए दिखाई पड़ते है।

uohu rduhsd की अवधारणा का जन्म विश्व में बढ़ते हुए साम्यवादी विचारधारा के प्रभाव को रोकने के लिए बीसवीं शताब्दी के द्वितीय दशक में हुआ। इस समय तीसरी दुनिया के देश धीरे–धीरे सोवियत प्रभाव में जाने लगें, तो पाश्चात्य देश विशेषकर संयुक्त राज्य अमेरिका इससे अधिक चिंतित हुआ

और उसने साम्यवादी प्रभाव को समाप्त करने के लिए uohu rduhdh का नारा दिया। संयुक्त राज्य अमेरिका का यह तर्क था कि साम्यवादी विचारधारा एक पुरातन एवं घिसे–पिटे मूल्यों पर आधारित पुरातन पंथी विचारधारा है, जिसमें विकास की कोई संभावना निहित नहीं है। जबकि हमारी विचारधारा नये मूल्यों पर आधारित है, हमारे यहाँ हर क्षेत्र में तकनीकी एवं विज्ञान का महत्व है, जिसके माध्यम से हम आशातीत विकास कर सकते है। यदि साम्यवादी विचारधारा प्रगतिशील है तो हमारी तरफ से ही आर्थिक विकास हेतु हर क्षेत्र में नये–नये प्रयोग दिखाये। इसी विचारधारा को लेकर विश्व में आर्थिक विकास की होड़ चल पड़ी और हर विकासशील और अविकसित देश नवीन तकनीकों का प्रयोग करने लगा।

कृषि में नवीन तकनीक के लिए उसमें नई तकनीकी, मशीनीकरण, रसायनिक उर्वरक, नयी किस्म के उन्नत बीज, एवं विभिन्न कीटनाशक औषधियाँ, विभिन्न प्रकार के यंत्र कृषि में प्रयुक्त किये जाने लगे, जिससे कृषि उत्पादकता में आशातीत वृद्धि हुई और कृषक जीवन निर्वाहक कृषि से व्यापारिक कृषि में परिवर्तित होने लगी, जिससे कृषि के क्षेत्र में नये परिवर्तन एवं कृषि उत्पादन भी प्रभावित होने लगा। अतः कृषि के नवीन तकनीक का तात्पर्य कृषि कार्यो में विभिन्न वैज्ञानिक तकनीकियों के समग्र उपयोग से है।

कृषि में नवीन तकनीकी के प्रयोग का प्रभाव भूमि, जलवायु, खाद्य श्रृंखला के साथ–साथ मानव के आर्थिक, सामाजिक एवं व्यावसायिक स्थितियों पर भी पडता है क्योकि मानव शरीर भोजन पर आधारित है अतः मानव का विकास व अस्तित्व कृषि पर आधारित है। मानव विकास के लिए नवीन कृषि तकनीकें अपनाकर कृषि का विकास करना भी जरूरी है।

मानव, कृषि, जलवायु, भूमि एवं सभी जीव–जन्तु मिलकर पारिस्थितिकी का निर्माण करते है। पारिस्थितिकी एक क्रियाशील अवधारणा है इसमें जीवों व

उनके पर्यावरण के मध्य आदान–प्रदान का क्रम चलता रहता है अर्थात पारिस्थितिकी उन समस्त घटकों का समूह है जो जीवों के एक समूह की क्रिया प्रतिक्रिया में योगदान देते है। **फ्रेसर डालिंग (1963)** के अनुसार पारिस्थितिकी समस्त पर्यावरण के संदर्भ में जीवों का उनके अन्तर्जातिय एवं आपसी संबंधों का विज्ञान है। जिसमें वनस्पति एवं जीव–जन्तुओं के साथ ही मानव को भी सम्मलित किया जाता है, मानव कृषि पर आधारित प्राणी है। किसी क्षेत्र की कृषि पारिस्थितिकी पर कृषि में नवीन तकनीकियों के प्रभावों का अध्ययन कर उसके सदुपयोग में ही राष्ट्र की सुरक्षा है अतः कृषि में नवीन तकनीकी का पारिस्थितिकी पर प्रभाव को परिलक्षित करना बहुत जरूरी है।

देश में कृषि में नवीन तकनीकी प्रयोग की शुरूआत 19वीं सदी के छठे दशक से हो चुकी थी जिसके परिणामस्वरूप प्रथम हरित क्रांति को देखा जा सकता है जिसके बाद लगातार कृषि में नवीन तकनीकी का प्रयोग यांत्रिक एवं जैविकीय रूप से किया जा रहा है जिससे कृषि में पैदावार बढ़ रही है फलस्वरूप खाद्यानों में आत्मनिर्भता प्राप्त कर रहे है । किसान परंपरागत कृषि तकनीकों से उठ कर नवीन तकनीकों का प्रयोग कर रहा है जिससे उसका आर्थिक स्तर उँचा उठ रहा है ।

बंजर एवं अनुपजाऊ भूमि को कृषि के नवीन तकनीकों द्वारा उपजाऊ बनाया जा रहा है, साथ ही सिंचाई में नवीन तकनीकों का प्रयोग निरंतर किया जा रहा है जिससे कृषि उत्पादकता बढ़ी है परिणामस्वरूप बढ़ती जनसंख्या को खाद्य सुरक्षा प्राप्त हो रही है इस प्रकार कृषि में नवीन तकनीकों का जहाँ सकारात्मक प्रभाव पड़ा है, वही नकारात्मक प्रभाव भी पड़ रहा है।

कृषि में नवीन तकनीकों का प्रयोग कर जंगलों को काटकर कृषि योग्य खेतों व फार्मों का निर्माण किया जा रहा है। कृषि में नवीन तकनीकों का प्रयोग द्वारा अब प्रतिवर्ष 2 से 3 फसलों का उत्पादन किया जा रहा है जिससे मृदा की उर्वरता में कमी होती जा रही है और फसल चक्र को अनदेखा किया

जा रहा है। पैदावार बढ़ाने के लिए लगातार संकर बीजों का प्रयोग किया जा रहा है, जिस कारण सिंचाई के लिए अधिक पानी की आवश्यकता बढ़ी है जो कि राजस्थान के सदंर्भ में नकारात्मक प्रभाव डालती है।

कृषि में नवीन तकनीकों के अन्तर्गत जीवाश्म ईंधन का प्रयोग बढ़ा है, जिससे पर्यावरण प्रदूषण की समस्या ने जन्म लिया है। वर्तमान कृषि में जैविक खाद के स्थान पर रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग किया जा रहा है जिससे मृदा की उत्पादक क्षमता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है साथ ही मृदा में पाये जाने वाले मित्र कीटों पर बुरा प्रभाव पड़ा है। कृषि में नवीन तकनीकों के अन्तर्गत फसलों में परंपरागत कीटनाशकों के स्थान पर विषैलें रासायनिक कीटनाशकों का उपयोग किया जाने लगा है जिसका दुष्प्रभाव फसलों के साथ पर्यावरण में उपस्थित समस्त जीवों पर भी पड़ता है जिससे पारिस्थितिकी खाद्य श्रृंखला प्रभावित होती है।

कृषि के नवीन तकनीकों के अन्तर्गत जेनेटिक मोडिफाइड बीजों का प्रचलन भी बड़ा है जिसका दुष्प्रभाव उत्पादों के प्रयोगकर्ता व पर्यावरण पर भी पड़ रहा हैा कृषि की नवीन तकनीकी के अन्तर्गत केवल निश्चित फसलों का ही उत्पादन किया जा रहा है, जिससे पर्यावरण में फसल विशेष के कीटों की संख्या में बढ़ोतरी होती चली जा रही है ।

इस प्रकार वर्तमान में कृषि में नवीन तकनीकों का प्रयोग युद्व स्तर पर किया जा रहा है जिसके कारण पौष्टिक आहार में कमी, भूमि प्रदूषण व अपरदन, जैविक विनाश, जलवायु में परिर्वतन एवं खाद्य श्रृंखला में बदलाव के साथ–साथ मानव शरीर को अनेक बीमारियों से ग्रसित कर दिया है। कृषि में नवीन तकनीकों के कारण एक तरफ अधिक परिर्वतन से कृषि का संतुलन बिगड़ा है वही जनाधिक्य के लिए खाद्यानों में आत्म निर्भरता प्राप्त कि है जो खाद्य सुरक्षा प्रदान करता है।

प्रस्तुत शोध ग्रंथ में गंगानगर जिले की कृषि में प्रयुक्त की जाने वाली नवीन तकनीकियों एवं पारिस्थितीय प्रभाव को एवं इनके परस्पर अन्तसम्बन्धों को जानने का प्रयास किया गया हैं। अतः शोध कार्य को प्रभावी रूप से सम्पन्न करने के लिये सबसे पहले इनका अवधारणात्मक अध्ययन करना अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि कृषि, नवीन तकनीक, मानव, पारिस्थिति सभी भौगोलिक तत्व परस्पर अन्तः एवं अर्न्तसम्बिन्धित है।

मानव, कृषि एवं पारिस्थितीकी – शिकागो विश्वविद्यालय के प्रसिद्ध विद्वान बैरोज ने सन् 1922 में सर्वप्रथम अमेरिकी भूगोलविद्ों की समिति के अध्यक्षीय भाषण में यह स्पष्ट किया कि मानव भूगोल मानव पारिस्थितिकी है। [Barrow.H.-1923 : Geography as human ecology. Annals of the Association of American Geographies, 13-14]

पारिस्थितिकी (Ecology) में सम्पूर्ण जीव जगत एवं पर्यावरण के मध्य सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। इस आधार पर मानव पारिस्थितीकी में मानव एवं उसके सामाजिक तथा भौतिक पर्यावरण के मध्य सम्बन्धों का अध्ययन करते हैं। इसमें मानव पर्यावरणीय सम्बन्धों को महत्व दिया जाता हैं। जिसमें मानव समाज के प्राचीन से लेकर वर्तमान तक के विकास क्रम को सम्मिलित किया जाता है। **बैरोज** ने मानव के भौतिक पर्यावरण के साथ समायोजन पर प्रकाश डालते हुए भूगोल की प्रकृति में नियमावेशी पक्ष को अपनाया था। सन् **1972 के स्टॉकहोम में हुए प्रथम विश्व पर्यावरण सम्मेलन** के उपरान्त **भूगोल में मानव पारिस्थितिकी** शब्द का प्रयोग बढ़ा। मानव पारिस्थितिकी मानने वालों का विश्वास था कि प्रकृति में भोजन श्रृंखला के अन्तर्गत सभी प्रकार के जीव समूह व पादपों सहित मानव भी सम्मिलित है।

ब्रुंश ने मानव भूगोल का उद्देश्य स्पष्ट करते हुए लिखा है कि **"मानव भूगोल का उद्देश्य मानव क्रियाकलापों तथा भौतिक भूगोल के दृश्यों के मध्य सम्बन्धों का अध्ययन करना है।"** मानव प्राकृतिक वातावरण के साथ सांस्कृतिक वातावरण में सृजन तथा पारिस्थितिकीय समायोजन को प्रदर्शित करता है अतः मानवीय व्यवहार का अध्ययन भी अत्यन्त आवश्यक है इस अध्ययन हेतु मानव भूगोलवेत्ताओं ने अनेकों उपागम दिये हैं जिनमें अध्ययन उद्देश्य के अनुसार आवश्यक **पर्यावरणीय उपागम एवं पारिस्थितिकी उपागमों** को समझना आवश्यक है।

पारिस्थितिकी उपागम (Ecological Approach) में विभिन्न मानवीय क्रियाकलापों का अध्ययन उनके प्राकृतिक वातावरण से अन्तर्सम्बन्धों के सम्बन्ध में किया जाता है। इस तरह के मानव एवं पर्यावरण सम्बन्धों को **बैरोज** ने **मानव पारिस्थितिकी** (Human ecology) कहा है।

इसमें इस तथ्य पर बल दिया जाता है कि मानव अपने क्रियाकलापों का प्राकृतिक वातावरण से किस प्रकार समायोजन कर अस्तित्व में रहता है, साथ ही वह अपने तकनीकी विकास द्वारा प्रतिकूल प्राकृतिक दशाओं का सामना करने में सफल रहता है। इसी प्रकार के पारिस्थितिकीय परिवर्तनों का अध्ययन इस उपागम में सम्मिलित करते हैं। इसमें मानव को एक सक्रिय भौगोलिक कारक माना गया है जो अपने प्रदेश की प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक दशाओं से प्रभावित होता हैं। जो पर्यावरण से प्रभावित होने के साथ–साथ उसमें परिवर्तन एवं अनुकूलन भी करता हैं और **मानव–क्रिया पूर्ति के लिए अपनाया गया मार्ग जब पर्यावरण द्वारा नियंत्रित होता है वह पर्यावरणीय या निश्चयवादी उपागम कहलाता है।** इसके अनुसार मानव सहित सभी वन–वनस्पति, कृषि, पेड़–पौधे, जीव–जन्तु के स्वभाव, तापक्रम, आर्द्रता, मौसम व जलवायु सभी भू–परिस्थितियों का परिणाम हैं **कलेग्स (1942)** के अनुसार किसी भी फसल को उसके आर्द्रता व तापक्रम न्यूनतम अनिर्वायताओं के अभाव में नहीं उगाया

जा सकता है जैसे भारत में गेंहूँ की खेती हेतु पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश में आदर्श प्राकृतिक दशाऐं उपलब्ध हैं लेकिन इन क्षेत्रों से दूर हटने के साथ–साथ पैदावार कम होती जाती है। इसीलिये जैव–तकनीकीय प्रगति के बावजूद भी उपयुक्त तापक्रमीय दशाओं के अभाव में अधिकांश फसलों का उत्पादन आर्थिक दृष्टि से लाभप्रद नहीं होता है। **परन्तु पारिस्थितिकीय व्यवस्था में मानव एक सक्रिय कारक बना है, जिसमें कृषि दृश्यपटल में परिवर्तन उत्पन्न करने की अद्भुत क्षमता हैं** वह तकनीकी–सुधार, बीजों की उच्च–उत्पादन देने वाले उत्तम किस्म, सिंचाई के साधन, रासायनिक उर्वरक व कीटनाशक दवाओं आदि के प्रयोग से कठिन से कठिन व विपरीत प्राकृतिक पर्यावरणी–परिस्थितियों में भी अनेक फसलों का उत्पादन कर रहा हैं।

पारिस्थितिक–वैज्ञानिकों के मतानुसार किसान ऐसी कृषि–क्रियाओं को अपनाते हैं जिनका वहाँ के तापक्रम व वर्षा की परिस्थितियों से मेल हैं। अतः किसानों के निर्णय लेने की प्रक्रिया को वातावरण प्रभावित करता है। किसान अपनी कृषि की विधियों व तकनीकों द्वारा भी वातावरण को अनुकूलित करने का प्रयत्न करता है। वस्तुतः विज्ञान और तकनीक ने मानव को वातावरण में परिवर्तन उत्पन्न करने वाला अत्यन्त प्रभावी अभिकर्ता बना दिया है।

जैव–तकनीकी ज्ञान से मनुष्य ऐसे अनेक कृषि–प्रक्रियाओं को करने में सक्षम बन चुका है जो मौजूदा पारिस्थितिक दशाओं के अनुकूल नहीं है। पंजाब, हरियाणा में चावल के प्रत्यारोपण को नहरी व नलकूप, सिंचाई द्वारा संभव बना रहे है। अतः मनुष्य कृषि कार्यों में नवीन तकनीक एवं नवाचारों का प्रयोग कर पर्यावरणीय विपरीत परिस्थितियों को भी अनुकूल कर देते हैं। वास्तव में मानव अपने मस्तिष्क में बसे जगत के आधार पर निर्णय कर क्रिया–कलापों को सम्पन्न कर कृषि में लगातार नवीन तकनीकी के प्रयोग की

तरफ लगातार विकास कर रहा हैं। मानव एवं वातावरण के संबंध को परम्परागत मॉडल से समझ सकते हैं –

कोफ्का (1935) के अनुसार

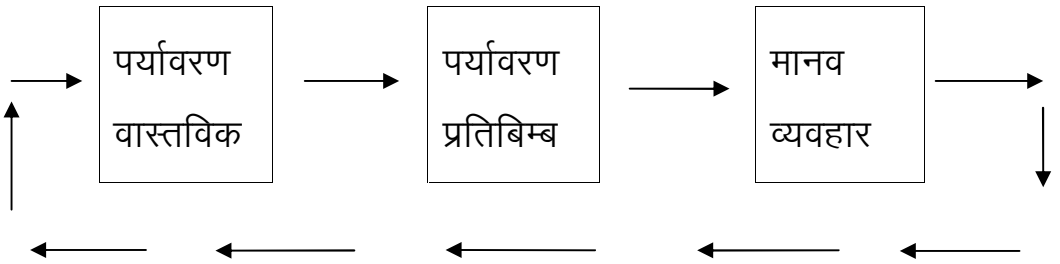

इस प्रकार मानव एवं पर्यावरण या कृषि से वही सम्बन्ध है, जो अन्य प्राणियों का हैं। मानव एवं पर्यावरण के जैविक एवं अजैविक घटक मिलकर पर्यावरण पारिस्थितिकी का निर्माण करते हैं। इस प्रकार पारिस्थितिकी वह विज्ञान हैं, जिसमें जीव–जन्तुओं का आपस में तथा पर्यावरण के साथ सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है। पारिस्थितिकी के लिए **जर्मन विद्वान अर्नेस्ट हैंकेल (1869) ने वास्तविक शब्द Ecology का प्रयोग किया। जिसका अर्थ है जीवों का उनके आवास में अध्ययन करना। वहीं ए.जी. टेन्सले (1935) के अनुसार प्रकृति में सम्पूर्ण जीव–जन्तुओं तथा पादपों के पर्यावरण के साथ क्रियात्मक अन्तर्सम्बन्धों को पारिस्थितिकी तंत्र (Ecosystem) कहा जाता हैं।** जो पर्यावरण के भौतिक घटक, स्थल, वायु, जल, मृदा तथा जैविक घटक – प्राकृतिक वनस्पति एवं जीव–जन्तु–मानव परस्पर समायोजन के द्वारा पर्यावरण को सन्तुलित रखते हैं। मानव तथा अन्य जीव–जन्तु प्राकृतिक शक्तियों के साथ सामजस्य स्थापित करके अपना अस्तित्व कायम रखते हैं। वहीं मानव ने नवीन तकनीक के उपयोग से पर्यावरण को अपने अनुरूप बनाने का सतत् प्रयास करता रहा है। जिससे मानव खाद्यानों में आत्मनिर्भर प्राप्त करता जा रहा हैं वहीं उसे स्वयं को पर्यावरण एवं अन्य जीव–जन्तुओं को काफी नुकसान भी उठाना पड़ रहा है जिसे कृषि में नवीन तकनीकी के बढ़ते प्रयोग के आधार पर आसानी से समझा जा सकता है।

1.2 कृषीय तकनीक का प्रसार एवं विकास

कृषीय तकनीक के विस्तार एवं विकास का भी एक इतिहास है पुरापाषाण और मध्यपाषाण कालीन समाजों में प्रयुक्त तकनीकों के बारे में बहुत कम जानकारी है। सभ्यता के आदिकाल में मानव का एक महत्त्वपूर्ण उपकरण अग्नि था। उसके बाद पत्थरों के औजार बनाए तथा खरल, ओखली व चक्की जैसी वस्तुओं का विकास किया। वह फसलों को बोने के लिये कुल्हाड़ी, अग्नि और कुदाल–छड़ी का प्रयोग करता था 8000–4000 ई0पू0 के मध्यकाल में टर्की में ताम्बे, कांसे व लौह धातुओं का विकास हुआ और इनसे अधिक अच्छें कृषीय उपकरण व औजारों का निर्माण सम्भव हुआ। 4000 ई.पू0 मैसोपोटामिया, सुमेरिया व मिस्र देशों के कृषक अपने खेतों को जोतने के लिये **लड़की का बना हल 'अर्द' (Ard)** का प्रयोग करने लगे। जो मात्र एक वक्राकार लकड़ी का कुन्दा था। जिससे चकमक पत्थर जुड़ा रहता था। जो केवल ढीली मिट्टी को उसारने में काम आता था। वहीं 1000 ई.पू0 के अन्तिम भाग में **लौह फलक वाला हल** भूमध्यसागरी प्रदेश व चीन में कृषि का सामान्य उपकरण हुआ जिसे खेत जोतने के लिए जुताई करके बैलों की जोड़ी खींचती है और आड़ी–तिरछी जुताई कर मृदा के संरक्षण में सहायता प्रदान करती थी। कृषि के प्रागैतिहासिक काल में फसलों की बुवाई अत्यन्त साधारण विधि बीजों को बिखेर कर की जाती थी। यह विधि भारत, चीन व यूरोप में 19वीं शताब्दी तक प्रचलित थी जो आज भी विकासशील देशों में प्रचलित हैं। **हैरो (Harrow)** का प्रयोग सर्वप्रथम रोमवासियों, भारतीयों व चीनवासियों द्वारा किया गया है। इन देशों में किसान पशु–खाद के प्रयोग से अवगत थे। मिस्र व दक्षिण–पश्चिम एशिया के भागों में **सादुफ (Shaduf) सिंचाई–तकनीक** के प्रयोग द्वारा कृषि कार्य किया जाता था।

भारत में आर्यों के आगमन के पश्चात् लगभग 1000 ई0पू0 में लौह–धातु की खोज हुई और उन्होंने शीघ्र ही लौह तकनीक में स्वामित्व अर्जित कर लौह

फलक वाले हल द्वारा नवीन विस्तृत क्षेत्र को कृषि के अधीन बनाया गया। भारत में उत्तरप्रदेश व बिहार के वनाक्रांत क्षेत्रों को लौह–तकनीक द्वारा ही वर्णित कर आर्य–सभ्यता के केन्द्रों का विस्तार संभव बना। जैविक खाद का उप्रयोग और हल के उपयोग के अतिरिक्त यद्यपि विशिष्ठ कोटि की कृषि का विकास संभव नहीं हुआ था। भारत में जाति प्रथा के कारण बौद्धिक एवं श्रम कार्यकर्त्ताओं में विभाजन से प्रगति नहीं हुई। यूरोप में 10वीं शताब्दी के अन्तिम चरण तक **गाड़ीनुमा असम्मित हल (Wheeled Asymmetrical Plough)** प्रयोग में आता था। यह तकनीकी परिवर्तन कृषि इतिहास में महत्वपूर्ण थी। चीन में आविष्कृत गद्देनुमा–कॉलर ने घोड़े को शक्ति से हल खींचने व भारी सामान ढोने की क्षमता प्रदान की। कुछ किसान बैल द्वारा खेत जोतते थे। दो बैलों से लेकर आठ बैलों तक का प्रयोग खेत जोतने में किया जाता था। अनाज को उसेरने के लिये वायत्य–शक्ति का प्रयोग आदिकालीन 'पवन–चक्की' द्वारा होता था। इन सभी तकनीकी परिवर्तनों के फलस्वरूप बढ़ती जनसंख्या के लिये अनाज उत्पादन क्षेत्रों और साधनों का विस्तार हुआ।

19वीं शताब्दी का मध्यकाल कृषीय तकनीक में वृहत विभाजन काल था। **इंग्लैंण्ड में 1779 ई. में इंजन के आविष्कार** ने खेती में क्रान्ति उत्पन्न की, जिसके फलस्वरूप यूरोप की मध्ययुगीन कृषि प्रारूप में पूर्णतः परिवर्तन आया। भाप की शक्ति का सर्वप्रथम प्रयोग अनाज से भूसा अलग करने की मशीनों और खेतों की सिंचाई करने वाले पम्पों का प्रयोग 19वीं शताब्दी के आरम्भ काल से हुआ। सन् 1890 में उत्तरी पश्चिमी संयुक्त राज्य के गेहूं उत्पादक खेतों में **एक महत्वपूर्ण विकास ट्रेक्टर** का आगमन था। **1892 में जॉन फ्रोलिक नाम किसान द्वारा गैसोलिन ट्रेक्टर बनाया गया। 1910 में आन्तरिक दहन गैस इंजन के ट्रेक्टर का विकास हुआ। सन् 1931 में डीजल इंजन से चलने वाले ट्रेक्टर का विकास हुआ जो अत्यन्त विपरीत पारिस्थितियों में भी खींचने की शक्ति से सम्पन्न था।**

ट्रैक्टर के आगमन ने घोड़ा बैल, भैस और खच्चर को धीरे–धीरे खेतों से हटा दिया गया और विश्वभर में सन् 1991 में ट्रैक्टर का उत्पादन 2.25 करोड़ तक जा पहुँचा। संयुक्त राज्य में इन तकनीकी परिवर्तनों का विस्मयकारी परिणाम सामने आया जहाँ पहले सन् 1800 में 95 प्रतिशत लोग खाद्यान्न उत्पादन करने हेतु फार्मों पर रहते थे। आज वहाँ 25 प्रतिशत फार्मों पर बसे लोग शेष 75 प्रतिशत जनसंख्या के लिए पर्याप्त खाद्यान्नों का उत्पादन कर पर्याप्त मात्रा में अन्तर्राष्ट्रीय मण्डी में निर्यात हेतु भेजने में समर्थ है। **इस परिवर्तन का श्रेय कृषि करने की नवीन तकनीक, विशेषतः ट्रैक्टरो, फसल काटने की मशीनों और खेतों में रासायनिक खाद के प्रयोग को जाता है, हंसिए का स्थान यूरोप में सन् 1930 में 'हारवेस्टर ने लिया। रासायनिक** उर्वरक **का आगमन सन् 1945 में संभव हुआ और कीटनाशक दवाओं की उपलब्धि द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद संभव हुई।**

अब खेती में अधिक उत्पादन हेतु नवीन तकनीक सहित इन नवाचारों जैसे रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक दवाओं, फफूंदनाशी, शाकनाशी आदि का उप्रयोग विकसित व विकासशील देशों के सम्पन्न–कृषकों द्वारा किया जा रहा है। कृषि विस्तार उसमें गहनता और परिष्कृत तकनीक के प्रयोग ने विश्व के फसली–प्रारूप से मौलिक बदलाव उत्पन्न किया है। इस क्रान्ति से बढ़ती हुई जनसंख्या को भोजन और कृषि पर आधारित उद्योगों को कच्चा–माल मिलता है यद्यपि इन विकासों ने पर्यावरण को विपरीत दिशा में प्रभावित कर प्रदूषित किया है। इससे समाज, उसकी अर्थव्यवस्था एवं पर्यावरण पर कृषि–विस्तार एवं नवीन तकनीकी विकास के प्रतिकूल परिणाम भी निकल कर सामने आ रहे हैं।

भारतीय अर्थव्यस्था में कृषि का स्थान महत्वपूर्ण है। यहाँ कृषि–उत्पादन फार्मों पर स्थित लोगों की प्रतिव्यक्ति आय ही नहीं अपितु ग्रामीण जनसंख्या का रहन–सहन और गरीब जनता का पोषण स्तर निर्धारित करता है। **व्हिटिल्से**

के मतानुसार भारत में अनेक कृषीय व्यवस्थाओं का विकास हुआ हैं। भारत की कृषि अभी तक 'मानसून पर निर्भर जुआ' ही है। जहाँ कहीं अच्छी वर्षा हो गयी वहाँ कृषि अच्छी होती है यदि मानसून असफल बना तो सूखा पड़ जाता है। खाद्यन्न पूर्ति की समस्या एवं विदेशी पूँजी की आवश्यकताओं ने भारतीय किसानों को सघन–कृषि के लिए बाध्य किया। इसे खाद्यान्नों के उत्पादन में तो अवश्य वृद्धि आयी परन्तु पर्यावरण में गिरावट देखी गई। एच.वाई.वी.(उन्नत किस्म के बीज) के अपनाने और चावल व गेंहूँ की अर्द्धशुष्क क्षेत्रों में कृषि के कारण सिंचाई तथा रासायनिक उर्वरक के अधिक उपयोग से मृदा के रासायनिक गुणों में ही बदलाव उत्पन्न हो गया है। इससे मृदा की उर्वरक–शक्ति ही क्षय हो गई है। सतजल–यमुना के मैदान में मिट्टी में क्षारीयता व खारेपन में वृद्धि हो रही है, और वह बेकार होती जा रही है।

राजस्थान के गंगानगर, जैसलमेर, जोधपुर और बाड़मेर जिलों में इन्दिरा गाँधी नहरी क्षेत्र में जलरोध (Water Logging) की समस्या विकट बन गई है। यहाँ जलरोधी भू–भाग विकसित हो गए है, और वे मच्छर आदि कीटाणुओं की जन्म स्थली बन चुके हैं। अक्टूबर व नवम्बर 1994 में तथा 1995 के फरवरी मार्च में राजस्थान के शुष्क व अर्द्धशुष्क जिले मलेरिया के प्रकोप का शिकार बने, अतः अनियंत्रित नहरी सिंचाई प्रदेश में स्वास्थ्य समस्या को जन्म देने लगी। वही रासायनिक उर्वरकों के प्रभाव से किसान चिंतित हैं। वे क्षेत्र जहाँ भूमि का उपयोग गेंहूँ चावल–गन्ना के संयोजन कृषि में हुआ है, वहाँ किसानों को रासायनिक उर्वरक के आधिकाधिक प्रयोग के कारण हानि का सामना करना पड़ रहा है। इस कारण ही अधिक उत्पादन प्राप्त करने के उद्देश्य से ही पश्चिमी उत्तर प्रदेश, पंजाब व हरियाणा में प्रतिवर्ष अधिक उर्वरक, सिंचाई व दवाओं के छिड़काव से मृदा में निरन्तर गिरावट आती जा रही है। इससे पर्यावरणीय व पारिस्थितिकीय समस्याऐं उत्पन्न हो रही है। जिनका प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव मानव पर पड़ रहा है। मानव अपने आस–पास के प्राकृतिक एवं

सांस्कृतिक पर्यावरण से प्रभावित रहता है। मानव अपने विकास के प्रारम्भिक चयन से निरन्तर वैज्ञानिक तथा तकनीकी प्रगति करता आया है। प्रारम्भ में मानव पर्यावरणीय दशाओं से प्रभावित उनसे अनुकूलन करता था, परन्तु अब अपनी आवश्यकतानुसार परिवर्तन एवं परिमार्जन करने लगा है। जिसका दुष्परिणाम मनुष्य भुगत रहा है। क्योंकि पर्यावरणीय प्रभाव एवं मानवीय प्रतिक्रियाऐं परस्पर अर्न्तसम्बन्धित होती है।

मनुष्य पर्यावरण के साथ जैसा व्यवहार करता है पर्यावरण भी उसी तरह की प्रतिक्रिया प्रदान कर मानव जीवन को प्रभावित करता है। अतः मनुष्य को पर्यावरण के साथ सही प्रकार से समायोजन करना चाहिए। **इसीलिए ग्रिफिथ टेलर ने अपने नव नियतिवाद के सिद्धान्त में स्पष्ट किया है कि मानव पर्यावरणीय तत्वों का प्रयोग करने में स्वतंत्र है, परन्तु वह प्राकृतिक नियमों एवं दशाओं की अवहेलना नहीं कर सकता हैं। सी.सी. पार्क (C.C. Park)** ने भी स्पष्ट किया कि मानव का प्राकृतिक पर्यावरण का सम्बन्ध दमनात्मक नहीं है, बल्कि परस्परावलम्बन (Symbiosis) का सम्बन्ध है। जिसे पार्क ने पारिस्थितिक उपागम में स्पष्ट किया हैं कि मानव को पर्यावरण के नियमों एवं दशाओं को ध्यान में रख कर प्राकृतिक संसाधनों का संयमित उपयोग करना अत्यावश्यक है। इसके लिए पर्यावरणीय नियोजन प्रबन्ध एवं उनका क्रियान्वयन आदि को महत्व देना चाहिए। फलस्वरूप पर्यावरण अवनयन पर नियंत्रण एवं भौतिकता का पुनर्स्थापन किया जा सकता है। परन्तु 20वीं शताब्दी में विज्ञान तथा नवीन तकनीकी विकास प्रक्रिया ने पारिस्थितिकीय संकट ही उत्पन्न कर दिया है।

अध्ययन क्षेत्र गंगानगर जिले में कृषि क्षेत्र में अत्याधिक आधुनिक तकनीकी के प्रयोग से जो परिणाम निकलकर सामने आ रहे हैं, उसका प्रभाव न सिर्फ मानव पर बल्कि मृदा, जल, हवा, जीव–जन्तु, पेड़–पौधों सभी पर नजर आ रहा हैं। **नूस्फेयर के अनुसार** मनुष्य द्वारा तीव्रगति से कार्य करने, शीघ्र परिणाम प्राप्त करने से पर्यावरणीय प्रक्रम प्रभावित हो रहे हैं एवं ऊर्जा

प्रवाह, तत्व संचरण रासायनिक चक्र आदि के द्वारा पारिस्थितिक तंत्र में सन्तुलन बना रहता है। मनुष्य का हस्तक्षेप इनकी क्रियाओं को अव्यवस्थित कर रहा है, जिससे पर्यावरण असन्तुलन की ओर अग्रसर है। प्रस्तुत अध्ययन में गंगानगर जिले में कृषि क्षेत्र में प्रयोग की जा रही नवीन तकनीके एवं उनके प्रभावों को जानने का प्रयास किया गया है कि वहाँ नवीन तकनीक ने पारिस्थितिकीय परिवर्तन एवं प्रभाव उत्पन्न किये है। जिससे मनुष्य, जीव–जन्तु, पेड़–पौधे वहाँ की मृदा, जल, सभी परिवर्तित हो रहे हैं उन्ही प्रभावों को और इससे उत्पन्न समस्याओं को प्रस्तुत शोध में समझने का प्रयत्न किया गया है।

1.3 साहित्य समीक्षा

अब तक कृषि भूगोल में प्रकाशित कार्यो में ''कृषि में नवीन तकनीकी'' पर निम्न साहित्य पढ़ने को मिलता है

साधना कोठारी, (1999), ''एग्रीकल्चरल लैण्ड यूज एण्ड पॉपुलेशन ए ज्योग्राफिकल एनालिसिस'', उदयपुर, शिवा पब्लिसर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स में लेखिका ने अपनी भूगोल की व्यष्टि पुस्तक में समष्टि रूप से सलूम्बर तहसील (उदयपुर) का कृषि उपजों में विविधीकरण का उलेख किया गया है

हनुमन्त राव, (1997), ने पंजाब में ट्रेक्टर और बिना ट्रेक्टर वाले कृषकों के आकड़े एकत्रित करके बहु रेखीय प्रतीपगमन विधि से विश्लेषण करके ट्रेक्टर का कृषि उत्पादन पर प्रभाव का अध्ययन किया है।

सिंह और सिंह (1972) ने पश्चिम उत्तर प्रदेश के मुज्जफर जिले में ट्रेक्टर व ट्रेक्टर रहित खेतों का अध्ययन किया जाता है। उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि जिन खेतों पर ट्रेक्टर है, उन खेतों पर उत्पादित की जाने वाली गेहूँ, चावल और गन्ने का प्रति हैक्टेयर उत्पादन ट्रैक्टर रहित खेतों की अपेक्षा अधिक है।

जसवीर सिंह (1976) ने ''एग्रीक्लचर ज्योग्राफी ऑफ हरियाणा'' में हरियाणा राज्य में कृषि के आधुनिकीकरण का विश्लेषण किया हैं। उन्होंने 1964 से 1973 के दशक में हुए परिवर्तन को प्रस्तुत किया है।

श्री नाथसिंह (1976) ने अपनी पुस्तक ''मार्डनाइजेशन ऑफ एग्रीकल्चर'' में कृषि का आर्थिक दृष्टि से विवेचन किया है। अपने अध्ययन में डॉ. सिंह ने कृषि को तीन वर्गो में विभाजित करके उनके आर्थिक विकास पर कृषि में नई तकनीक जैसे – मशीनीकरण नई किस्म के बीज, रसायनिक उर्वरक पौधे संरक्षण कीटनाशक औषधियो आदि के प्रभाव का आंकलन करने का प्रयास किया है।

बसन्त मोधे (1985) ''राजस्थान में कृषि उत्पादन'' में लेखक ने कृषि विकास से संबंधित विभिन्न तथ्यों को आरेखों और मानचित्रों की सहायता से प्रदर्शित किया है।

टी. एस. चौहान (1987) ''एग्रीकल्चर ज्योग्राफी'' ने एग्रीकल्चर सेन्सस के आकड़ों के आधार पर राजस्थान में कृषि आधुनिकीकरण या कृषि विकास का प्रदर्शित किया है। अपने प्रति 1000 हैक्टेयर फसल काश्त क्षेत्र पर ट्रेक्टर की संख्या विभिन्न अन्य यंत्रों की संख्या एवं उर्वरक एवं उन्नत बीजों का उपयोग आदि में 20 वर्षो के परिवर्तन को अपने अध्ययन में प्रस्तुत किया है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में ''गंगानगर जिले में कृषि में नवीन तकनिकी का पारिस्थितिकीय प्रभाव का विश्लेषण किया गया हैं। अब तक कृषि भूगोल में प्रकाशित व शोध कार्यों में गंगानगर जिले में कृषि में नवीन तकनिकी का पारिस्थितिकीय प्रभाव का विश्लेषण शीर्षक पर साहित्य बहुत कम पढ़ने को मिला है। विश्व स्तर के अध्ययन में सर्वप्रथम **ओ.ई. बेकर (1927) ने भूमि उपयोग के अध्ययन के सम्बन्ध में** कार्य आरम्भ किया था। परन्तु विस्तृत एवं गहन अध्ययन **प्रो. एल.डी. स्टाम्प (1930) ने** ब्रिटेन का गहन भूमि उपयोग

सर्वेक्षण के आधार पर किया। इसके बाद पूरे विश्व में इस प्रकार के अध्ययन आरम्भ हुए। तत्पश्चात **प्रो. स्टाम्प के निर्देशन** में अन्तर्राष्ट्रीय भूमि उपयोग सर्वेक्षण आयोग का गठन किया गया। इसके अन्तर्गत विभिन्न प्रकार के भूमि उपयोग से सम्बन्धित मानचित्र तैयार किये गए जिसके अन्तर्गत संयुक्त राज्य अमेरिका में भूमि उपयोग नियोजन और कृषि का विकास एवं प्राकृतिक संसाधनों के उपयोग के सम्बन्ध में अध्ययन किया गया। संयुक्त राज्य अमेरिका के ग्रामीण क्षेत्रों का अध्ययन करने के लिये अमेरिका के लेकस्टेट का अध्ययन किया गया। प्रो. स्टाम्प के बाद इन्हीं आधार पर भूमि उपयोग एवं कृषि विकास का अध्ययन विश्व में किया जाने लगा। इस प्रकार अध्ययन **प्रो. एस.पी. चटर्जी (1946), ओ.पी. भारद्वाज, एवं शफी** ने शोध प्रबन्ध लन्दन विश्वविद्यालय में प्रस्तुत किया। तत्पश्चात **बी.सिंह (1962), वी.आर. सिंह (1962) वी. के. राय (1965), एस.एम. मिश्रा (1965), बी.एस. त्यागी (1971),** ने कृषि भूमि उपयोग पर अध्ययन प्रस्तुत किया। **प्रो. अन्नास एवं प्रो. एम. रजा** के कार्य भी सराहनीय रहे है एवं **प्रो. इन्द्रपाल एवं एस.सी. कलवार (1973), लक्ष्मी शुक्ला (1976), जसवीर सिंह (1976),** के शोध प्रबन्ध सराहनीय रहे हैं। इसके अतिरिक्त भारत के विभिन्न विश्वविद्यालयों में कृषि भूमि उपयोग पर अनेक शोध ग्रन्थ प्रस्तुत हुए है। भूमि उपयोग को सघन एवं अधिकतम उपयोगी तथा संरक्षण हेतु मंत्रालय स्थापित किए है। उपरोक्त के अतिरिक्त आर. के गुर्जर (1987), चौहान टी.एस. (1987), के शोध कार्य उल्लेखनीय है।

पी.एल. गुप्ता (1990) ने प्रति हैक्टेयर शुद्ध काश्त पर विद्युत पम्पसेट्स, डीजल इन्जन, थ्रेसर व अन्य कृषि यन्त्रों की संख्या आदि आदानों को लेकर 10 वर्षों के परिवर्तन के आधार पर जयपुर जिले में कृषि आधुनिकीकरण का अध्ययन किया है।

उपर्युक्त कार्यों के अतिरिक्त कृषि से सम्बन्धित अन्य पुस्तकों पर प्रकाश प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के सभी अध्यायों में प्रकाश डाला गया हैं। यद्यपि उपर्युक्त

सभी अध्ययन अपने समय में महत्वपूर्ण प्रयास रहे हैं, किन्तु ये सभी अध्ययन किसी प्रदेश या सम्भाग स्तर तक ही सीमित रहे है और कृषि पारिस्थितिकी पर कृषि नवीन तकनीकी प्रभाव के सभी पहलुओं पर प्रकाश नहीं डाल पाये है। गंगानगर जिले की कृषि से सम्बन्धित अध्ययन अभी बहुत कम हो पाया है।

अतः प्रस्तुत अध्ययन में कृषि का तकनीकी एवं पारिस्थितिकी विश्लेषण का अध्ययन सभी तथ्यों के साथ किया जायेगा। गंगानगर जिले में भूमि उपयोग, कृषि विशेषताएँ, सिंचाई, कृषि पारिस्थितिकी को प्रभावित करने वाले तत्व एवं आधुनिक कृषि का कृषि पारिस्थितिकी पर प्रभाव, का नवीन स्तर पर मापन किया जायेगा।

1.4 उद्देश्य

अध्ययन के निम्न उद्देश्य रखे गये है–

1. अध्ययन क्षेत्र में वर्तमान कृषि स्वरुप एवं संसाधनों का संख्यात्मक एवं गुणात्मक स्वरुप को प्रस्तुत करना।
2. कृषि में नवीन तकनीकी के लिए उपलब्ध आधारभूत सुविधाओं का क्षेत्रीय आंकलन करना।
3. जिले में कृषि की नवीन तकनीकी एवं कृषि पारिस्थितिकी के अनूसार कृषि के सतत् विकास के लिए सुझाव पंस्तुत करना।
4. कृषि में नवीन तकनीकों के उपयोग का पारिस्थितिकीय प्रभाव को ज्ञात करना।

1.5 परिकल्पानाऐं

वर्तमान अध्ययन में निम्नलिखित परिकल्पनाओं को जांचा गया है–

1. कृषि में लगी हुई जनसंख्या एवं ट्रैक्टरों की संख्या में प्रत्यक्ष सम्बन्ध है।
2. जहाँ सिंचित क्षेत्र अधिक है उन क्षेत्रों में ट्रेक्टरों की संख्या भी अधिक हैं।
3. कृषि विकास उन्हीं क्षेत्रों मे हुआ जहाँ कृषि की दृष्टि से नवीन तकनीकी का उपयोग किया है।
4. जैसे–जैसे कृषि की नवीन तकनीकी बढ़ती जा रहा है वैसे–वैसे खाद्य फसलों के क्षेत्रों में कमी होती जा रही है।

1.6 अध्ययन क्षेत्र

कृषि में नवीन तकनीकियों के अत्यधिक प्रयोग के कारण अध्ययन क्षेत्र के रूप में राजस्थान राज्य के गंगानगर जिले का चयन किया गया है। राजस्थान क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत का सबसे बडा राज्य है जो भारत का कुल क्षेत्र का 10.41 प्रतिशत है। राजस्थान $23^0 3'$ से $30^0 12'$ उत्तरी अंक्षांश तथा $69^0 30'$से $78^0 17'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। राजस्थान उत्तर–पश्चिमी मरूस्थलीय प्रदेश, मध्यवर्ती अरावली पर्वतीय प्रदेश पूर्वी मैदानी प्रदेश एवं दक्षिण पूर्वी पठारी प्रदेश में विभाजित है।

अध्ययन क्षेत्र गंगानगर राज्य के उत्तर पश्चिमी मरूस्थलीय प्रदेश के अन्तर्गत आता है। जिला मुख्यालय गंगानगर, बीकानेर नरेश गंगासिंह (ई.1887 से ई.1943) के नाम पर प्रसिद्ध है। उससे पहले यह रामनगर कहलाता था। इसके दक्षिण में चूरू और बीकानेर, उत्तर–पश्चिम में पाकिस्तान का बहावलपुर जिला, उत्तर–पूर्व में हनुमानगढ़ जिला स्थित है। जिले का कुल क्षेत्रफल 7944 वर्ग किलोमीटर है यह जिला थार के मरु प्रदेश का हिस्सा है इसकी 204 किलोमीटर लम्बी सीमा पश्चिम में स्थित पाकिस्तान की

अन्तर्राष्ट्रीय सीमा का निर्माण करती है। पहले हनुमानगढ़ जिला भी इसी जिले में शामिल था किन्तु 12 जुलाई 1994 को हनुमानगढ़ पृथक जिला बन जाने से जिले का लगभग आधा क्षेत्रफल हनुमानगढ़ जिले में चला गया। गंगानगर जिला $28^0 4'$ से $30^0 6'$ उत्तरी अंक्षांश और $72^0 2'$ से $75^0 3'$ पूर्वी देशान्तरों के बीच स्थित है इसका भौगोलिक क्षेत्रफल 11,154.66 वर्ग किलोमीटर है। यह पूर्व की ओर हनुमानगढ़ जिले से घिरा है। गंगानगर पंजाबी जनसंख्या की अधिकता के कारण राजस्थान का पंजाब एवं अन्न की अधिकता के कारण अन्न की टोकरी कहलाता है। गंगानगर जिला 9 तहसीलों श्रीगंगानगर, करणपुर, सादुलशहर, पदमपुर, रायसिंहनगर, सूरतगढ़, अनूपगढ़, विजयनगऱ व घडसाना में फैला हुआ है जिसकी कुल जनसंख्या (2011) 19,69,520 है।

गंगानगर जिला मरूस्थलीय शुष्क क्षेत्र है जिसमें नहरी तंत्र के विकास के फलस्वरूप यह तथ्य उजागर हुआ है कि थार के मरूस्थल में केवल पानी की कमी है और यह सुविधा मिलने पर पूरा मरूस्थलीय क्षेत्र एक विशाल अन्न भण्डार के रूप में विख्यात हो सकता है। जिले में गंग नहर, भाखड़ा और इन्दिरा गांधी नहर द्वारा दक्षिणी टीले वाले क्षेत्रों को छोड़कर पूरा क्षेत्र नहरी सिंचित क्षेत्र में सम्मिलित है। विश्व के अन्य सिंचित नहरी क्षेत्रों की भांति गंगानगर जिले में भी कुछ पर्यावरणीय, परिस्थितिकी और प्राकृतिक समस्याएं विकराल रूप लेने लगी है।

जिले के 10978 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में से कृषि योग्य क्षेत्र भौगोलिक स्वरूप का 81 प्रतिशत है कृषि क्षेत्र का 74 प्रतिशत भाग सिंचित है परन्तु मृदा की जल संग्रहण क्षमता की कमी के कारण जल प्लावन की समस्या उत्पन्न हुई है। जिले के एक भाग में जिप्सम की कठोर मोटी परतों के कारण भूमि की निचली सतहों पर रिसने वाला पानी अवरूद्ध होकर जल प्लावन की समस्या को बढ़ाता है। इसके साथ ही लवणीयता व क्षारीयता का प्रभाव भूमि के उत्पादन व उत्पादकता पर गंभीर है। कृषि क्षेत्र में अधिक भूमि प्रयुक्त होने से

वन क्षेत्र 5.47 प्रतिशत, आबादी व विकास के अन्तर्गत भूमि 6.24 प्रतिशत और बंजड़ ऊसर, चरागाह आदि क्षेत्र 6.70 प्रतिशत में सीमित रह गए हैं।

जिले में औसत वर्षा 255 मिलीलीटर होती है जो उत्तर पश्चिम से दक्षिण पश्चिम की ओर बढ़ती जाती है। जिले का तापमान गर्मी में 42.1 व 28 डिग्री सेल्सियस क्रमशः दिन व रात में तथा सर्दी में 20 से 5 डिग्री सेल्सियस के मध्य रहता है जिले का 53 प्रतिशत भाग सपाट प्राचीन उपजाऊ मैदान तथा 18 प्रतिशत रेतीले टीलों से आवृत्त है। इसके अतिरिक्त 1.3 प्रतिशत वर्तमान में निर्मित, 15.8 प्रतिशत रेतीले असमतल प्राचीन उपजाऊ मैदान, 15.8 प्रतिशत रेतीले असमतल प्राचीन उपजाऊ क्षेत्र, 7.9 प्रतिशत रेतीले असमतल टीलों के मध्य के मैदान ताकि 3.7 प्रतिशत सपाट टीलों के मध्यवर्ती क्षेत्र और विभिन्न आकृतियों वाले भूस्वरूप है।

जिले के दक्षिणी भागों में मध्यम से उच्च श्रेणी के टीले और बहुत संकरे और छोटे–छोटे रेतीले असमतल क्षेत्र है इस क्षेत्र की मृदा जिप्सम व चूने की निचली पर्तों पर दुमट बलुई से बलुई,बलुई दुमअ से दुमट के बने हैं। जिले की मृदा मे एन्टीसोल्स व एरिडीसोल्स का क्षेत्रीय अनुपात क्रमशः 55:45 है। मृदा की जल संग्रहण क्षमता को दृष्टिगत रखकर 24 प्रतिशत क्षेत्र की क्षमता द्वितीय, 20 प्रतिशत क्षेत्र की क्षमता तृतीय, 36 प्रतिशत क्षेत्र की क्षमता चतुर्थ व 20 प्रतिशत मृदा की क्षमता अष्टम श्रेणी की है।

नहरी क्षेत्र के जल प्रवाह की उपलब्धता 0.90 मीटर प्रति हेक्टेयर है जो आवश्यकता के अनुमानित मध्यमान 0.57 मीटर प्रति हेक्टेयर से बहुत अधिक है। नहर प्रणाली के विकास से सतही जल की मात्रा 385 गुनी बढ़ गई है। लगभग 20.97 अरब घनमीटर वार्षिक जल प्रवाह के कारण इंदिरा गांधी नहर में भूमिगत जल का स्तर 1.1 मीटर वार्षिक, भाखड़ा का 0.81 से 0.85 मीटर प्रति हेक्टेयर व गंगानहर का 0.64 मीटर वार्षिक गति से बढ़ रहा है। वर्तमान

में भूजल का स्तर 10 से 25 मीटर के बीच है और बढ़ते भूजल स्तर से जलप्लावन की समस्या विकराल रूप लेने की आशंका है।

जिले के 49 प्रतिशत भाग में भूजल स्तर 10 से 20 मीटर, 25 प्रतिशत भाग में 20 से 30 मीटर, 19 प्रतिशत क्षेत्र में 0–10 मीटर तथा 7 प्रतिशत क्षेत्र में भूजल स्तर 30–40 मीटर है। भूजल की गुणवत्ता की दृष्टि से आंकलन करने पर यह परिलक्षित होता है कि 48 प्रतिशत क्षेत्र में लवणीयता सामान्य श्रेणी की 4 से 6 डी.एस./एम के माध्य, 25 प्रतिशत क्षेत्र में बहुत हलकी 2 से 4 डी.एस./एन स्तर की, 20 प्रतिशत क्षेत्र मे अत्यधिक 6 से 8 डी.एस./एम श्रेणी की है। अपवादस्वरूप एक प्रतिशत क्षेत्र जल प्लावन समस्या से ग्रसित है जहां लवणीयता उच्च श्रेणी की पाई गई है।

जिले का 6079.72 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र वायु क्षरण व संग्रहण तथा जलप्लावन व लवणीयता जैसी समस्याओं से ग्रसित हैं। इन सभी भौगोलिक, प्राकृतिक, पर्यावरणीय व परिस्थितिकी स्थितियों के मध्यनजर रखते हुए शोध प्रबंध को 8 अध्यायों में वर्णित किया गया है।

1.7 आंकडो के स्रोत विधि तंत्र

प्रस्तुत शोध संबंधित आंकड़ों को एकत्रित करने के लिए द्वितीय और स्रोतों का प्रयोग किया है।

द्वितीयक स्रोतों द्वारा आंकड़ों का संग्रहण मुख्यतः सरकारी प्रतिवेदनों, विभिन्न कृषि बुलेटिनों और कृषि संबंधित पत्र–पत्रिकाओं द्वारा किया गया है।

अध्ययन के सही परिणाम प्राप्त करने के लिए एकत्रित अव्यवस्थित आंकडों का संक्षेपण, सारणीयन और विश्लेषण करके विभिन्न गणितिय व सांख्यिकीय सूत्रों का उपयोग किया गया हैं। अध्ययन क्षेत्र में कृषि का अध्ययन के लिए सारणी और मानचित्रों द्वारा अध्ययन को प्रस्तुत किया गया हैं। कृषि उत्पादन

के दशक 2010–2011 को आधार मानकर मानक वर्ष 2010–2011 में आये दशकीय सामाजिक परिवर्तन से सम्बन्धित अध्ययन किया गया है तथा जिलों को क्षेत्रीय इकाई आधार मानकर कृषि के विभिन्न आयामों का अध्ययन किया तथा विविध गणितिय एवं सांख्यिकी सूत्रों द्वारा अध्ययन का विश्लेषण किया गया हैं। एवं अध्ययन को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए मानचित्रों, आरेखों का प्रयोग किया गया हैं।

प्रस्तुत अध्ययन में गंगानगर जिले में कृषि का नवीनीकरण एवं पारिस्थितिकी विश्लेषण देखने के लिए दो तथ्यों को चुना है।

1. सामयिक अन्तर देखना।

2. क्षेत्रीय अन्तर देखना।

सामयिक अन्तर देखने के लिए 1982–83 से 2000–2001 तक कृषि कार्यों और कृषि क्षेत्र में आये विभिन्न परिवर्तनों को तथा तकनिकीकरण के प्रभाव को आंकडों के अन्तर के आधार पर धनात्मक व ऋणात्मक रूप में प्रदर्शित किया गया हैं। क्षेत्रीय अध्ययन की विभिन्न कार्टोग्राफी विधियों के माध्यम से गंगानगर जिले कि विभिन्न तहसीलों में आयामों द्वारा दिखाया गया हैं।

अध्ययन के सही परिणाम प्राप्त करने के लिए विभिन्न स्थानों के आंकड़े एकत्रित करके अव्यवस्थित आंकड़ों का सर्वेक्षण, सारणीयन, विश्लेषण व परिवर्तन करके विभिन्न गणितीय व सांख्यिकीय सूत्रों को प्रयोग किया जायेगा। इन सांख्यिकीय सूत्रों में मुख्यतः औसत, समान्तर माध्य, प्रमाप–विचलन आदि विधियों की सहायता ली गयी। सामयिक क्षेत्रीय व संरचनात्मक प्रभाव देखने के लिए सांख्यिकीय आंकड़ों का अन्तर देखकर परिणाम प्राप्त किये गयें। आंकड़ों व अध्ययन को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए मानचित्रों व आरेखों की सहायता ली गयी।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में जिन द्वितीय आंकड़ों का सहारा लिया गया वे आंकड़े सरकारी व गैर सरकारी विभिन्न संस्थाओं से संकलित किये गयें इस शोध कार्य के लिए द्वितीय आंकडे निम्न स्रोतों से एकत्रित किये गयें हैं।

1. जिला गजेटियर्स गंगानगर ।
2. भारतीय मौसम विभाग, क्षेत्रीय केन्द्र जयपुर।
3. सांख्यिकी कार्यालय, गंगानगर ।
4. उपक्षेत्रीय विकास मण्डल कार्यालय, गंगानगर ।
5. भारतीय सर्वेक्षण विभाग, जयपुर।
6. राजस्थान कृषि निदेशालय, जयपुर।
7. मृदा सरंक्षण निदेशालय, जयपुर।
8. भू–राजस्व मण्डल, अजमेर।
9. जिला सिंचाई विभाग, गंगानगर ।
10. उपनिदेशक कृषि विभाग, गंगानगर ।
11. उपनिदेशक कृषि विस्तार, गंगानगर ।
12. मृदा सर्वेक्षण विभाग, गंगानगर ।

1.8 मानचित्र की विधियां

भूगोल के अध्ययन में सम्बधित विषय को अधिक ग्राह्य और सरल बनाने व सुस्पष्ट रुप देने के लिए आकंडों, तथ्यों आदि को दृश्य रुप देने में प्रदर्शित करने के लिए के लिए मानचित्रों का अत्यंत महत्व है। अध्ययन के अंतर्गत विभिन्न सूचनाओं, आकंडों को मानचित्र की सहायता से प्रदर्शित किया गया है। मानचित्र के माध्यम से प्रदर्शित किये जाने वाले तथ्य अधिक स्पष्ट और लंबे समय तक मस्तिष्क में रहतें है।

बढ़ती खाद्यान्न आवश्यकता की आपूर्ति के लिये कृषि में नवीन तकनीकियों का प्रयोग लगातार बढ़ता जा रहा है। गंगानगर और हनुमानगढ़ की इस मिट्टी ने 70 के दशक के बाद कृषि उपज के मामले में कीर्तिमान बना दिए। नहर के वरदान से धोरों की धरती का ये टुकड़ा नन्दन कानन सा हो गया लेकिन अब जल दूषित है, अन्धाधुंध रसायनों का उपयोग हो रहा है जिससे गंगानगर जिले के लोगों पर विभिन्न बीमारियों का विशेषकर कैंसर का कहर बरस रहा है।

जितना जरूरी खेत की रक्षा करना है उतना ही जरूरी खेत की उपज को खाने वाले इन्सान की रक्षा करना भी है। अफसोस इस बात का है कि हरित क्रान्ति के बाद से हमारे सारे रहनुमा खेत की पैदावार बढ़ाने के एक–सूत्रीय कार्यक्रम में जुट गए। वे भूल गए कि पैदावार बढ़ाने के लिये भयावह तरीके से जिस रासायनिक खाद कीटनाशकों का इस्तेमाल किया जा रहा है वह न केवल खेत को खा रहे हैं बल्कि कैंसर जैसी खतरनाक बीमारियां देकर मानव को भी खा रहे हैं, पारिस्थितिकीय संरचना को प्रभावित कर रहे हैं कम जमीन से ज्यादा पैदावार की होड़ में हजारों प्रजाति के देशी बीज लुप्त हो गए हैं और हो रहे हैं। वहीं पर्यावरणीय पारिस्थितीकीय पर आश्रित कई पक्षी प्रजातियां भी लुप्त हो रही हैं ओर कई विलुप्ती की कगार पर आ गयी हैं नवीन तकनीकियों के प्रयोग से उपजी इन समस्याओं के प्रभाव को जानने के लिये ही इसे अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य बनाकर शोध प्रबन्ध को 8 अध्यायों में वर्णित किया गया है।

अध्यायों का प्रारुप : प्रस्तुत अध्ययनों को आठ अध्यायों में विभाजित किया गया हैं।

प्रथम अध्याय प्रस्तावना के रूप में प्रस्तुत किया गया हैं जिसमें अध्ययन से सम्बन्धित उद्देश्य, शोध समस्या, परिकल्पाना की समीक्षा उपलब्ध साहित्य अध्ययन क्षेत्र, अध्ययन विधि तंत्र और अध्ययन की विस्तृत रूपरेखा प्रस्तुत की

गयी है। **द्वितीय अध्याय** में अध्ययन क्षेत्र की भौगोलिक पृष्ठभूमि का विवेचन किया गया है जिसमें गंगानगर जिले की भूगर्भिक संरचना, भौतिक स्वरूप, उच्चावच अपवाह तंत्र, मिट्टी, जलवायु, जनसंख्या, प्राकृतिक वनस्पति, खनिज संसाधन, एवं उद्योगों का वर्णन किया गया है। **तृतीय अध्याय** में भूमि उपयोग का वन, कृषि के लिये अनुपलब्ध भूमि, कृषि अयोग्य भूमि, परती भूमि, शुद्ध बोया गया क्षेत्र, मुख्य फसलें उनकी विशेषताओं, फसली गहनता एवं शस्य सम्मिश्रण प्रदेश आदि के माध्यम से विस्तृत विवेचन किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में सिंचाई के स्रोत, सिंचाई के साधनों एवं कृषि में प्रयुक्त सिंचाई की नवीन तकनीकियों एवं उनके विकास को समझाने का प्रयास किया गया है। **पंचम् अध्याय** में कृषि औजार, कृषि में जैविक एवं यांत्रिक ऊर्जा का उपयोग, उन्नत बीज, रसायनिक उर्वरकों का उपयोग, कीटनाशकों का प्रयोग, पोध–संरक्षण औषधियों एवं खरपतवार से सम्बन्धित अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। **षष्ठम् अध्याय** में कृषि पारिस्थितिकी के प्रभाव को ज्ञात किया गया हैं जिसमें नवीन तकनीकी पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषण किया गया है। **सप्तम् अध्याय** में कृषि में नवीन तकनीकी का पारिस्थितिकी पर प्रभावों का विश्लेषण कर कृषि पारिस्थितिकी के तत्वों क्रमशः नवीन तकनीकी, रासायनिक उर्वरकों एवं सिंचाई सुविधाओं का विश्लेषण किया गया है।

अष्ठम अध्याय में कृषि में नवीन तकनीकी का स्तर मापन एवं कृषि पारिस्थितिकी का अध्ययन किया गया है जिसमें नवीन तकनीकी हेतु स्तरमापन के सूचकांक वर्ग, अति निम्न स्तर, मध्य स्तर, उच्च स्तर एवं अति उच्च स्तर का विस्तृत विवेचन किया गया हैं। अन्त में शोध प्रबन्धक द्वारा समस्त दृष्टिकोणों से आंकलन करते हुए अध्ययन के निष्कर्षों एवं सुझावों का प्रस्तुतीकरण प्रतिदर्श सर्वेक्षण के आधार पर किया गया है, जो मौलिक है, अनुकरणीय है और अध्ययन की सफलता और सार्थकता को प्रदर्शित करता है।

अध्याय–द्वितीय

भौगोलिक पृष्ठभूमि

अध्ययन क्षेत्र गंगनहर द्वारा सिंचित भू–भाग गंगानगर जिला हैं। बीकानेर संभाग के चार जिलों में से सुदूर उत्तरी जिले के अंतर्गत आता है। यह भारतीय मरूस्थल के अर्द्धशुष्क संक्रमणीय प्रदेश के अंतर्गत घग्घर बेसिन का भू–भाग है। इस प्रदेश की स्थलाकृति का निर्माण भूतकालीन नदी जल प्रवाह तथा वर्तमान में शुष्क दशाओं के द्वारा हुआ है। इसी कारण क्षेत्र के धरातल का कुछ भाग स्थायी तथा अस्थायी बालूका स्तूपों द्वारा संस्तरित हैं। मरूभूमि के इस क्षेत्र में जीवनदायिनी कहलाने वाली 'गंगनहर' व 'इन्दिरा गांधी नहर' के आगमन से क्षेत्र की काया पलट हुई है। यह क्षेत्र अपनी नहरी सिंचित कृषि और कृषि पर आधारित औद्योगिक अर्थव्यवस्था के लिए जाना जाता है। गहन कृषि, मिश्रित फसल प्रारूप तथा नगदी फसलों जैसे गन्ना, कपास, तिलहन आदि के उत्पादन ने कृषि आधारित उद्योगों की स्थापना को गति प्रदान की है। सिंचाई विकास के परिणामस्वरूप क्षेत्र की 'अन्न और कपास' के रूप में पहचान बनी हैं।

राजस्थान प्रदेश के उत्तरी भू–भाग में स्थित यह जिला अपना अनूठा इतिहास संजोए हुए हैं। जिले में रंगमहल, बरोर, चूघेर, थैड़ी जैसे ऐतिहासिक स्थल है। जोधपुर राज्य के संस्थापक राव जोधा के पुत्र राव बीका ने 1488 में बीकानेर की स्थापना की थी। कहा जाता हैं कि बीकानेर के इतिहास में ही गंगानगर जिले का इतिहास छिपा है। राव बीका के उपरान्त राव लूणकरण ने बीकानेर राज्य पर राज किया। लूणकरण के पुत्र जरसिंह ने बीकानेर राज्य की सीमाओं को बढ़ाने के लिए अनेक युद्ध किये। वीर और निर्भिक राजपूत शासकों के साहसपूर्ण प्रयत्नों से 15वीं शताब्दी में एक नये बीकानेर राज्य का निर्माण किया गया है। वर्तमान में गंगानगर जिला नाम से ज्ञात यह भू–भाग

भूतपूर्व बीकानेर रियासत का भाग रहा है। भूतपूर्व बीकानेर रियासत वृहत राजस्थान के संयुक्त राज्य के अंतर्गत शामिल हुई और बीकानेर रियासत के अन्य भागों सहित गंगानगर निजामत का क्षेत्र भी राजस्थान राज्य का हिस्सा बना। 30 मार्च, 1949 को मामूली समायोजन के साथ गंगानगर क्षेत्र को नये जिले का स्वरूप दिया गया। गंगनहर आने से पूर्व गंगानगर शहर एक छोटा–सा कस्बा था जो भूतपूर्व रियासत की मिर्जावाली तहसील में 'रामनगर' के नाम से जाना जाता था। गंगनहर आने के पश्चात् यहां कृषि उपज मंडी अर्थात् विपणन केन्द्र की स्थापना हुई। सिंचाई सुविधाओं में वृद्धि होने के कारण इस क्षेत्र में व्यापार व उद्योग के क्षेत्र में भी वृद्धि हुई, जिससे यह कृषि उपज मंडी महाराजा श्रीगंगासिंह जी के नाम पर 'गंगानगर' के नाम से जानी गयी।

2.1 स्थिति एवम् विस्तार

किसी स्थान की अवस्थिति का प्रभाव उस क्षेत्र की न केवल जलवायु अपितु उस क्षेत्र के सम्पूर्ण विकास और वहां की गतिविधियों पर भी पड़ता है। स्थिति का प्रभाव नगर के सम्पूर्ण विकास एवं गतिविधियों पर पड़ता है, अतः यह एक प्राथमिक भौगोलिक तत्व है। गंगानगर जिले का विस्तार पश्चिम में भारत–पाकिस्तान अन्तराष्ट्रीय सीमा के 72º30´ पूर्वी देशान्तर से जिले की सादुलशहर तहसील के पूर्वी भाग के 74º16´ पूर्वी देशान्तर तक तथा दक्षिण में जिले की घड़साना तहसील के दक्षिणी भाग की 28º4´ उत्तरी आक्षांश से गंगानगर तहसील के उत्तरी भाग की 30º6´ उत्तरी आक्षांश तक है। इस प्रकार जिले के क्षेत्रफल का सकल आक्षांशीय एवं देशान्तरीय विस्तार क्रमश : 2º02´ व 1º46´ है। जिले के उत्तर पश्चिम भाग पाकिस्तान के बहावलपुर जिले द्वारा दक्षिणी सीमा बीकानेर जिले की लूणकरणसर, छतरगढ़, खाजूवाला तहसील द्वारा, उत्तर पूर्वी भाग पंजाब राज्य के फिरोजपुर जिले की अबोहर तहसील द्वारा तथा दक्षिण–पूर्वी सीमा हनुमानगढ़ जिले की रावतसर व

संगरिया तहसीलों द्वारा निर्धारित है। तहसीलवार जिले की तहसीलों का क्षेत्रफल तालिका संख्या 2.1 में दर्शाया गया हैं। गंगानगर जिला भारतीय सर्वेक्षण विभाग द्वारा प्रतिनिधि भिन्न 1:1000000 पर प्रकाशित भू–पत्रक संख्या 25A/4, 25 B/3, 25 B/4, 25B/3 के अंतर्गत आता है। जिले की तहसीलों के आक्षांशीय एवं देशान्तरीय विस्तार का विवरण मानचित्र संख्या 2.1 व तालिका संख्या 2.1 में दर्शाया गया है।

तालिका संख्या 2.1

जिला गंगानहर : तहसीलों की अवस्थिति एवं भौगोलिक विवरण

क्र. स.	तहसील	कुल क्षेत्रफल (वर्ग किमी)	आक्षांश उत्तरी	देशान्तर पूर्वी	समुन्द्रतल से ऊंचाई (मी. में)
1	सूरतगढ़	2843.22	$28^0 54' – 29^0 43'$	$73^0 26' – 74^0 16'$	169
2	घड़साना	1589.33	$28^0 04' – 29^0 05'$	$72^0 30' – 73^0 13'$	182
3	रायसिंहनगर	1319.83	$29^0 17' – 29^0 43'$	$73^0 12' – 73^0 43'$	169
4	अनूपगढ़	1155.12	$28^0 56' – 29^0 33'$	$72^0 58' – 73^0 18'$	159
5	गंगानगर	1006.92	$28^0 40' – 30^0 06'$	$73^0 37' – 74^0 08'$	175
6	पदमपुर	847.45	$29^0 28' – 29^0 48'$	$73^0 25' – 73^0 53'$	174
7	करणपुर	817.57	$29^0 40' – 30^0 02'$	$73^0 30' – 73^0 42'$	172
8	विजयनगर	807.13	$29^0 00' – 29^0 25'$	$73^0 18' – 73^0 42'$	175
9	सादुलशहर	768.1	$29^0 22' – 29^0 22'$	$73^0 25' – 74^0 16'$	175
	श्रीगंगानगर	11154.66	$28^0 04' – 30^0 06'$	$72^0 30' – 74^0 16'$	175
	राजस्थान	342239	$23^0 31' – 30^0 12'$	$69^0 30' – 78^0 17'$	150–210

स्रोत : जिला सांख्यिकीय रूपरेखा, आर्थिक एवं सांख्यिकीय निदेशालय राजस्थान जयपुर

सन् 1949 में अपने निर्माण से वर्ष 1994 तक गंगानगर जिले की सीमाओं में कोई परिवर्तन नहीं आया किन्तु 12 जुलाई, 1994 को हनुमानगढ़ जिले के निर्माण के पश्चात् जिले की सीमाओं का पुननिर्धारण कर इसका प्रशासनिक पुननिर्माण किया गया। वर्तमान में जिले को छः उपखण्डों (श्रीगंगानगर, करणपुर, सूरतगढ़, अनूपगढ़, घड़साना एवं रायसिंहनगर) एवं नौ तहसीलों (सादुलशहर, श्रीगंगानगर, करणपुर, पदमपुर, रायसिंहनगर, अनूपगढ़, विजयनगर, घड़साना एवं सूरतगढ़) तथा छः उप तहसीलों (हिन्दूमलकोट,

मानचित्र सं. 2.1

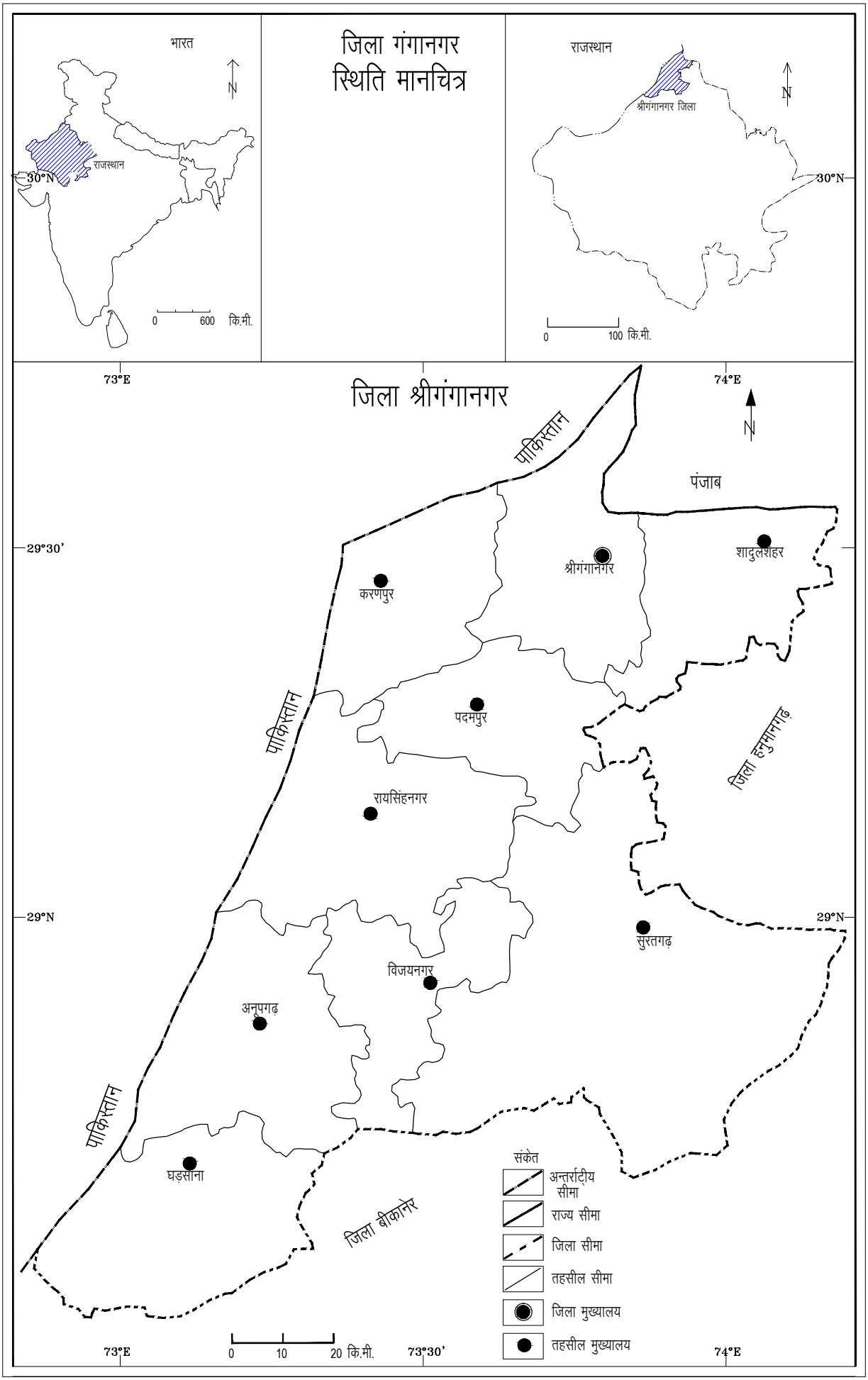
जिला गंगानगर
स्थिति मानचित्र
भारत
राजस्थान
30°N
0 600 कि.मी.
राजस्थान
श्रीगंगानगर जिला
30°N
0 100 कि.मी.
73°E
74°E
जिला श्रीगंगानगर
पाकिस्तान
पंजाब
29°30'
श्रीगंगानगर
शादुलशहर
करणपुर
पाकिस्तान
पदमपुर
जिला हनुमानगढ़
रायसिंहनगर
29°N
29°N
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
पाकिस्तान
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
अन्तर्राष्ट्रीय सीमा
राज्य सीमा
जिला सीमा
तहसील सीमा
जिला मुख्यालय
तहसील मुख्यालय
73°E
0 10 20 कि.मी.
73°30'
74°E

बींझबायला, चूनावढ़, मुकलावा, गजसिंहपुर एवं केसरीसिंहपुर) में विभाजित किया गया है। (मानचित्र स.2.1 एवं तालिका 2.2) जिलें में सात पंचायत समितियां (सार्दुलशहर, गंगानगर, करणपुर, पदमपुर, रायसिंहनगर, अनूपगढ़) एवं 320 ग्राम पंचायते, एक नगर परिषद, एक नगर विकास न्यास एवं नो नगर पालिकाएँ (सार्दुलशहर, करणपुर, पदमपुर, रायसिंहनगर, अनूपगढ़, विजयनगर, केसरीसिंहपुर, गजसिंहपुर एवं सूरतगढ़) हैं। जिले में कुल 3014 ग्राम है, जिनमें से 2738 आबाद एवं 276 ग्राम गैर आबाद हैं। (मानचित्र संख्या 2.2)

तालिका संख्या 2.2

जिला गंगानगर : प्रशासनिक परिवेश

उपखण्ड	तहसील	कस्बों की संख्या	गांवों की संख्या		
			आबाद	गैर आबाद	योग
1. श्रीगंगानगर	1. श्रीगंगानगर	1	278	34	312
	2. सादुलशहर	1	190	23	213
2. करणपुर	1. करणपुर	2	200	37	237
	2. पदमपुर	2	236	11	247
3. रायसिंहनगर	1. रायसिंहनगर	1	353	54	407
	2. विजयनगर	1	264	13	277
4. सूरतगढ़	1. सूरतगढ़	2	416	50	466
5. अनूपगढ़	2. अनूपगढ़	1	385	38	423
6. घड़साना	3. घड़साना	1	416	16	432
	योग	12	2738	276	3014

स्रोतः सामाजिक अर्थव्यवस्था सांख्यिकीय 2004–05, राजस्थान आर्थिक एवं सांख्यिकीय निदेशालय योजना भवन।

मानचित्र सं. 2.2

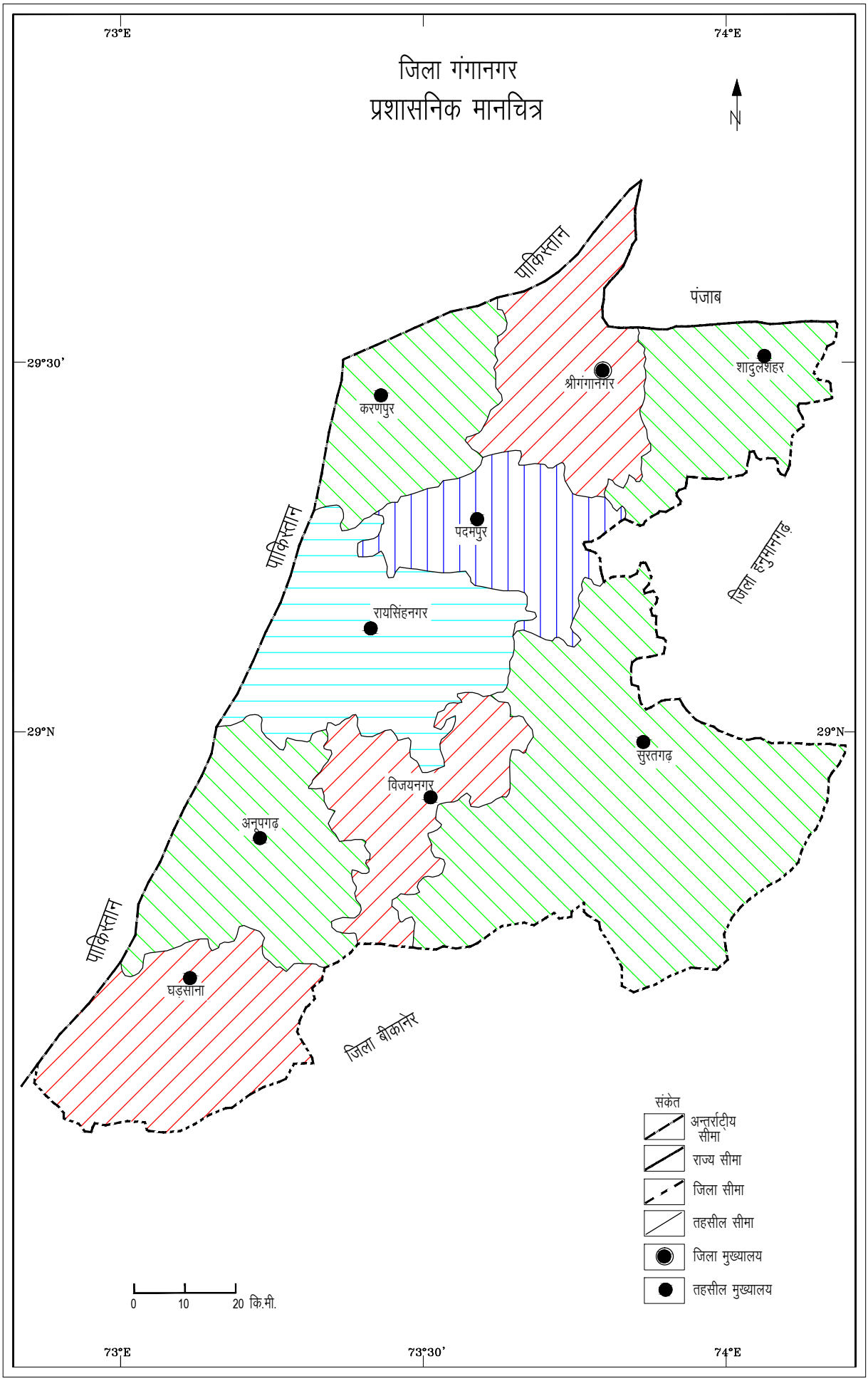
73°E
74°E
जिला गंगानगर
प्रशासनिक मानचित्र
N
पाकिस्तान
पंजाब
29°30'
शादुलशहर
श्रीगंगानगर
करणपुर
पाकिस्तान
पदमपुर
जिला हनुमानगढ़
रायसिंहनगर
29°N
29°N
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
पाकिस्तान
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
अन्तर्राष्ट्रीय सीमा
राज्य सीमा
जिला सीमा
तहसील सीमा
जिला मुख्यालय
तहसील मुख्यालय
0
10
20 कि.मी.
73°E
73°30'
74°E

2.2 भूगर्भिक संरचना

गंगानगर जिला भूगर्भिक दृष्टि से नागौर–गंगानगर बेसिन का भाग है। इस बेसिन का विकास प्रीकेम्ब्रियन से पूर्व की उत्तर दिल्ली पर्वत निर्माण क्रिया से संबंधित है। यह भूगर्भिक क्रिया 7450 लाख से 6000 लाख वर्ष पूर्व हुई थी और प्रारम्भिक केम्ब्रियन काल में नागौर समूह की चट्टानों के जमाव के साथ पूर्ण हुई।(मानचित्र संख्या 2.3)

2.2.1 आधार चट्टानें

अध्ययन क्षेत्र महान भारतीय मरूस्थल 'थार' के अंतर्गत है। मरूस्थलीय क्षेत्र राजस्थान के पश्चिमी 12 जिलों में विस्तृत हैं। गंगानगर जिला थार मरूस्थल का उत्तरी विस्तार है। ऊपर धरातल विस्तृत रूप में बालू कणों से आच्छादित है। इन अवसादों का आधार एक विस्तृत पेडीमेण्ट के रूप में रहा है। धरातल का पूर्वी भाग प्रीकैम्ब्रियन चट्टनों द्वारा निर्मित है।

टरशियरी अनुक्रम

टरशियरी अनुक्रम के जमाव तीन बेसिनों से संबंधित है। इन बेसिनों में जलोढ़ बलुआ पत्थर सागरीय अतिक्रमण से बने। पलाना–गंगानगर शैल वेदिका भी इसी के अंतर्गत सम्मिलित की जाती है। इस वेदिका में निम्न टरशियरी सागरीय अतिक्रमण पश्चिम और उत्तर–पश्चिम से हुआ।

क्वाटर्नरी अनुक्रम

टरशियरी काल की समाप्ति के बाद क्षेत्र में अत्यधिक परिवर्तन हुए जिससे अनाच्छादन की शक्तियों द्वारा पूर्व स्थित स्थलरूप का अपरदन, अवसादों का परिवहन तथा नये क्षेत्रों में निक्षेप हुआ। अध्ययन क्षेत्र में क्वाटर्नरी अवसादों में एकरूपता नहीं पायी जाती। विभिन्न स्थानों पर अवसादों की

मानचित्र सं. 2.3

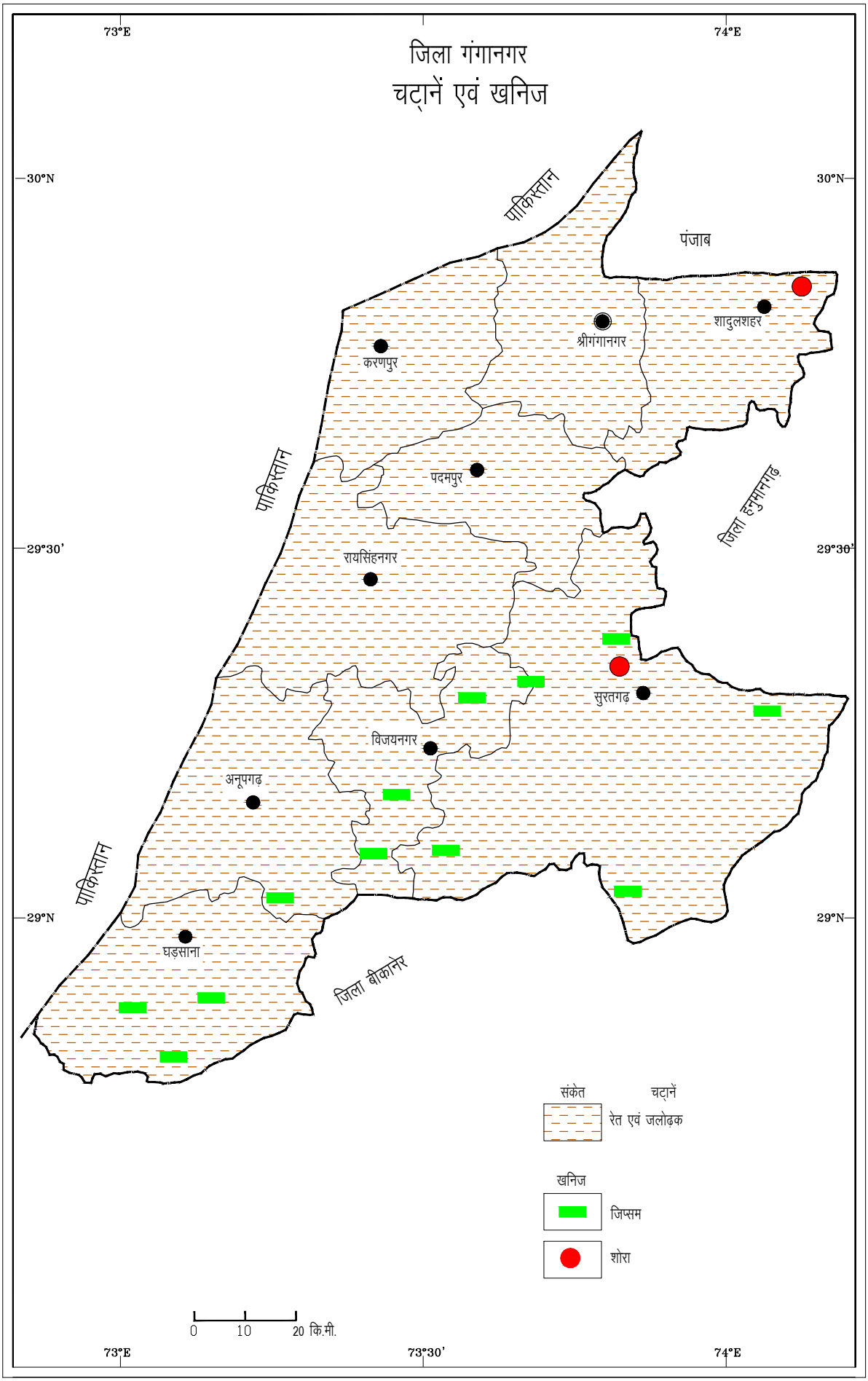
73°E
74°E
जिला गंगानगर
चट्टानें एवं खनिज
30°N
29°30'
29°N
पाकिस्तान
पंजाब
शादुलशहर
श्रीगंगानगर
करणपुर
पदमपुर
जिला हनुमानगढ़
रायसिंहनगर
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
चट्टानें
रेत एवं जलोढ़क
खनिज
जिप्सम
शोरा
0
10
20 कि.मी.
73°30'

मोटाई में भिन्नता है। 18 क्वाटर्नरी अनुक्रम छिद्रण आंकड़ो के आधार पर निम्नलिखित विभाजन किया गया है।

(अ) प्रारम्भिक प्लीस्टोसीन

इस काल के अनुक्रम टरशियरी काल के लवणीय अवसादों पर स्थित पाये जाते हैं। इन अवसादों की प्रकृति और संगठन प्रदर्शित करता है कि इनका जमाव जलीय क्रिया द्वारा आर्द्र से उपार्द्र जलवायु दशाओं में हुआ था। इसकी समाप्ति पर शुष्क दशाओं में जामसर प्रकार के जिप्सम का जमाव हुआ। अध्ययन क्षेत्र के सेम प्रभावित क्षेत्रों में इस प्रकार के जमाव पाये जाते हैं।

(ब) पूर्व प्लीस्टोसीन

यह अनुक्रम अध्ययन क्षेत्र की दक्षिणी और पश्चिमी तहसीलों में विस्तृत है। इस अनुक्रम में वायुढ़ रूपों में प्राचीन क्रम के बालुका स्तूप पाये जाते हैं।

(स) होलोसीन

पूर्व टरशियरी काल में जलवायु दशाएं आर्द्र रही। पुरा जलधाराओं के विसर्पों में पाये जाने वाले जलोढ़ जैसे रेत और बजरी इस समय की जलवायु दशाओं को प्रदर्शित करते है। आर्द्र समय की समाप्ति पर पूर्व होलोसीन काल में जलवायु दशाएं पुनः शुष्क हो गयी जिससे सक्रिय बालुका स्तूपों और अन्तःस्तूप मैदानों का निर्माण तथा पुरा जलधारा प्रणाली का अपरदन हुआ। इससे प्रवाह धारा मार्ग और घाटियां आंतरिक बेसिनों में बदल गये। ऐतिहासिक सरस्वती लगातार बढ़ते मरूस्थलीयकरण से लुप्त हो गयी तथा बाद में उत्पन्न घग्घर जलधारा का मार्ग सूरतगढ़ के समीप बालुकास्तूपों के निर्माण से पूर्व–पश्चिम हो गया तथा अनूपगढ़ के समीप नदी धारा के सम्मुख बढ़ते मरूस्थल के कारण घग्घर अन्तः प्रवाही जल धारा में परिवर्तित हो गयी।

अध्ययन क्षेत्र की अधिकांश सतही बालू का जमाव नूतन काल में हुआ है। इसकी मोटाई 2 से 10 मीटर तक हैं।

2.3 भौतिक स्वरूप

धरातीलय संरचना की दृष्टि से अध्ययन क्षेत्र राजस्थान राज्य के पश्चिमी अर्द्धशुष्क मरूस्थल के घग्घर बेसिन का भू–भाग है। समान्यतः धरातल मैदानी है लेकिन दक्षिणी भाग में सूरतगढ़ के समीप प्राचीन और नवीन बालुकास्तूपों के जमाव पाये जाते हैं।

भूगर्भिक दृष्टि से अध्ययन क्षेत्र का अधिकांश भाग प्लीस्टोसीन युग में पवन द्वारा निक्षेप से तथा दक्षिण व दक्षिण–पश्चिम भाग वर्षाकालीन घग्घर नदी के जलोढ़ निक्षेपों से बना है। काजरी और जी.एस.आई. के अनेक भूवैज्ञानिकों ने गंगानगर जिले व घग्घर बेसिन की भू–आकारिकी का अध्ययन किया है। इनमें कार एवं घोष (1984), अली (2012), गुप्त (1988), गुर्जर (1990) आदि प्रमुख है। इन विद्वानों के अध्ययन के आधार पर क्षेत्र की धरातलीय संरचना की ढाल, अपरदन विशेषताओं, अवसादों के आकार और आकृति के अनुसार निम्नलिखित इकाईयों में विभाजित किया गया है (मानचित्र सख्यां 2.4)।

2.3.1 मैदानी क्षेत्र

(अ) गंगनहर का उत्तरी सिंचित क्षेत्र

अध्ययन क्षेत्र गंगानहर जिले का उत्तरी भाग पूर्ण रूप से गंगनहर द्वारा सिंचित क्षेत्र है। यह एक समतल और कृषि प्रधान क्षेत्र है। प्राचीन नदियों द्वारा शिवालिक हिमालय से प्रवाहित जलोढ़ निक्षेपों द्वारा यह मैदान निर्मित हुआ हैं। कालान्तर में नदियों के विलुप्त हो जाने से जलोढ़ निक्षेप अनेक स्थानों पर

मानचित्र सं. 2.4

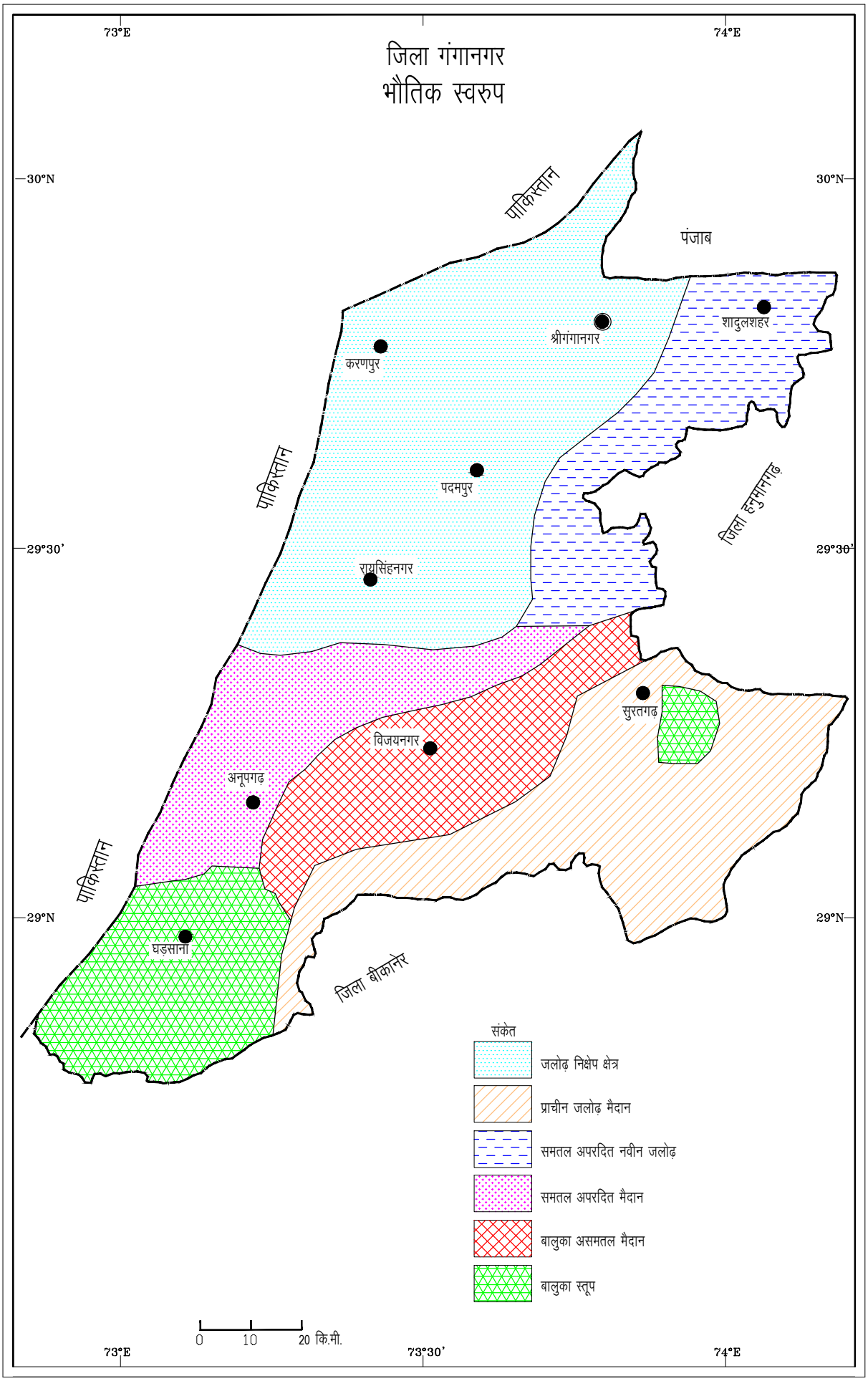
73°E
74°E
जिला गंगानगर
भौतिक स्वरुप
30°N
29°30'
29°N
पाकिस्तान
पंजाब
शादुलशहर
श्रीगंगानगर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
जिला हनुमानगढ़
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
जलोढ़ निक्षेप क्षेत्र
प्राचीन जलोढ़ मैदान
समतल अपरदित नवीन जलोढ़
समतल अपरदित मैदान
बालुका असमतल मैदान
बालुका स्तूप
0 10 20 कि.मी.
73°30'

वायुढ़ निक्षेपों से पूर्णतया ढक गये है। इस मैदान के अंतर्गत जिले का तीन चौथाई भाग आता हैं।

(ब) अर्द्धसिंचित दक्षिणी – पूर्वी क्षेत्र (समतल अपरदित मैदान)

अध्ययन क्षेत्र का दक्षिण–पूर्वी भाग रेतीला व अर्द्ध सिंचित क्षेत्र है। इस क्षेत्र में बालुका स्तूपों के मध्य विस्तृत बलुई समतल क्षेत्र पाये जाते है। ये मैदान लगभग समतल है। इनका ढाल 0 से 1 प्रतिशत तक है। इसके अंतर्गत मरू मैदान और मरूस्थलीय मिट्टियों के क्षेत्र में आते हैं इनमे कैल्शियम कार्बोनेट पाया जाता हैं। इस प्रकार के मैदान सूरतगढ़, विजयनगर, अनूपगढ़ और घड़साना तहसीलों में अधिक विस्तृत हैं।

(स) समतल अपरदित प्राचीन जलोढ़ मैदान

अध्ययन क्षेत्र के पूर्वी और दक्षिण पूर्वी भाग में इस प्रकार के मैदान पाये जाते हैं। इन मैदानों में मोटे कणों से युक्त अवसाद पाये जाते हैं। धरातलीय गठन दोमट बलुई से बालू के रूप में हैं।

(द) समतल अपरदित नवीन जलोढ़ मैदान (घग्घर बेसिन)

अनूपगढ़ व विजयनगर तहसीलों तथा सूरतगढ़ कस्बे के उत्तर में घग्घर नदी द्वारा प्रतिवर्ष नवीन जलोढ़ का निक्षेप किया जाता है। यह मैदान पूर्व से पश्चिम लम्बा व संकड़ा क्षेत्र है। यद्यपि घग्घर नदी के प्रवाह मार्ग में विभिन्न स्थानों पर कच्चे बांधों के निर्माण से जलोढ़ निक्षेप प्रभावित हुआ है लेकिन बाढ़ के समय नदी का जल समीपस्थ भागों में फैल जाता है। मैदान समतल है, अतः इन मैदानों में सूरतगढ़ कस्बे के उत्तर में कृषि फार्म की स्थापना की गयी है। इसी प्रकार का विस्तृत कृषि फार्म जैतसर के समीप भी स्थापित किया गया हैं।

2.3.2 वायु निक्षेपित स्थलाकृति

वायुढ़ स्थलाकृति अध्ययन क्षेत्र के दक्षिणी भाग की प्रमुख स्थलाकृति है। इंदिरा गांधी नहर के उत्तरी भाग विशेषकर सूरतगढ़ कस्बे के दक्षिण में तथा नहर के दक्षिण में अर्जुनसर कस्बे के समीप इसका विस्तार है। इसके अंतर्गत बालुका असमतल मैदान, बालुका स्तूप और अन्तः बालुकास्तूप मैदान सम्मिलित किये जाते हैं। वायुढ़ जमावों की मोटाई 10 से 15 मीटर तक है। इनका स्रोत स्थानीय मौसमी नदी तंत्र है। ओलविन (1978) ने बताया कि शुष्क समय में सौराष्ट्र और कच्छ तट से बालू का परिवहन कर मरूस्थल में निक्षेप किया जाता है। इस स्थलाकृति को निम्नलिखित लघु इकाईयों में विभाजित किया गया हैं। (मानचित्र संख्या .....)

(अ) बालुका असमतल मैदान :

इस प्रकार के क्षेत्र दक्षिण–पश्चिमी बालुका मैदान और स्तूपों के मध्य संक्रमणीय कटिबन्ध है। विजयनगर, अनूपगढ़ और सूरतगढ़ तहसीलों में नवीन बालू जमाव पाये जाते है। इन भागों में वायु क्रिया से जमाव 0.4 से 1 मीटर ऊँचाई तक है। इनका ढाल असमतल है। ऐसे भागों में अपवाह तंत्र का अभाव है। बालुकास्तूपों की तुलना में ये मैदान नवीन है जो यह प्रदर्शित करता हैं कि स्तूपों का पुनः निर्माण शुष्क जलवायु दशाओं में हुआ हैं।

(ब) बालुकास्तूप

बालुकास्तूप असंगठित बालु जमावों से निर्मित है। इनका वर्गीकरण निर्माण, आयु और स्थिरता के आधार पर किया गया है।

(1) प्राचीन क्रम के स्तूप (स्थिर स्तूप): सूरतगढ़ कस्बे के दक्षिण में 5 से 10 किलोमीटर दूरी तक पवनानुवर्ती, अनुप्रस्थ, परवलय और अवरोधक स्तूप पाये जाते हैं। इनका विस्तार घग्घर परिवर्तित शाखा के सहारे है। सामान्यतः

ये स्तूप स्थिर हैं। स्तूपों के मध्यवर्ती निम्न गर्तों में घग्घर नदी के वर्षाकालीन अतिरिक्त जल को छोड़ने से तालाब बन गये हैं। यह माना जाता हैं कि इनका निर्माण सम्भवतः प्रारम्भिक शुष्क जलवायु काल में हुआ था। इन स्तूपों का निर्माण लगभग 10000 से 15000 ई. पू. माना गया है। ऐसे स्तूप प्राकृतिक रूप से स्थिर है यद्यपि इनकी ऊपरी सतह पर नवीन बालू जमाव पाये जाते है। इनकी उत्पत्ति या तो परवलय स्तूप या बरखान से हुई है। अनुप्रस्थ स्तूपों की शीर्ष रेखा चौड़ी चन्द्राकार पायी जाती हैं।

(2) नवीन क्रम के स्तूप (सक्रिय स्तूप): वर्तमान में निर्मित हो रहे अधिकांश स्तूप बरखान, बरखोनोयड, मेगा बरखोनोयड और निम्न बालुका पट्टिका के रूप में हैं। ऐसे स्तूप गतिशील और वनस्पति रहित है। इनका विस्तार बीकानेर मरूस्थल और संक्रमणीय घग्घर बेसिन की दक्षिणी सीमा के सहारे है। इन गतिशील स्तूपों की ऊँचाई 2 से 12 मीटर तक पायी जाती है। सूरतगढ़ के राजकीय महाविद्यालय के दक्षिण में इस प्रकार के विस्तृत बालुकास्तूप पाये जाते है। इनका निर्माण क्षेत्र में प्रचलित दक्षिण–पश्चिमी हवाओं तथा अनुप्रस्थ बालू कटकों के साथ मिलने से हुआ है।

तालिका संख्या 2.3
तहसीलवार भू–स्वरूपों का विवरण

भूस्वरूप	सूरतगढ़	विजय नगर	घड़साना	अनूपगढ़	रायसिंह नगर	पदमपुर	करनपुर	गंगानगर	सादुर्लशहर	योग
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11
1. नदी तल	1486 (0.14)	591 (0.05)	–	323 (0.03)	–	–	–	–	–	2400 (0.22)
2. समतल, पुरातन जलोढ मैदान	44134 (4.04)	41634 (3.81)	54858 (5.02)	54078 (4.95)	77930 (7.13)	74945 (6.86)	69360 (6.35)	95305 (8.63)	69478 (6.36)	580722 (53.15)
3. बलुई, उबड़–खाबड़, पुरातन जलोढ मैदान	23438 (2.14)	17961 (1.64)	17877 (1.63)	30662 (2.80)	50914 (4.66)	8827 (0.81)	11812 (1.08)	4333 (0.40)	6817 (0.62)	172641 (15.78)
4. बालू टिब्बा	116716 (10.68)	13418 (1.23)	45021 (4.12)	19511 (1.79)	2742 (0.25)	515 (0.04)	715 (0.06)	–	736 (0.07)	199394 (18.24)
5. समतल आतंरिक बालू	24703	1239	9461	3091	–	–	–	–	–	39894

टिब्बा	(2.26)	(0.24)	(0.87)	(0.28)						(3.65)
6. रेतिला, उबड़–खाबड, आतंरिक बालू टिब्बा	69867 (6.39)	2946 (0. 27)	11032 (1.01)	2387 (0.22)	–	–	–	–	–	86232 (7.89)
7. युवा जलोढ़ मैदान	3652 (0.33)	5162 (0. 47)	–	5206 (0.48)	–	–	–	–	–	14020 (1.28)
योग	283996 (25.99)	82951 (7.59)	138249 (10.45)	114258 (10. 45)	131586 (12.04)	84287 (7.71)	81887 (7.49)	88638 (9.03)	77031 (7.05)	1092883 (100.00)

स्रोतः भारतीय सर्वेक्षण विभाग, काजरी एवं क्षेत्र सर्वेक्षण।

2.4 उच्चावच एवम् जल प्रवाह

अध्ययन क्षेत्र की सामान्य भूदृश्यावली मैदानी है लेकिन क्षेत्र में बिखरे हुए रूप में विविध प्रकार के बालुकास्तूप मिलते है। सामान्यतः स्तूप पवनानुवर्ती हैं। जिनकी दिशा प्रचलित पवनों के अनुरूप दक्षिण–पश्चिम से उत्तर–पूर्व हैं। यद्यपि नहरी सिंचाई के विकास से निम्न ऊँचाई के बालुकास्तूपों को समतल कर कृषि के अंतर्गत लाया गया है। अध्ययन क्षेत्र का उत्तरी भाग गंगा के मैदान व दक्षिणी भाग गंग बांगड़ के अंतर्गत आता है। जिले के दक्षिण भाग में स्थित अनूपगढ़ तहसील में अंतः प्रवाही घग्घर नदी का वर्षाकालीन जल फैल जाता है। इससे वर्षाकाल में यहां दलदल बन जाते हैं। नहरी जल के प्रभाव से भी सूरतगढ़ तहसील में कई स्थानों पर दलदल पाये जाते हैं।

अध्ययन क्षेत्र में सामान्य स्थलाकृति समतल मैदान के रूप में हैं। जिले की समुद्रतल से औसत ऊँचाई 150 से 210 मीटर है। अधिकांश भू–भाग नहरी सिंचाई के प्रभाव से समतल व हरित है। यद्यपि धरातलीय ढाल में स्थानीय भिन्नताएं पायी जाती है। जिले के उत्तरी व मध्य भाग की सूरतगढ़, विजयनगर, अनूपगढ़ और घड़साना तहसीलों का ढाल घग्घर के प्रवाह दिशा में पूर्व से पश्चिम में हैं। ढाल के अनुसार ही उत्तरी भाग में गंगनहर उत्तर से दक्षिण अंतर्राष्ट्रीय सीमा के सहारे निकाली गयी है। अनूपगढ़ और घड़साना तहसीलों में इंदिरा गांधी नहर की अनूपगढ़ शाखा पूर्व से पश्चिम व दक्षिण की और प्रवाहित होती हैं। सम्पूर्ण क्षेत्र की ढाल प्रवणता 0.75 मीटर प्रति किलोमीटर है। न्यूनतम औसत ऊँचाई सूरतगढ़ तहसील में 169 मीटर है। गंगानगर और विजयनगर तहसीलों में अधिकतम ऊँचाई 175 मीटर (समुद्रतल) से हैं।(मानचित्र सख्यां 2.5)

मानचित्र सं. 2.5

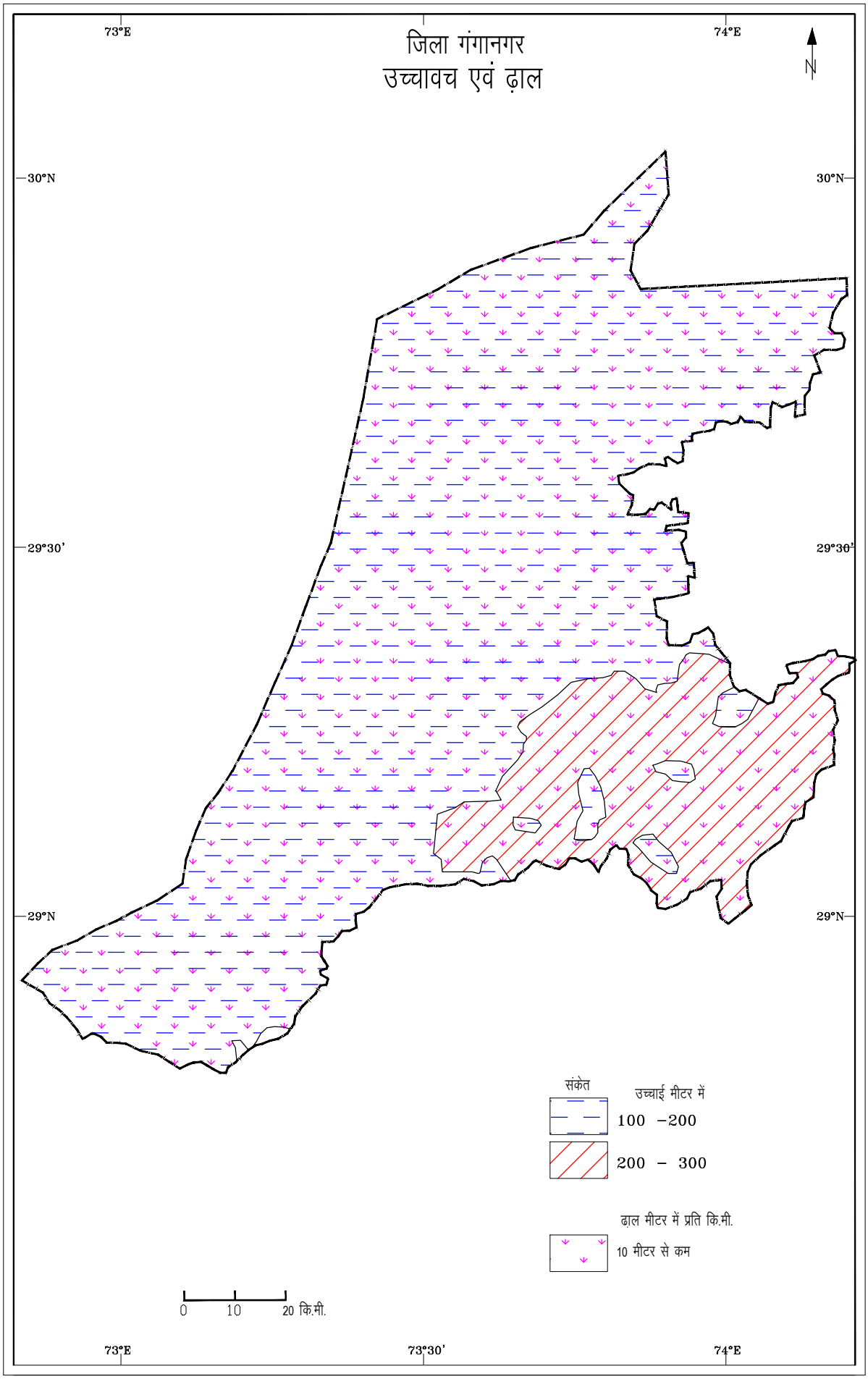
जिला गंगानगर
उच्चावच एवं ढ़ाल
73°E
74°E
N
30°N
29°30'
29°N
73°30'
संकेत
उच्चाई मीटर में
100 –200
200 – 300
ढ़ाल मीटर में प्रति कि.मी.
10 मीटर से कम
0
10
20 कि.मी.

अपवाह तंत्र

अध्ययन क्षेत्र आंतरिक जल प्रवाह का क्षेत्र है अतः क्षेत्र में मौसमी नदी के अतिरिक्त कोई विशिष्ट जल प्रवाह प्रणाली नहीं पायी जाती है।

पुरातत्व प्रमाणों के अनुसार वैदिक काल में सरस्वती (सप्तथी) नदी गंगानगर जिले से होकर प्रवाहित होती थी। वर्तमान से 40000 वर्ष पूर्व थार मरूस्थल अधिकाधिक आर्द्र क्षेत्र था। घोष (1980) के अनुसार हिमालय से निकलने वाली सरस्वती नदी गंगानगर से होकर प्रवाहित होती थी। बाकलीवाल और ग्रोवर (1999) ने सरस्वती नदी की सात प्रमुख पलायन अवस्थाओं की पहचान की। क्षेत्र में शुष्कता में वृद्धि, अग्रगामी बालू और अंतिम क्वाटनरी समय में धीमी विवर्तनिक क्रियाओ से धीरे–धीरे यह जलधारा पश्चिम की ओर स्थानांतरित हो गयी।

घग्घर नदी

अध्ययन क्षेत्र में वैदिक कालीन सरस्वती नदी के अवशिष्ट रूप में घग्घर नदी प्रवाहित होती है। यह एक मौसमी नदी है। इस नदी का उद्‌गम हिमाचल प्रदेश में शिमला जिले में मध्य समुन्द्रतल से 1927 मीटर ऊँचाई पर स्थित है। यह अपने सम्पूर्ण प्रवाह मार्ग में दक्षिण–पश्चिम में प्रवाहित होती है। हरियाणा राज्य में यह काकला के समीप (उद्‌गम से 10 किलोमीटर) प्रवेश करती है। पातीलवाली नाला इसके दायें किनारे पर मिलता है। बायें किनारे पर भातराना गांव (उद्‌गम से 148 किलोमीटर) समीप तीन सहायक नदिया क्रमशः टांगरी, मरकन्डा और सरस्वती इससे मिलती है। यहां से नदी का प्रवाह मार्ग पश्चिमी होता है। हनुमानगढ़ के समीप यह राजस्थान में प्रवेश करती है। अध्ययन जिले में यह नदी सूरतगढ़ और अनूपगढ़ तहसीलों में प्रवाहित होती हुई थार मरूस्थल के बालुकास्तूपों में विलीन हो जाती है। नदी की कुल लम्बाई 291 किलोमीटर तथा ओटू हैड तक प्रवाह क्षेत्र 1309 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में हैं।

घग्घर नदी में मानसून काल में सामान्यत बाढ़ आती है। स्थानीय क्षेत्र में इसे 'नाली' कहा जाता है। घग्घर नदी क्षेत्र में वर्षाकालीन जल को बांधों द्वारा एकत्रित कर सिंचाई की जाती है। इसके अतिरिक्त इस नदी क्षेत्र में नलकूपों द्वारा सिंचाई की जाती है।

2.5 मृदा

मिट्टी पर्यावरण का सबसे महत्वपूर्ण तत्व है। अध्ययन क्षेत्र का धरातल विस्तृत रूप से बालुका मैदानों और स्तूपों से निर्मित है।(मानचित्र सख्यां 2.6) मृदा गहरी, चूनामय तथा वायु द्वारा प्रवाहित महीन बालू से महीन दोमट के रूप में पायी जाती है। मौसमी घग्घर नदी द्वारा भी प्रति वर्ष प्रवाहित क्षेत्र में नवीन मृदा का निक्षेप किया जाता है। (तालिका संख्या 2.4)

तालिका संख्या 2.4

जिला गंगानगर : मृदा प्रकार एवं वितरण

भूमि प्रकार	क्षेत्रफल (हेक्टेयर)	तहसील
रेतीली लोम	825474	श्रीगंगानगर, करनपुर, पदमपुर, रायसिंहनगर
रेतीली	825474	सूरतगढ, अनूपगढ़, सादुलशहर
चिकनी	415738	अनूपगढ, सूरतगढ़

स्रोत : कार्यालय जिला कलेक्टर (भूअभिलेख), श्रीगंगानगर

अध्ययन क्षेत्र की मृदा का वर्गीकरण मृदा वर्गिकी इकाईयों के आधार पर किया गया हैं।

2.5.1 रेतीली व दुमट मृदा

अध्ययन क्षेत्र में यह मृदा कुछ गहराई में बालू और चिकनी मिट्टी के रूप में पायी जाती है। यह संरचना में कछारी और कृषि के लिये अत्यन्त उपयोगी है। इस प्रकार की मिट्टी गंगानगर जिले की श्रीगंगानगर, करणपुर,

मानचित्र सं. 2.6

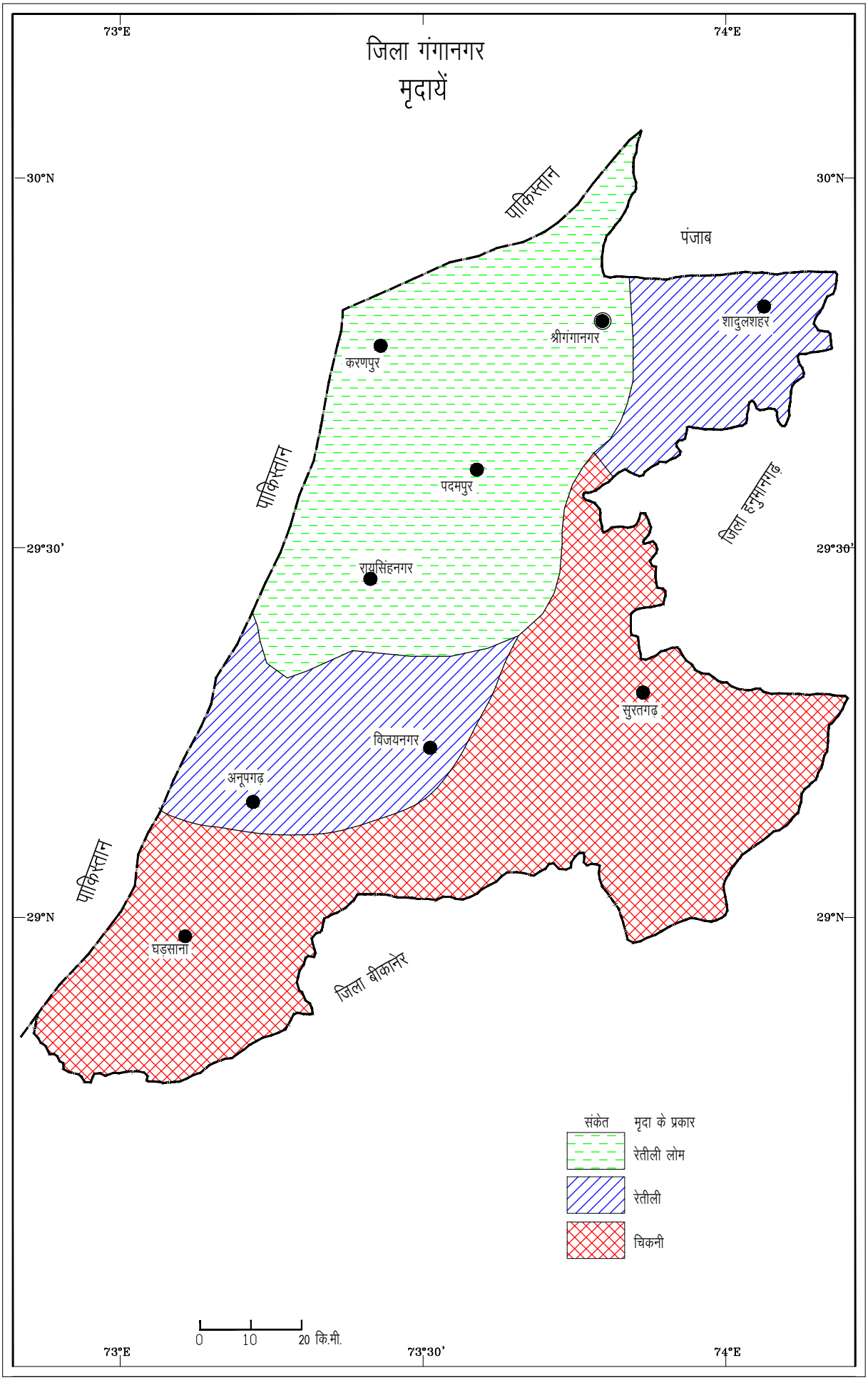
73°E
74°E
जिला गंगानगर
मृदायें
30°N
29°30'
29°N
पाकिस्तान
पंजाब
शादुलशहर
श्रीगंगानगर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
जिला हनुमानगढ़
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
मृदा के प्रकार
रेतीली लोम
रेतीली
चिकनी
0
10
20 कि.मी.
73°30'

पदमपुर, रायसिंहनगर तहसीलों में और सूरतगढ़ तहसील के कुछ भागों में पायी जाती है। अध्ययन क्षेत्र में इस प्रकार की मृदा रबी और खरीफ फसलों के अंतर्गत है। यह मृदा कृषि वानिकी और सिंचित भागों में उद्यान कृषि के लिए भी उपयुक्त।

2.5.2 कठोर चिकनी मृदा

जिले में यह मृदा सतह पर चिकनी है, लेकिन नीचे की परतों में मटियार दोमट मिट्टी पायी जाती है। यह मृदा धूसर भूरी से गहरी धूसर भूरे रंग की मृदा के रूप में काफी गहराई तक पायी जाती है। मध्यवर्ती परतों में यह क्षैतिजीय अवस्था में मिलती है। पीली भूरी से भूरी रंग की मिट्टी निम्न गहराई की परतों में पायी जाती है। यह मृदा गन्ना, ज्वार, सरसों की कृषि के लिए लाभदायक है तथा कपास की कृषि के लिये अत्यनत उपयोगी है। चिकनी मृदा अध्ययन क्षेत्र के गंगानगर, रायसिंहनगर, करणपुर व अनूपगढ़ तहसील के कुछ क्षेत्रों में पायी जाती है।

2.5.3 रेतीली बालू मृदा

इस प्रकार की मृदा में घुलनशील लवणीय पदार्थों की अधिकतया पायी जाती है जिससे इसका पी.एच. मूल्य अधिक होता है। सामान्यत : इसमें जैविक पदार्थों की कमी पाई जाती है। अध्ययन क्षेत्र में इस प्रकार की मृदा दक्षिण–पश्चिमी क्षेत्रों में पायी जाती है। इस समस्त क्षेत्र में वर्षा 10 सेमी. से भी कम होती है। फास्फेट व नाइट्रोजन उर्वरकों के प्रयोग से नहरी सिंचित क्षेत्रों में इसकी उत्पादकता में वृद्धि कर कृषि के अंतर्गत लाया गया है।

2.5.4 बालू स्तूपों की मृदा

इस प्रकार की मृदा गहरी और असमतल स्थलाकृति से संबंधित है। बालुका स्तूपों की ऊँचाई के अनुसार मृदा में चूने की मात्रा और क्षारीयता पायी

जाती है। मृदा का रंग पीला–भूरा पाया जाता है। इस प्रकार की मृदा कृषि कार्यों के लिये उपयुक्त नहीं है। अच्छी वर्षा होने पर स्तूपों के निचले किनारों पर कृषि की जाती है। लेकिन अधिकांशतः इसका उपयोग वर्षाकाल के बाद चारागाहों के रूप में किया जाता है।

2.6 जलवायु

भौगोलिक तत्वों के रूप में जलवायु का स्थान अति महत्वपूर्ण हैं क्योंकि इसका प्रभाव मानव जीवन तथा इसके आर्थिक विकास पर पड़ता है। कठोर जलवायु के कारण कई क्षेत्र अनुपयोगी हो जाते हैं। गंगानगर एवं इसके समीपवर्ती क्षेत्र जलवायु के प्रभाव का एक अच्छा उदाहरण प्रस्तुत करते है। ऐतिहासिक प्रमाणों के अनुसार पहले इस क्षेत्र में घग्घर नदी प्रवाहित होती थी। जिसके फलस्वरूप उस समय यहां की जलवायु नम थी। उत्तरोत्तर गुणवत्ता के अवनयन से यह क्षेत्र वर्तमान में मरूस्थलीय जलवायु की विशेषताएँ रखता हैं।

अक्षांशीय विस्तार के अनुसार देखा जाये तो गंगानगर की स्थिति उपोष्ण प्रदेश में आती है। किन्तु यहां जलवायु सम्पूर्ण भारत की जलवायु के समान ही मानसूनी जलवायु है। अतः गंगानगर में भी सम्पूर्ण भारत के समान नवम्बर से फरवरी तक शीत ऋतु होती है। मार्च से जून तक ग्रीष्म ऋतु एवं जुलाई से वर्षा काल प्रारम्भ होता है, किन्तु इस क्षेत्र के अरब सागरीय मानसून शाखा से दूर रह जाने के कारण यहां बहुत कम वर्षा होती है। किसी भी प्रदेश में मिट्टी की विशेषताओं, उत्पन्न फसल और कृषि को निर्धारित करने में जलवायु एक महत्वपूर्ण प्रभावी कारक है। गंगानगर जिला महान भारतीय मरूस्थल के अर्द्धशुष्क प्रदेश के अंतर्गत आता है।

ग्रीष्मकालीन उच्च तापमान, उच्च दैनिक तापान्तर, न्यून और अनिश्चित वर्षा, उच्च वाष्पीकरण, धूलभरी आंधिया, शुष्क ऋतु आदि अध्ययन क्षेत्र की

जलवायु की प्रमुख विशेषताएं है। आर्द्रता की अनुपलब्धता क्षेत्र की प्रमुख समस्या है। सम्पूर्ण भारत के समान गंगानगर में भी शीत ऋतु नवम्बर से प्रारम्भ होती है तथा मार्च तक रहती है। इसके बाद ग्रीष्म ऋतु अप्रैल से जून तक रहती है। जुलाई से मध्य सितम्बर की अवधि दक्षिण–पश्चिमी मानसून की है, जबकि सितम्बर से अक्टूबर मानसून के बाद की ऋतु हैं।

जिले के जलवायु सम्बन्धी आंकड़े अपर्याप्त रूप से उपलब्ध है। गंगानगर जिले का प्रतिनिधि मौसम विज्ञान केन्द्र है। तहसील स्तर पर वर्षामापी स्टेशन होने से वर्षा के आंकड़े तो उपलब्ध है लेकिन अन्य जलवायु तत्व जैसे तापमान, वायुदाब, वायु दिशा आदि का न तो अंकन किया जाता है न ही संधारण। अधिकांश उपलब्ध आंकड़े स्टीवेन्शन स्क्रीन पर लिये व्यष्टि जलवायु को ही प्रदर्शित करते हैं।

2.6.1 वर्षा

अध्ययन क्षेत्र की स्थिति भारत में पश्चिमवर्ती होने के कारण मानसून की दोनों शाखाओं का प्रभाव इस क्षेत्र में अधिक व्यापक नहीं है। इससे यहां वर्षा की मात्रा कम है। अरब सागरीय मानसून शाखा के मार्ग में यह क्षेत्र नहीं आ पाता जबकि बंगाल की खाड़ी की शाखा यहां तक पहुंचते–पहुंचते वर्षा विहीन हो जाती है। अतः अध्ययन क्षेत्र में न्यून और अत्यधिक वर्षा प्रमुख लक्षण है। न्यून वर्षा वायु के 0.8 किमी. ऊँचाई तक निम्न स्तरीय अपसरण और गर्त से संबंधित है। न्यून वर्षा का अन्य कारण वायु में उपस्थित धूलीकरण है जो मृदा सतह को एल्विडो और वाष्पीकरण अवशीतन प्रक्रिया द्वारा प्रभावित करते है। अतः राजस्थान के मरूस्थलीय भागों में 5 वर्ष में एक बार तथा अर्द्धशुष्क भागों में 8 वर्ष में एक बार जलाभाव की संभावना होती है।

गंगानगर जिले में मार्च के उत्तरार्द्ध से गर्मी की तीव्रता में उत्तरोत्तर वृद्धि के कारण तापमान, वायुदाब और वायु दशाएं जून के मध्य तक अत्यधिक तीव्र

और प्रचण्ड हो जाती है। अतः इस भू–भाग पर मानसून के प्रारम्भ होने तक गर्म और न्यून वायुदाब का क्षेत्र बन जाता है। इस क्षेत्र में मानसून वर्षा बंगाल की खाड़ी तथा अरब सागरीय शाखा से सम्बन्धित हैं।

(अ) वार्षिक वर्षा का वितरण

अध्ययन क्षेत्र की वार्षिक औसत वर्षा 25.40 सेमी. है। शीत ऋतु में यहां पश्चिमी विक्षोभों से कुछ वर्षा भी होती है। इस क्षेत्र में मुख्यतया वर्षा जुलाई, अगस्त और सितम्बर माह में होती है। जुलाई और अगस्त दो महीनों में वार्षिक वर्षा का 50 प्रतिशत से अधिक प्राप्त होता हैं। अध्ययन क्षेत्र में पश्चिमी विक्षोभ द्वारा वर्षा शीतकालीन असिंचित फसलों की वृद्धि में सहायक होती है, लेकिन कही भी वर्षा सामान्य वार्षिक वर्षा 30 सेमी. से अधिक नहीं है। (मानचित्र संख्या 2.7) जिले में औसत वर्षा तथा वर्षा की परिवर्तिता को प्रदर्शित करता हैं। ब्रन्श के अनुसार जनसंख्या और वर्ष में साम्यता जाई जाती है। गंगानगर जिले की वार्षिक वर्षा 20–30 से.मी. हैं।

तालिका संख्या 2.5

जिला गंगानगर : औसत वार्षिक वर्षा (1998 – 2014)

वर्ष	सामान्य वर्षा (से.मी)	वास्तविक वर्षा (से.मी.)	सामान्य से अन्तर
1998	25.37	35.40	–10.03
1999	25.37	23.82	–1.55
2000	25.37	24.07	–1.30
2001	25.37	29.80	4.43
2002	25.37	24.09	–1.28
2003	25.37	22.06	–3.36
2004	25.37	23.81	–1.56

2005	25.37	20.47	–4.96
2006	25.40	13.72	–11.70
2007	25.40	29.08	. 3.69
2008	25.40	12.02	–13.38
2009	25.40	29.08	. 3.68
2010	25.40	11.77	–13.63
2011	25.40	16.80	. 8.60
2012	25.40	16.70	–8.70
2013	25.38	19.80	–5.58
2014	25.40	19.80	–5.6

स्रोत : मौसम विभाग, श्रीगंगानगर

अध्ययन क्षेत्र में सन् 2004 में औसत वर्षा 23.81 सेमी., सन् 2005 में वर्षा 20.47 सेमी., सन् 2006 में घटकर 13.72 सेमी., सन् 2008 में 12.02 सेमी. तथा सन् 2014 में 19.80 सेमी रहा (तालिका संख्या 2.5)।

जिले में वर्ष 2014 में विभिन्न तहसीलों में ग्रीष्मकालीन व शीतकालीन वर्षा को तालिका 2.6 में प्रदर्शित किया गया हैं।

तालिका संख्या 2.6

जिला गंगानगर : तहसीलवार वर्षा (2014)

तहसील	**शीतकालीन वर्षा (पश्चिमी विक्षोभ) मिमि**	**ग्रीष्मकालीन मानसून वर्षा मिमि**
श्रीगंगानगर	46	163
करणपुर	47	98
पदमपुर	30	123

मानचित्र सं. 2.7

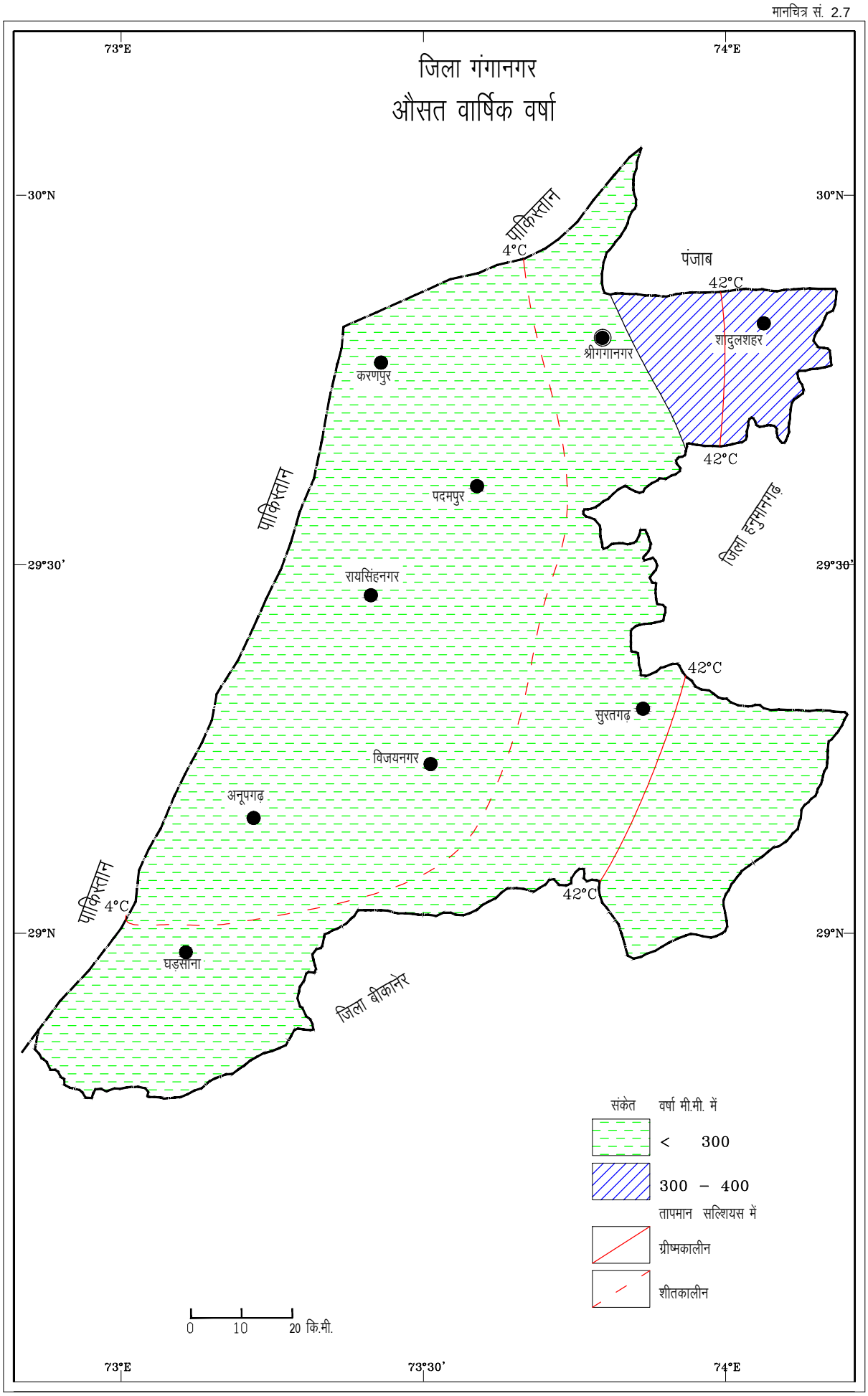
जिला गंगानगर
औसत वार्षिक वर्षा
73°E
74°E
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
जिला हनुमानगढ़
जिला बीकानेर
4°C
42°C
श्रीगंगानगर
शादुलशहर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
संकेत
वर्षा मी.मी. में
< 300
300 – 400
तापमान सल्शियस में
ग्रीष्मकालीन
शीतकालीन
0 10 20 कि.मी.

रायसिंहनगर	24	89
अनूपगढ़	38	151
घड़साना	39	141
विजयनगर	90.5	194.5
सूरतगढ़	29	134
सादुलशहर	94	209

स्रोत : मौसम विभाग, श्रीगंगानगर

तालिका से स्पष्ट हैं कि मानसून कालीन वर्षा कृषि उत्पादन के लिये अपर्याप्त है। फसल उत्पादन के लिए कृत्रिम साधनों से जलापूर्ति आवश्यक है। ग्रीष्मकालीन वर्षा में भी विभिन्न तहसीलों में आसमान वितरण है। वर्ष 2014 में विजयनगर तहसील की वर्षा 194.5 मिलीमिटर थी। न्यूनतम वर्षा 89 मीलीमिटर रायसिंहनगर तहसील की थी। पश्चिमी विक्षोभ द्वारा दिसम्बर से मार्च माह तक वर्षा होती है। यद्यपि इसकी मात्रा कम है। लेकिन शीतकालीन फसलों के लिये यह लाभप्रद हैं।

(ब) वर्षा की परिवर्तनशीलता

वर्षा की परिवर्तनशीलता इसकी प्रभावशीलता को प्रभावित करती है। अध्ययन क्षेत्र में प्रतिवर्ष तथा विभिन्न स्थानों पर वर्षा की मात्रा में अत्यधिक भिन्नता पायी जाती है (तालिका संख्या 2.6)। यह क्षेत्र में वर्षा की अनियमितता और अनिश्चितता को प्रदर्शित करती है। मानसून की असफलता अकाल और सूखा उत्पन्न करती है। अध्ययन क्षेत्र की सभी तहसीलों में वर्षा की मात्रा कम है, यद्यपि स्थान विशेष पर वर्षा की मात्रा में प्रत्येक वर्ष भारी अन्तर पाया जाता है। जल वृष्टि की यह परिवर्तनशीलता कृषि उत्पादन को तथा अप्रत्यक्ष रूप से क्षेत्र की आर्थिक व्यवस्था को प्रभावित करती हैं।

(स) वार्षिक वर्षा की संभाव्यता

गंगानगर जिले की वर्षा की संभावना के बारे में भी आंकलन किया गया है जो वार्षिक वर्षा के 100 मि.मी. से 600 मि.मी. से अधिक की संभावना के बारे में है। अधिकांश स्टेशनों पर 200 मि.मी. वर्षा की संभावना 81 से 95 प्रतिशत के बीच आकी गई है तथा 600 मि.मी. से अधिक वर्षा की सम्भाव्यता अत्यधिक कम है जो तालिका 2.7 में दर्शायी गयी है –

तालिका संख्या 2.7

विभिन्न स्टेशनों पर वार्षिक वर्षा की संभाव्यता

स्टेशन	वार्षिक वर्षा (मि.मी.) की प्रतिशत संभाव्यता						
गंगानगर	100	200	300	400	500	600	600 से अधिक
करणपुर	100	95	66	24	11	4	3
पदमपुर	100	92	56	17	13	2	2
रायसिंहनगर	100	90	54	19	2	2	–
अनूपगढ़	100	88	54	19	4	–	–
सूरतगढ़	100	81	44	21	13	4	–
सादूर्लशहर	100	95	71	39	18	5	3

स्रोतः मौसम विज्ञान विभाग, भारत सरकार केन्द्र, जयपुर।

इस आंकलन में घड़साना व विजयनगर को सम्मिलित नहीं किया गया है क्योंकि इन स्टेशनों पर आगामी आंकलन में वर्तमान विचलन की स्थिति काफी अधिक है। संभाव्यता की दृष्टि से पूरे जिले में 100 मि.मी. वर्षा की पूर्व संभाव्यता है। 300 मि.मी. वर्षा की संभाव्यता सादूलशहर में 71 प्रतिशत व रायसिंहनगर, अनूपगढ़ व सूरतगढ़ में 54 प्रतिशत है। 400 मि.मी. वर्षा की संभाव्यता सादूलशहर में 39 प्रतिशत व पदमपुर में 17 प्रतिशत है। 500 मि.मी. वर्षा की संभाव्यता न्यूनतम रायसिंहनगर में 2 प्रतिशत व सादूलशहर में 18 प्रतिशत है। 600 मि.मी. वर्षा की संभाव्यता पदमपुर में 8 प्रतिशत व

रायसिंहनगर में 2 प्रतिशत है। 600 मि.मी. से अधिक वर्षा की संभाव्यता गंगानगर सार्दूलशहर व करणपुर में मानी गई है जो विगत वर्षों की वर्षा पर आधारित है।

1920 से 2002 तक की वर्षा होने की स्थितियों का आंकलन करने से यह प्रतीत होता है कि गंगानगर जिले में प्रति वर्ष 0.75 मि.मी. की दर से वर्षा बढ़ रही है।

2.6.2 तापमान व सापेक्षित आर्द्रता

तापमान वायुमण्डलीय परिसंचरण को निर्धारित करने वाला प्रमुख तत्व हैं। गंगानगर जिले में तापमान ऊँचे तथा विश्व के अन्य शुष्क तथा अर्द्धशुष्क प्रदेशों की तरफ विषम पाये जाते है। स्वच्छ आकाश और निम्न आर्द्रता तथा अधिकतम सूर्याभिताप के प्रवेश से धरातलीय उष्णता अधिक होती है। रात्रि में तापमान का तीव्रता से ह्रास होता है परिणामतः दैनिक तापान्तर उच्च पाया जाता हैं।

अध्ययन क्षेत्र में शीत ऋतु स्वच्छ आकाश, निम्न आर्द्रता, उच्च दैनिक तापान्तर और हल्की उत्तर पूर्वी हवाओं से संबंधित हैं। इस ऋतु में कई बार तापमान हिमांक तक पहुंच जाता है। जनवरी सर्वाधिक ठण्डा माह है। इस समय औसत न्यूनतम तापामान 4.7^0 सेन्टीग्रेड व अधिकतम तापमान 20.5^0 सेन्टीग्रेड तक पहुंच जाता है। शीत ऋतु में उत्तरी भारत में चलने वाली शीत लहरे भी यहां के तापमान को प्रभावित करती है। इसके प्रभाव से तापमान में 1^0 से 2^0 सेल्सियस तक गिरावट होती है। कई बार तापमान जमाव बिन्दु तक भी पहुंच जाता हैं।

जिले में ग्रीष्म ऋतु उष्ण और शुष्क है। दिन अधिक गर्म होते है तथा तीक्ष्ण धूप होती है। 21 मार्च के बाद सूर्य की कर्करेखा की ओर स्थिति से तापमान में तीव्रता से वृद्धि होती है। दैनिक उच्चतम तापमान मई और जून

माह में कई बार 49^0 सेल्सियस पाया जाता है। जून उष्णतम माह है। जून के अंतिम सप्ताह से जुलाई के प्रथम सप्ताह अध्ययन क्षेत्र में मानसून के प्रारम्भ का सम्भावित समय है। वर्षा के प्रारम्भ के साथ ग्रीष्मकालीन तापमान 41^0–42^0 सेल्सियस से 36^0–38^0 सेल्सियस हो जाता है। इस ऋतु में दैनिक तापान्तर न्यूनतम होते हैं।

दक्षिण–पश्चिमी मानसून के पीछे लौटने के साथ सितम्बर–अक्टूबर माह में अध्ययन जिले में स्वच्छ आकाश से तापमान में पुनः वृद्धि होती है। अक्टूबर के अंत तक उष्ण दशाएं बनी रहती है लेकिन इसके पश्चात् क्षेत्र में प्रतिचक्रवातीय वायुसंचरण स्थापित हो जाता है। इस समय अधिकतम तापमान 30^0 से 36^0 सेल्सियस पाया जाता है। लेकिन दैनिक ताप परिसर 14^0 से 17^0 सेल्सियस हो जाता है।

(अ) माध्य मासिक तापमान

गंगानगर अध्ययन क्षेत्र का प्रतिनिधि मौसम विज्ञान केन्द्र है। अतः जिले के तापमान के अध्ययन के लिए गंगानगर के तापमान को लिया गया है।

जनवरी माह में अध्ययन क्षेत्र में माध्य मासिक तापमान 11^0 से 14^0 सेल्सियस पाया जाता है। अप्रैल में उष्णता में वृद्धि से तापमान में तीव्रता से वृद्धि होती है। मई – जून माह में सर्वाधिक तापमान जिले के दक्षिण–पश्चिमी भाग में रहता है। 35^0 सेल्सियस से अधिक तापमान जिले के दक्षिणी पश्चिमी भाग में पाया जाता है। इस अवधि में संपूर्ण जिले में माध्य मासिक तापमान 34^0 से 36^0 सेल्सियस पाया जाता है। तीक्ष्ण धूप और उच्च तापमान ग्रीष्मकाल की विशेशताए है। उच्च तापमान से उष्ण हवाएं प्रवाहित होती है तथा धूलभरी आंधिया चलती ळें

तालिका संख्या 2.8

जिला गंगानगर : औसत मासिक सापेक्षिक आर्द्रता (2014)

माह	सापेक्षिक आर्द्रता (प्रातः 8 बजे)	सापेक्षिक आर्द्रता (सांय 7 बजे)
जनवरी	97	70
फरवरी	90	52
मार्च	74	41
अप्रैल	46	22
मई	41	21
जून	54	34
जुलाई	79	65
अगस्त	78	64
सितम्बर	75	53
अक्टूबर	74	47
नवम्बर	79	45
दिसम्बर	93	61

स्रोत : मौसम विभाग, गंगानगर

(ब) माध्य मासिक न्यनूतम और अधिकतम तापमान

अध्ययन क्षेत्र में माध्य न्यूनतम तापमान में वृद्धि जनवरी में प्रारम्भ होती है। जून माह में यह उच्चतम होता है। इसके उपरान्त न्यूनतम तापमान में दिसम्बर माह तक गिरावट होती है। जनवरी माह में न्यूनतम माध्य मासिक तापमान 5^0 सेल्सियस रहता है। जिले में जून 2001 को अधिकतम तापमान 48. 8^0 सेल्सियस अंकित किया गया था। अध्ययन क्षेत्र में माध्य मासिक अधिकतम तापमान का परिसर 40^0 से 44^0 सेल्सियस पाया जाता है। जनवरी माह में माध्य अधिकतम तापमान अपेक्षाकृत निम्न होता है।

अध्ययन क्षेत्र में माध्य मासिक उच्चतम तापमान के दो अधिकतम चरण और दो न्यूनतम चरण समय अनुभव किये जाते है। प्रथम चरण में न्यूनतम ताप जनवरी माह मे होता है। यह सर्वाधिक ठण्डा माह है, जब दिन व रात के तापमान न्यूनतम होते हैं।

शुष्क और अर्द्धशुष्क प्रदेश में उच्च ताप परिसर प्रमुख लक्षण है। ग्रीष्मकालीन उच्च तापमान और जनवरी में निम्न तापमान से वार्षिक ताप परिसर 80° सेल्सियस तक पहुंच जाता है। दिन के समय तीव्र सूर्याभिताप के लिए अनुकूल कारक रात्रि में तापमान के तीव्रता के क्षय में भी सहायता करते है। अतः दैनिक उच्चतम और न्यूनतम ताप में पर्याप्त गिरावट हो जाती है। अधिकतम दैनिक ताप परिसर सितम्बर में 12.4^0 व अक्टूबर में 16.7^0 सेल्सियस अनुभव किया जाता है, चूंकि इन महीनों में राते ठण्डी और दिन गर्म होते है। यह वर्ष का द्वितीयक चरम हैं।

2.6.3 सापेक्षिक आर्द्रता

वर्षा और तापमान के साथ आर्द्रता एक क्षेत्र के जलवायु प्रक्रम के पूरक योग प्रदर्शित करती है। अध्ययन क्षेत्र में पूर्व मानसून काल में उच्च सम्भावित वाष्पीकरण दर से दैनिक आर्द्रता में अत्यधिक विचरण पाया जाता है। जुलाई से सितम्बर तक के मानसून काल में सापेक्षिक आर्द्रता अपेक्षाकृत अधिक पायी जाती है। जुलाई माह में सर्वाधिक आर्द्रता रहती है। अक्टूबर और नवम्बर में आर्द्रता में कमी होती है। लेकिन पश्चिमी विक्षोभों की उपस्थिति तथा अपेक्षाकृत निम्न वाष्पीकरण से दिसम्बर से फरवरी माह तक आर्द्रता में वृद्धि होती है

तालिका संख्या 2.9

जिला गंगानगर : वार्षिक तापमान (2001 – 2012)

वर्ष	अधिकतम तापमान	न्यूनतम तापमान	औसत तापमान
2001	48.8	1.8	25.3
2002	46.6	2.3	25.9
2003	46.6	1.3	26
2004	48.5	0.2	25.8

2005	47.1	0.7	26.1
2006	41.7	5.2	25.1
2007	43.2	1.2	25.3
2008	46.7	1.4	25.8
2009	48.8	1.6	25.9
2010	47.8	1.6	25.8
2011	48.2	1.6	26.1
2012	47.9	1.6	26.0

स्रोत : मौसम विभाग, गंगानगर

अध्ययन क्षेत्र में वार्षिक माध्य सापेक्षिक आर्द्रता को तालिका संख्या 2.9 में प्रदर्शित किया गया है। अर्द्धशुष्क मैदान में स्थित तथा मानसून शाखाओं से दूरस्थ स्थिति के कारण निम्न तथा परिवर्तनशील वर्षा क्षेत्र की विशेषता है। सामान्यतः 60 प्रतिशत से कम सापेक्षिक आर्द्रता के वर्षों में अकाल की स्थिति रही है।

2.7 बाढ़ व अकाल की स्थिति

अध्ययन क्षेत्र में वर्ष 1926 से 2010 की अवधि में 35 वर्ष सामान्य वर्षा के रहे हैं। 13 वर्षों में बाढ़ आई है तथा 5 वर्षों में सामान्य से अधिक वर्षा हुई परन्तु बाढ़ की स्थिति नहीं बनी। 12 वर्षों में सामान्य से कम वर्षा हुई और 13 वर्षों में अकाल पड़ा।

2.8 प्राकृतिक वनस्पति

अध्ययन क्षेत्र अर्द्धशुष्क प्रदेश है। अतः बिखरी न्यून वनस्पति तथा अल्प पादप प्रजातियां क्षेत्र की वनस्पति सम्बन्धी प्रमुख विशेषता है। अध्ययन क्षेत्र के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 5.41 प्रतिशत ही वनों के अंतर्गत है। प्राकृतिक

वनस्पति मुख्य रूप से मरूद्भिद और घास से संबंधित है। मानवीय और प्रवासी पशुओ मुख्यतः भेड़ बकरी और ऊँट आदि के लगातार दबाव से क्षेत्र की मूल वनस्पति तथा घास प्रजातियां लगभग समाप्त हो गयी है तथा कुछ प्रजातियां लुप्त होने के कगार पर हैं। सक्सेना (1991) ने अध्ययन क्षेत्र की प्राकृतिक वनस्पति को निम्न कटिबन्धों में विभाजित किया है।

2.8.1 निम्न वर्षा, मरू भूमि वनस्पति

इस प्रकार की वनस्पति 10 से 15 सेमी वर्षा वाले भागों में पायी जाती है। मुख्य रूप से स्थायी पवनानुवर्ती, परवलिक और अनुप्रस्थ स्तूपों पर उसकी प्रधानता है। वनस्पति झाड़ियों से संबंधित है। इसे वनस्पति शास्त्रियों ने Calligonum polygonoids (फोग) प्रकार के साहचर्य के साथ वर्गीकृत किया है। इसके साथ Leptadenia pyrotechnica (खींप), Aerva pseudotomentosa (बूई), Dipterygium glaucum (फाड), Capparis decidua (केर), Prosopis cinerarifolia (खेजड़ा) और Calotropis procera (आक) आदि जातियों की वनस्पति पाई जाती है। अतः बालुका स्तूप मैदानों में घास क्षेत्र पाये जाते है। इनमें Lasiurus sindicul (सेवण घास) प्रमुख है। इस श्रेणियों की वनस्पति बहुत ही छोटी–छोटी झाड़ीनुमा और बिखरी पायी जाती है।

2.8.2 अधिक वर्षा, जलोढ़ मैदानों की वनस्पतिः

अध्ययन क्षेत्र के घग्घर नदी के प्रवाह क्षेत्र की प्रमुख वनस्पति Cappasris decidua (कैर) है। इसके साहचर्य में Calotropis procera (आक), Aerva pseudotomentosa (बुई), Acacia nilotica (बबूल) जाति है। 0.5 से 1 मीटर मोटी ऊपरी पर मृदा के क्षेत्रों में मोला, Chenopodium album (बथुआ), Dactyloctenium sindicum (गाथिल) पाये जाते है। चारागाह जातियों के साथ Calligonum polygonoids (फोग) तथा घासों की विभिन्न प्रकार की किस्में

जैसे अंजन, खाबल और चिम्बर और बिखेरे रूप में Prosopis cineraria (खेजड़ी) के वृक्ष पाये जाते हैं।

2.8.3 समतल कांप सिंचित मैदानों की वनस्पति

इनमें काष्ठीय वृक्षों की प्रधानता है। प्रमुख वृक्ष Acacia nilotica के साहचर्य में Prosopis cineraria (खेजड़ी) Zizyphus nummularia (झड़बेर) और Capparis decidua (केर) पाये जाते हैं।

खेतों की मेड़ों पर तथा नहरों के किनारे व नहरी क्षेत्रों में प्राकृतिक वनस्पति के रूप में Capparis decidua (केर), Parkinsonia aculeata (कीकर), Azadirachta indica (नीम), Dalbergia sishoo (शीशम), Morus alba (शहतूत), Ficus religiosa (पीपल), Saccharum bengalenseis आदि पाये जाते हैं।

तालिका संख्या 2.10

जिला गंगानगर : वनों का वितरण (2003–14)

वर्ष	वर्गीकृत वन	अवर्गीकृत वन	योग
2003–2004	50.65	581.79	632.44
2004–2005	52.75	592.81	645.56
2005–2006	50.65	582.81	633.46
2006–2007	50.65	582.79	633.44
2007–2008	50.65	582.79	633.44
2008–2009	50.65	582.79	633.44
2009–2010	50.65	582.79	633.44
2010–2011	50.65	582.79	633.44
2011–2012	50.65	582.79	633.44

2012–2013	अप्राप्त	अप्राप्त	अप्राप्त
2013–2014	अप्राप्त	अप्राप्त	अप्राप्त

स्रोत : सांख्यकीय रूपरेखा – 2013, आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय , राजस्थान जयपुर।

वर्ष 2003–04 में जिले में वनों के अंतर्गत 632.44 वर्ग कि.मी. भूमि थी। वर्ष 2004–05 में यह क्षेत्र बढ़कर 645.56 वर्ग कि.मी. तथा वर्ष 2005–06 में 633.46 वर्ग कि.मी. हो गया। लेकिन वर्षा 2009–10 में इस क्षेत्र में कमी आयी। यद्यपि वन विकास के विभिन्न कार्यक्रमों के अंतर्गत नहरों के किनारे वृक्षारोपण किया जा रहा है।

2.9 खनिज ससंधान

गंगानगर जिला भूगर्भिक दृष्टि से खनिज संसाधनों में निर्धन है। जिप्सम ही अध्ययन क्षेत्र का एकमात्र प्रमुख खनिज है। इसका उपयोग उर्वरक, पोर्टलैण्ड सीमेन्ट, प्लास्टर ऑफ पेरिस, भवन निर्माण आदि में किया जाता है। पर्याप्त संसाधन पर आधारित उद्योगों के अभाव में जिप्सम का उपयोग बहुत सीमित हैं।

तालिका संख्या 2.11

जिला गंगानगर : खनिज उत्पादन (2003–2008)

क्र.स.	खनिज	2003–04	2004–05	2005–06	2006–07	2007–08
1.	जिप्सम	296.92	616.32	614.51	542.24	743.50
2.	ब्रिक	2276.55	2879.65	3499.65	2716.31	7220.40
3.	कलमी शौरा	0.12	0.12	0.13	–	–

सैत–इण्डस्ट्रीयल पोटेन्शियल सर्वे, गंगानगर, 2009–10, गवर्नमेन्ट ऑफ राजस्थान, डिस्टिक्ट इण्डस्टियल सेन्टर, गंगानगर, पृ. 10

अध्ययन क्षेत्र में इसका खनन रावला क्षेत्र में किया जाता है। रावला में राजस्थान राज्य खान व खनिज लिमिटेड द्वारा 700 टन प्रतिदिन जिप्सम ग्राइंडिंग का संयत्र वर्ष 2003 में स्थापित किया गया है। अन्य खनिज ब्रिक अर्थ और कलमी शोरा है।

तालिका संख्या 2.11 अध्ययन क्षेत्र में पिछले पांच वर्षों में खनिजों के उत्पादन को प्रदर्शित करती है।

2.10 जनसंख्या संरचना

जिला गंगानगर पाकिस्तान की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा से सटा थार रेगिस्तान के रेतीले धोरों से आच्छादित राजस्थान के बीकानेर सम्भाग के सुदूर उत्तरी भू–भाग का जीवान्त जिला हैं। यहां की अधिकांश जनसंख्या ग्रामों में निवास करती है, तथा जीवन–यापन के लिए प्रधानतः कृषि कार्य पर निर्भर हैं। यहां की जनसंख्या के प्रारूप का अध्ययन क्षेत्र की उन्नति एवं तकनीकी विकास को उचित आधार प्रदान करता है। किसी क्षेत्र विशेष में जनसंख्या का वितरण एवं घनत्व क्षेत्र में उपलब्ध आर्थिक क्रियाकलापों पर आधारित होता हैं। राजस्थान राज्य के जिला गंगानगर क्षेत्र में आर्थिक क्रियाकलाप मिले–जुले स्तर पर हैं। अतः यहां जनसंख्या घनत्व भी उसी स्तर पर उपलब्ध हैं। राजस्थान राज्य में जिला गंगानगर क्षेत्रफल की दृष्टि से राज्य का 3.19 प्रतिशत है, जबकि सन् 2011 के आंकड़ों के आधार पर जिले में राज्य की कुल जनसख्या का 2.87 प्रतिशत भाग निवास करता है। जिले की कुल कार्यशील जनसंख्या का 70.76 कृषि कार्यो (क्रियाओं) में संलग्न हे। सारांश रूप में कृषि व्यवसाय ही जिले की प्रमुख आर्थिक क्रिया है। अध्ययन क्षेत्र में प्रारम्भिक जनसंख्या वृद्धि भौतिक कारकों से प्रभावित रही है। जनगणना सन् 1901 से 1931 जनसंख्या में धीमी वृद्धि हुई सन् 1931 से सन् 1981 तक मध्यम दर से जनसंख्या वृद्धि हुई। इस अवधि में सन् 1931 की तुलना में सन् 1941 में दशाब्दी प्रतिशत विचलन 54. 58 , दशाब्दी सन् 1941–51 में 18.01, 1951 – 61 में 64.64, दशाब्दी सन्

1961–1971 में 34.37 , दशाब्दी सन् 1971–81 में 45.62, दशाब्दी सन् 1981–91 में 18.25 प्रतिशत, दशाब्दी सन् 1991 – 2001 में 27.59 तथा दशाब्दी सन् 2001–2011 में 17.53 रहा। इस अवधि में भी भौतिक बाधाओं के अतिरिक्त आर्थिक विकास के न्यून स्तर ने जनसंख्या वृद्धि को प्रभावित किया है। (तालिका संख्या 2.12)

तालिका संख्या 2.12

जिला गंगानगर दशकीय जनसंख्या वृद्धि (1931–2011)

वर्ष	जनसंख्या			दस वर्ष का अंतर	प्रतिशत वृद्धि या कमी
	पुरूष	महिला	कुल		
1931	192237	153199	345436	–	–
1941	294396	239578	533974	188538	54.58
1951	343192	286938	630130	96156	18.01
1961	563231	474192	1037423	407293	64.64
1971	743892	650119	1394011	356588	34.37
1981	1083134	946834	2029968	635957	45.62
1991	751928	650516	1402444	216405	18.25
2001	955378	834045	1789423	386979	27.59
2011	1043730	925790	1969520	180097	–17.53

स्त्रोत – सेन्सस ऑफ इंडिया, 1961, 1971, 1981, 1991 और 2001 सीरीज –18 राजस्थान पार्ट द्वितीय ए जनरल पॉपुलेशन टेबल 12011 प्रोविजनल आंकड़े। हनुमानगढ़ 12 जुलाई 1994 को जिला बनाया गया था।

2.11 स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व जनसंख्या :–

अध्ययन क्षेत्र स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व बीकानेर राज्य के अधीन था। गंगनहर के निर्माण से पूर्व क्षेत्र में जनसंख्या वितरण विरल था किन्तु नहर के निर्माण के पश्चात् जनसंख्या वितरण प्रारूप में परिवर्तन देखने को मिलता है। सन् 1901 से 1941 तक की तीन प्रमुख निजामतों में जनसंख्या का वितरण सारणी संख्या 2.13 में दर्शाया गया है। सन् 1921 को छोड़कर सन् 1901 से 1941 के मध्य सूरतगढ़ तथा श्रीगंगानगर निजामतों की जनसंख्या में वृद्धि हुई है। सन् 1921 में अकाल के कारण जनसंख्या में कमी दर्ज की गई। सन् 1901 में श्रीगंगानगर निजामत की कुल जनसंख्या मात्र 13968 थी जो कि सन् 1941 में बढ़कर 162517 हो गई। सन् 1941 में सूरतगढ़ निजामत की कुल जनसंख्या श्रीगंगानगर निजामत से अधिक थी। बीकानेर रियासत की अध्ययन क्षेत्र में स्थित तीनों निजामतों की जनसंख्या रियासत में उनके महत्व को प्रदर्शित करती है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् जनसंख्या के इस वितरण में काफी बदलाव आया है। इसका प्रमुख कारण विभाजन के पश्चात् भारत एवं पाकिस्तान के मध्य हुआ जनसंख्या स्थानान्तरण तथा क्षेत्र में नहर निर्माण के कारण बांध के प्रभाव क्षेत्र से विस्थापित हुए व्यक्तियों को अध्ययन क्षेत्र में भूमि का आंवटन किया जाना हैं। बाद के दशकों में नहर द्वारा उपलब्ध सिंचाई सुविधा के कारण भी क्षेत्र में जनसंख्या में बढ़ोतरी दर्ज की गई हैं।

तालिका संख्या 2.13

जिला गंगानगर स्वतंत्र प्राप्ति से पूर्व जनसंख्या वृद्धि

वर्ष	सूरतगढ़ निजामत			श्रीगंगानगर निजामत			रायसिंहनगर निजामत		
	पुरूष	महिला	कुल	पुरूष	महिला	कुल	पुरूष	महिला	कुल
1901	29797	24317	54114	7711	6257	13968	–	–	–
1911	50288	39956	90244	16848	13791	30639	–	–	–

1921	38492	32151	70643	12104	10752	22853	—	—	—
1931	64792	52315	117107	72546	53830	126376	—	—	—
1941	91175	75149	166324	91368	71149	162517	41217	32269	73540

स्रोत :— सेन्सस रिर्पोट 1951, राजस्थान एवं अजमेर जिला हेण्डबुक, चुरू, श्रीगंगानगर, बीकानेर।

जिला गंगानगर क्षेत्र के जनसंख्या वितरण में पर्याप्त विषमता पाई जाती है। इसका पश्चिमी भाग अपेक्षाकृत विरल जनसंख्या वाला क्षेत्र है, जबकि पूर्वी भाग में सिंचाई सुविधा तीव्र औद्योगिक विकास तथा नगरीकरण के परिणाम स्वरूप सघन जनसंख्या पाई जाती हैं। सन् 2011 की जनगणना के अनुसार जिले की कुल जनसंख्या 1969168 व्यक्ति है। गंगानगर जिला कृषि बाहुल्य होने से यहां राज्य की 2.87 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। जगनणना सन् 2001 के अनुसार जिले कि कुल जनसंख्या 1789423 थी जो सन् 2011 बढ़कर 1969168 हो गई। सन् 2001 से सन् 2011 तक जिले की जनसंख्या में 9.12 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। सन् 2001 में जिले का जनघनत्व 163 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. था जो बढ़कर सन् 2011 में 179 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. हो गया। जिले कि कुल साक्षरता व महिला साक्षरता दर 59.70 प्रतिशत है। जिले का लिंगानुपात 887 है। जनजणना 2011 के अनुसार जिले कि तहसीलों पर नजर डाले तो सबसे अधिक जन घनत्व गंगानगर तहसील का 488.29 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी है। जबकि सबसे कम जन घनत्व सूरतगढ़ तहसील का मात्र 113.67 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. है। जिले में जनघनत्व के साथ ग्रामीण व नगरीय जनसंख्या में भारी अन्तर मिलता है। जिले में सन् 2001 के अनुसार ग्रामीण जनसंख्या में भी 74.66 प्रतिशत व नगरीय जनसंख्या 25.33 प्रतिशत थी जो कि सन् 2011 में क्रमशः 72.80 व 27.19 प्रतिशत हो गई। इन 10 वर्षों में ग्रामीण जनसंख्या में 1.86 प्रतिशत की कमी व नगरीय जनसंख्या में 1.86 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। जिले कि तहसीलों पर नजर डाले तो सन् 2001 से 2011 तक ग्रामीण व नगरीय जनसंख्या में भारी अंतर मिलता है।

तालिका संख्या 2.14

जनसंख्या 2011

वर्ष/तहसील	क्षेत्र	जनसंख्या			लिंगानुपात (महिलाएँ प्रति हजार पुरुष)	जनसंख्या घनत्व (प्रति वर्ग कि.मी.)
		पुरुष	स्त्री	योग		
1	2	3	4	5	6	7
2001	ग्रामीण	709710 (74.29%)	626356 (75.10%)	1336066 (74.66%)	883	122
	नगरीय	245668 (25.71%)	207689 (24.90%)	453357 (25.34%)	845	6468
2011	ग्रामीण	758269 (72.67%)	675467 (72.95%)	1433736 (72.80%)	891	131
	नगरीय	285071 (23.32%)	250361 (27.04%)	535432 (27.19%)	878	7639
तहसील (2011)						
करणपुर	ग्रामीण	58524 (75.81%)	53047 (76.12%)	111571 (75.96%)	906	137-43
	नगरीय	18669 (24.18%)	16638 (23.87%)	35307 (24.03%)	891	5022-33
गंगानगर	ग्रामीण	122422 (47.66%)	109304 (48.61%)	231726 (48.11%)	893	241-38
	नगरीय	134395 (52.33%)	115519 (51.38%)	249914 (51.88%)	860	9473-62
सादुलशहर	ग्रामीण	65670 (77.44%)	56462 (76.63%)	122132 (77.06%)	860	158-96
	नगरीय	19122 (22.55%)	17219 (23.36%)	36341 (22.93%)	901	18261-81
पदमपुर	ग्रामीण	70486 (77.44%)	63817 (82.60%)	134303 (82.53%)	905	160-28

	नगरीय	14978 (22.55%)	13437 (17.69%)	28415 (17.46%)	897	2398-39
रायसिंहनगर	ग्रामीण	87853 (85.34%)	80272 (83.67%)	168125 (85.57%)	914	128-11
	नगरीय	15085 (14.65%)	13245 (14.16%)	28330 (14.42%)	878	6497-71
अनूपगढ़	ग्रामीण	80721 (83.16%)	72825 (83.36%)	153546 (83.25%)	902	134-14
	नगरीय	16343 (16.83%)	14534 (16.63%)	30877 (16.74%)	889	6597-65
घड़साना	ग्रामीण	74925 (82.51%)	66915 (82.58%)	141840 (82.54%)	893	102-46
	नगरीय	15875 (17.48%)	14115 (17.41%)	29990 (17.45%)	889	10030-10
विजयनगर	ग्रामीण	63482 (82.48%)	56566 (82.20%)	120048 (82.35%)	891	143-84
	नगरीय	13478 (17.51%)	12244 (17.79%)	25722 (17.64%)	908	7914-46
सूरतगढ़	ग्रामीण	134186 (78.32%)	116259 (77.61%)	250445 (78.02%)	866	89-14
	नगरीय	37126 (21.67%)	33410 (22.32%)	70536 (21.97`%)	90	4881-38

स्रोतः *जिला जनगणना प्रतिवेदन, 2011, जिला गंगानगर।*

तालिका 2.14 के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि जिले की कुल जनसंख्या का 24.45 प्रतिशत गंगानगर तहसील में निवास करता है। इस तहसील में जिले की 11.76 प्रतिशत ग्रामीण तथा 12.69 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या है। बीकानेर संभाग के अंतर्गत गंगानगर प्रादेशिक महत्व का नगर है। सन् 2011 में इस नगर की जनसंख्या 481640 अंकित की गयी। यह जिले की कुल नगरीय जनसंख्या का 12.69 प्रतिशत है। इससे गंगानगर में द्वितीयक तथा तृतीयक व्यवसायों का विकास हुआ है। सूरतगढ़ तहसील अध्ययन क्षेत्र

की जनसंख्या की दृष्टि से दूसरी बड़ी तहसील है। यहां जिले की कुल जनसंख्या का 16.30 प्रतिशत निवास करता है। नगरीय जनसंख्या का केन्द्रीयकरण अध्ययन क्षेत्र की सभी तहसीलों में हुआ है। गंगानगर तहसील में नगरीय जनसंख्या का केन्द्रीयकरण अधिक है। अन्य तहसीलों में जनसंख्या के प्राथमिक व्यवसायों में संलग्न होने तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था होने से नगरीय केन्द्रों का विकास अधिक नहीं हुआ है। यद्यपि इन तहसीलों में लालगढ़, जैतसर, केसरीसिंहपुर, गजसिंहपुर, रावला नगरीय अभिवृद्धि केन्द्रों के रूप में विकसित हो रहे हैं।

2.12 जनसंख्या घनत्व एवं वितरण –

अध्ययन क्षेत्र में जनसख्ंया घनत्व कई कारणों का परिणाम है। इनमें प्राकृतिक, सामाजिक, कृषि और ऐतिहासिक प्रमुख कारक है। जिला स्तर पर जनसंख्या के घनत्व में महत्वपूर्ण क्षेत्रीय विभिन्नताएं पायी जाती है। इन विभिन्नताओं के मुख्य कारण प्राकृतिक साधनों का असमान वितरण तथा विखण्डित आर्थिक विकास का प्रारूप है। किसी क्षेत्र विशेष में जनसंख्या के घनत्व का सबसे गहरा संबंध भूमि की उत्पादकता पर होता हैं। जनसंख्या वृद्धि से कृषि विकास में गतिशीलता आती है। कृषि प्रधान गंगानगर जिले में घनत्व असमान है। जिले की गंगानगर तहसील में 4.8 लाख जनसंख्या निवास करती है। यहा जन घनत्व अत्याधिक 488 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. है, जिसका मुख्य कारण नगरीकरण व औद्योगिक क्षेत्र है। जिले की सूरतगढ़ तहसील में सबसे कम जन घनत्व 113 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. मिलता है, जिसका मुख्य कारण यहां मरूस्थलीय क्षेत्र का अधिक होना है। इस तहसील के सम्पूर्ण क्षेत्र में मात्र 20.29 प्रतिशत भाग पर ही कृषि की जाती है जो कि शुष्क प्रकार की होती है एवं वर्षाकाल में ही होती हैं।(मानचित्र सख्यां 2.8)

जनसंख्या घनत्व का अर्थ किसी प्रदेश के क्षेत्रफल व उसके जनसंख्या के पारस्पारिक अनुपात से है। इस प्रकार जनसंख्या का घनत्व प्रति वर्ग इकाई

मानचित्र सं. 2.8

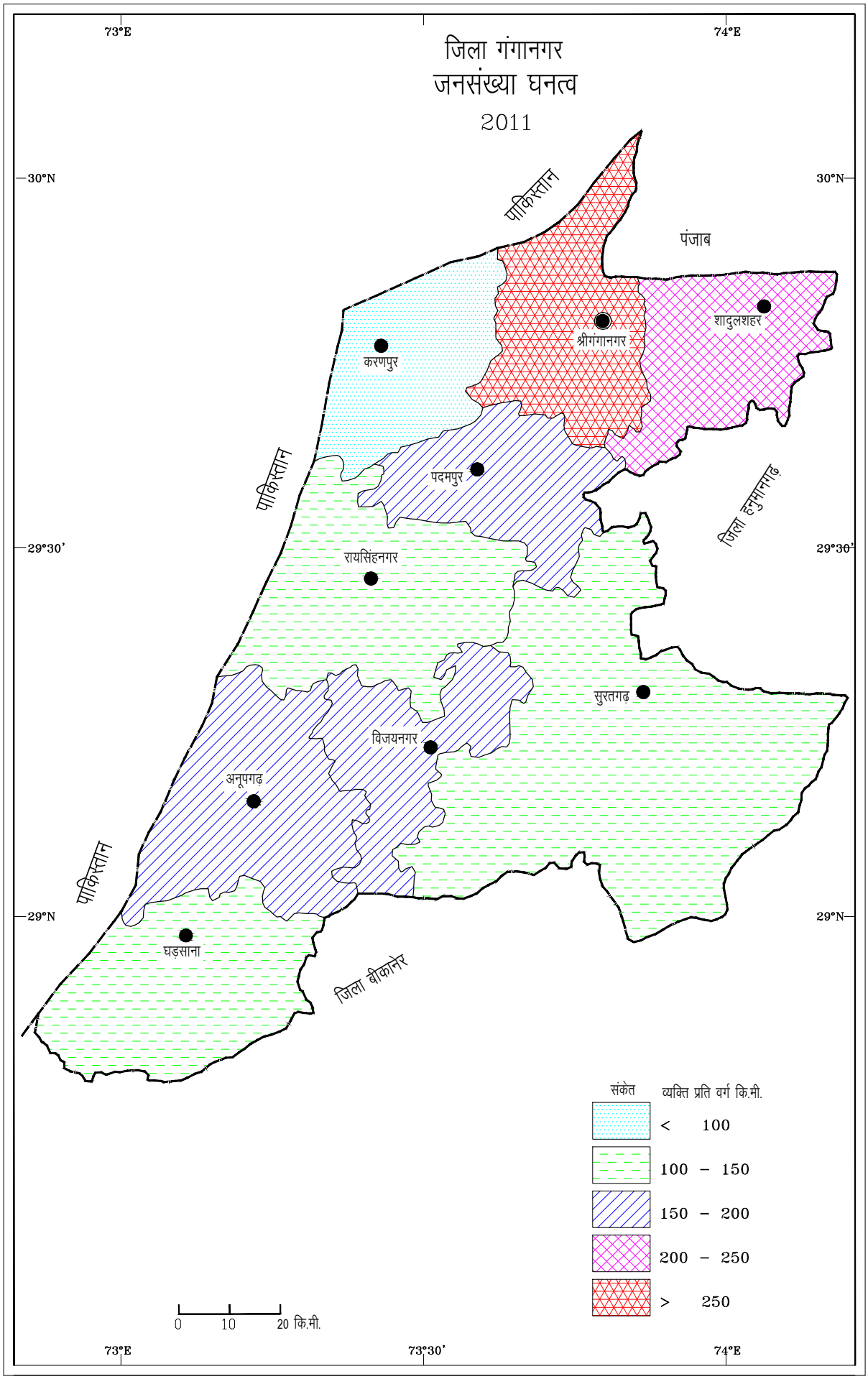
73°E
74°E
जिला गंगानगर
जनसंख्या घनत्व
2011
30°N
पाकिस्तान
पंजाब
शादुलशहर
श्रीगंगानगर
करणपुर
पाकिस्तान
पदमपुर
जिला हनुमानगढ़
29°30'
रायसिंहनगर
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
पाकिस्तान
29°N
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी.
< 100
100 – 150
150 – 200
200 – 250
> 250
0 10 20 कि.मी.
73°E
73°30'
74°E

भू–भाग पर निवास करने वाले व्यक्तियों की संख्या से है। शोध क्षेत्र में जनसंख्या के वितरण में भारी असमानता मिलती है। जिसका विश्लेषण जनसंख्या के वितरण, घनत्व कार्यिक घनत्व, कृषि घनत्व व पौष्टिक घनत्व से किया गया है।

जनसंख्या में श्रम पूर्ति कार्यक्षमता, कार्यकुशलता, साक्षरता, स्वास्थ्य आदि सभी तथ्य मानव शक्ति के रूप में प्रभाव दिखाते हैं। क्षेत्र की जनसंख्या का कृषि सन्दर्भ में अध्ययन करने पर ज्ञात होता है कि क्षेत्र की लगभग दो तिहाई से अधिक कार्यशील जनसंख्या कृषि कार्यों में संलग्न है। अतः क्षेत्र की लगभग 80 प्रतिशत जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। जिले में जनसंख्या वृद्धि से है कि कृषि भूमि पर जनसंख्या का भार बढ़ता जा रहा है जिससे कृषि भूमि में कमी आती जा रही है। अतः उत्पादन में वृद्धि भी जरूरी है। कृषि में आधुनिकीकरण प्रक्रिया के कारण प्रतिवर्ष उत्पादन भी विकास की ओर उन्मुख है। कृषि उत्पादन में वृद्धि का कारण सरकार के सहयोग के साथ–साथ कृषकों के बदलते हुए दृष्टिकोण से कृषि में नई तकनीकों का प्रयोग, सिंचाई सुविधाओं का विस्तार एवं नये कृषि साधनों का प्रयोग है। कृषि में नई तकनीकी की जानकारी एवं प्रसार के लिये कृषकों का साक्षर होना अति आवश्यक है।

2.13 मुख्य कार्यशील, सीमान्त व अकार्यशील जनसंख्या विवरण

2.13.1 मुख्य कार्यशील जनसंख्या

सन् 2011 की जनगणना आंकड़ों के अनुसार तहसील की जनसंख्या को तीन वर्गों में बांटा गया है–(1) मुख्य कार्यशील (2) सीमान्त एवं (3) अकार्यशील(मानचित्र सख्यां 2.9)

मानचित्र सं. 2.9

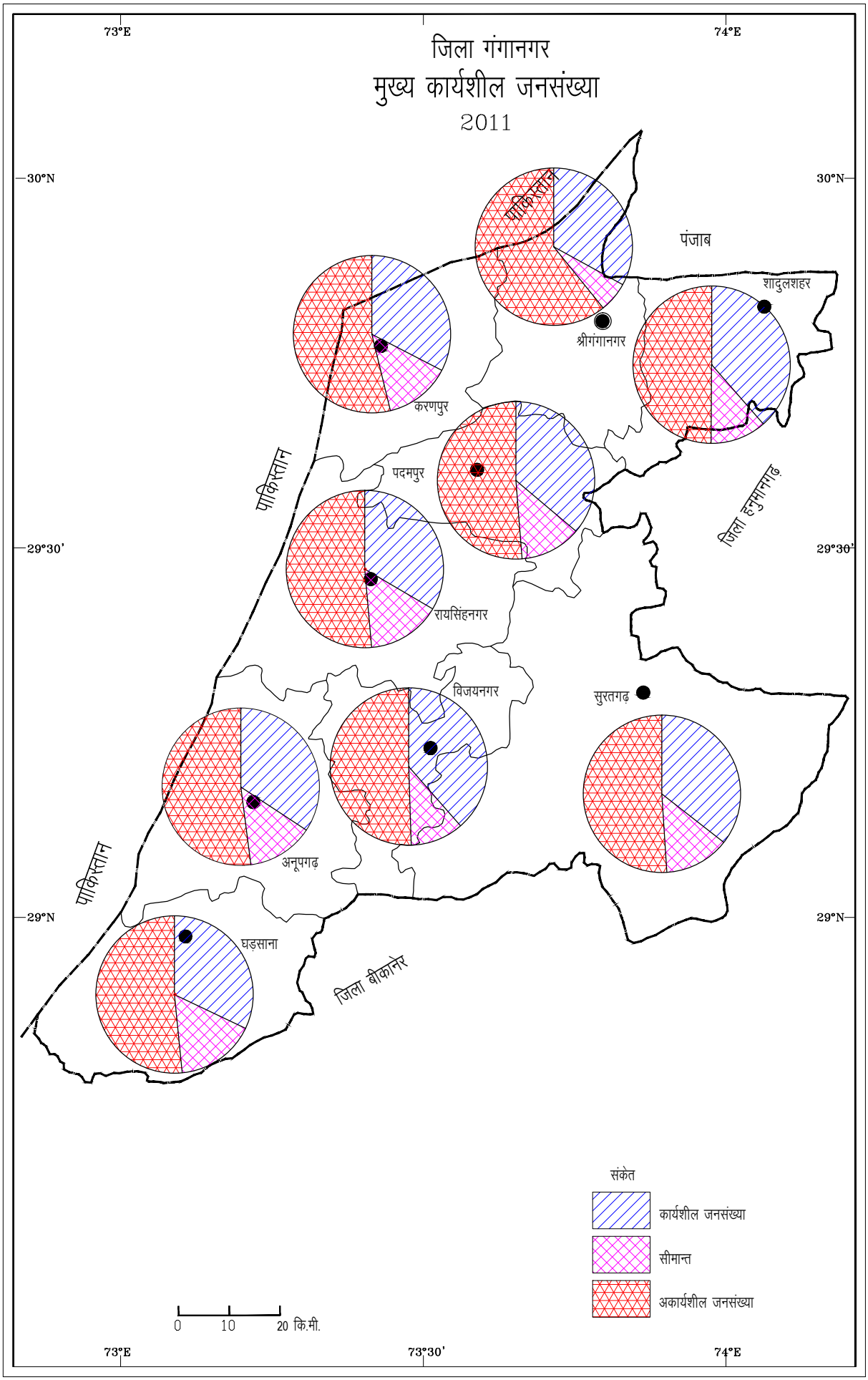
73°E
74°E
जिला गंगानगर
मुख्य कार्यशील जनसंख्या
2011
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
शादुलशहर
श्रीगंगानगर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
जिला हनुमानगढ़
विजयनगर
सुरतगढ़
अनूपगढ़
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
कार्यशील जनसंख्या
सीमान्त
अकार्यशील जनसंख्या
0
10
20 कि.मी.

तालिका संख्या 2.15

(प्रतिशत में)

जिला/ तहसील	क्षेत्र	कार्यशील			सीमान्त			अकार्यशील		
		पुरुष	स्त्री	योग	पुरुष	स्त्री	योग	पुरुष	स्त्री	योग
गंगानगर	ग्रामीण	51.10	18.84	35.90	7.24	23.31	14.81	41.66	57.85	49.29
	नगरीय	50.21	9.07	30.97	3.79	3.58	3.69	46.01	87.35	65.34
	योग	50.86	16.19	34.56	6.30	17.97	11.79	42.85	65.83	53.65
तहसील										
करनपुर	ग्रामीण	49.63	15.18	33.25	9.29	24.82	16.67	41.07	60.00	50.07
	नगरीय	50.08	9.41	30.91	4.38	3.56	3.99	45.55	87.03	65.09
	योग	49.74	13.80	32.69	8.10	19.74	13.63	42.16	66.45	53.68
श्रीगंगानगर	ग्रामीण	51.60	13.61	33.68	5.59	15.36	10.20	42.80	71.03	56.12
	नगरीय	51.95	10.13	32.62	2.47	1.64	2.09	45.58	88.23	65.29
	योग	51.79	11.82	33.13	3.96	8.31	5.99	44.26	79.87	60.88
सादुलशहर	ग्रामीण	54.97	24.12	40.71	5.61	20.40	12.45	39.42	55.48	46.85
	नगरीय	51.63	10.82	32.29	3.71	10.44	6.90	44.66	78.74	60.80
	योग	54.22	21.01	38.78	5.18	18.08	11.18	40.60	60.92	50.05
पदमपुर	ग्रामीण	52.14	20.39	37.06	6.53	22.76	14.24	41.33	56.84	48.70
	नगरीय	51.05	9.51	31.41	5.11	5.74	5.41	43.84	84.75	63.19
	योग	51.95	18.50	36.07	6.28	19.80	12.70	41.77	61.70	51.23
रायसिंहनगर	ग्रामीण	48.89	17.03	33.68	8.04	27.96	17.55	43.08	55.01	48.78
	नगरीय	50.29	9.17	31.06	4.43	2.85	3.69	45.28	87.98	65.25
	योग	49.09	15.92	33.30	7.51	24.40	15.55	43.40	59.68	51.15
अनूपगढ़	ग्रामीण	49.68	19.40	35.32	8.60	24.51	16.15	41.72	56.09	48.53

	नगरीय	48.08	6.34	28.43	3.85	2.55	3.24	48.07	91.12	68.33
	योग	49.31	17.23	34.17	7.80	20.86	13.99	42.79	61.91	51.85
घड़साना	ग्रामीण	47.84	15.97	32.80	9.03	27.33	17.66	43.13	56.70	49.53
	नगरीय	43.21	9.16	27.18	11.34	14.04	12.61	45.46	76.80	60.21
	योग	47.03	14.78	31.82	9.44	25.02	16.78	43.54	60.20	51.40
विजयनगर	ग्रामीण	53.75	25.40	40.39	4.86	21.24	12.58	41.39	53.36	47.03
	नगरीय	50.88	6.58	29.79	2.65	3.97	3.28	46.48	89.45	66.93
	योग	53.24	22.05	38.52	4.47	18.16	10.94	42.28	59.78	50.54
सूरतगढ़	ग्रामीण	51.73	21.35	37.63	7.81	26.55	16.50	40.46	52.11	45.87
	नगरीय	46.53	6.18	27.42	4.66	2.04	3.42	48.80	91.78	6.16
	योग	50.60	17.96	35.38	7.12	21.07	13.63	42.27	60.96	50.99

स्रोत–प्रावधानिक जनगणना प्रतिवेदन 2011, राजस्थान।

(1) मुख्य कार्यशील श्रमिकः

वर्ष में कम–से–कम 6 महीने से अधिक कार्य करने वाले मुख्य कार्यशील श्रमिक कहलाते हैं। तालिका संख्या 2.15 एवं मानचित्र संख्या 2.9 से स्पष्ट है कि वर्ष 2011 की जनगणना के आंकड़ों के अनुसार गंगानगर जिले में कुल कार्यशील पुरुष जनसंख्या का प्रतिशत 50.86 (530627) प्रतिशत है जबकि ग्रामीण कार्यशील पुरुष जनसंख्या 51.10 (387503) प्रतिशत एवं नगरीय कार्यशील पुरुष जनसंख्या 50.21 (143124) है।

(2) सीमान्त श्रमिक

जिन लोगों ने 6 महीने से कम अवधि तक काम किया है उन्हें सीमान्त श्रमिक कहा जाता है। इन लोगों का मुख्य कार्य निश्चित नहीं होता है। ग्रामीण क्षेत्रों में सीमान्त श्रमिकों में स्त्रियों की संख्या अधिक होती है तथा लगभग अध्ययन

क्षेत्र में भी अधिक हैं इसका मुख्य कारण यह कि गांवों में स्त्रियाँ खेती में काम करती हैं।

उपरोक्त तालिका से स्प्ष्ट है कि वर्ष 2011 के अनुसार सीमान्त पुरुष श्रमिक संख्या 65693 (6.30 प्रतिशत) है जबकि स्त्रियों की संख्या 166416 (17.97 प्रतिशत) हैं। वहीं जिले की घड़साना तहसील में सर्वाधिक सीमान्त स्त्रियों की संख्या 20270 (25.02 प्रतिशत) है।

(3) अकार्यशील जनसंख्या

जिन लोगों ने वर्षभर किसी भी प्रकार काम न करके आर्थिक सहयोग नहीं दिया है। ऐसे श्रमिक अकार्यशील कहलाते हैं। वर्ष 2011 के अनुसार अध्ययन क्षेत्र में पुरुषों की संख्या 42.85 प्रतिशत एवं महिलाओं की संख्या 65.83 प्रतिशत है। पुरुषों की तुलना में अकार्यशील श्रमिक स्त्रियों में अधिक है जिनमें आयु वर्ग वर्ष 14 से कम एवं आयु वर्ग वर्ष 55 से अधिक संख्या अधिक है। अकार्यशील जनसंख्या अधिक है, इसी कारण शहरों की तुलना में ग्रामों में निर्धनता अधिक है।

2.13.2 अन्य कार्यों में संलग्न

व्यवसायिक संरचना से आशय कुल जनसंख्या में कार्यरत जनसंख्या के विभिन्न कार्यों या व्यवसायों में संलग्न होने से है, सन् 2011 की जनगणना के अनुसार तहसील की जनसंख्या को प्रमुख चार वर्गों में बांटा गया है– (1) काश्तकार, (2) खेतीहर मजदूर (3) पारिवारिक उद्योगों में लगे हुए व्यक्ति एवं (4) अन्य कार्यों में संलग्न व्यक्ति।(मानचित्र सख्यां 2.10)

(1) काश्तकार–

जिले की कुल कार्यशील जनसंख्या वर्ष 2011 के अनुसार 176800 (44.45 प्रतिशत) ग्रामीण पुरुष काश्तकार एवं 36011 (27.90 प्रतिशत) ग्रामीण महिला काश्तकार संलग्न हैं जबकि 172255 (3.18 प्रतिशत) नगरीय पुरुष काश्तकार एवं 35495 (2.27 प्रतिशत) नगरीय महिला काश्तकार कार्यरत हैं। इसका प्रमुख कारण

मानचित्र सं. 2.10

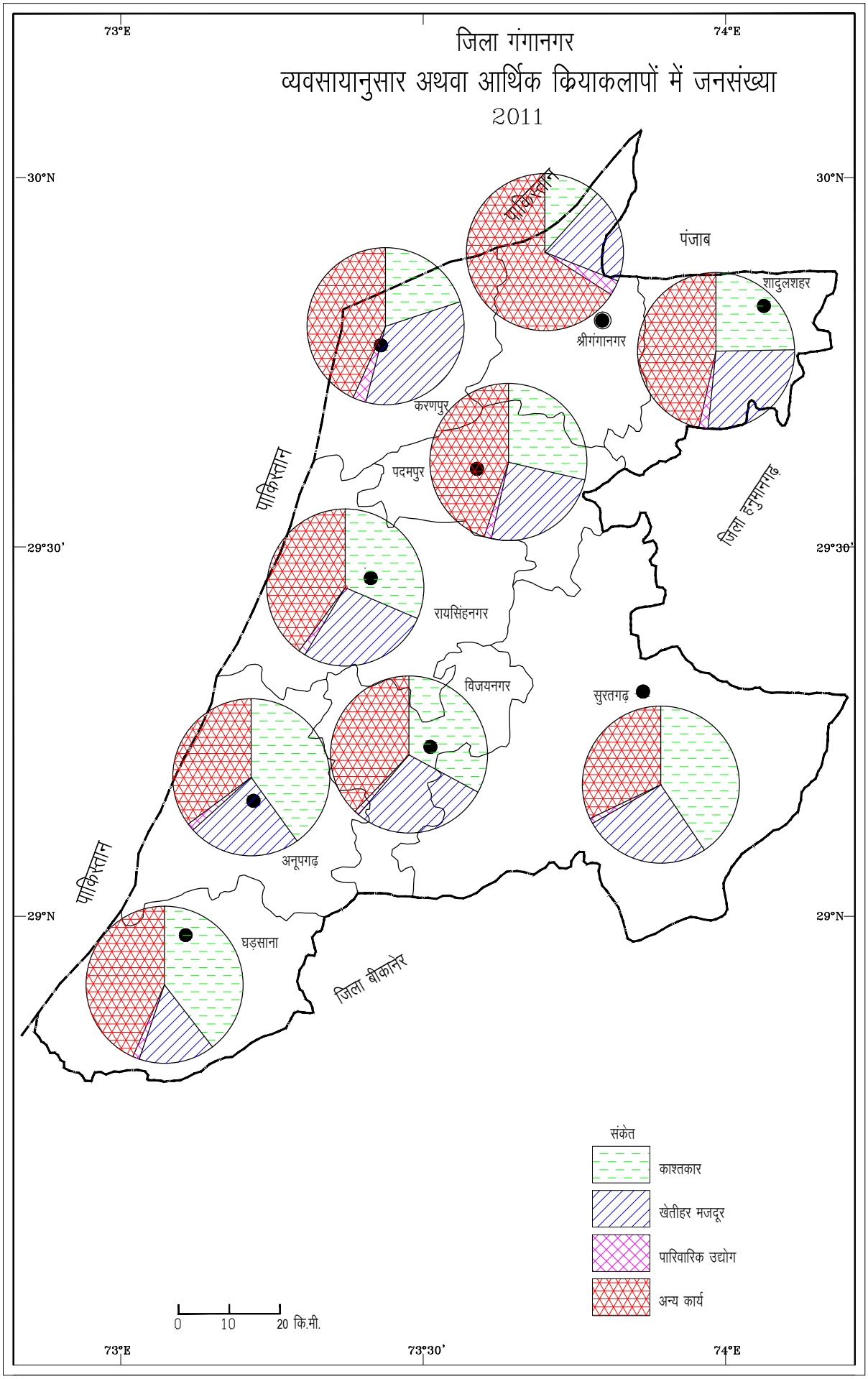
जिला गंगानगर
व्यवसायानुसार अथवा आर्थिक क्रियाकलापों में जनसंख्या
2011
73°E
74°E
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
शादुलशहर
श्रीगंगानगर
करणपुर
पदमपुर
जिला हनुमानगढ़
रायसिंहनगर
विजयनगर
सुरतगढ़
अनूपगढ़
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
काश्तकार
खेतीहर मजदूर
पारिवारिक उद्योग
अन्य कार्य
0 10 20 कि.मी.

यह है कि कृषि अर्थव्यवस्था ही यहाँ का मूल आधार है, इसलिए महिलाएँ ग्रामीण क्षेत्र में कृषि कार्य अधिक करती हैं अतः क्षेत्र में काश्तकारों की संख्या में महिलाओं में दस वर्षो में वृद्धि हुई तथा पुरुषों में कमी हुई इसका मुख्य कारण महिलाओं का कृषि व्यवसाय में अधिक जुड़ना एवं शिक्षा की कमी है।

(2) खेतीहर मजदूर

खेतिहर मजदूरों में वे व्यक्ति आते हैं जिनके पास या तो कृषि क्षेत्र बिल्कुल नहीं है या बहुत कम कृषि भूमि उपलब्ध है। यह वर्ग बड़े काश्तकारों के खेतों पर मजदूरी करके अपना जीवन निर्वाह करते हैं। इनका मुख्य व्यवसाय कृषि पर मजदूरी करना होता है। वर्ष 2011 के अनुसार गंगानगर जिले में पुरुष मजदूरों की संख्या 108235 (26.80 प्रतिशत) है खेतिहर मजदूरों में कुल कार्यशील जनसंख्या की 27.90 प्रतिशत महिला मजदूरों की थी। इसका मुख्य कारण कृषि व्यवसाय में मशीनीकरण का उपयोग है तथा महिला शिक्षा भी रही है।

2.13.3 पारिवारिक उद्योग

पारिवारिक उद्योगों में संलग्न गंगानगर जिले में वर्ष 2011 के आंकड़ों के अनुसार पुरुषों की संख्या 3237 (1.22 प्रतिशत) है तथा स्त्रियों की संख्या 1159 (2. 17 प्रतिशत) है। पारिवारिक उद्योगों में स्त्रियों का प्रतिशत पुरुषों के मुकाबले कम होने का मुख्य कारण अशिक्षा तथा पारिवारिक उद्योग या कुटीर उद्योग के विकास में वृद्धि न होना है।

तालिका संख्या 2.16

व्यवसायानुसार अथवा आर्थिक क्रियाकलापों में जनसंख्या का वितरण (2011)

जिला / तहसील		काश्तकार		खेतीहर मजदूर		पारिवारिक उद्योग		अन्य कार्य करने वाले	
	क्षेत्र	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री	पुरुष	स्त्री
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10
गंगानगर (जिला)	ग्रामीण	176800 (44.45)	36011 (27.90)	108235 (26.80)	39462 (30.19)	6484 (0.84)	3252 (1.65)	239108 (27.91)	71211 (40.27)
	नगरीय	172255 (3.18)	35495 (2.27)	103853 (3.06)	38404 (4. 66)	3247 (2.26)	2093 (5.10)	108148 (91.50)	51236 (87.96)
	योग	4545 (33. 32)	516 (24.02)	4382 (20.40)	1058 (26.32)	3237 (1.22)	1159 (2.17)	130960 (45.06)	19975 (47.49)
तहसील									
करनपुर	ग्रामीण	11012 (37.91)	1018 (12.64)	11111 (38.25)	3466 (43.05)	300 (1.03)	296 (3.68)	6625 (22.81)	3272 (40.64)
	नगरीय	391 (4.18)	19 (1.21)	498 (5.33)	158 (10.09)	331 (3.54)	78 (4.98)	8129 (86.95)	1311 (83.72)
	योग	11403 (29.70)	1037 (10.78)	11609 (30.23)	3624 (37.68)	631 (1.64)	374 (3.89)	14754 (38.42)	4583 (47.65)

श्रीगंगानगर	ग्रामीण	19723 (31.22)	2054 (13.81)	20447 (32.37)	6024 (40.49)	874 (1.38)	407 (2.74)	22131 (35.03)	6391 (42.95)
	नगरीय	854 (1.22)	53 (0.45)	781 (1.12)	112 (0.96)	1669 (2.39)	813 (5.24)	66517 (95.27)	10924 (93.35)
	योग	20577 (15.47)	2107 (7.93)	21228 (15.96)	6136 (23.09)	2543 (1.91)	1020 (3.84)	88648 (66.65)	17315 (65.15)
सादुलशहर	ग्रामीण	15979 (40.35)	2722 (17.23)	9685 (31.48)	3580 (30.29)	212 (0.83)	216 (1.94)	10225 (27.34)	7098 (50.54)
	नगरीय	1350 (1.60)	274 (0.47)	1419 (0.97)	384 (1.25)	273 (2.72)	54 (6.42)	6831 (94.72)	1151 (91.86)
	योग	17329 (33.67)	2996 (15.73)	11104 (26.23)	3964 (27.69)	485 (1.16)	270 (2.34)	17056 (38.94)	8249 (54.24)
पदमपुर	ग्रामीण	14828 (44.26)	2243 (19.99)	11571 (26.83)	3942 (26.29)	306 (0.59)	252 (1.59)	10047 (28.32)	6578 (52.13)
	नगरीय	122 (13.67)	6 (14.71)	74 (14.37)	16 (20.61)	208 (2.77)	82 (2.90)	7242 (69.19)	1174 (61.78)
	योग	14950 (37.69)	2249 (19.36)	11645 (24.15)	3958 (25.61)	514 (1.05)	334 (1.74)	17289 (37.10)	7752 (53.29)
रायसिंहनगर	ग्रामीण	22107 (51.48)	2750 (20.12)	12107 (28.19)	4543 (33.23)	276 (0.64)	214 (1.57)	8457 (19.69)	6163 (45.08)

	नगरीय	105 (1.38)	7 (0.58)	48 (0.63)	11 (0.91)	152 (2.00)	59 (4.86)	7281 (95.98)	1137 (93.66)
	योग	22212 (43.96)	2757 (18.52)	12155 (24.05)	4554 (30.60)	428 (0.85)	273 (1.83)	15738 (31.14)	7300 (49.05)
अनूपगढ़	ग्रामीण	20449 (53.18)	5766 (38.63)	10208 (21.00)	4436 (26.99)	248 (1.06)	144 (1.50)	9201 (24.76)	3783 (32.88)
	नगरीय	407 (6.82)	26 (6.57)	278 (7.83)	24 (19.41)	173 (1.71)	52 (8.43)	6999 (83.64)	819 (65.58)
	योग	20856 (45.74)	5792 (35.17)	10486 (18.89)	4460 (26.18)	421 (1.16)	196 (2.25)	16200 (34.22)	4602 (36.41)
घड़साना	ग्रामीण	19061 (50.39)	4127 (41.05)	7527 (16.01)	2884 (19.24)	380 (0.62)	160 (1.16)	8873 (32.98)	3513 (38.54)
	नगरीय	468 (3.73)	85 (1.79)	537 (3.28)	251 (3.49)	117 (1.41)	109 (4.46)	5737 (91.57)	848 (90.27)
	योग	19529 (41.09)	4212 (38.04)	8064 (13.47)	3135 (18.03)	497 (0.78)	269 (1.41)	14610 (44.66)	4361 (42.51)
विजयनगर	ग्रामीण	14117 (41.38)	4626 (32.20)	10087 (29.56)	4753 (33.08)	220 (0.64)	116 (0.81)	9695 (28.42)	4873 (33.92)
	नगरीय	203 (2.96)	9 (1.12)	180 (2.63)	30 (3.72)	70 (1.02)	20 (2.48)	6404 (93.39)	747 (92.68)

	योग	14320 (34.95)	4635 (30.55)	10267 (25.06)	4783 (31.52)	290 (0.71)	136 (0.90)	16099 (39.29)	5620 (37.04)
सूरतगढ़	ग्रामीण	34979 (50.99)	10189 (40.81)	11110 (25.45)	4776 (31.40)	431 (0.62)	288 (1.02)	22894 (22.94)	9565 (26.77)
	नगरीय	645 (5.18)	37 (2.82)	567 (3.54)	72 (2.61)	244 (2.20)	92 (5.65)	15820 (89.08)	1864 (88.93)
	योग	35624 (43.48)	10226 (38.49)	11677 (21.86)	4848 (29.63)	675 (0.88)	380 (1.30)	38714 (33.78)	11429 (30.58)

स्रोतः प्रावधानिक जनगणना प्रतिवेदन 2011, राजस्थान।

2.14 अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति जनसंख्या

वर्ष 2011 की जनगणना के अनुसार सम्पूर्ण गंगानगर जिले की करणपुर तहसील में सबसे अधिक अनुसूचित जाति है जो निम्न तालिका संख्या 2.17 में प्रदर्शित है।

तालिका संख्या 2.17

वर्ष/ तहसील	अनुसूचित जाति				अनुसूचित जनजाति			
	पुरुष	स्त्री	योग	:	पुरुष	स्त्री	योग	:
2001	317049	286322	603371	33.72	7948	6796	14744	0.82
2011	376734	343678	720412	36.59	7160	6317	13477	0.68
तहसील (2011)								
करणपुर	36861	33805	70666	48.11	815	773	1588	1.08
गंगानगर	68427	61834	130261	27.04	2918	2665	5583	1.16
पदमपुर	31515	28834	60349	37.09	158	143	301	0.19
सादुलशहर	29361	27020	56381	35.57	383	303	686	1.43
रायसिंहनगर	44863	41434	86297	43.93	203	179	382	0.19
सूरतगढ़	49664	45147	94811	29.54	843	716	1559	0.49
अनूपगढ़	43025	39458	82483	44.73	580	444	1024	0.56
विजयनगर	33832	30545	64377	44.16	501	462	963	0.67
घड़साना	39186	35601	74787	43.52	759	632	1391	0.81

स्रोतः जनगणना प्रतिवेदन 2011, राजस्थान।

2.14.1 अनुसूचित जाति

उपरोक्त तालिका संख्या 2.17 से स्पष्ट है कि जिले में वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार अनुसूचित जाति की जनसंख्या 603371 थी जो कि कुल जनसंख्या 42.08 प्रतिशत थी, जिसमें पुरुषों की जनसंख्या 22.11 एवं स्त्री जनसंख्या 19.97 प्रतिशत थी। वर्ष 2011 में अनुसूचित जाति की कुल जनसंख्या 720412 जो कि कुल जनसंख्या 50.25 प्रतिशत भाग है, जिसमें पुरुषों की जनसंख्या 26.28 प्रतिशत एवं स्त्री जनसंख्या 23.97 प्रतिशत है।(मानचित्र सख्यां 2.11)

2.14.2 अनुसूचित जनजाति

उपरोक्त तालिका संख्या 2.17 से स्पष्ट है कि गंगानगर जिले में वर्ष 2001 की जनगणना के अनुसार अनुसूचित जनजाति की जनसंख्या 14744 थी जो कि कुल जनसंख्या 1.03 प्रतिशत थी, जिसमें 7948 पुरुष जो कुल जनसंख्या 0.55 प्रतिशत थे एवं स्त्री जनसंख्या 6796 थी, जो कि कुल स्त्री जनसंख्या की 0.47 प्रतिशत थी। वर्ष 2011 में अनुसूचित जनजाति की कुल जनसंख्या 13477 जो कि कुल जनसंख्या 0.94 प्रतिशत भाग है, जिसमें पुरुषों की जनसंख्या 7160 जो कि कुल पुरुष जनसंख्या का 0.50 प्रतिशत एवं स्त्री जनसंख्या 6317 है जो कि कुल स्त्री जनसंख्या 0.44 प्रतिशत है।(मानचित्र सख्यां 2.12)

2.15 साक्षरता

जनसंख्या का शिक्षित एवं साक्षर होना देश की विकासशील अर्थव्यवस्था के लिए आवश्यक है। शिक्षित श्रमिक चाहे उद्योग में कार्य करें या निजी व्यवसाय करें या कृषि में कार्य करें, अशिक्षित श्रमिक की अपेक्षा अधिक कार्यकुशल होता है।(मानचित्र सख्यां 2.13)

राज्य में साक्षरता का अध्ययन यदि कृषि के संदर्भ में करें तो भी कृषि विकास एवं आधुनिकीकरण प्रक्रिया हेतु किसान का साक्षर होना आवश्यक है। शिक्षित किसान कृषि उत्पादन की नई तकनीकियों, मशीनरी आदि के बारे में

मानचित्र सं. 2.11

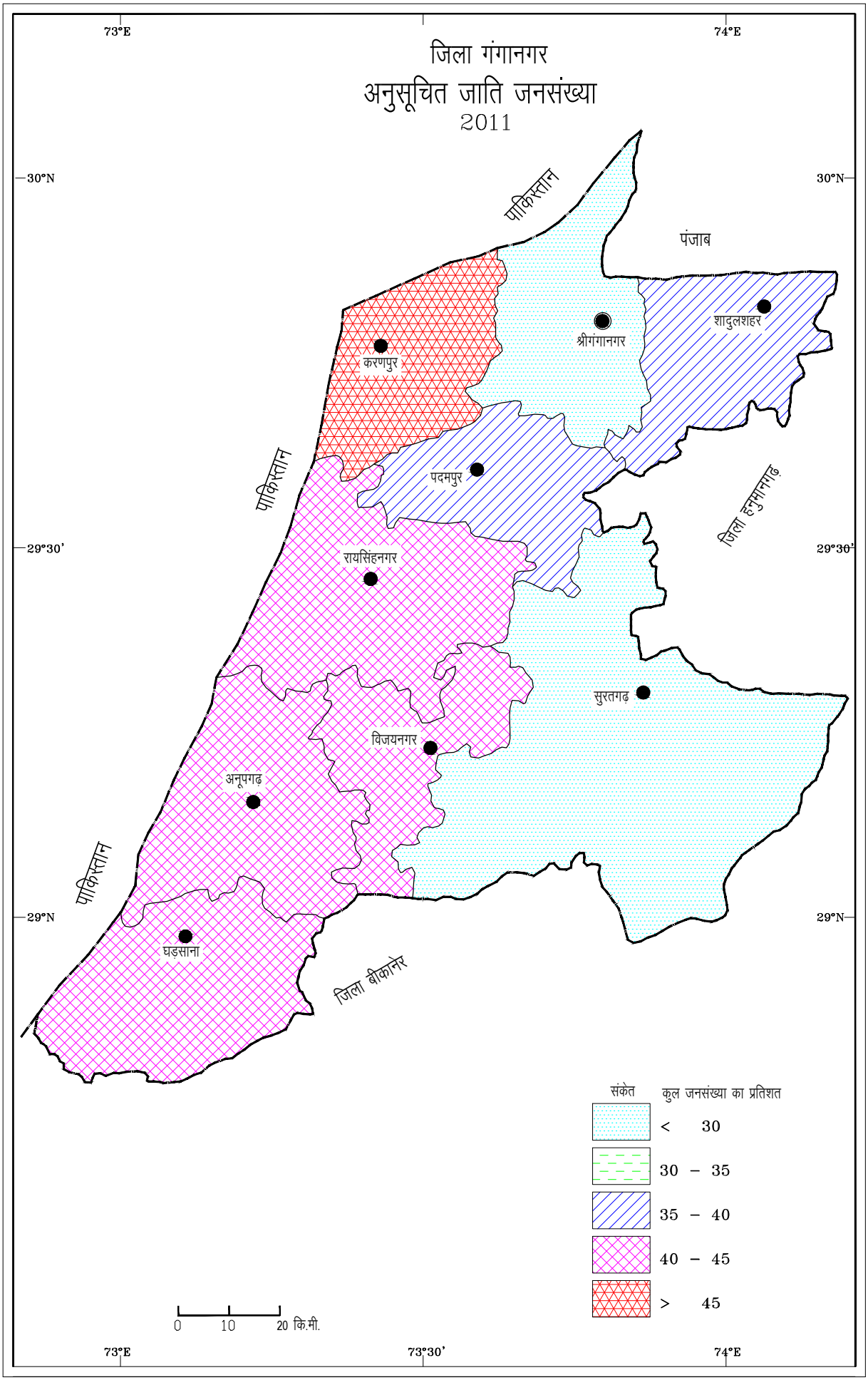
73°E
74°E
जिला गंगानगर
अनुसूचित जाति जनसंख्या
2011
30°N
30°N
पाकिस्तान
पंजाब
शादुलशहर
श्रीगंगानगर
करणपुर
पाकिस्तान
पदमपुर
जिला हनुमानगढ़
29°30'
29°30'
रायसिंहनगर
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
पाकिस्तान
29°N
29°N
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
कुल जनसंख्या का प्रतिशत
< 30
30 – 35
35 – 40
40 – 45
> 45
0 10 20 कि.मी.
73°E
73°30'
74°E

मानचित्र सं. 2.12

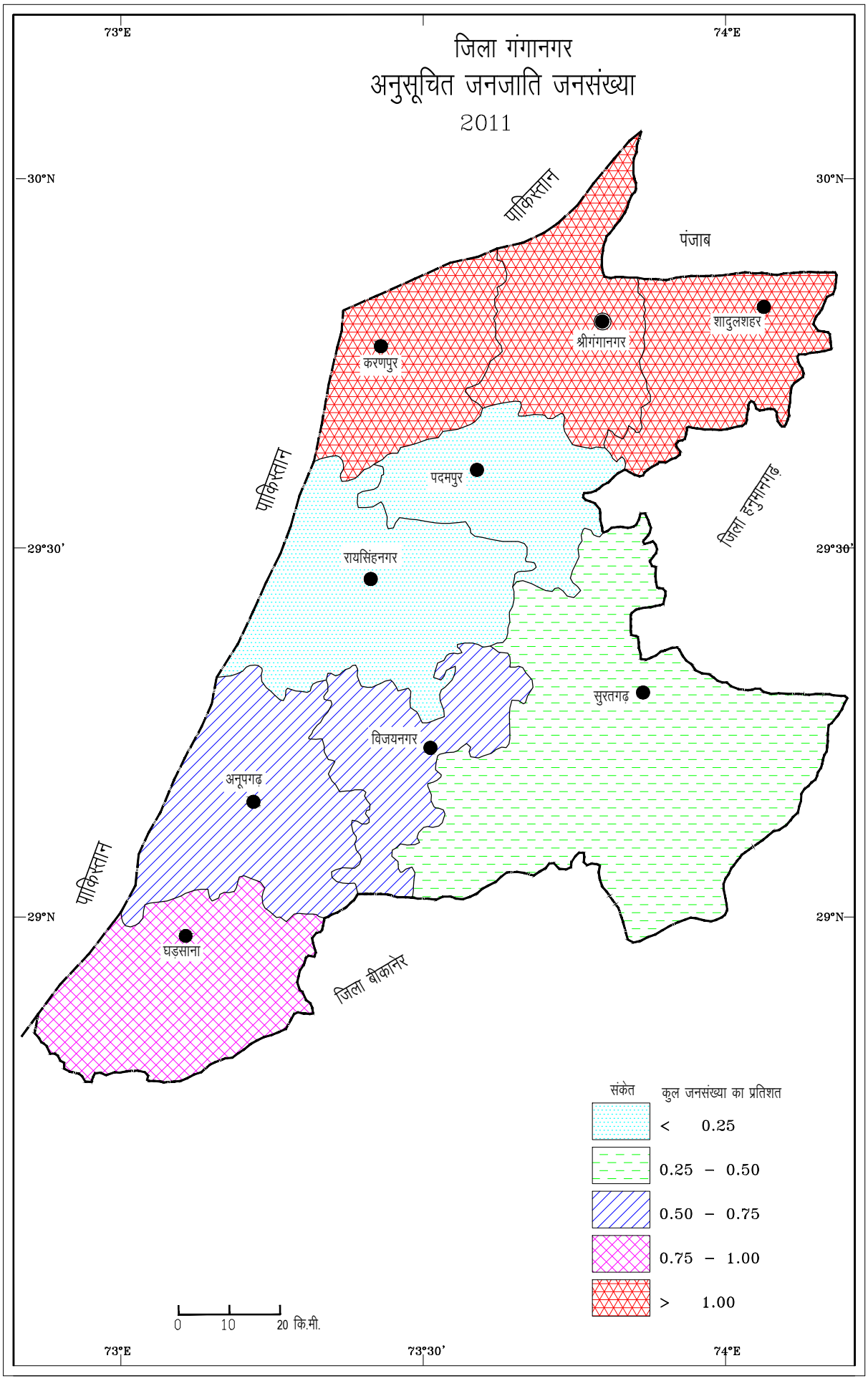
जिला गंगानगर
अनुसूचित जनजाति जनसंख्या
2011
73°E
74°E
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
जिला हनुमानगढ़
जिला बीकानेर
श्रीगंगानगर
शादुलशहर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
संकेत
कुल जनसंख्या का प्रतिशत
< 0.25
0.25 – 0.50
0.50 – 0.75
0.75 – 1.00
> 1.00
0 10 20 कि.मी.

जानकारी विभिन्न संस्थाओं से प्राप्त करके आसानी से व्यवसाय कर लेता है। अशिक्षित किसान पुरानी कृषि पद्धति एवं रूढ़िवादी विचारों के आधार पर ही कृषि कार्य करता है। वे कृषि को देवी–देवताओं का दान मानते हैं, जैसा आज भी राज्य के दक्षिणी भाग में आदिवासी क्षेत्रों में देखने को मिलता है जबकि शिक्षित किसान इन विचारों से दूर रहते हुए कृषि में नई तकनीकियों एवं आदानों का उपयोग करता हुआ कृषि उत्पादन वृद्धि में सहयोग देता है। शिक्षित किसान साख सुविधाओं, कृषि विपणन आदि सुविधाओं का भी अधिकतम लाभ प्राप्त करने की दिशा में उत्सुक एवं प्रयासरत रहता है। गंगानगर जिले की विभिन्न तहसीलों में साक्षरता का प्रतिशत तालिका संख्या 2.18 में दर्शाया गया है–

तालिका संख्या 2.18

साक्षरता दर (साक्षरता वर्ष 2001–2011)

(प्रतिशत में)

वर्ष/ तहसील	कुल	पुरुष	स्त्री
2001	64.74	75.70	43.85
2011	69.64	78.50	59.70
तहसील (2011)			
करणपुर	68.40	76.84	59.13
गंगानगर	75.58	83.09	67.06
सादुलशहर	67.42	77.49	55.87
पदमपुर	70.48	79.36	60.75
रायसिंहनगर	69.91	79.52	59.41
अनुपगढ़	66.34	75.69	55.99
घड़साना	65.76	75.88	54.47
विजयनगर	66.68	75.45	56.93
सूरतगढ़	66.90	76.04	56.46

स्रोतः जनगणना प्रतिवेदन 2011, राजस्थान।

मानचित्र सं. 2.13

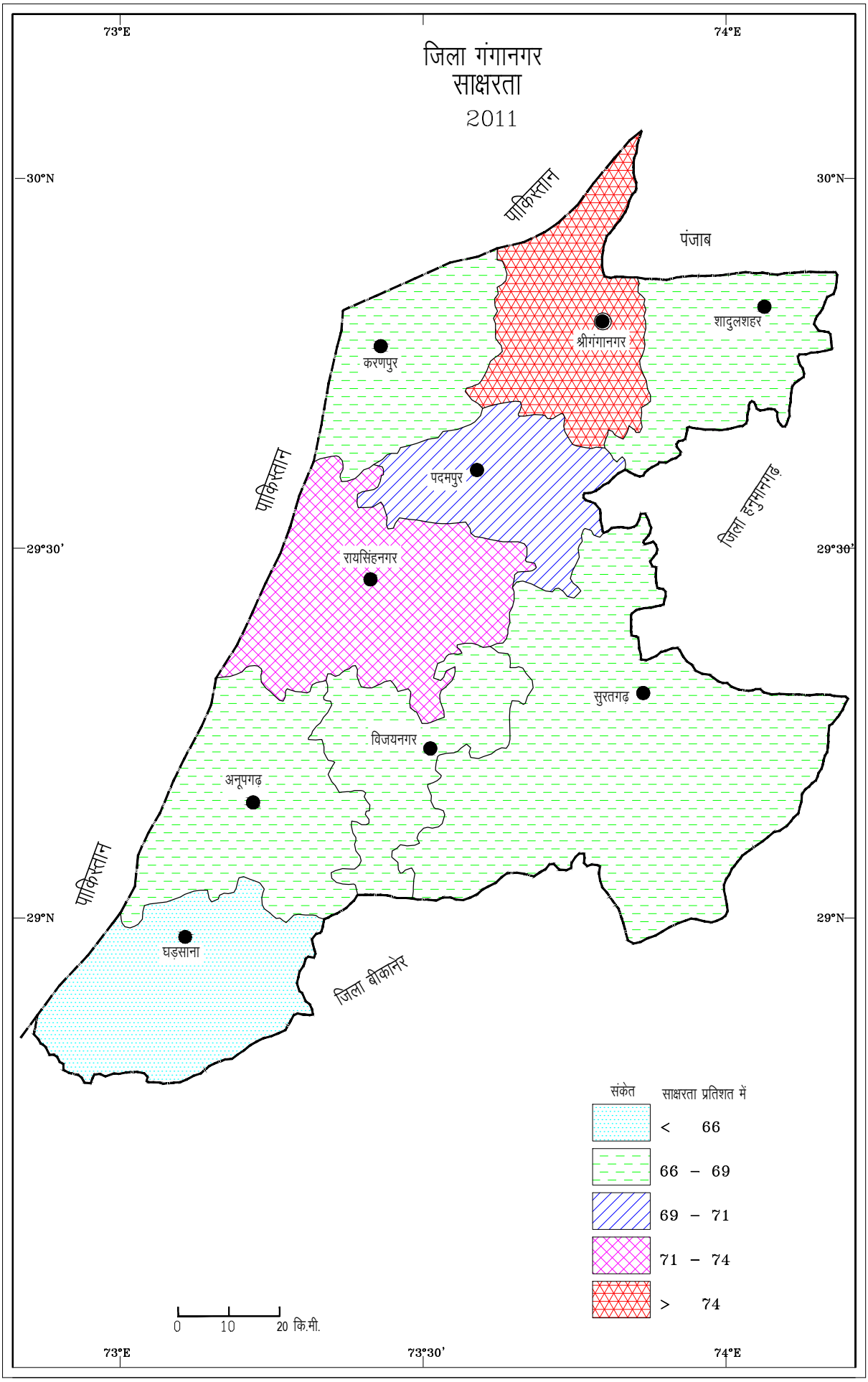
73°E
74°E
जिला गंगानगर
साक्षरता
2011
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
शादुलशहर
श्रीगंगानगर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
जिला हनुमानगढ़
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
साक्षरता प्रतिशत में
< 66
66 – 69
69 – 71
71 – 74
> 74
0 10 20 कि.मी.

उपरोक्त तालिका संख्या 2.18 से स्पष्ट है कि वर्ष 2001 की जनगणना के आंकड़ों के अनुसार कुल साक्षरता 64.74 प्रतिशत थी जो कि 2011 की जनगणना के अनुसार कुल साक्षरता 69.64 हो गई।

तालिकानुसार तहसीलवार साक्षरता दर सर्वाधिक साक्षरता दर प्रतिशत गंगानगर तहसील का 75.58 है जिनमें पुरुष साक्षरता दर 83.09 एवं महिला साक्षरता दर 67.06 प्रतिशत है एवं न्यूनतम की गणना की जाये तो घड़साना तहसील की साक्षरता दर प्रतिशत 65.76 है जिनमें पुरुष साक्षरता 75.88 एवं महिला साक्षरता दर 54.47 प्रतिशत है। गंगानगर में सर्वाधिक साक्षरता होने का प्रमुख कारण नगरीयकरण का होना है।

2.16 जनसंख्या लिंगानुपात

लिंगानुपात से तात्पर्य 1000 पुरुषों के पीछे स्त्रियों की संख्या से है। सन् 2001 की जनगणना के आंकड़ों के अनुसार गंगानगर जिले की लिंगानुपात 873 स्त्रियाँ हैं एवं गंगानगर की तहसीलों का लिंगानुपात निम्न तालिका में दर्शाया गया है–

तालिका संख्या 2.19

जनसंख्या लिंगानुपात (2011)

वर्ष/ तहसील	पुरुष	स्त्री	लिंगानुपात
2001	955378	834045	873
2011	1043340	925828	887
तहसील			
करनपुर	77193	69685	902.7
गंगानगर	256817	224823	875.4
सादुलशहर	84792	73681	868.9
पदमपुर	85464	77254	903.94

मानचित्र सं. 2.14

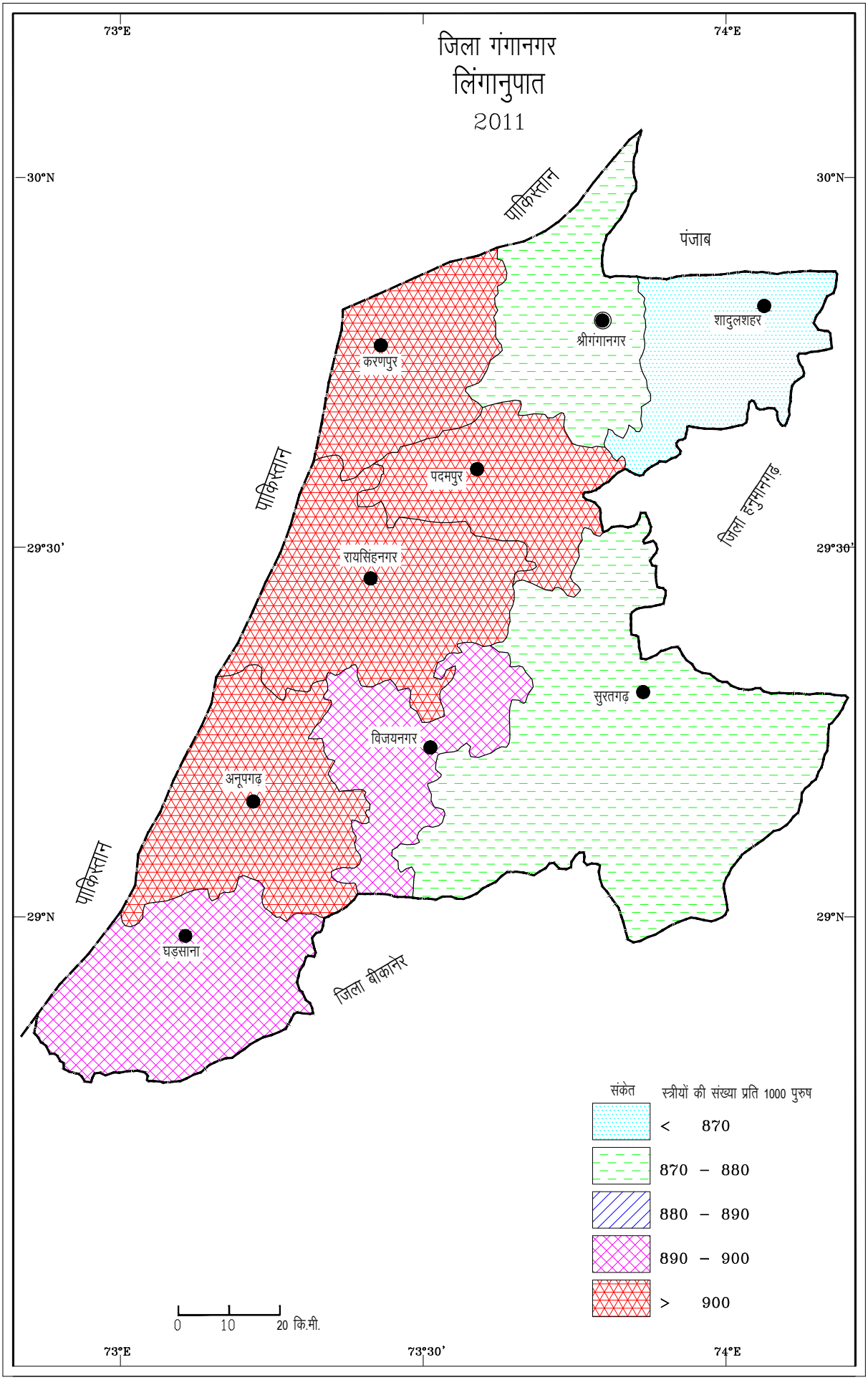
जिला गंगानगर
लिंगानुपात
2011
73°E
74°E
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
जिला हनुमानगढ़
जिला बीकानेर
श्रीगंगानगर
शादुलशहर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
संकेत
स्त्रीयों की संख्या प्रति 1000 पुरुष
< 870
870 – 880
880 – 890
890 – 900
> 900
0 10 20 कि.मी.

रायसिंहनगर	102938	93517	908.48
सूरतगढ़	171312	149669	873.66
अनूपगढ़	97064	87359	900.01
विजयनगर	76960	68810	894.10
घड़साना	90800	81030	892.40

स्रोतः जिला जनगणना प्रतिवेदन 2011, जिला गंगानगर

तालिका संख्या 2.19 से स्पष्ट है कि गंगानगर जिले में वर्ष 2001 में लिंगानुपात 873 था जो कि वर्ष 2011 में बढ़कर 887 हो गई। गंगानगर की सभी तहसीलों की तुलना में रायसिंहनगर तहसील में स्त्रियों की संख्या अधिक है। अतः स्त्रियों की संख्या में वृद्धि हुई है। प्रति हजार स्त्रियों की संख्या कम होने का मुख्य कारण स्त्रिलिंग भ्रूण हत्या है, जो कि स्त्रियों में शिक्षा की कमी का द्योतक है।(मानचित्र सख्यां 2.14)

2.17 गणितीय घनत्व –

गणितीय घनत्व का अर्थ क्षेत्र विशेष में प्रतिवर्ग इकाई भू–भाग पर निवास करने वाले कुल जनसंख्या से है। जिसे निम्न सूत्र से व्यक्त किया जाता है –

$$\text{गणितीय घनत्व} = \frac{\text{कुल जनसंख्या}}{\text{कुल भौगोलिक क्षेत्र (संबंधित क्षेत्र का)}}$$

उपर्युक्त सूत्र से जिले की विभिन्न तहसीलों की जनसंख्या घनत्व की गणना की गई जिसे मानचित्र संख्या ..... में प्रदर्शित किया गया है। गणना से स्पष्ट होता हैं कि जिले में जनसंख्या घनत्व में विषमता मिलती है। यहां उच्च घनत्व सघन कृषि क्षेत्रों में मिलता है। जबकि गंगानगर तहसील में उच्च घनत्व का मुख्य कारण नगरीकरण रहा है। यहां घनत्व 488 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. है जबकि सबसे कम घनत्व सूरतगढ़ तहसील में हैं।

(अ) उच्च घनत्व क्षेत्र (200 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. से अधिक) :–

गंगानगर जिले की श्रीगंगानगर तहसील में जनघनत्व 488 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. है जो राज्य के जनघनत्व से ढाई गुणा अधिक है एवं प्रदेश के जनघनत्व से लगभग दोगुना है, जिसका मुख्य कारण जिला मुख्यालय व नगरीकरण है। जहां उच्च सुविधाएं शिक्षा, स्वास्थ्य, व्यापारिक सेवाएं व रोजगार सुविधाएं उपलब्ध हैं।

(ब) मध्यम घनत्व क्षेत्र (150–250 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी.) :–

इस वर्ग में जिले की सादुलशहर, रायसिंहनगर, विजयनगर, अनूपगढ़, घड़साना व पदमपुर तहसीले शामिल हैं। इन तहसीलों में जनघनत्व 150 से 250 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. है जो कि राज्य के जनघनत्व के लगभग समान है। इन तहसीलों में कृषि कार्य मुख्य होने से जनघनत्व सामान्य मिलता है। यहां कृषि तन्त्र सफल व उपजाऊ मृदा होने से काश्तकारों को अधिक उपज प्राप्त होती हैं।

(स) निम्न जनघनत्व क्षेत्र (150 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. से कम) :–

इस वर्ग में केवल सूरतगढ़ तहसील शामिल है जहां मात्र 113 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. निवास करते है। इस तहसील का क्षेत्रफल सभी तहसीलों से उच्च है। यहां सिंचित क्षेत्र कम होने के कारण जनघनत्व का अभाव है। सम्पूर्ण तहसील में अधिकांश भूमि बंजर व अकृषित है। यहां सम्पूर्ण क्षेत्र में मात्र 20.59 प्रतिशत भू–भाग पर कृषि पैदावार ली जाती हैं।

2.18 कृषि घनत्व –

यह घनत्व कृषि पर जनसंख्या के भार को ज्ञात करने का मुख्य सूचकांक है। उच्च घनत्व से कृषि पर जनघनत्व अधिक होगा व निम्न घनत्व होने से उत्पादकता प्रभावित होगी। अतः कृषि भूमि व कृषि कार्य से जुड़ी

जनसंख्या (ग्रामीण) के अनुपात संबंधों को प्रकट करने व कृषि घनत्व क्षेत्र विशेष में जनसंख्या के भार का एक बेहतर पैमाना है जिसे निम्न प्रकार से ज्ञात किया जाता है –

$$\text{कृषि घनत्व} = \frac{\text{कृषि में संलग्न जनसंख्या}}{\text{कुल कृषि क्षेत्र}}$$

गंगानगर जिले में कृषि घनत्व में भारी असमानता मिलती है। यहां करनपुर व अनूपगढ़ तहसील में उच्च कृषि घनत्व 70 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. है जबकि सबसे कम कृषि घनत्व सादुलशहर, रायसिंहनगर एवं गंगानगर तहसीलों में हैं।

(अ) उच्च कृषि घनत्व के क्षेत्र (65 से अधिक) –

जिले की करनपुर व अनूपगढ़ तहसीलों में 70 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. है। यहां भूमि की उत्पादन शक्ति अधिक होने से कृषकों की संख्या कृषित क्षेत्रों की तुलना से अधिक है। सभी तहसीले पूर्णतया नहरी सिंचाई तंत्र से सिंचित है। इन तहसीलों में फसल उत्पादन अधिक होने के साथ यहां रोजगार के भी साधन उपलब्ध हैं। गंगनगर व करनपुर तहसीलों में गन्ना उत्पादन अधिक होने से श्रमिकों को यहां शुगर मील व कॉटन मील से रोजगार मिल जाता हैं।

(ब) मध्यम कृषि घनत्व के क्षेत्र (61 से 65) –

इस वर्ग में सूरतगढ़, विजयनगर, पदमपुर व घड़साना तहसील सम्मिलित है। जहां मध्यम कृषि घनत्व मिलता है। यहां मध्यम कृषि घनत्व का मुख्य कारण कृषि भूमि योग्य व समतलीकरण है। जहां अत्याधिक सिंचाई से भूमि की उत्पादकता स्तर भी अधिक हैं।

(स) निम्न कृषि घनत्व के क्षेत्र (60 से कम) –

इस वर्ग में सादुलशहर, रायसिंहनगर व गंगानगर तहसीले शामिल है। यहां निम्न कृषि घनत्व का मुख्य कारण रोजगार के अन्य साधन हैं।

2.19 कार्यिक घनत्व –

यह कुल जनसंख्या व कृषि क्षेत्र के अनुपात को दर्शाता है। जिसका शाब्दिक अर्थ प्रति वर्ग कि.मी. इकाई कृषि क्षेत्र पर निवास करने वाली कुल जनसंख्या है। इसको ज्ञात करने के लिए अकृषि भूमि को सम्मिलित नही किया जाता है। इसे निम्न सूत्र द्वारा ज्ञात किया जाता है–

$$\text{कार्यिक घनत्व} = \frac{\text{कुल जनसंख्या}}{\text{कुल बोया गया क्षेत्र}}$$

गंगानगर तहसील में कार्यिक घनत्व 400 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. से अधिक जबकि सूरतगढ़, विजयनगर, अनूपगढ़, घड़साना में 300 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी से 400 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. तथा करनपुर, पदमपुर सादुलशहर, रायसिंहनगर, तहसीलों में 300 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी. से म कार्यिक घनत्व हैं।

2.20 पौष्टिक घनत्व –

किसी क्षेत्र विशेष में कृषि भूमि की भार वहन क्षमता को ज्ञात करने का यह सर्वोत्तम सूचकांक है। यह जिस क्षेत्र के लिए उच्च होता है वहां की जनसंख्या खाद्यान्न पदार्थों पर आत्मनिर्भर नही होती उसे अन्य क्षेत्रों पर निर्भर रहना पड़ता है। अतः इस घनत्व से खाद्यान्न पदार्थों की आत्मनिर्भरता व दूसरे क्षेत्रों पर निर्भरता दोनों का अध्ययन किया जाता है। पौष्टिक घनत्व के अध्ययन के लिये खाद्य फसलों के प्रति वर्ग किमी. क्षेत्रफल पर कुल जनसंख्या के भार को ज्ञात किया जाता हैं। इसे निम्न सूत्र द्वारा ज्ञात किया जाता है :–

$$\text{पौष्टिक घनत्व} = \frac{\text{कुल जनसंख्या}}{\text{कुल खाद्यान्नों का क्षेत्रफल}}$$

जिले में उच्च घनत्व (400 से अधिक) अनूपगढ़, पदमपुर, तहसीलों में है जिसका मुख्य कारण यहां जनसंख्या कम व खाद्यान फसलों का उत्पादन अधिक है। जबकि मध्यम पौष्टिक घनत्व (201 से 300) घड़साना, विजयनगर, सादुलशहर, रायसिंहनगर, गंगानगर, सूरतगढ़ में हैं। निम्न पौष्टिक घनत्व (200 से कम) करनपुर तहसील में हैं। वर्तमान में गंगानगर द्वारा अध्ययन क्षेत्र का अधिकतम हिस्सा सिंचित है जिस कारण सिंचाई की सुनिश्चिता के कारण वर्ष में दो बार नकदी फसलें ली जाती है। उत्पादन भी नहर द्वारा सिंचाई के प्रारम्भिक वर्षों से अब अधिक हुआ है जिस कारण प्रति व्यक्ति आय बढ़ी एवं धीरे–धीरे क्षेत्र में लोगों का आर्थिक स्तर एवं जीवन की गुणवत्ता में सुधार हुआ है। जिला गंगानगर राज्य में मानव विकास सूचकांक में गत कुछ वर्षों से प्रथम स्थान पर बना है जो कि क्षेत्र के सम्पूर्ण विकास एवं आर्थिक स्तर का महत्वपूर्ण सूचक है। जिला गंगानगर कृषि उत्पादन के मामलें में राज्य में ही नहीं बल्कि उतरी – पश्चिमी भाग का महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं।

2.21 परिवहन

गंगानगर राज्य के कई महत्वपूर्ण केन्द्रों से सीधा जुडा है किसी भी जिलें के विकास एवं प्रगति में वहां के परिवहन स्वरुप का महत्वपूर्ण स्थान होता है। परिवहन के स्वरुप पर ही जिलें की मुख्य आधारभूत सरंचना का निर्माण होता है। गंगानगर सामरिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है, यह पाकिस्तान के अंतर्राष्ट्रीय सीमा बना है सामरिक परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुये भारत सरकार एवं राजस्थान सरकार ने परिवहन व्यवस्था का समुचित विकास किया है। यहां पर सड़क, रेल और वायु मार्ग उपलब्ध है।

मानचित्र सं. 2.15

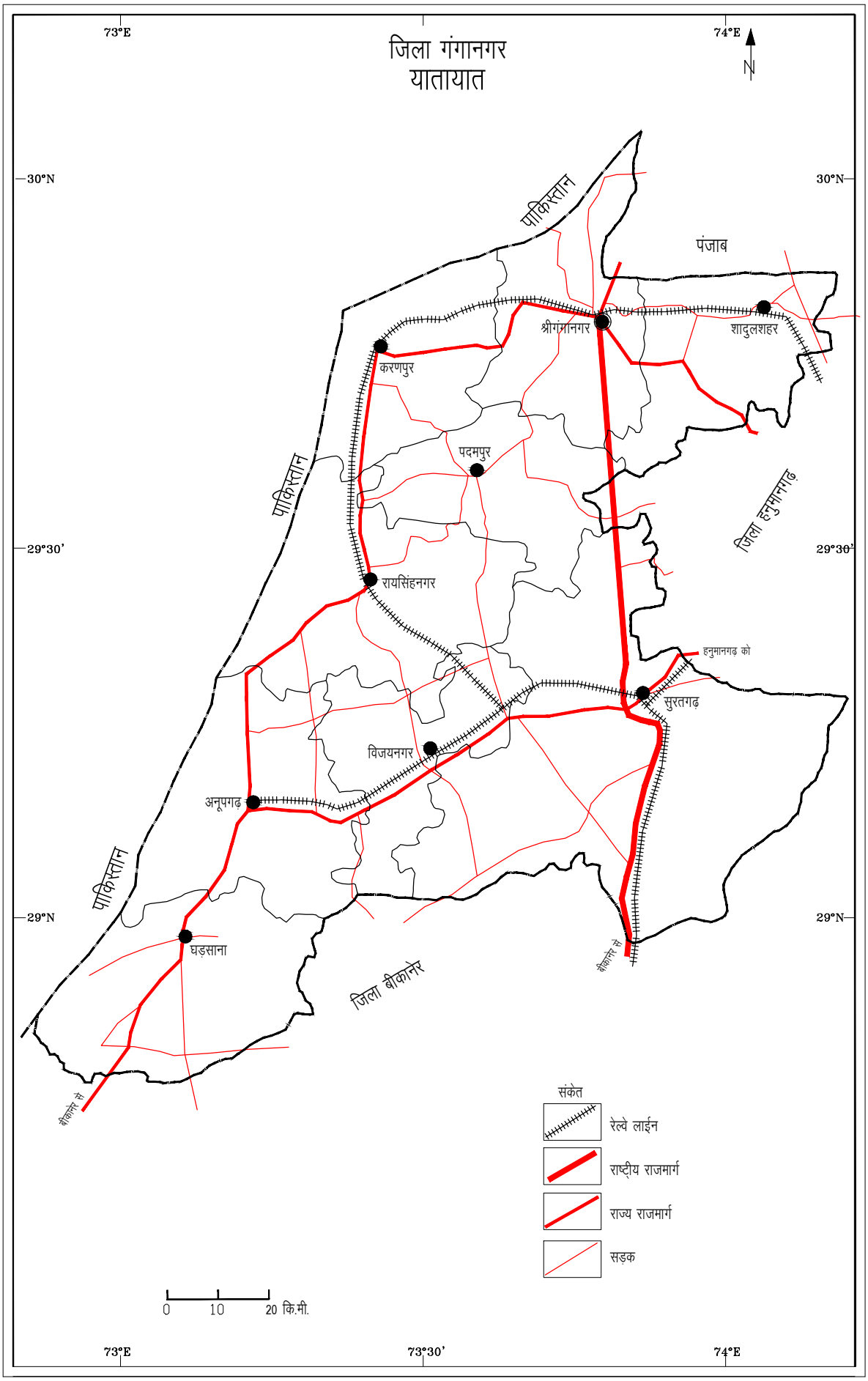
जिला गंगानगर
यातायात
73°E
74°E
N
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
श्रीगंगानगर
शादुलशहर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
जिला हनुमानगढ़
हनुमानगढ़ को
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
जिला बीकानेर
बीकानेर से
संकेत
रेल्वे लाईन
राष्ट्रीय राजमार्ग
राज्य राजमार्ग
सड़क
0
10
20 कि.मी.

सड़क परिवहन –

गंगानगर में वर्ष 2011–12 में सड़कों (पेंट की हुई) की कुल लंबाई 4169.5 किलोमीटर थी, जो की वर्ष 2013–14 में 4699.42 किलोमीटर हो गई है। जिले में कुल सड़क मार्ग में से 114.15 किलोमीटर लम्बाई राष्ट्रीय राजमार्ग सख्यां 15 के अंतर्गत आती है। राष्ट्रीय राजमार्ग सख्यां 15 की कुल लम्बाई 1526 किलोमीटर है, जो की पंजाब के पठानकोट से गुजरात के श्यामख्याली तक की है। राजसथान में इसकी लम्बाई 815.75 किलोमीटर है। यह राजमार्ग गंगानगर की श्रीगंगानगर, पदमपुर और सुरतगढ़ तहसीलों से गुजरता है।(मानचित्र सख्यां 2.15)

रेल परिवहन –

गंगानगर रेल यातायात उत्तर पश्चिमरेल्वे के अंतर्गत आता है। गंगानगर से कोटा के बीच चलने वाली ट्रेन राजस्थान को उत्तर से दक्षिण को जोड़ती है।

वायु परिवहन –

गंगानगर को बीकानेर के नाल सैनिक हवाई अड्डे द्वारा वायु परिवहन सेवा प्राप्त होती है। इसका उपयोग सामरिक कार्यों के लिए किया जाता है।

निष्कर्ष

गंगानगर जिले की स्थलाकृति का निर्माण भूतकालीन पुरा जलधाराओं तथा वर्तमान में शुष्क दशाओं के अंतर्गत हुआ है। वायु निक्षेप से पुरा जलधाराओं के प्रवाह में बाधाये उत्पन्न हुई तथा अग्रगामी बालुकास्तूपों से कालान्तर में लुप्त हो गयी। घग्घर नदी पुरा जलधाराओं का अवशेष है तथा वर्तमान में यह अन्तः जलप्रवाह प्रणाली का एक रूप है। वायु अपरदन के परिणामस्वरूप जिले की उत्तरी गंगा मैदान समतल स्थलाकृति का निर्माण

करता है जबकि दक्षिणी भाग बिखरे बालुकास्तूपों युक्त गंग बांगड़ के अंतर्गत है।

अर्द्धमरूस्थलीय पारिस्थितिकी के अध्ययन जिले में वर्षा की न्यूनता, अत्यधिक तापान्तर एवं धूलभरी आंधियां सामान्य प्रघटक हैं। गंगानगर में देश का सर्वाधिक ऊँचा तापमान अंकित किया गया है। जिले की आर्थिक भूदृश्यावली में परिवर्तन वर्ष 1927 के बाद प्रारम्भ होता है। गंगनहर के निर्माण से यह अर्द्धशुष्क भाग नहरी सिंचित क्षेत्र में परिवर्तित हो गया। इससे अध्ययन जिले के भूमि उपयोग में महत्वपूर्ण परिवर्तन आये है। नकदी फसलों के उत्पादन ने कृषि आधारित उद्योगों के विकास को आधार प्रदान किया हैं।

किसी क्षेत्र विशेष में जनसंख्या का वितरण एवं घनत्व क्षेत्र में उपलब्ध आर्थिक क्रियाकलापों पर आधारित होता है। राजस्थान राज्य के जिला गंगानगर क्षेत्र में आर्थिक क्रियाकलाप मिले–जुले स्तर पर है। अतः यहाँ जनसंख्या घनत्व भी उसी स्तर पर उपलब्ध है। राजस्थान राज्य में जिला गंगानगर क्षेत्रफल की दृष्टि से राज्य का 3.19 प्रतिशत है तथा कुल जनसंख्या का 2.87 प्रतिशत भाग निवास करता है। अध्ययन की तालिका संख्या ..... दशकीय वृद्धि पर दृष्टि डाली जाये पिछले दस वर्षों में जनसंख्या में निरन्तर गिरावट आयी है जो कि जनसंख्या वृद्धि पर रोक लगाने हेतु किये जा रहे प्रयासों का एक नवीन अध्याय है।

जनसंख्या घनत्व कई कारणों का परिणाम है जिला स्तर पर जनसंख्या के घनत्व में महत्वपूर्ण क्षेत्रीय विभिन्नताएँ पाई जाती हैं। इन विभिन्न विभिन्नताओं का मुख्य कारण प्राकृतिक साधनों का असमान वितरण तथा विखण्डित आर्थिक विकास का प्रारूप है। अध्ययन क्षेत्र में कुल जनसंख्या घनत्व 488 व्यक्ति प्रति वर्ग किमी है जिसका मुख्य कारण नगरीकरण व औद्योगिक क्षेत्र है। सर्वाधिक न्यूनतम जनसंख्या घनत्व सूरतगढ़ तहसील में 113 व्यक्ति प्रति किमी. है। कार्यशील जनसंख्या में खेतीहर मजदूरों का प्रतिशत अध्ययन क्षेत्र में सर्वाधिक है जबकि अन्य कार्यों में

संलग्न जनसंख्या का प्रतिशत न्यूनतम है जिनमें स्त्रीयों का अनुपात अधिक है। अध्ययन क्षेत्र की कुल जनसंख्या में अनुसूचित जाति का प्रतिशत 50 प्रतिशत है। अनुसूचित जाति की आर्थिक स्थिति न्यून होने के कारण कारण अधिकांश जनसंख्या खेतीहर मजदूरों के रूप में कार्यरत है। साक्षरता की स्थिति में अध्ययन क्षेत्र में महिला साक्षरता प्रतिशत लगभग 55 प्रतिशत है। अध्ययन क्षेत्र की कुल साक्षरता का प्रतिशत 75.88 प्रतिशत है।

सन्दर्भ सूची

1. शर्मा, एच.एस. शर्मा, एम.एल. (2006): "राजस्थान का भूगोल", पंचशील प्रकाशन, जयपुर
2. राजस्थान पत्रिका (15 सितम्बर 2001) : प्रकाशित लेख–भाखड़ा सिंचाई परियोजना प्रारम्भ से वर्तमान।
3. राव, प्रकाश वी.एल.एस. (1947–56) : क्रॉप एसोशियेशन एण्ड चैन्जिंग पैटर्न ऑफ क्रॉप इन गोदावरी रीजन, वोल्यूम 13
4. राय.बी.के. (1972) : मेजरमेन्ट ऑफ रूरल लैण्डयूज इन आजमगढ़, इन शफी मोहम्मद, एम., आनस, सिद्दीकी फराग (सम्पादित), प्रोसीडिंग्स ऑफ सिम्पोजियम ऑन लैण्डयूज इन डवलपिंग कन्ट्रीज, अलीगढ़।
5. पाण्डे, निवेदिता, अली, अहमद एवं डॉ. स्वामी, एस.के. (2006) : मरूस्थलीय पारिस्थितिकीय तंत्र में सिंचाई : इंदिरा गांधी नहर परियोजना क्षेत्र का भौगोलिक आंकलन, ज्योग्राफिकल आस्पैक्ट्स, बीकानेर, वो. 8
6. केन्डाल, एम.पी. (1939) : द ज्योग्राफिकल डिस्ट्रीब्यूशन ऑफ क्रॉप प्रोडक्टीविटी इन इंग्लैण्ड, जनरल ऑफ रॉयल स्ट्रीट, सोशल वोल्यूम 162
7. जोशी, यशवन्त गोविन्द (1999): नर्बदा बेसिन का कृषि भूगोल, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
8. गवर्नमेन्ट ऑफ राजस्थान (2008) : "डिस्ट्रिक्ट इण्डस्ट्रीज सेन्टर", जिला हनुमानगढ़।
9. भारद्वाज, ओ.पी. (1964): लैण्डयूज लोलैण्ड ऑफ सतलुज इन द जालंधर दोआब, सिम्पल स्टडीज नेशनल ज्योग्राफी जर्नल्स ऑफ इण्डिया, वोल्यूम 10
10. अरिहन्त (2014–15) : पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी, अरिहन्त पब्लिकेशन (इण्डिया) लिमिटेड

अध्याय – तृतीय

भूमि प्रारुप

3.1 भू उपयोग

जिले की कुल भूमि को राजस्व विभागानुसार नौ वर्गों में विभाजित किया गया है इस प्रक्रिया के अन्तर्गत भूमि का प्रत्येक भाग वर्तमान में उपयुक्त श्रेणी में वर्गीकृत किया जाता है जो ग्राम स्तर से प्रारम्भ होकर पूरे जिले का अभिलेख होता है इसकी विशेषता यह है कि भूमि का कोई भाग नहीं छोड़ा जाता है। भू उपयोग की दृष्टि से भूमि का नौ श्रेणियों में वर्गीकरण निम्न प्रकार किया गया है (मानचित्र संख्या 3.1)

(i) **भूमि जो कृषि के अतिरिक्त काम में ली गई** : इस श्रेणी में ग्राम व शहरों के आवासीय क्षेत्र, औद्योगिक व खनन क्षेत्र, सड़कें, रेलमार्ग, पुल नदियां आदि आते हैं। यह भूमि निजी व राजकीय स्वामित्व में होती है।

(ii) **ऊसर तथा कृषि अयोग्य भूमि** : इस श्रेणी में वह भूमि आती है जो उसर या अन्य कारणें से कृषि कार्य के लिए पूर्णतया अनुपयुक्त है यह भूमि अधिकांशतया राजकीय नियंत्रण में होती है क्योंकि इस भूमि पर खेती या वनस्पति उगाने के लिए समुचित उपचार करना बहुत खर्चीला होता है।

(iii) **स्थाई चारागाह व अन्य गोचर भूमिः** प्रत्येक गांव में कुछ भूमि चरागाह और गोचर के लिए छोड़ी जाती है जिसका उपयोग प्रायः पशुओं की चराई के लिए किया जाता है। कहीं कहीं अधिक भूमि उपलब्ध होने पर व्यवस्थित रूप से चरागाह विकसित किए जाते हैं जो प्रायः पूरे गांव की सहमति पर आधारित होता हैं। इसमें विकसित चरागाह के अन्तर्गत

मानचित्र सं. 3.1

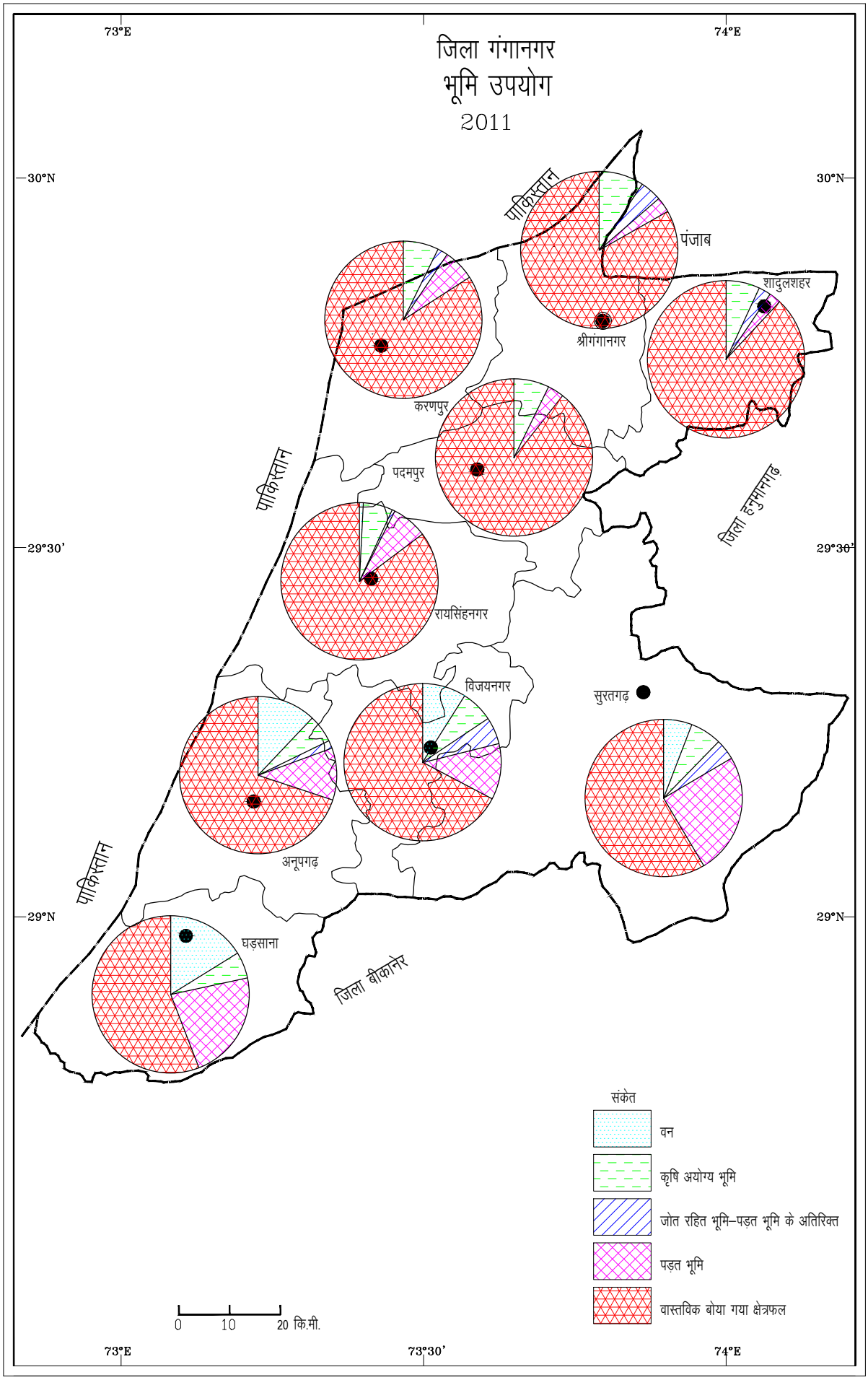
जिला गंगानगर
भूमि उपयोग
2011
73°E
74°E
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
शादुलशहर
श्रीगंगानगर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
विजयनगर
सुरतगढ़
अनूपगढ़
घड़साना
जिला हनुमानगढ़
जिला बीकानेर
संकेत
वन
कृषि अयोग्य भूमि
जोत रहित भूमि–पड़त भूमि के अतिरिक्त
पड़त भूमि
वास्तविक बोया गया क्षेत्रफल
0
10
20 कि.मी.

उपलब्ध भूमि को तारबन्दी करके दो भागों में बांटा जाता है। एक भाग में एक वर्ष चरागाह विकसित किया जाता है और दूसरा विकसित भाग के खुली चराई के लिए छोड़ दिया जाता है। अगले वर्ष स्थिति परिवर्तित कर दी जाती है। कहीं कहीं पूरा चरागाह विकसित करके पशुओं की चराई निषिद्ध रहती है और प्रत्येक परिवार घास को काटकर ले जाते हैं और कुछ धनराशि भी देता है जो चरागाह विकास के काम आती है।

(iv) वृक्षों के झुण्ड तथ बाग यह भाग वन क्षेत्र से पृथक होता है तथा ग्रामवासी वृक्ष लगाकर इस भूमि का उपयोग करते हैं। कहीं कहीं व्यवस्थित रूप से फलदार वृक्ष लगाए जाते है जिनकी उपज को ग्रामवासी स्वीकृत विधि के अनुसार हिस्सेदारी करते हैं।

(v) **बंजड़ भूमिः** यह भूमि सामान्यतया कृषि योग्य होती है परन्तु अत्यधिक खराब होने के कारण इसमें खेती करना लाभदायक नहीं होता है। बंजड भूमि भी प्रायः सरकारी नियंत्रण में होती है और कहीं कहीं इसका वृक्षारोपण भी किया जाता है। कभी यह क्षेत्र कृषि फार्म में प्रयुक्त होते होंगे परन्तु भूमि का अपक्षय होने से इनका उपयोग करना लाभकारी नहीं होता है।

(vi) **अन्य पड़त भूमि पड़त** भूमि निजी स्वामित्व की वह भूमि होती है जिस पर कभी कृषि की जाती थी और उपजाऊ नहीं रहने के कारण कृषि बन्द कर दिया जाता है। यह भूमि अधिकांशतया निजी स्वामित्व की भूमि होती है जिस पर विगत पांच वर्षों से कृषि कार्य नहीं किया जाता है। कृषि कार्य बन्द होने के पश्चात् यह भूमि विकृत हो जाती है।

(vii) **चालू पड़त भूमिः** कृषक एक फसल या वर्ष के लिए भूमि को खाली छोड़ देते हैं जिससे इसकी उर्वरा शक्ति पुनर्जीवित हो जाती है। इस श्रेणी में

सीमान्त उपजाऊ भूमि भी सम्मिलित है जिस पर कृषि करना कम लाभकारी होता है। अच्छी वर्षा या जल सुविधा उपलब्ध होने पर इस भूमि का उपयोग किया जाता है। लम्बी अवधि तक अनुपयुक्त रहने पर यह भूमि भी पूर्ववर्ती श्रेणी में आ जाती है। पड़त भूमि में निरन्तर विकृति आने पर यह भूमि बंजड़ भूमि में परिवर्तित हो जाती है।

(viii) **वास्तविक बोया गया क्षेत्रः** ऐसा कृषि क्षेत्र जिसमें एक कृषि फसलें वर्ष में उत्पादित की जाती है। इसमें एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र शामिल नहीं किया जाता है। एक से अधिक फसलें बोए जाने पर इस क्षेत्र का समस्त बोया गया क्षेत्रफल आंकलित किया जाता है।

शुष्क मरूस्थलीय क्षेत्र में स्थित जिलों में भूमि उपयोग अधिकांशतः पशुपालन के लिए किया जाता है। परन्तु नहरी प्रणाली विकसित होने के कारण गंगानगर जिले की स्थिति अन्य मरूस्थलीय जिलों से भिन्न हैं। जिले के भू उपयोग इस प्रकार है। तालिका 3.1 दर्शाया गया हैं।

सारणी 3.1

गंगानगर जिले का भू उपयोग (2014–15)

(हेक्टयर में)

वर्ष/तहसील	कुल भौगोलिक क्षेत्रफल (ग्रामपत्रों के अनुसार)	वन	कृषि अयोग्य भूमि			जोत रहित भूमि (पड़त भूमि के अतिरिक्त				पड़त भूमि	
			भूमि जो कृषि के अतिरिक्त काम में ली गई	ऊसर तथा कृषि अयोग्य भूमि	योग (4+5)	स्थाई चारागाह तथा अन्य गोचर भूमि	वृक्षों के झुंड तथा बाग	बंजड़ (कृषि योग्य भूमि)	योग (7+9)	अन्य पड़त भूमि	चालू पड़त भूमि
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
2006–07	1093352	60514 (5.53%)	68439	2550	70989	140	4249	18017	18157	11972	116469
2007–08	1093352	60514 (5.53%)	68587	2422	71009	140	4051	46071	46211	103441	83464
2008–09	1093352	60517 (5.53%)	69134	1911	71045	140	4733	36903	37043	94931	68380

2009—10	1093352	60487 (5.53%)	69211	1856	71067	140	5695	40093	40233	107778	132917
2010—11	1093221	60517 (5.54%)	69433	1856	71289	140	7381	40916	48437	84486	58632
2011—12	1093282	60517 (5.54%)	70450	1898	72348	140	6770	26746	33656	73335	67644
2012—13	1093282	60472 (5.53%)	71382	1919	73301	140	6477	20213	26830	70099	77140
तहसील 2014–15											
गंगानगर	98638	0 (0.00%)	9003	0	9003 (9.12%)	0	3230	1182 (1.20%)	4412	1551 (1.57%)	1452 (1.47%)
करणपुर	81887	0 (0.00%)	5917	0	5917 (9.12%)	0	1447	187 (0.23%)	1634	1223 (1.49%)	4292 (5.24%)
पदमपुर	84294	0 (0.00%)	6043	18	6061 (9.12%)	0	0	12 (0.00%)	12	815 (0.96%)	1942 (2.18%)

रायसिंहनगर	131676	756 (0.57%)	8061	0	8061 (9.12%)	0	636	0 (0.00%)	636	3864 (2.93%)	5776 (4.38%)
अनूपगढ़	114935	13876 (12.07%)	6577	0	6577 (9.12%)	0	238	1634 (1.42%)	1872	7286 (6.33%)	5025 (4.37%)
सूरतगढ़	282388	16545 (5.86%)	16539	1788	18327 (9.12%)	140	0	11435 (4.05%)	11575	37951 (13.43%)	32680 (11.57%)
सादूलशहर	77031	0 (0.00%)	5350	0	5350 (9.12%)	0	653	1197 (1.55%)	1850	64 (0.08%)	1719 (2.23%)
विजयनगर	83728	7350 (8.78%)	5359	27	5386 (9.12%)	0	233	4566 (5.45%)	4799	4558 (5.44%)	5242 (6.26%)
घड़साना	138644	21945 (15.83%)	7907	21	7928 (9.12%)	0	40	0 (0.00%)	40	12787 (9.22%)	19012 (13.71%)
योग	1093221	60472 (5.54%)			72610 (6.64%)			140201 (12.82%)		70099 (6.41%)	77140 (7.05%)

वर्ष/तहसील	पड़त भूमि योग (11+12)	वास्तविक बोया गया क्षेत्रफल (हैक्टेयर में)	एक बार से अधिक बोया गया क्षेत्रफल
13	14	15	17
2006—07	128441	703002 (64.30%)	223830
2007—08	186905	724662 (66.27%)	329236
2008—09	163311	756703 (69.20%)	335127
2009—10	24695	675175 (61.75%)	271398
2010—11	143118	769860 (70.92%)	302870
2011—12	140979	785782 (71.87%)	398432
2012—13	147239	785440 (71.84%)	457916
तहसील 2014—15			
गंगानगर	3003 (3.04%)	82220 (83.35%)	64292
करणपुर	5515 (6.73%)	68820 (84.04%)	40419
पदमपुर	2757 (3.27%)	75464 (89.52%)	52146
रायसिंहनगर	9640	112583	67521

	(7.31%)	(85.50%)	
अनूपगढ़	12311 (10.71%)	80299 (69.86%)	48623
सूरतगढ़	70631 (25.01%)	165078 (58.45%)	60683
सादूलशहर	1783 (2.31%)	67903 (88.15%)	46580
विजयनगर	9800 (11.70%)	56274 (67.21%)	36005
घड़साना	31799 (22.93%)	76798 (55.39%)	41647
योग	147239 (13.46%)	785439 (71.84%)	

स्त्रोतः जिला कलेक्टर (भू–अभिलेख) गंगानगर

3.1.1 वन क्षेत्र

इसके अन्तर्गत वन विभाग के स्वामित्व की सम्पूर्ण भूमि दर्शाई जाती है वन भूमि का वर्गीकरण वन विभाग द्वारा तीन श्रेणियों में किया जाता है जो आरक्षित वन, संरक्षित वन और अवर्गीकृत वन के अन्तर्गत होता है। वन विभाग और राजस्व मण्डल के आंकड़ों में प्रायः अन्तर रहता है क्योंकि वन विभाग की बहुत सी भूमि स्थानीय निवासियों द्वारा अनधिकृत रूप से अन्य कार्यों में उपयोग में भी ली जाती है। राजस्व मण्डल के आंकड़े प्रतिवर्ष नवीनीकृत किए जाते हैं और ग्रामवार सूचना से उपलब्ध होतें है।(मानचित्र सख्यां 3.2)

पर्यावरण को सुरक्षित रखने, ऊर्जा स्रोतों में वृद्धि करने तथा चारे की पूर्ति करने व खाद्य संसाधन को बढ़ाने हेतु विद्यमान प्राकृतिक सम्पदा अर्थव्यवस्था में बहुत अधिक महत्व रखती है। वन के अन्तर्गत जिले का कुल

मानचित्र सं. 3.2

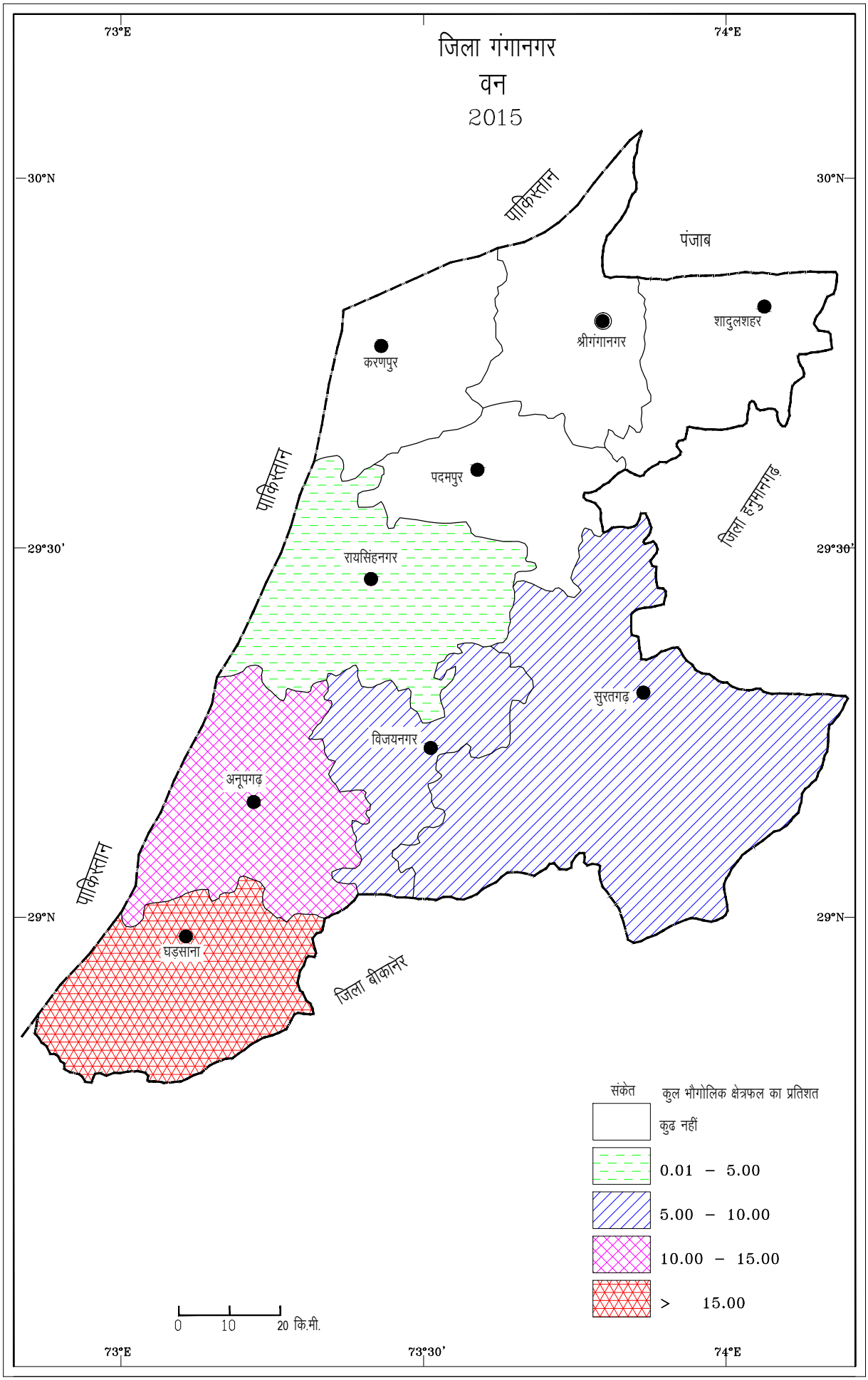
जिला गंगानगर
वन
2015
73°E
74°E
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
जिला हनुमानगढ़
जिला बीकानेर
श्रीगंगानगर
शादुलशहर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
संकेत
कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का प्रतिशत
कुछ नहीं
0.01 – 5.00
5.00 – 10.00
10.00 – 15.00
> 15.00
0 10 20 कि.मी.

भौगोलिक क्षेत्र का 5.43 प्रतिशत है, जबकि पर्यावरण को संतुलित बनाये रखने के लिए सरकार द्वारा घोषित वन नीति के अनुसार किसी भी प्रदेश में उसमें कुल क्षेत्रफल का 33 प्रतिशत क्षेत्र वनों के अन्तर्गत होना चाहिए। जिले में 33 प्रतिशत क्षेत्र वन के अन्तर्गत लाने के लिए उसर, बंजर व पुरानी पड़त भूमि को भी जोड़ा जावे तो यह क्षेत्र 24.48 प्रतिशत ही होता है।

सर्वाधिक वन क्षेत्र जिले के दक्षिणी पश्चिमी भाग में है जहाँ कुल भौगोलिक क्षेत्र का 15.83 प्रतिशत क्षेत्र वनों के अन्तर्गत है। निम्न तालिका में वनों के क्षेत्र की दृष्टि से तहसीलों का वर्गीकरण किया गया है–

तालिका संख्या 3.2

गंगानगर जिले में वन क्षेत्र (प्रतिशत में) 2014–15

वन क्षेत्र प्रतिशत में	**तहसीलें**
15 प्रतिशत से अधिक	घड़साना
10 से 15 प्रतिशत	अनूपगढ़
5 से 10 प्रतिशत	विजयनगर, सूरतगढ़
0.01 से 5 प्रतिशत	रायसिंहनगर
शून्य	करणपुर, पदमपुर, श्रीगंगानगर, सार्दुलशहर

*lzksr&*जिला भू–अभिलेख कार्यालय, गंगानगर।

अध्यन क्षेत्र के उत्तरी भाग में वनों के अंतर्गत क्षेत्र शून्य है। करणपुर, पदमपुर, श्रीगंगानगर एवं सार्दुलशहर तहसीलों में वनों का पूर्णतः अभाव है। वन रहित क्षेत्र के समीपवर्ती तहसील विजयनगर, सूरतगढ़, रायसिंहनगर तहसीलों में वनों का क्षेत्र बहुत कम है। (मानचित्र 3.2) जिले के पर्यावरण असन्तुलन व जलाक्रांत जैसी समस्याओं के बढ़ने का कारण भी वन क्षेत्र का सीमित होना है। नहरों के निर्माण के पश्चात हर प्रकार की उपलब्ध भूमि खेती के अन्तर्गत लाने के प्रयास किए गये परन्तु वन व वृक्षों के अन्तर्गत क्षेत्र का

महत्व नहीं समझा गया। वन क्षेत्र जिले की पांच तहसीलों में ही सीमित है जो भी अत्यधिक उपेक्षित स्थिति में हैं।

3.1.2 बंजड़ भूमि (कृषि योग्य भूमि)

जिले की कुल भूमि का 12.82 प्रतिशत बंजड़ भूमि (कृषि योग्य भूमि) है। जिले के पश्चिमी भाग में कृषि योग्य बेकार भूमि का क्षेत्र अति न्यून है। जिसका मुख्य कारण इस भाग की भूमि उपजाऊ व सिंचित होना है। अधिक व सर्वाधिक कृषि योग्य भूमि जिलें के मध्यवर्ती भाग एवं पूर्वी भाग में है, जहां सिंचाई की सुविधाएं अधिक नहीं है निम्न तालिका में बंजड़ भूमि का क्षेत्र तहसीलवार दर्शाया गया है।

तालिका संख्या 3.3

गंगानगर जिले में बंजड भूमि (प्रतिशत में) 2014–15

बंजड भूमि प्रतिशत में	तहसीलें
5 प्रतिशत से अधिक	विजयनगर
3 से 5 प्रतिशत	सूरतगढ़, सार्दुलशहर
1 से 3 प्रतिशत	गंगानगर, अनूपगढ़
1 प्रतिशत से कम	घड़साना, रायसिंहनगर, पदमपुर, करणपुर

*lzksr&*जिला भू–अभिलेख कार्यालय, गंगानगर।

3.1.3 पड़त भूमि (चालू एवं अन्य पडत भूमि)

जिले में कुल पड़त भूमि का क्षेत्र 13.46 प्रतिशत है जिसमें से चालू पडत भूमि का 7.05 प्रतिशत तथा अन्य पड़त भूमि का 6.41 प्रतिशत है। जो विभिन्न वर्षों में वर्षा न होने तथा उर्वरा शक्ति घटने से कृषि में प्रयुक्त नहीं होती है। गंगानगर में घड़साना, रायसिंहनगर, पदमपुर, करणपुर में अन्य पडत भूमि 1 प्रतिशत से कम तथा सर्वाधिक 20 प्रतिशत से अधिक सूरतगढ़ व घड़साना तहसील में है। (मानचित्र 3.3)

तालिका संख्या 3.4

गंगानगर जिले में पडत भूमि (प्रतिशत में) 2014–15

बंजड भूमि प्रतिशत में	**तहसीलें**
20 प्रतिशत से अधिक	सूरतगढ़, घड़साना
15 से 20 प्रतिशत	कोई नहीं
10 से 15 प्रतिशत	विजयनगर, अनूपगढ़
5 से 10 प्रतिशत	रायसिंहनगर, करणपुर
5 प्रतिशत से कम	श्रीगंगानगर, सार्दुलशहर, पदमपुर

स्रोत–जिला भू–अभिलेख कार्यालय, गंगानगर।

पांच वर्ष से अधिक समय से पड़त भूमि में लगातार वृद्धि होना यह दर्शाता है कि जलाक्रांत व खारे जल की समस्या भूमि को उपजाऊ तत्वों को तेजी से नष्ट कर रही है वर्ष 2006–07 से 2010–11 के पांच वर्षों में इस भूमि की प्रतिशत वृद्धि क्रमशः 4.68, 7.43, 8.49, 10.30 व 12.53 प्रतिशत है जो इसके निरन्तर वृद्धि के संकेत दे रही है। वर्तमान पड़त भूमि भी इस अवधि में 5.55 से 19.68 प्रतिशत के मध्य रही है।

3.1.4 कृषि अयोग्य भूमि

कृषि के लिए अयोग्य भूमि में ऊसर व कृषि के अनुपयुक्त भूमि तथा कृषि के अतिरिक्त अन्य उपयोगों में जैसे सड़कें, तालाब, आबादी आदि में प्रयुक्त की गई भूमि सम्मिलित की जाती हैं प्रदेश की 6.64 प्रतिशत भूमि इस वर्ग के अन्तर्गत है।

मानचित्र सं. 3.3

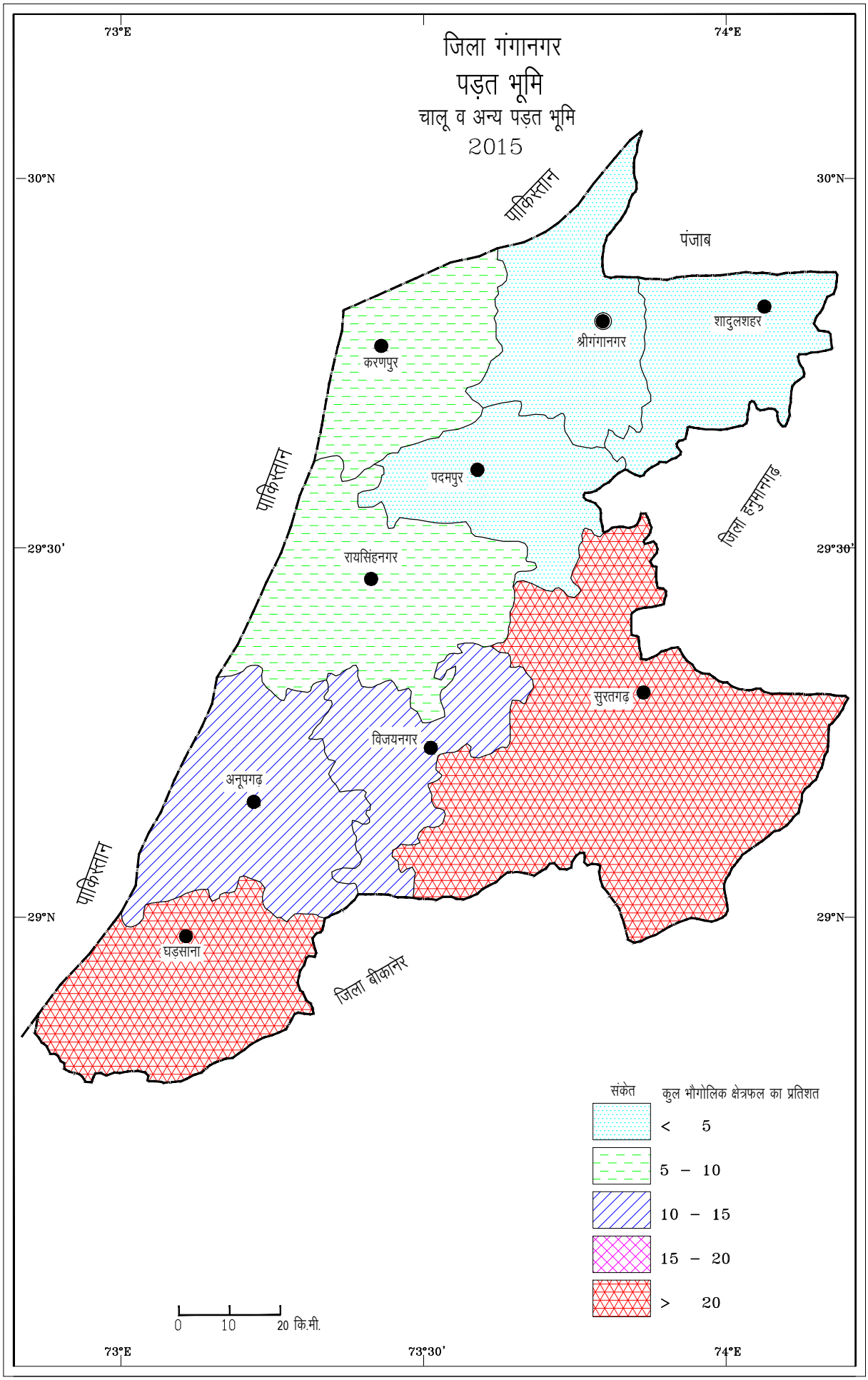
जिला गंगानगर
पड़त भूमि
चालू व अन्य पड़त भूमि
2015
73°E
74°E
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
जिला हनुमानगढ़
जिला बीकानेर
श्रीगंगानगर
शादुलशहर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
संकेत
कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का प्रतिशत
< 5
5 – 10
10 – 15
15 – 20
> 20
0 10 20 कि.मी.

तालिका संख्या 3.5

गंगानगर जिले में कृषि अयोग्य भूमि (प्रतिशत में) 2014–15

कृषि अयोग्य भूमि	तहसीलें
9 से अधिक	श्रीगंगानगर
7 से 9 प्रतिशत	करणपुर, पदमपुर
5 से 7 प्रतिशत	रायसिंहनगर, सार्दुलशहर, सूरतगढ़, अनूपगढ़, घड़साना

स्रोत–जिला भू–अभिलेख कार्यालय, गंगानगर।

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट है कि कृषि के लिए अयोग्य भूमि सर्वाधिक श्रीगंगागनर तहसील में (9.12 प्रतिशत) है। श्रीगंगानगर तहसील में नगरीयकरण सर्वाधिक होने के कारण यहाँ कृषि अयोग्य भूमि का अभाव है। करणपुर एवं पदमपुर तहसील का यह अनुपात 7.22 एवं 7.19 प्रतिशत है। इन तहसीलों में नगरीयकरण मध्यम स्तर है। रायसिंहनगर, सार्दुलशहर, सूरतगढ़, अनूपगढ़, घड़साना तहसीलों में 5 से 7 प्रतिशत है जो कि न्यूनतम नगरीयकरण को दर्शाता है।

3.1.5 वास्तविक बोया गया क्षेत्रफल

तहसीलवार कृषि की सघनता 23.69 से 46.22 प्रतिशत के मध्य रही है जो यह दर्शाती है कि विभिन्न क्षेत्रों में स्थानीय समस्याएं इतनी जटिल हो रही है कि उपलब्ध सतही जल या भूजल का उपयोग कृषि कार्य के लिए नहीं हो पा रहा है। इसका तात्पर्य यह है कि कृषक को एक फसल का विकल्प ही चुनना पडा वर्षा काल में खेत को पड़त रूप में रखना उपयोगी समझता है। (मानचित्र 3.4)

मानचित्र सं. 3.4

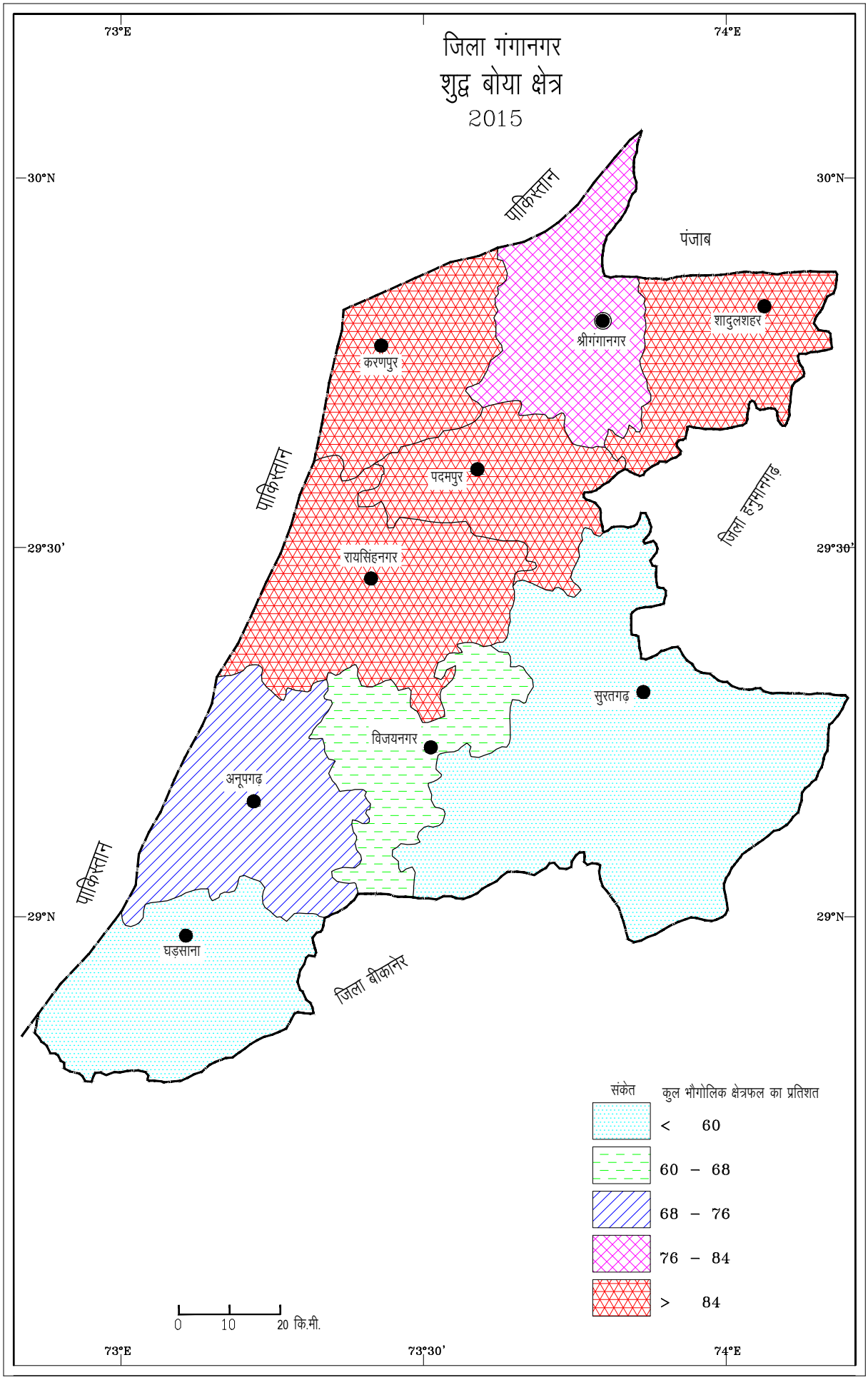
जिला गंगानगर
शुद्ध बोया क्षेत्र
2015
73°E
74°E
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
जिला हनुमानगढ़
जिला बीकानेर
श्रीगंगानगर
शादुलशहर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
संकेत
कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का प्रतिशत
< 60
60 – 68
68 – 76
76 – 84
> 84
0 10 20 कि.मी.

तालिका संख्या 3.6

गंगानगर जिले में वास्तविक बोया गया क्षेत्रफल (प्रतिशत में) 2014–15

वास्तविक बोया गया क्षेत्रफल प्रतिशत में	**तहसीलें**
84 से अधिक	करणपुर, सार्दुलशहर, पदमपुर, रायसिंहनगर
76 से 84 प्रतिशत	श्रीगंगानगर
68 से 76 प्रतिशत	अनूपगढ़
60 से 68 प्रतिशत	घड़साना, विजयनगर
60 प्रतिशत से कम	सूरतगढ़

स्रोत–जिला भू–अभिलेख कार्यालय, गंगानगर।

उपरोक्त तालिका के अध्ययन से ज्ञात होता है कि गंगानगर जिले का कुल वास्तविक बोया गया क्षेत्रफल का प्रतिशत 71.84 है। जिले की करणपुर, सार्दुलशहर, पदमपुर रायसिंहनगर के कुल क्षेत्रफल में वास्तविक बोया गया क्षेत्रफल का प्रतिशत 84 से अधिक है जबकि सूरतगढ, घड़साना तहसील में 60 प्रतिशत से कम है। श्रीगंगानगर, अनूपगढ़, विजयनगर तहसीलों में इनका प्रतिशत 76 से 68 प्रतिशत के मध्य है।

3.2 शस्य गहनता

शस्य गहनता से तात्पर्य किसी क्षेत्र में एक कृषि वर्ष में वास्तविक व कुल फसली क्षेत्र के मध्य सम्बन्ध से है। शस्त्र तीव्रता निम्न विधि से ज्ञात की जाती है–

$$\text{शस्य गहनता} = \frac{\text{समस्त बोया गया क्षेत्रफल}}{\text{वास्तविक बोया गया क्षेत्रफल}} \times 100$$

गंगानगर जिले में 2014–15 में कुल शस्य गहनता 158.30 प्रतिशत है। जिसमें सर्वाधिक शस्य गहनता श्रीगंगानगर तहसील में 178.19 प्रतिशत है जो

कि उच्च सिंचाई व्यवस्था को दर्शाती है। सूरतगढ़ तहसील में 140 प्रतिशत से कम गहनता पाई गई जिसका मुख्य कारण कृषि अयोग्य भूमि का अधिक होना है। मानचित्र 3.7 से स्पष्ट है कि करणपुर, सार्दुलशहर, अनूपगढ़, रायसिंहनगर, पदमपुर, घड़साना, विजयनगर तहसील में शस्य गहनता 140 से 170 के मध्य पाई गई है, जो कि नहरों से सिंचाई होने के कारण उत्तम सिंचाई व्यवस्था को दर्शाती ळें (मानचित्र 3.5)

3.3 स्वामित्व के अनुसार कृषि जोतों की संख्या एवं क्षेत्र

कृषि भूमि का आकार खेती के लिए महत्वपूर्ण है। बड़े आकर के खेत मशीनीकरण के लिए उपयुक्त होते हैं जबकि छोटे खेत उत्पादन के लिए उपयुक्त नहीं होते। छोटे खेतों के मालिक भूमि की गुणवत्ता में सुधार नहीं ला सकते हैं जिससे कृषि भूमि की उत्पादकता प्रभावित होती है। कृषि कार्य के अन्तर्गत उपलब्ध भूमि का आकार बढ़ाना संभव नहीं है और इतनी ही जमीन से बढ़ती जनसंख्या व पशु संख्या को पालना है। इससे भूमि पर अतिरिक्त दबाव पड़ता है और खेत छोटे होते जाते है। कृषि भूमि जो किसी व्यक्ति या संस्था द्वारा कृषि कार्य के लिए प्रयुक्त होती है उसे जोत कहते है और जोत के आधार पर कृषकों का वर्गीकरण किया जाता है। एक हेक्टेयर तक क्षेत्र के मालिकों को सीमान्त कृषक कहा जाता है और 1–2 हेक्टेयर क्षेत्र के स्वामी लघु कृषक कहलाते है। अर्द्ध मध्यम कृषक वे भू–मालिक है जिनके पास 2–4 हेक्टेयर भूमि होती है। मध्यम कृषक के स्वामित्व की कृषि जोत 4 से 10 हेक्टेयर के मध्य होती है तथा बड़े कृषक 10 हेक्टेयर से अधिक जोत वाले किसान कहे जाते हैं। इस आधार पर वर्ष 2010–11 में किए गए कृषि गणना सर्वेक्षण के अनुसार जिले में कृषि कार्य में प्रयुक्त भूमि को व्यक्तिगत जोत, संयुक्त जोत व संस्थागत जोत में विभक्त किया गया है। व्यक्तिगत जो पहले एक व्यक्ति के नाम से होती थी परन्तु अब इसके पति व पत्नि दोनों के नाम अंकित होते हैं। संयुक्त जोत किसी संस्था, संगठन, ट्रस्ट आदि के नाम से

मानचित्र सं. 3.5

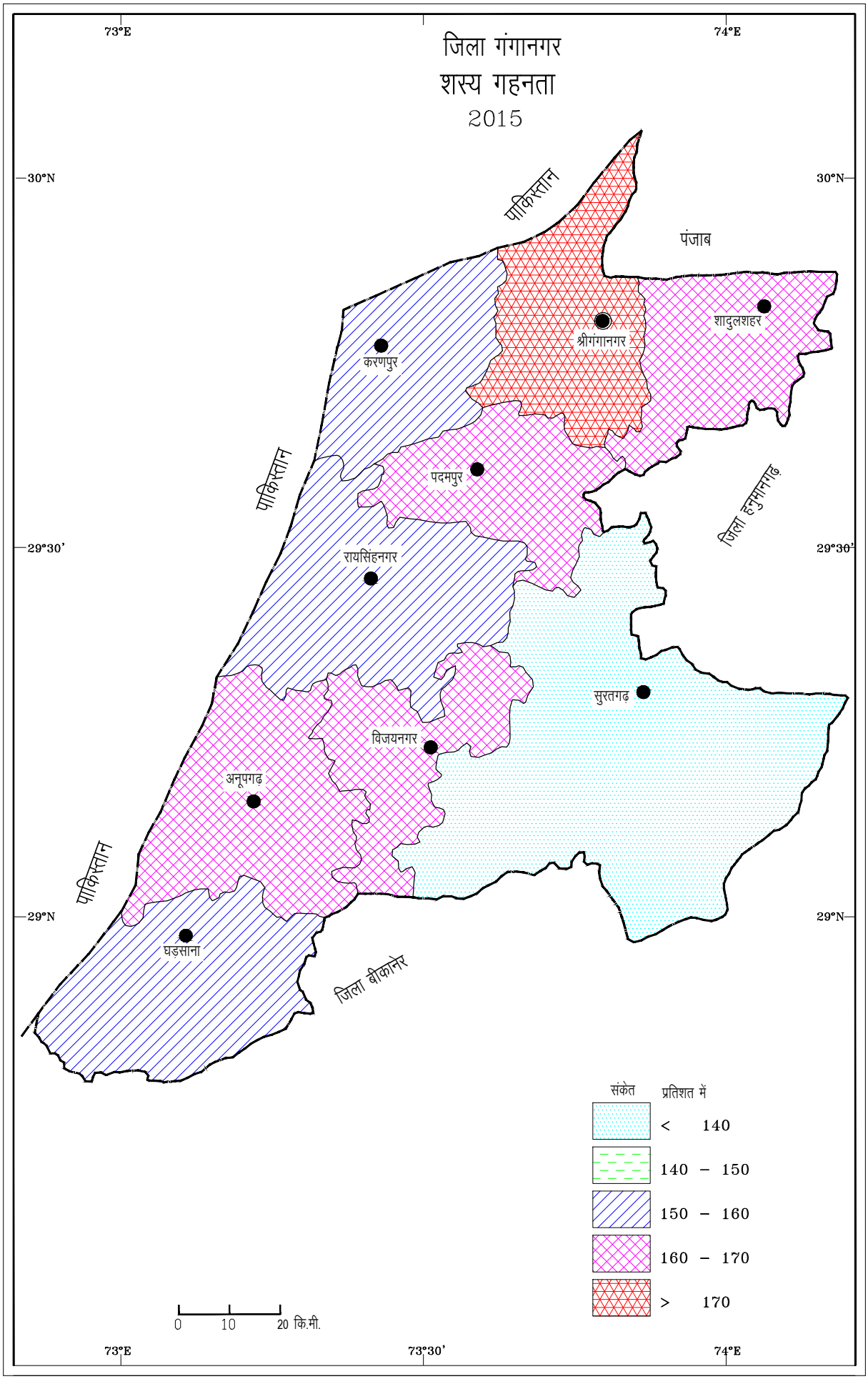
जिला गंगानगर
शस्य गहनता
2015
73°E
74°E
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
शादुलशहर
श्रीगंगानगर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
जिला हनुमानगढ़
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
प्रतिशत में
< 140
140 – 150
150 – 160
160 – 170
> 170
0 10 20 कि.मी.

होती है। स्वामित्व के आधार पर जिले की कृषि भूमि का वर्गीकरण तालिका संख्या 3.7 में वर्णित हैः–

तालिका संख्या 3.7

स्वामित्व के अनुसार कृषि जोतों की संख्या व क्षेत्रफल 2006–07

(जोत संख्या में तथा क्षेत्रफल हेक्टेयर में)

जोतों का आकार (हेक्ट.)	व्यक्तिगत जोत		संयुक्त जोत		संस्थागत जोत		योग	
	संख्या	क्षेत्रफल	संख्या	क्षेत्रफल	संख्या	क्षेत्रफल	संख्या	क्षेत्रफल
0.5 से कम	629	176.08	1	0.39	–	–	630	17647
0.5 से 1.0	1965	1375.29	1	0.51	3	1.70	1969	1377.50
1.0 से 2.00	8438	12559.84	10	14.65	18	22.57	8466	12596.97
2.0 से 3.0	9595	23856.58	32	79.89	4	10.79	9631	23947.26
3.0 से 4.0	13584	45147.16	34	115.81	9	32.62	13627	46295.59
4.0 से 5.0	8923	39606.23	23	104.47	4	17.21	8950	39729.91
5.0 से 7.5	41861	254788.48	180	1122.88	10	61.85	42.051	260973.21
7.5 से 10.0	10665	91961.04	50	444.39	1	8.05	10716	92413.53
10.0 से 20.0	20151	268710.67	146	1963.58	2	24.99	20299	270699.24
20 से अधिक	3687	117017.08	46	1603.48	37	12910.87	3770	131531.43
योग	119488	861200.50	523	5449.96	88	13090.65	120109	874741.11

स्रोतः कृषि गणना प्रतिवेदन (1995–96) गंगानगर।

उपरोक्त तालिका में वर्णित सूचना से यह प्रकट है कि 99.49 प्रतिशत जोतों व्यक्तिगत है, संयुक्त जोते 0.44 है तथा संस्थागत जोतें 0.07 प्रतिशत है परन्तु इनके द्वारा उपयुक्त भूमि क्रमशः 97.89, 0.62 और 1.49 प्रतिशत है। एक हेक्टेयर व दो हेक्टेयर की जोतों के स्वामीयों को क्रमशः सीमान्त कृषक और लघु कृषक कहा जाता है क्योंकि इतनी छोटी जोत एक परिवार की

आवश्यकता पूरी करने में असमर्थ रहती है और ऐसे परिवारों को जीवन यापन के लिये अन्य स्रोतों को भी अपनाना होता है।

3.4 कृषि

(1) गंगानगर जिले में कृषि जोत का औसत आकार 7.32 हैक्टेयर है जो राजस्थान की औसत जोत आकार 3.65 हैक्टेयर से दुगनी है। इस प्रकार कृषि योग्य भूमि जिले में पर्याप्त मात्रा में है।

(2) जिले में सीमान्त कृषकों की संख्या कुल कृषकों की 2.16 प्रतिशत है और उनके द्वारा उपयुक्त कृषि भूमि कुल कृषि भूमि की मात्र 0.18 प्रतिशत है। जिले में सीमान्त कृषकों की संख्या बहुत कम है।

(3) लघु कृषकों का जिले में प्रतिशत 7.05 प्रतिशत है जिनके स्वामित्व में कुल कृषि योग्य भूमि का 1.43 प्रतिशत है। इस प्रकार जिले में लघु कृषकों की संख्या भी अन्य जिलों की तुलना में बहुत कम है।

(4) उप मध्यम श्रेणी के कृषकों का प्रतिशत 19.37 है जिनके स्वामित्व में कुल कृषि योग्य भूमि का 7.99 प्रतिशत है। इस प्रकार जिले में 4 हेक्टेयर से कम कृषि भूमि वाले कृषकों का प्रतिशत 28.58 प्रतिशत है जिनके अधीन कुल कृषि योग्य भूमि की 9.60 प्रतिशत है।

(5) 4 से 10 हैक्टेयर सीमा वाले मध्यम कृषकों का प्रतिशत 51.38 है जिनके स्वामित्व में जिले की कृषि योग्य भूमि की 44.69 प्रतिशत भूमि है।

(6) जिले में 10 हैक्टेयर से अधिक भूमि रखने वाले कृषकों की संख्या 20. 04 प्रतिशत है जिनके स्वामित्व में 45.7 प्रतिशत कृषि भूमि है।

इस प्रकार जिले की स्थिति कृषि भूमि की वितरण की दृष्टि में काफी उपयुक्त है। इसका कारण नहरी प्रणाली की स्थापना के पश्चात हुए समझौते में कृषकों को अधिक मात्रा में भूमि उपलब्ध कराई गई थी। यही कारण है कि कृषि की पैदावार जिले में औसत से काफी अधिक है और पानी की सुविधा के

बाद यह शुष्क मरूस्थलीय भाग राज्य के कृषि उत्पादन में बड़ा योगदान करता है।

यहां यह उल्लेख करना भी प्रासंगिक है कि जिले में कुल कृषि योग्य भूमि 892544 हेक्टेयर है परन्तु स्वामित्व के अनुसार कृषि भूमि मात्र 879741 हेक्टेयर है। इस प्रकार कृषि कार्य के लिये अतिरिक्त प्रयुक्त भूमि 12821 हेक्टेयर अन्य श्रेणियों के अन्तर्गत आवंटित भूमि को अवैध रूप में प्रयुक्त भूमि के अतिरिक्त पड़त भूमि काफी अधिक है और इस कारण जनसंख्या के बढ़ते दबाव के कारण यहां कृषक अन्य भूमि का भी उपयोग करने लगते हैं। जिले में पड़त भूमि 10.31 से 32.21 प्रतिशत के बीच है । जिससे स्पष्ट है कि इस श्रेणी की कृषि भूमि अपनी उत्पादकता नष्ट कर चुकी है और धीर–धीरे जिले की कृषि भूमि के घटने के संकेत देती है।

3.4.1 फसलों का उत्पादन व उत्पादकताः–

भूमि की उर्वरा शक्ति की गुणवत्ता मापने का आधार उत्पादकता है जिससे प्रत्येक फसल का प्रति हेक्टेयर उत्पादन और इसकी तुलनात्मक स्थिति का आंकलन होता है। गंगानगर जिले में पानी की भरपूर उपलब्धता है और यहां की पैदावार भी अधिक होती है। कृषक भूमि में वे फसलें उगाता है जिनमें उसे अच्छी आय होती है और जो स्थानीय परिस्थितियों में उगाई जा सकती है। जिले के विगत दस वर्षों के फसली क्षेत्र, उत्पादन व उत्पादकता का विवरण तालिका संख्या 3.8 में दर्शाया गया हैः–

तालिका संख्या 3.8

गंगानगर जिले में प्रमुख फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल (हेक्टेयर में)

वर्ष/ तहसील	खाद्यान्न								दालें					कुल खाद्य फसलें
	बाजरा	ज्वार	गेंहूँ	मक्का	जौ	छोटे धान	चावल	योग (2 से 8)	चना	तूर	अन्य खरीफ दाल	अन्य रवी दाल	योग (10 से 13)	(9 से 14)
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15
2006—07	13485	29	192667	19	23435	0	2779	232414	75982	17	11645	99	87743	320157
2007—08	10149	2	202387	12	31401	0	3581	247532	123016	42	30006	95	153159	400691
2008—09	17998	34	213503	63	58315	0	6422	296335	52160	232	27875	85	80352	376687
2009—10	4356	69	202210	3	28078	13	8740	243469	81279	103	24887	88	106357	349826
2010—11	18038	0	236075	32	19316	0	8026	281487	103992	409	57173	83	161657	443144
2011—12	1823	61	242656	23	37681	0	7610	289854	46039	3	15409	1	61452	351306
2012—13	3392	0	252161	15	25976	0	9215	290759	33880	92	25375	4	59351	350110
2013—14	1266	76	262235	56	44822	0	8419	316874	44707	1	12613	58	57379	374253

तहसील (2013–14)														
श्रीगंगानगर	150	–	41896 (50.95%)	3	11365 (13.82%)	–	0	53414 (56.30%)	1580	0	1227	15	2822 (2.86%)	56236
करणपुर	90	–	2561 (37.22%)7	7	9123 (13.25%)	–	0	34837 (42.54%)	1295	0	1057	5	2357 (2.87%)	37194
पदमपुर	78	–	25920 (34.34%)	5	8956 (11.86%)	–	0	34959 (41.47%)	2298	0	999	9	3306 (3.92%)	38256
रायसिंहनगर	102	–	32454 (28.82%)	11	3214 (2.85%)	–	0	35781 (27.17%)	6598	1	1261	11	7871 (5.97%)	43652
अनूपगढ़	129	–	24928 (31.04%)	7	1121 (1.39%)	–	1702	27887 (24.26%)	4985	0	925	3	5913 (5.14%)	33800
सूरतगढ़	205	–	20300 (12.29%)	9	2000 (1.21%)	–	17	22531 (7.97%)	8499	0	1354	4	9857 (3.49%)	32388
सादूलशहर	301	–	24583 (36.20%)	5	2451 (3.60%)	–	3882	31222 (40.53%)	4568	0	2292	5	6865 (8.91%)	35087
विजयनगर	174	76	44681 (79.39%)	4	3554 (6.31%)	–	2818	51231 (61.18%)	9989	0	2418	4	12411 (14.82%)	63642

घड़साना	37	—	21856 (28.45%)	5	3038 (3.95%)	—	0	24936 (17.98%)	4895	0	1080	2	5977 (4.31%)	30913
योग	1266	76	262235 (23.98%)	56	44822 (4.09%)	0	8419	316798 (22.73%)	44707	1	12613	58	57379 (5.24%)	371177

वर्ष/ तहसील	तिलहन							अखाद्य फसलें						कुल योग (15 से 28)
	तिल	राई एवं सरसों	अलसी/ होहोबा	मूंगफली	अरण्डी/ तारामीरा	योग (16 से 20)	कपास	गन्ना	तम्बाकू	लाल मिर्च	आलू	सण	फल सब्जी तरकारी	
1	16	17	18	19	20	21	22	23	24	25	26	27	28	29
2006—07	1184	278340	22	1947	279778	561271	140088	2651	0	35	275	6	6842	885270
2007—08	965	363838	—	2539	346	267688	150590	2675	—	58	500	—	7254	675633
2008—09	6327	231071	88	3073	841	241400	94702	1837	0	49	395	2	8134	626221
2009—10	1810	209217	90	5007	1797	217921	163729	2338	—	85	252	6	—	567747
2010—11	1739	271018	0	3737	1930	278424	97362	2500	—	57	331	1	—	721568
2011—12	314	249197	5	2013	2638	254167	131441	1878	—	39	192	8	—	605473

2012–13	829	256806	0	3898	2907	264440	190080	2770	–	41	273	17	–	614550
2013–14	199	212760	0	1761	358	215078	74009	1529	–	37	265	0	–	589710
तहसील (2013–14)														
श्रीगंगानगर	18	22136 (26.92%)	0	2	18	22174 (22.48%)	9331	189	0	29	170	0	0	31893
करणपुर	22	27512 (39.97%)	0	0	19	27553 (33.64%)	7183	854	0	3	7	0	0	35600
पदमपुर	19	22569 (29.90%)	0	1	20	22609 (26.82%)	6697	212	0	1	8	0	0	29527
रायसिंहनगर	17	36521 (32.43%)	0	33	48	36619 (27.80%)	9579	102	0	1	26	0	0	46327
अनूपगढ़	21	27456 (34.19%)	0	3	50	27530 (23.95%)	6414	10	0	1	37	0	0	33992
सूरतगढ़	19	14952 (9.05%)	0	1657	95	16723 (5.92%)	8606	11	0	1	0	0	0	25341
सादूलशहर	29	22356 (32.92%)	0	1	14	22400 (29.07%)	7028	8	0	1	2	0	0	29349

विजयनगर	29	24600 (43.71%)	0	52	21	24702 29.50(%)	7165	142	0	0	10	0	0	32019
घड़साना	25	14658 (19.08%)	0	12	73	14768 (10.65%)	6395	1	0	0	5	0	0	21169
योग		(%)				215078 (19.67%)								

कपास उत्पादन गांठों में, एक गांठ का वजन 180 कि.ग्रा.

स्रोतः कार्यालय जिला कलेक्टर (भू. अभि.), गंगानगर।

3.4.2 खाद्यान्न फसलें

गंगानगर जिले में खाद्यान्न फसलों के अन्तर्गत कुल फसली क्षेत्र का 22.73 प्रतिशत क्षेत्र है। खाद्यान्न फसलों के अन्तर्गत सर्वाधिक क्षेत्र (55 से 70 प्रतिशत) जिले की श्रीगंगानगर एवं विजयनगर तहसील में आता है। जिन क्षेत्रों में सिंचाई की पर्याप्त सुविधाएँ हैं उन क्षेत्रों में अपेक्षाकृत अनाज की फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र कम है। जबकि जिन क्षेत्रों में सिंचित कम है उन क्षेत्रों में अनाज की फसलों के अन्तर्गत अधिक क्षेत्र पाया जाता है। गत पाँच वर्षों में प्रदेश में सिंचाई सुविधाओं के विकास के साथ–साथ खाद्यान्न फसलों के क्षेत्र में भी बहुत अधिक परिवर्तन हुआ है। इस परिवर्तन का कारण भोजन की आदतों में परिवर्तन, सिंचाई में विस्तार, बाजारीय मांग व जीवन स्तर का ऊँचा उठना आदि है। इस दौरान प्रदेश के सभी क्षेत्रों में खाद्यान्न फसलों की गहनता में वृद्धि हुई है। (मानचित्र संख्या 3.6)

गंगानगर जिला राज्य में गेहूँ उत्पादन में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। उपजाऊ मिट्टी का प्रदेश होने तथा सिंचाई के लिए पर्याप्त सुविधाएँ होने के कारण प्रदेश की खाद्यान्न फसलों में गेहूँ का महत्त्वपूर्ण स्थान है। गंगानगर जिले में प्रायः सभी क्षेत्रों में गेहूँ का उत्पादन किया जाता है। जिले में कुल फसली क्षेत्र के 23.98 प्रतिशत क्षेत्र पर गेहूँ का उत्पादन किया जाता है। क्षेत्र व उत्पादन की दृष्टि से इस फसल का प्रथम स्थान है। जिले की सूरतगढ़ तहसील में सबसे न्यूनतम 25 प्रतिशत कम क्षेत्रफल है जबकि विजयनगर में 70 प्रतिशत से अधिक है जबकि सूरतगढ़ में 25 प्रतिशत से कम है तथा करणपुर, पदमपुर, रायसिंहनगर, सार्दुलशहर, अनूपगढ़ व घड़साना तहसीलों में 25 से 40 प्रतिशत है। इसके अलावा श्रीगंगानगर तहसील में 40 से 55 प्रतिशत के मध्य है। (मानचित्र संख्या 3.7)

मानचित्र सं. 3.6

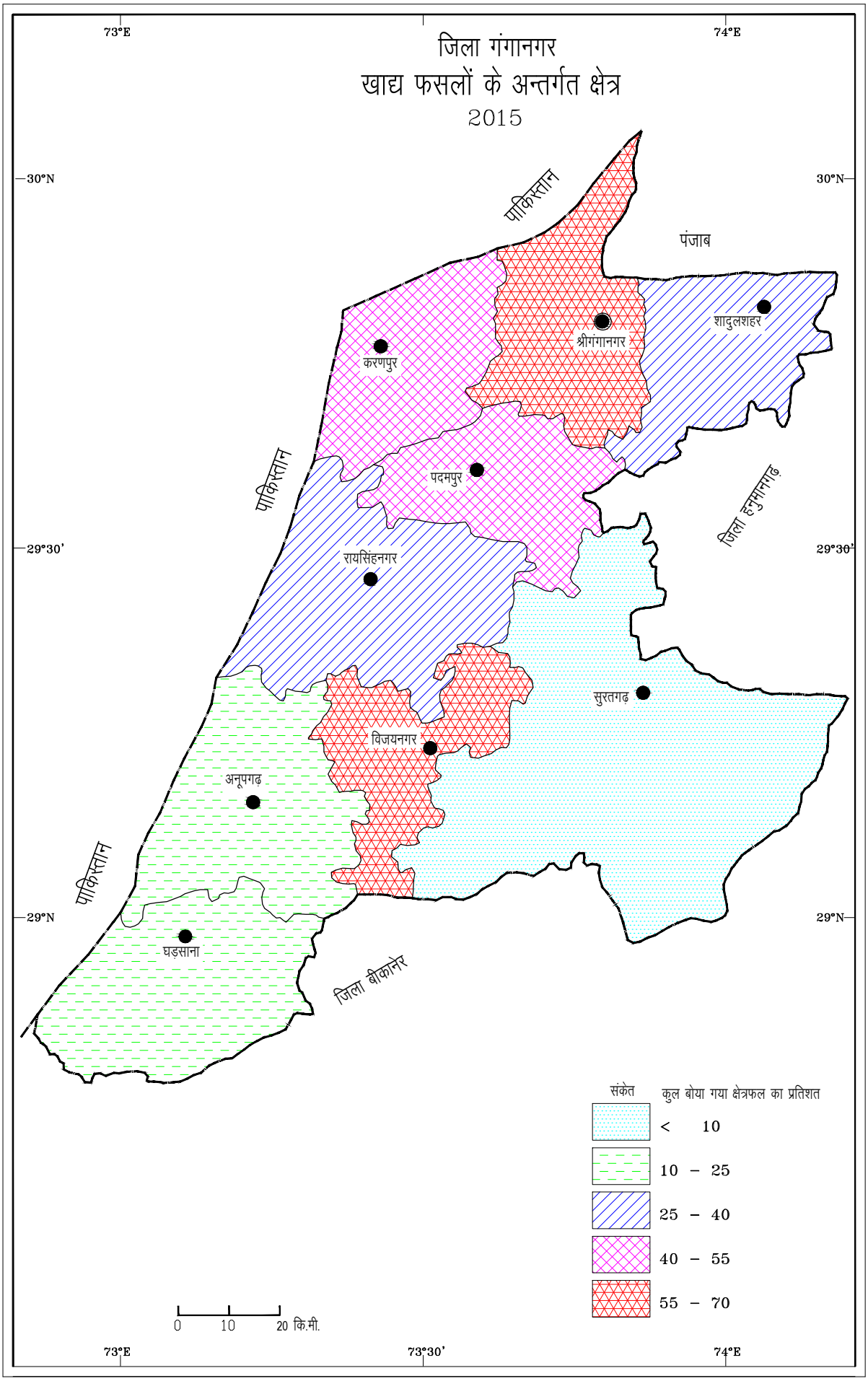
73°E
74°E
जिला गंगानगर
खाद्य फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र
2015
30°N
पाकिस्तान
पंजाब
शादुलशहर
श्रीगंगानगर
करणपुर
पाकिस्तान
पदमपुर
जिला हनुमानगढ़
29°30'
रायसिंहनगर
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
पाकिस्तान
29°N
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
कुल बोया गया क्षेत्रफल का प्रतिशत
< 10
10 – 25
25 – 40
40 – 55
55 – 70
0 10 20 कि.मी.
73°30'

मानचित्र सं. 3.7

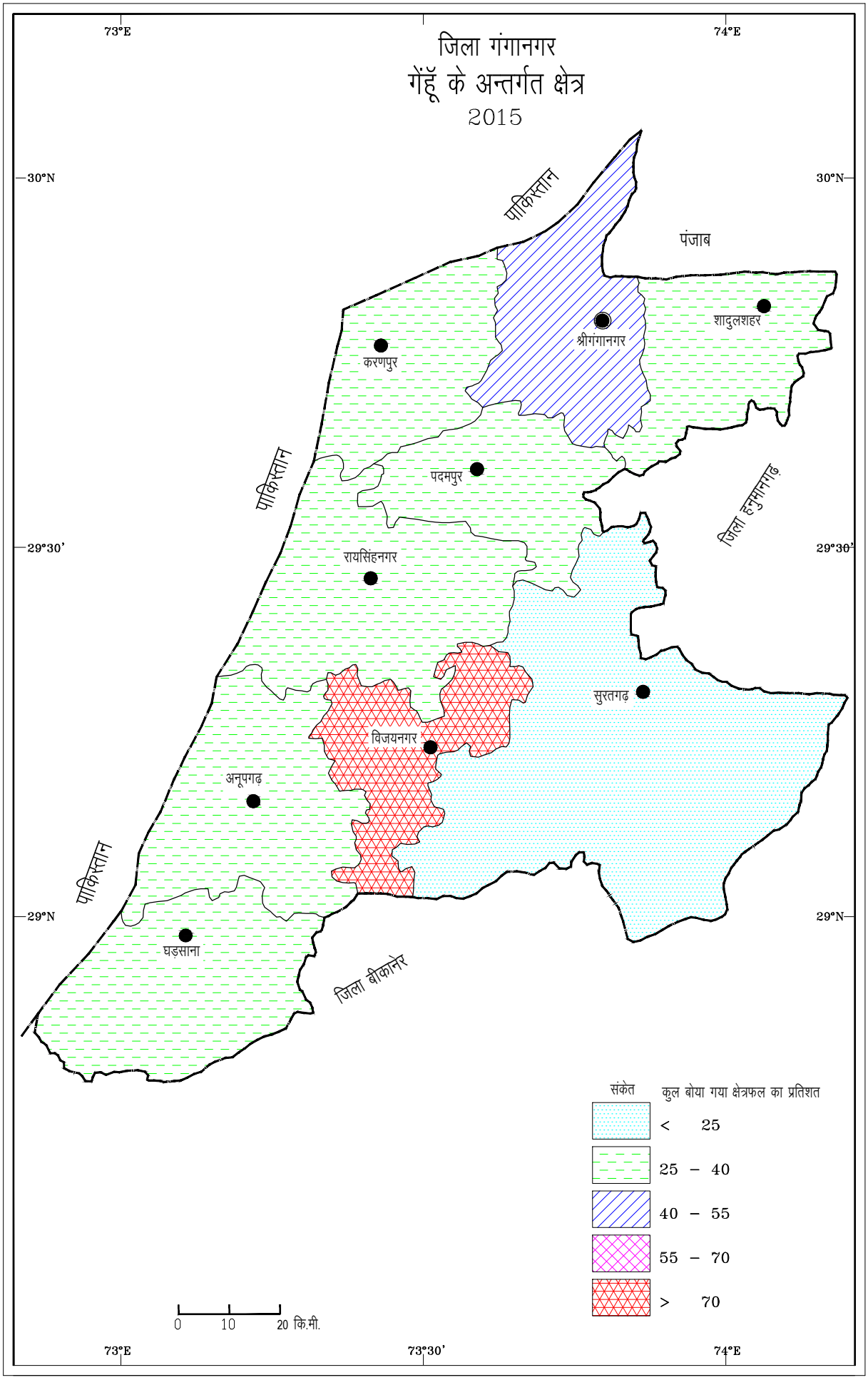
जिला गंगानगर
गेंहूँ के अन्तर्गत क्षेत्र
2015
73°E
74°E
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
श्रीगंगानगर
शादुलशहर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
जिला हनुमानगढ़
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
कुल बोया गया क्षेत्रफल का प्रतिशत
< 25
25 – 40
40 – 55
55 – 70
> 70
0 10 20 कि.मी.

गंगानगर जिले जौ का फसली क्षेत्र 4.09 प्रतिशत क्षेत्र है। जिले की सूरतगढ़ तहसील में सबसे न्यूनतम 1.21 प्रतिशत क्षेत्रफल है जबकि श्रीगंगानगर तहसील में सर्वाधिक 13.82 प्रतिशत है। पदमपुर तहसील में 8 से 12 प्रतिशत के मध्य तथा विजयनगर तहसील का प्रतिशत 4 से 8 के मध्य है और 4 प्रतिशत से कम क्षेत्र में सार्दुलशहर, रायसिंहनगर, अनूपगढ़, घड़साना व सूरतगढ़ तहसीलें आती हैं। (मानचित्र संख्या 3.8)

गंगानगर जिले में चना, तूर, खरीफ की दाले एवं रवी दालें आदि का उत्पादन किया जाता है। सन् 2010–11 में 1,61,657 हैक्टेयर पर दलहन फसलों का उत्पादन किया गया। जो कुल फसली क्षेत्र का 14.78 प्रतिशत है। (मानचित्र संख्या 3.9) चना मुख्य रूप से विजयनगर, सार्दुलशहर तहसीलों में अधिक उत्पन्न की जाती है। गंगानगर जिले के अन्तर्गत सबसे अधिक क्षेत्र (12 से 15 प्रतिशत) विजयनगर तहसील में मिलता है। (मानचित्र संख्या 3.10)। जिले के शेष भागों पदमपुर, रायसिंहनगर, सूरतगढ़ अनूपगढ़ व घड़साना तहसीलों में 3 से 6 प्रतिशत के अन्तर्गत उत्पादन होता है। जिले की सार्दुलशहर तहसील 6 से 9 प्रतिशत के अन्तर्गत आती है और श्रीगंगानगर एवं करणपुर तहसील 3 प्रतिशत से कम के अन्तर्गत आती है। इसका प्रमुख कारण सिंचित क्षेत्र की अधिकता होना है।

जिले की मुख्य तिलहन फसलों में राई एवं सरसों, अलसी, अरण्डी व मूंगफली आदि हैं। प्रदेश में सरसों एवं राई का क्षेत्र एवं उत्पादन पिछले पाँच वर्षों के दौरान कम हुआ है तथा मुख्य फसल के रूप में स्थान लेता जा रहा है। वर्ष 2010–11 के दौरान सरसों का उत्पादन 24.79 प्रतिशत था जो घटकर वर्ष 2013–14 में 19.46 प्रतिशत रह गया। इस प्रकार पाँच वर्षों में लगभग 5. 33 प्रतिशत की कमी पाई गई है।(मानचित्र सख्यां 3.11)

गंगानगर जिले में कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 19.67 प्रतिशत क्षेत्र पर तिलहन का उत्पादन किया जाता है। जिसमें करणपुर तहसील में सर्वाधिक

मानचित्र सं. 3.8

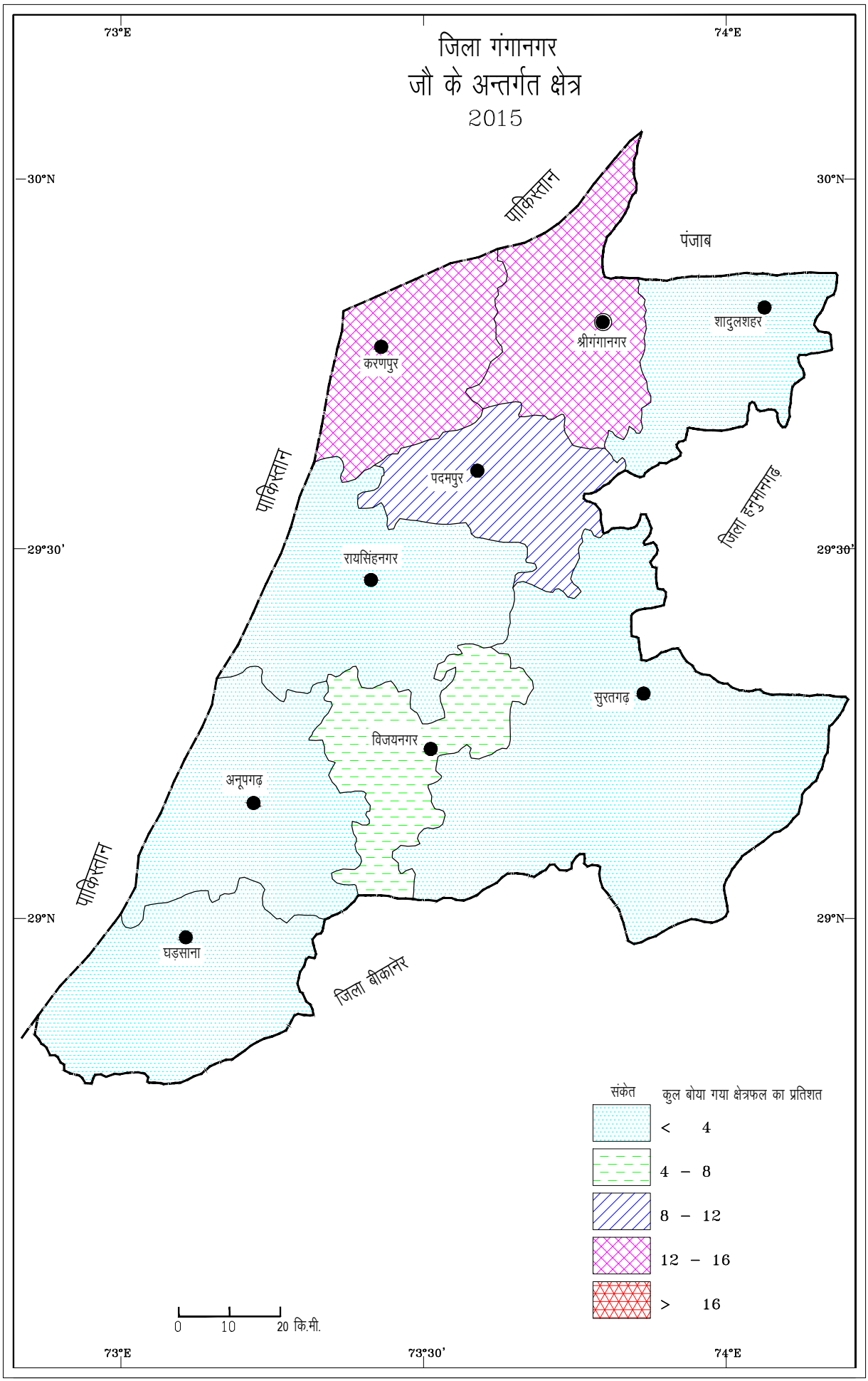
जिला गंगानगर
जौ के अन्तर्गत क्षेत्र
2015
73°E
74°E
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
शादुलशहर
श्रीगंगानगर
करणपुर
पदमपुर
जिला हनुमानगढ़
रायसिंहनगर
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
कुल बोया गया क्षेत्रफल का प्रतिशत
< 4
4 – 8
8 – 12
12 – 16
> 16
0 10 20 कि.मी.

मानचित्र सं. 3.9

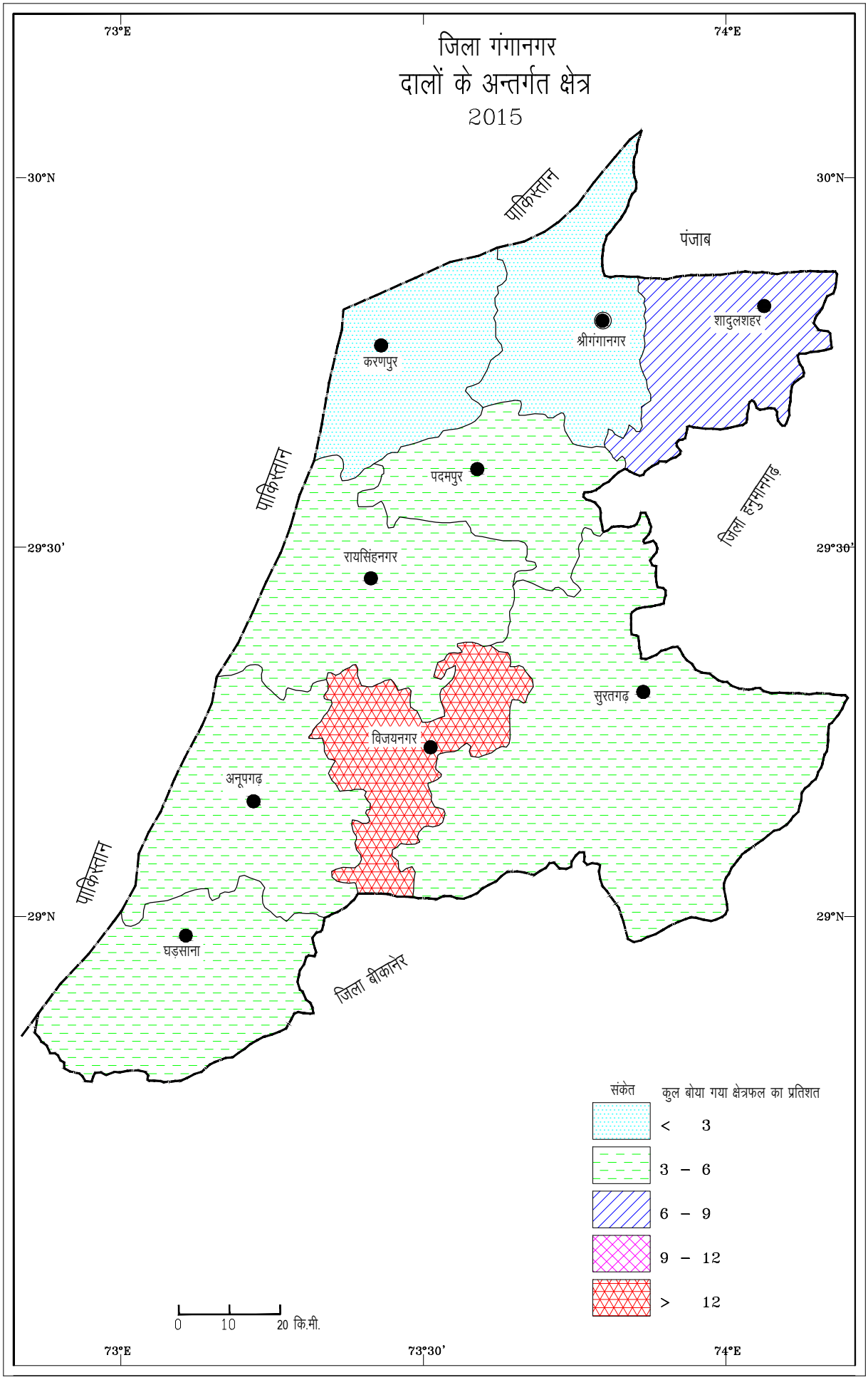
जिला गंगानगर
दालों के अन्तर्गत क्षेत्र
2015
73°E
74°E
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
जिला हनुमानगढ़
जिला बीकानेर
श्रीगंगानगर
शादुलशहर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
संकेत
कुल बोया गया क्षेत्रफल का प्रतिशत
< 3
3 – 6
6 – 9
9 – 12
> 12
0 10 20 कि.मी.

मानचित्र सं. 3.9

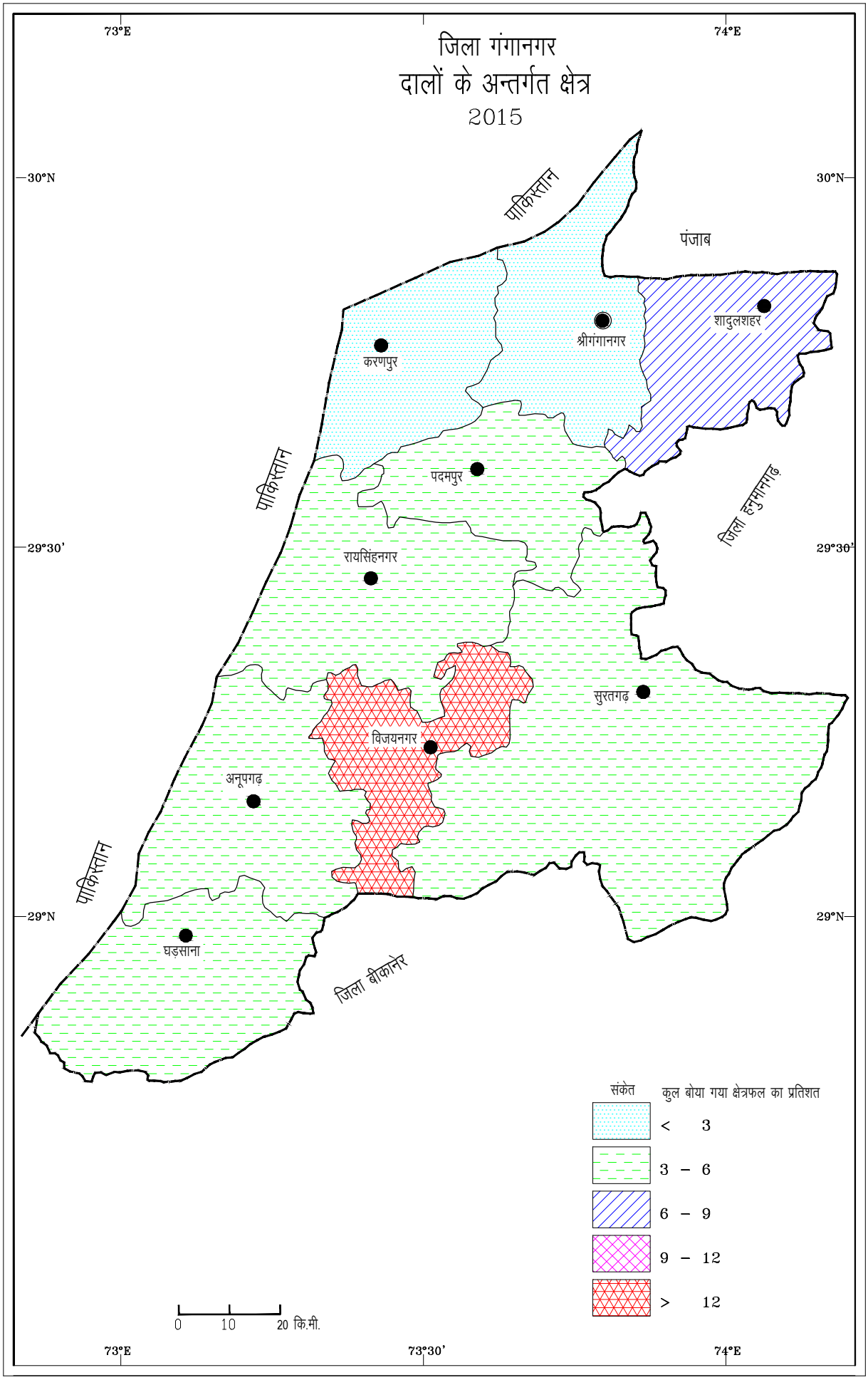
जिला गंगानगर
दालों के अन्तर्गत क्षेत्र
2015
73°E
74°E
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
जिला हनुमानगढ़
जिला बीकानेर
श्रीगंगानगर
शादुलशहर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
संकेत
कुल बोया गया क्षेत्रफल का प्रतिशत
< 3
3 – 6
6 – 9
9 – 12
> 12
0 10 20 कि.मी.

मानचित्र सं. 3.10

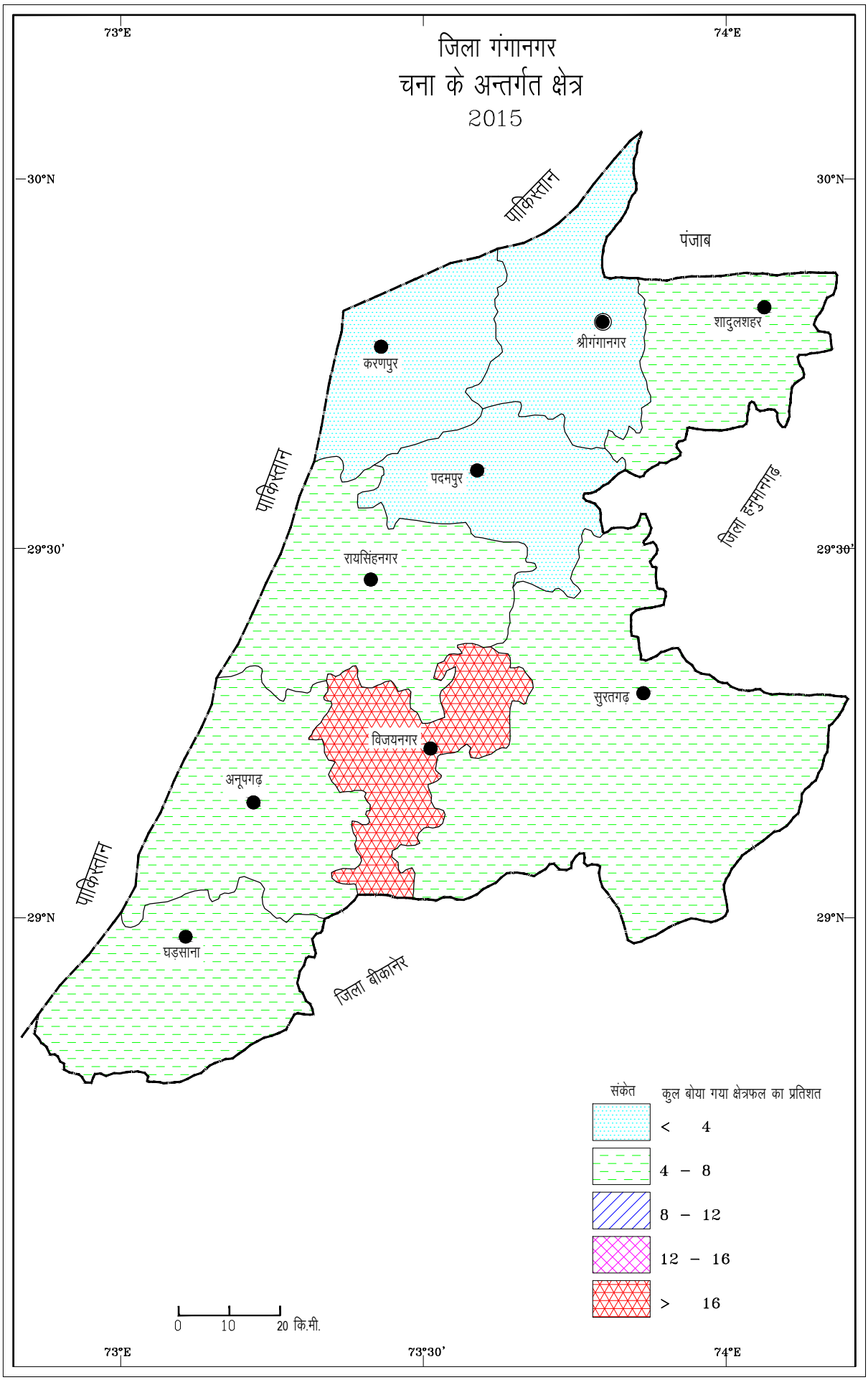
जिला गंगानगर
चना के अन्तर्गत क्षेत्र
2015
73°E
74°E
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
शादुलशहर
श्रीगंगानगर
करणपुर
पदमपुर
जिला हनुमानगढ़
रायसिंहनगर
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
कुल बोया गया क्षेत्रफल का प्रतिशत
< 4
4 – 8
8 – 12
12 – 16
> 16
0 10 20 कि.मी.

मानचित्र सं. 3.11

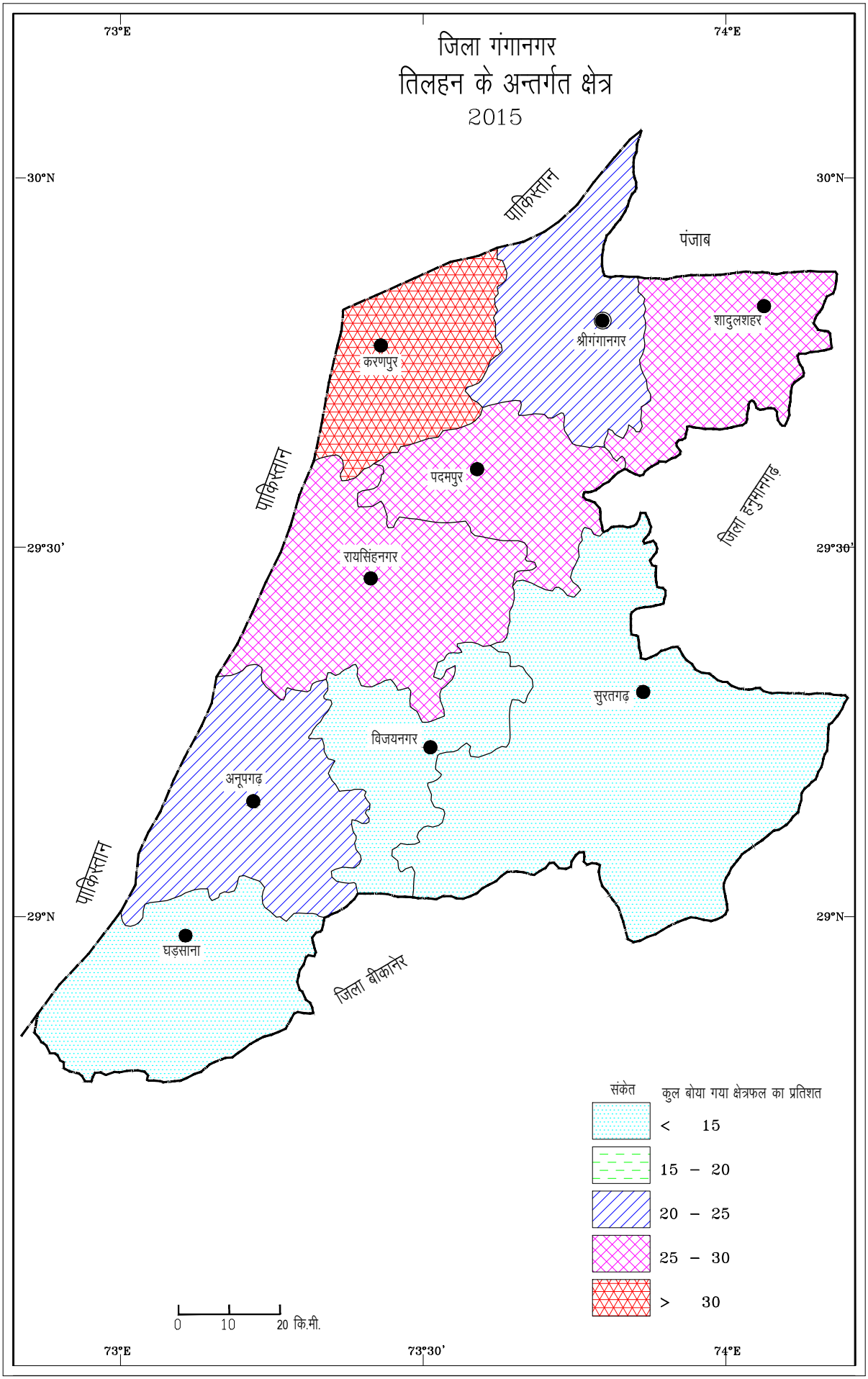
जिला गंगानगर
तिलहन के अन्तर्गत क्षेत्र
2015
73°E
74°E
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
श्रीगंगानगर
शादुलशहर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
जिला हनुमानगढ़
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
कुल बोया गया क्षेत्रफल का प्रतिशत
< 15
15 – 20
20 – 25
25 – 30
> 30
0 10 20 कि.मी.

उत्पादन 30 प्रतिशत से अधिक होता है। वर्षा की न्यूनता एवं शुष्क जलवायु दशाओं के कारण तिलहन का उत्पादन अधिक पाया जाता है। घड़साना, सूरतगढ़, विजयनगर तहसील में तिलहन का उत्पादन 15 प्रतिशत से कम तथा सार्दुलशहर, पदमपुर, रायसिंहनगर, अनूपगढ़ में 20 से 30 प्रतिशत उत्पादन क्षेत्र मिलता है। (मानचित्र संख्या 3.11)

3.5 भूमि अपक्षय (Land Degradation)

भूमि अपक्षय कई प्राकृतिक व मानवीय कृत्यों का मिश्रित परिणाम है जिनमें वायु क्षरण व टीलों का प्रसार, जलाक्रांत, लवणीयता, जल क्षरण, भौतिक बिखराव, रासायनिक, जैविक व प्राकृतिक कारण प्रमुख हैं। विगत दशकों में मानवीय कृत्यों का भूमि अपक्षय में बहुत योगदान रहा है जिससे जिले के विभिन्न भागों में विषम स्थिति उत्पन्न हो गई है। जिले के अर्द्व विस्तृत सर्वेक्षण द्वारा विभिन्न श्रेणियों के भूमि अपक्षय की गंभीरता व सीमा का आंकलन स्थानीय मृदा जल परीक्षणों के माध्यम से किया गया है।

विगत तीन दशकों में गंगानगर जिले में भूमि उपयोग प्रणाली में गंभीर परिवर्तन हुए हैं जो मुख्यतया भाखड़ा, गंग व इन्दिरागांधी नहर प्रणाली द्वारा सिंचाई के अनियंत्रित व अकुशल प्रबंधन का परिणाम है। मानवीय कृत्यों द्वारा मृदा, भूमि उपयोग, वनस्पति और सामाजिक आर्थिक क्षेत्रों में बिना सोचे समझे किए गए कार्य है जिनके कारण जिले की स्थिति भूमि अपक्षय के कारण बहुत चिन्तनीय हो गई है। जिले के उत्तर पूर्वी व पश्चिमी भागों में सिंचित खेती की जाती है तथा इन भागों की मृदा अधिकांशतया लोमीसेण्ड, सेण्डीलोम से लोम और कहीं कहीं क्ले लोम है। घड़साना, अनूपगढ़ व सूरतगढ़ तहसीलों वाले दक्षिणी भाग में मृदा में चूने की मात्रा बहुतायत से है जिससे सुविकसित चूना कंक्रीट, जिप्सम की उपस्थिति सतह और उपसतह को बहुत अधिक प्रभावित करती है।

जिले में भूमि अपक्षय के प्रमुख कारणों में से वायु क्षरण, जमावट, वाटरलोगिंग, लवणीयता, क्षारीयता और जिप्सम की उपस्थिति है। विभिन्न कारणों से अपक्षय भूमि 6550.29 वर्ग किलोमीटर है जो जिले के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 59.9 प्रतिशत है इसमें से वायु क्षरण और जमाव से प्रभावित क्षेत्र 6079.72 वर्ग किलोमीटर, वाटरलोगिंग व लवणीयता से प्रभावित क्षेत्र 349.52 वर्ग किलोमीटर, लवणीयता व क्षारीयता से ग्रसित क्षेत्र 104 वर्ग किलोमीटर तथा जल क्षरण से प्रभावित क्षेत्र 17 वर्ग किलोमीटर है। शेष 4234. 3 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र वर्तमान में किसी प्रकार के गंभीर दुष्परिणाम से अभी तक सुरक्षित है। भूमि क्षरण को उपरोक्त वर्णित प्रभावों की गंभीरता व क्षेत्र पर प्रभाव का विवेचन सारिणी 6.5 में दर्शाया गया है जो भूमि की उर्वरा शक्ति पर विपरीत प्रभाव डाल रहा है और धीरे–धीरे अन्य क्षेत्रों की ओर भी बढ़ रहा है।

3.6 शस्य संयोजन प्रदेश

फसले कदाचित ही पूर्णतया एकाकी रूप में ली जाती हो। किसी प्रदेश या इकाई क्षेत्र में कई प्रकार की फसलें ली जाती है जिसका क्षेत्रीय विस्तार तथा कोटि गुणांक अलग–अलग होता है। शस्य स्वरूप न केवल उस प्रदेश के भौगोलिक कारकों के प्रभाव को प्रतिबिम्बित करता है, वरन कृषि भूमि उपयोग की दिशा को भी स्पष्ट करता है। वरन् फसल समूह में विभिन्न फसलों के क्षेत्रीय विस्तार और उसके गुणों को भी प्रकट करता है। शस्य संयोजन फसलों के संयोजन का तुलनात्मक और मापने योग्य एक विधि को भी स्पष्ट करता है। यह कृषि भूमि उपयोग के भौगोलिक प्रतिरूप को प्रकट करता है, जिसकी सहायता से तथ्य परक कृषि प्रदेशों के निर्धारण में सहायता मिलती है। शस्य संयोजन कृषि के महत्वपूर्ण आकारिकी स्वरूप को पहचानने में भी अत्याधिक सहायक होते है।

प्रो.पी.ई. जेम्स तथा सी.एस.जोन्स के अनुसार शस्य–संयोजन सम्बन्धित अध्ययन के अभाव में कृषि की क्षेत्रीय विशेषताओं को ठीक से समझा नहीं जा

सकता है। साथ ही साथ क्षेत्रीय संकल्पना के बिना कृषि–प्रदेश–विभाजन की दिशा में भी संतोष जनक संश्लेषण नहीं हो सकता है।

3.7 शस्य विधितन्त्र

3.7.1. वीवर का शस्य संयोजन प्रदेश

शस्य–संयोजन पर विचार करने वालों में जे.सी. वीवर (1954) सर्वप्रथम है तथा उनकी 'न्यूनतम विचलन विधि' (Minimum deviationmethod) बहुचर्चित है। अधिकांश परवर्ती विधियाँ वीवर की संशोधित रूप है। उन्होंने शस्य संयोजन प्रदेश निश्चित करने का एक गणितीय मॉडल बनाया जिसका प्रयोग पश्चिमी संयुक्त राज्य अमेरिका के मध्य पश्चिमी क्षेत्र का शस्य–संयोजन निर्धारित करने में किया। इस मॉडल का सैद्धान्तिक आधार यह है कि फसलों के अन्तर्गत भूमि समान रूप से वितरित है। उदाहरण के लिए अगर किसी क्षेत्र में यह फसल है तो शत–प्रतिशत कृषित भूमि एक ही फसल के अन्तर्गत होना चाहिए। इसी तरह अगर दो फसलें है तो प्रत्येक का हिस्सा 50 प्रतिशत होने पर प्रत्येक के अन्तर्गत 33.3 प्रतिशत और इसी प्रकार दस फसले होने पर प्रत्येक के अन्तर्गत 10 प्रतिशत कृषित भूमि होनी चाहिए। इस सैद्धान्तिक स्थिति की तुलना वास्तविक स्थिति से करके प्रमाणिक विचलन विधि से न्यूनतम विचलन वाला शस्य–संयोजन निर्धारित किया जाता है। वीवर का उद्देश्य विचलन की वास्तविक मात्रा ज्ञात करना नहीं है बल्कि विचलन का सापेक्षित क्रम जानना था। इस कारण प्रमाणिक विचलन के सूत्र Q= के स्थान प्रसरण का सूत्र Q= का प्रयोग किया है। यहाँ d का तात्पर्य सम्बन्धित संयोजन में फसलों की संख्या से है। जिस संयोजन में सैद्धान्तिक एवं वास्तविक प्रतिशतों में न्यूनतम प्रसरण होता है, वहीं उस इकाई क्षेत्र का शस्य–संयोजन माना जाता है। इस विधि द्वारा गणना का चरण निम्नानुसार है।

1. प्रत्येक फसल के क्षेत्रफल का कुल फसलों के क्षेत्रफल से प्रतिशत ज्ञात कर उन्हे घटते क्रम में रखा जाता है।
2. इन फसलों को प्रथम फसल से प्रारम्भ करके एक फसल, प्रथम दो फसल, प्रथम तीन फसल आदि का समूह बना लेते है ये समूह संख्या में उतने ही होंगे जितना कि विचारणीय फसलों की संख्या होगी। इन समूहों का संयोजन कहते है।
3. प्रत्येक शस्य–संयोजन की प्रत्येक फसल के सैद्धान्तिक एवं वास्तविक प्रतिशतों को अन्तर (d) ज्ञात करते है। ध्यान देने की बात है कि संयोजन में फसलों की संख्या बढने के साथ ही सैद्धान्तिक प्रतिशत घटते जाते है।
4. सैद्धान्तिक एवं वास्तविक प्रतिशतों का अन्तर का वर्ग (d) किया जाता है।
5. इस तरह संयोजन को सभी फसलों के अन्तर के वर्ग का योग ($\sum d$) किया जाता है।
6. इन अन्तर के वर्ग के योग को संयोजन में सम्मिलित फसलों की संख्या से भाग देकर ($\sum d/n$) प्रसरण ज्ञात किया जाता है।

ये सभी चरण उतनी बार करने पड़ते है जितने की फसलों के कुल संयोजन होते है। तभी यह ज्ञात करना सम्भव है कि न्यूनतम विचलन किस समूह का है। इन चरणों को जिलें की फसलों को लेकर समझा जा सकता है। इस जिले में प्रमुख फसलों का क्षेत्रफल निम्नानुसार है। जिले का कुल कृषित क्षेत्र 562571 हैक्टेयर है।

तालिका संख्या 3.9

प्रमुख फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल का विवरण 2010–2011 (क्षेत्र हे. में.)

फसलों का क्रम	गेहूँ	सरसों	बाजरा	चना
क्षेत्रफल	236075	281408	18038	103992
कुल कृषित भूमि का प्रतिशत	30.06	35.83	2.30	13.24

प्रथम चरण का प्रतिशत क्षेत्रफल ज्ञात कर फसलों को घटते क्रम में तालिका से स्पष्ट है। दूसरे चरण मे फसलों के समूहन का काम किया जाता है। इस विश्लेषण मे प्रथम संयोजन गेहूँ का, दूसरा संयोजन प्रथम दो फसलों अर्थात् गेहूँ और सरसों, तीसरा संयोजन प्रथम तीन फसलों (गेहूँ, सरसों व बाजरा) का होगा, चतुर्थ संयोजन में प्रथम चार फसलें (गेहूँ, सरसों बाजरा चना) का होगा। इस प्रकार गंगानगर जिले में चार शस्य–संयोजन सम्भव है। इसमें सबसे उपयुक्त कौन होगा, यह जानने के लिए गणना की निम्न प्रक्रियाएँ करनी होगी।

तालिका संख्या 3.10

वीवर विधि द्वारा शस्य–संयोजन की गणना चरण

संयोजन में फसल संख्या	सैद्धान्तिक % क्षेत्र (T)	वास्तविक % क्षेत्र (A)	अन्तर (T-A =d)	अन्तर का वर्ग (d) क्षेत्र (∑d)	वर्ग का योग	प्रसरण (∑d/n)
एक फसल सम्मिश्रण	100	30.50	69.50	4830.25	4830.25	4830.25
दो फसल सम्मिश्रण	50	30.50	19.50	380.25	1155.87	557.93
	50	22.15	27.85	775.62		
तीन	33.3	30.50	2.80	7.84	256.92	85.64

फसल सम्मिश्रण	33.3	22.15	11.15	124.32		
	33.3	22.13	11.17	124.76		
चार फसल सम्मिश्रण	25	30.50	–5.50	30.25	514.02	128.50
	25	22.15	2.85	8.12		
	25	22.13	2.87	8.23		
	25	3.38	21.62	467.42		

इस तरह न्यूनतम 85.64 है गंगानगर जिले की तीनों फसलों वाले शस्य–संयोजन के लिए है। इस कारण इस जिले का शस्य–संयोजन फसलों गेहूँ, चना व बाजरा का है।

इस विधि से जिले में शस्य–संयोजन ज्ञात करने पर इसमें निम्नलिखित त्रुटियाँ पायी गयी।

1. यह विभिन्न फसलों के क्षेत्रीय विस्तार एवं कोटि पर निर्भर करती है।
2. इसमें व्यक्ति परकता का समावेश है। जैसे कि आरम्भ में फसलों का चयन किसी स्थिर नियम द्वारा नहीं बल्कि व्यक्ति की सुविधा पर निर्भर होता है। वीवर ने सुविधा के लिए 1.0 प्रतिशत अधिक कृषित भूमि पर बोई जाने वाली फसलों पर ही विचार किया था अन्यों पर नहीं।
3. यह मॉडल ऐसे क्षेत्र के लिए तैयार किया था जहाँ अध्ययन वाली प्रशासनिक इकाईयाँ लगभग समान आकार की है, परन्तु सर्वत्र ऐसा नहीं है विभिन्न आकार की इकाईयों में आने वाली गणना की समस्या को इसमें नहीं रखा गया है।
4. इस मॉडल में गणना की प्रक्रिया बहुत लम्बी व अन्तिम काल चलती है।

शस्य–संयोजन के निर्धारण मे प्रतिशत समूह सीमान्त सांख्यिकी परिणाम बताते है वहाँ व्यक्तिनिष्ठ तत्व प्रवेश कर जाते है। इसी तरह कुछ फसलें जो क्षेत्रीय विस्तार की दृष्टि से महत्वपूर्ण नहीं होती पर बहुत उच्च कीमत वाली होने के कारण इस प्रकार की फसलों को भी शस्य–संयोजन में स्थान नहीं मिल पाता है।

3.7.2. दोई का शस्य संयोजन प्रदेश

दोई ने वीवर की विधि का संशोधन करके उसका प्रयोजन जापान की औद्योगिक संरचना ज्ञात करने के लिए (1957) किया। इसके भी सैद्धान्तिक आधार ठीक वैसे ही है जैसे वीवर के अर्थात् उन्होंने भी माना है कि कृषित भूमि सभी फसलों में समान रूप से वितरित है। सैद्धान्तिक एवं वास्तविक प्रतिशतों का अन्तर भी उसी तरह ज्ञात किया जाता है। अन्तर केवल इतना है कि वीवर में प्रसरण ($\sum d/n$) को शस्य–संयोजन का आधार माना है परन्तु दोई ने सैद्धान्तिक एवं वास्तविक प्रतिशतों के अन्तर के वर्ग योग ($\sum d$) को ही आधार माना है। इससे संयोजन में आने वाली फसलों की संख्या में बहुत ही अन्तर आ जाता है। पिछली तालिका से स्पष्ट होता है कि वीवर की विधि के अनुसार जिले में फसलों के संयोजन के लिए है। इस जिले का उपर्युक्त शस्य संयोजन तीन फसलों गेहूँ, चना व बाजरा वाला है।

दोई ने न्यूनतम की गणा को एक तालिका बनाकर सरल कर दिया है तथा प्रत्येक संयोजन के लिए सैद्धान्तिक एवं वास्तविक प्रतिशत क्षेत्रफलों का अन्तर वर्ग निकालना एवं उसका योग प्राप्त करना आवश्यक नहीं रह गया है। इस तालिका मे संयोजन की सभी फसलों के प्रतिशत क्षेत्रफल के योग के सन्दर्भ में संयोजन की अगली फसल के क्रान्तिक मान दिया हैं। अगर अगली फसल का प्रतिशत क्षेत्रफल उस क्रान्तिक मान से अधिक है तो उस संयोजन

में सम्मिलित किया जायेगा, अन्यथा नहीं। इस क्रान्तिक मान की तालिका का एक अंश तालिका में है।

तालिका संख्या 3.11

प्रमुख फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल का विवरण (2000–2001)

फसलों का क्रम	गेहूँ (1)	सरसों (2)	बाजरा (3)	चना (4)
क्षेत्रफल कुल कृषित भूमि का प्रतिशत में	171638	124648	124550	19054
समुच्ची प्रतिशत	30.50	52.65	74.78	78.16

तालिका संख्या 3.12

दोई द्वारा निर्धारित शस्य संयोजन हेतु क्रान्तिक मान तालिका

फसलों की कोटि	संयोजन में सम्मिलित फसलों के प्रतिशत क्षेत्र का योग									
	50	55	60	65	70	75	80	85	90	95
2	0.00	5.38	11.27	18.38	22.64					
3	0.00	2.68	5.46	8.66	12.25	16.67				
4	0.00	1.73	3.59	5.63	7.93	10.57	13.83			
5	0.00	1.29	2.68	4.19	5.96	7.75	10.00	13.93		
6	0.00	1.04	2.14	3.34	4.65	6.13	7.85	10.10		
7	0.00	8.86	1.78	2.77	3.85	5.06	6.46	8.17		
8	0.00	0.74	1.52	2.37	3.27	4.32	5.49	6.91	8.84	
9	0.00	0.64	1.38	2.07	2.87	3.76	4.78	5.99	7.60	

10	0.00	0.57	1.18	1.84	2.55	3.33	4.23	5.29	6.67	
11	0.00	0.52	1.06	1.65	2.29	2.99	3.79	4.73	5.94	6.68
12	0.00	0.47	0.97	1.50	2.08	2.71	2.33	4.29	5.35	6.27
13	0.00	0.43	0.88	1.37	1.90	2.49	3.14	3.91	4.49	5.68

स्रोतः– के. दोई (1957)

तालिका संख्या 3.12 की मदद से गंगानगर जिले की फसलों के प्रतिशत क्षेत्रफल के आधार पर शस्य–संयोजन की गणना इस प्रकार कर सकते है। इस क्रान्तिक मान की तालिका का उपयोग करने से पूर्व फसलों के प्रतिशत को घटते क्रम में रखकर समुच्चयी प्रतिशत ज्ञान कर लेने की सुविधा होती है। चूँकि तालिका में 50 प्रतिशत के लिए कोई क्रान्तिक मान नहीं है। उतनी फसलों के प्रतिशत क्षेत्र का योग करना पड़ता है जिनका प्रयोग 50 प्रतिशत अधिक हो जाये। यदि एक फसल में 50 प्रतिशत क्षेत्र नहीं हो पाता है तथा यदि क्रान्तिक मान उस फसल के क्षेत्र से अधिक होता है तो अगली मुख्य फसल को उस सम्मिश्रण में शामिल नहीं करते है। अन्यथा इस तरह अगली फसल का क्षेत्र क्रान्तिकमान से अधिक होने पर उसे सम्मिश्रण में शामिल करते जाते है।

तालिका 3.12 में क्षेत्र का सामयिक और क्षेत्रीय शस्य सम्मिश्रण पाया गया है अतः तालिका 3.12 से स्पष्ट है कि वर्ष 2010–11 में क्षेत्र की नौ तहसील में चार फसली सम्मिश्रण था।

तालिका 3.13

तहसील	सम्मिश्रण वर्ग 2006–07	फसलों की संख्या	सम्मिश्रण वर्ग 2010–2011	फसलों की संख्या
गंगानगर	चावल+गेहूँ+बाजरा+चना	4	गेहूँ+चना+बाजरा	3
करणपुर	चावल+गेहूँ+बाजरा+चना	4	चना+बाजरा+गेहूँ	3
पदमपुर	चावल+गेहूँ+बाजरा+चना	4	गेहूँ+चना+बाजरा	3
रायसिंहनगर	चावल+गेहूँ+बाजरा+चना	4	गेहूँ+चना+बाजरा	3
अनूपगढ़	चावल+गेहूँ+बाजरा+चना	4	गेहूँ+बाजरा+चना	3
सूरतगढ़	चावल+गेहूँ+बाजरा+चना	4	बाजरा+गेहूँ+चना	3
सादूलशहर	चावल+गेहूँ+बाजरा+चना	4	बाजरा+चना+गेहूँ	3
विजयनगर	चावल+गेहूँ+बाजरा+चना	4	गेहूँ+चना+बाजरा	3
घड़साना	चावल+गेहूँ+बाजरा+चना	4	गेहूँ+चना+बाजरा	3

वर्ष 2006–2007 में जिले में तथा जिले की नौ तहसीलों में तीन फसलीय सम्मिश्रण है। सम्मिश्रण में गेहूँ, चना व बाजरा की फसलों का योगदान है। वर्ष 2006–07 में प्रथम स्थान चने का था जबकि वर्ष 2010–2011 में प्रथम स्थान गेहूँ ने ले लिया। इस प्रकार स्पष्ट है कि जिले की कृषि पारिस्थितिकी में विशिष्टिकरण में कोई विशेष अन्तर नहीं आया है। वर्तमान समय में आधुनिकीकरण को देखते हुए इसमें परिवर्तन हो रहा है।

3.7.3. जे. कोस्ट्रोविक्की शस्य सम्मिश्रण विधिः–

कोस्ट्रोविक्की महोदय की विधि में उन्होंने व्यक्तिगत फसलों के साथ फसल वर्ग बनाकर शस्य सम्मिश्रण ज्ञात किया। उन्होंने दो विधियों द्वारा शस्य–सम्मिश्रण ज्ञात किया है।

1. प्रतिशन विधि

2. भाग फलांक विधि

प्रतिशन विधि में प्रत्येक फसल का प्रतिशत निकालने की आवश्यकता होती है जबकि भाग फलांक विधि में मूल सामग्री से ही गणना की जा सकती है। कास्ट्रोविक्की ने सभी फसलों को तीन भागों में बांटा है।

1. निष्कर्षण फसलें

वे फसलें जो मिट्टियों से बहुत अधिक सार तत्व को ग्रहण करती है, जैसे अनाज की फसलें अथवा तिलहन की फसलें आदि को इस वर्ग में शामिल किया गया है। इस वर्ग की फसलों को बहुत अधिक रासायनिक खाद की आवश्यकता होती है।

2. संरचनात्मक फसलें

वे फसलें जो मिट्टी में नाइट्रोजन जोड़ती और जमीन उपजाऊ बनाये रखने में सहायक होती है उन्हें इस वर्ग में सम्मिलित किया गया है जैसे– दालें, मूँगफली और चरी की फसलें या हरी खाद की फसलें आदि। इनमें खाद का उपयोग कम किया जाता है।

3. गहन शस्य फसलें

इनमें अधिक खाद एवं श्रम की आवश्यकता होती है और जिन फसलों को लेने में बहुत अधिक श्रम करना पड़ता है उन्हें इस वर्ग में सम्मिलित किया जा गया हैं, जैसे–साग–सब्जी, मक्का, ज्वार, आलू, गन्ना मसाले, रेशेदार फसलें जो खाद का पूरी तरह उपयोग न कर पाने के कारण खाद मिट्टी में ही छोड़ जाती है।

विभिन्न फसलों को उनके समूह में वर्गीकृत करने के पश्चात उनके बीच अनुपात का परीक्षण किया जाता है। इसके पश्चात् Technique of successive quotient का उपयोग करके शस्य संयोजन ज्ञात किया जाता है।

निष्कर्ष

उपरोक्त अध्ययन से निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि तहसीलवार कृषि की सघनता 23.69 से 46.22 प्रतिशत के मध्य रही है जो यह दर्शाती है कि विभिन्न क्षेत्रों में स्थानीय समस्याएं इतनी जटिल हो रही है कि उपलब्ध सतही जल या भूजल का उपयोग कृषि कार्य के लिए नहीं हो पा रहा है। इसका तात्पर्य यह है कि कृषक को एक फसल का विकल्प ही चुनना पडा वर्षा काल में खेत को पड़त रूप में रखना उपयोगी समझता है। जिले में 33 प्रतिशत क्षेत्र वन के अन्तर्गत लाने के लि उसर, बंजर व पुरानी पड़त भूमि को भी जोड़ा जावे तो यह क्षेत्र 24.48 प्रतिशत ही होता है जबकि वन नीति के अनुसार किसी भी प्रदेश में उसमें कुल क्षेत्रफल का 33 प्रतिशत क्षेत्र वनों के अन्तर्गत होना चाहिए जो कि कृषि गहनता को दर्शाता है। अध्ययन क्षेत्र में तहसीलवार कृषि की सघनता 23.69 से 46.22 प्रतिशत के मध्य है जो यह दर्शाती है कि विभिन्न क्षेत्रों में स्थानीय समस्याएँ इतनी जटिल हो रही है कि उपलब्ध सतही जल या भूजल का उपयोग कृषि कार्य के लिए नहीं हो पा रहा है।

अध्ययन के अनुसार यह निष्कर्ष निकलता है कि 99.49 प्रतिशत जोते व्यक्तिगत हैं, संयुक्त जोतों का प्रति 0.44 है तथा संस्थागत जोतें 0.07 प्रतिशत हैं जोतों के स्वामीयों को क्रमशः सीमान्त कृषक और लघु कृषकों की संख्या में बढ़ोतरी का द्योतक है। क्योंकि इतनी छोटी जोत एक परिवार की आवश्यकता पूरी करने में असमर्थ रहती है और ऐसे परिवारों को जीवन यापन के लिए अन्य स्रोतों का भी अपनाना होता है जिससे कृषि कार्यों में कमी लाती है। उसके उपरान्त भी यह शुष्क मरूस्थलीय भाग राज्य के कृषि उत्पादन में बड़ा योगदान करता है। यहां यह उल्लेख करना भी प्रासंगिक है कि जिले में कुल

कृषि योग्य भूमि 892544 हेक्टेयर है परन्तु स्वामित्व के अनुसार कृषि भूमि मात्र 879741 हेक्टेयर है। इस प्रकार कृषि कार्य के लिये अतिरिक्त प्रयुक्त भूमि 12821 हेक्टेयर अन्य श्रेणियों के अन्तर्गत आवंटित भूमि को अवैध रूप में प्रयुक्त भूमि के अतिरिक्त पड़त भूमि काफी अधिक है और इस कारण जनसंख्या के बढ़ते दबाव के कारण यहां कृषक अन्य भूमि का भी उपयोग करने लगते हैं। जिले में पड़त भूमि 10.31 से 32.21 प्रतिशत के बीच है । जिससे स्पष्ट है कि इस श्रेणी की कृषि भूमि अपनी उत्पादकता नष्ट कर चुकी है और धीर–धीरे जिले की कृषि भूमि के घटने के संकेत देती है।

खाद्यान्न फसलों के उत्पादन में वर्ष 2006–2007 में जिले में तथा जिले की नौ तहसीलों में तीन फसलीय सम्मिश्रण है। सम्मिश्रण में गेहूँ, चना व बाजरा की फसलों का योगदान है। वर्ष 2006–07 में प्रथम स्थान चने का था जबकि वर्ष 2010–2011 में प्रथम स्थान गेहूँ ने ले लिया। इस प्रकार स्पष्ट है कि जिले की कृषि पारिस्थितिकी में विशिष्टिकरण में कोई विशेष अन्तर नहीं आया है।

सन्दर्भ सूची

1. एडमनिस्ट्रेटिव रिर्पोट आन दी बीकानेर स्टेट, 1944–45
2. एग्रीकल्चर स्टाटिस्टिक्से (खरीफ क्रोप) 1956–2000, राजस्थान कृषि निदेशालय जयपुर।
3. भारद्वाज, ओ.पी. (1960–64) : लैण्डयूज इन लो लैण्ड ऑफ सतलुज इन दी बीस्त–जालंधर दोआब, सिम्पल स्टडीज एन.जी.जे.आई.,
4. धवन, बी.डी. (1988): एग्रीकल्चर प्रोडक्टीविटी इन इण्डिया–ए स्पेशियल एनालिसिस, वोल्यूम 69 एवं 70।
5. जनकी, वी.ए. (1985) : इकोनोमिक ज्योग्राफी, फैक्टर्स इनफ्लूएन्सिंग दी लोकेशन ऑफ इकोनोमिक एक्टीविटी, कान्सेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी, न्यू दिल्ली।
6. कोस्त्रोविस्की (1956) : लैण्ड यूटीलाइजेशन सर्वे ऑफ मॉस्को डिस्ट्रिक्ट, ज्योग्राफी रिव्यू वोल्यूम 14, नं. 3।
7. खत्री, एल.सी. एवं सिंघाड़ा, कल्याणमल (2005): फसल संयोजनः पंचायत समिति कुशलगढ़, जिला बांसवाड़ा का एक विशिष्ट अध्ययन, एनाल्स ऑफ दि राजस्थान ज्योग्राफिकल एसोसिएशन, वो. 21–22
8. पेमाराम (1986) : एग्रेरियन मूवमेन्ट इन राजस्थान।
9. सिंह, बी.बी. (1971): लैण्डयूज एफीशियेंसी स्टेज एण्ड ऑप्टीमम लैण्डयूज, उत्तर भारत भूगोल पत्रिका, गोरखपुर।

अध्याय–चतुर्थ

सिंचाई के स्रोत

वर्षा के अभाव में भूमि को कृत्रिम तरीके से जल पिलाने की क्रिया को सिंचाई करना कहा जाता है। कृषि आधुनिकीकरण में सिंचाई की प्रमुख भूमिका है। कृषि विकास में धरातल, मृदा, जलवायु, प्राकृतिक साधनों के साथ–साथ सिंचाई का भी प्रमुख योगदान है। कृषि आधुनिकीकरण के आदान–उन्नत बीज, रासायनिक खाद, कीटनाशक औषधियों आदि का अधिकतम लाभ पानी की सुविधा उपलब्ध होने पर ही मिल पाता है। किसानों को सिंचाई की सुविधा उपलब्ध कराने पर ही उन्नत किस्म के बीजों का उपयोग वृहद् स्तर पर सम्भव है अर्थात् उन्नत किस्म के बीजों के कार्यक्रम की सफलता पर्याप्त सिंचित साधनों की उपलब्धता पर ही निर्भर है जिले में वर्षा केवल तीन माह होती है और वर्ष का अधिकांश भाग शुष्क रहता है तथा जो वर्षा होती है उसकी भी निश्चतता नहीं है।

राजस्थान एक कृषि प्रधान राज्य है। यहाँ की अर्थव्यवस्था कृषि पर निर्भर करती है। यहाँ की लगभग 70 से 75 प्रतिशत जनसंख्या प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से कृषि एवं पशुपालन से ही अपनी जीविकोपार्जन करती है। राज्य की प्रकृतिक दशाओं जैसे बलुई मिट्टी, विरल वर्षा और क्षेत्र शुष्कता के कारण सिंचाई की इतनी अधिक आवश्यकता कहीं नहीं होती है जितनी की राजस्थान में होती है।

अतः सिंचाई राज्य में कृषि के विकास के लिए आवश्यक है। मिट्टी में उपलब्ध आर्द्रता पर ही कृषि निर्भर करती है। जो पौधों के अंकुरित होने तथा विकसित होने में सहायता करती है। यहाँ तक शुष्क भूमियों को भी सुधार कर

कृषि कार्यों के लिए योग्य बनाया जा सकता है। बशर्ते कि उन्हें सिंचाई की पूर्ण सुविधाएँ उपलब्ध करवायी जा सके। सिंचाई न केवल उत्पादन में वृद्धि करती है बल्कि एक वर्ष में दो या दो से अधिक फसलों को प्राप्त करने में सहायक होती हैं। दूसरा, कृषि को स्थायित्व प्रदान करती है। राजस्थान राज्य सिंचाई के क्षेत्र में काफी पिछड़ा हुआ है। अतः कृषि योग्य भूमि की पूर्ण रूप से सिंचाई नहीं हो पाती है जिसका मुख्य कारण राज्य की भौगोलिक संरचना और वर्षा की कमी है।

सिंचाई दो प्रकार से होती है–1. भूमिगत जल द्वारा 2. सतही जल द्वारा।

1. भूमिगत जलः भूमि के अन्दर से विभिन्न साधनों द्वारा जल को भूगर्भ से निकालकर सिंचाई की जाती है जैसे–कूओं, नलकूपों द्वारा इत्यादि।

2. सतही जल–सतही जल वर्षा का ही एकमात्र जल होता है जो सतह के नीचले भागों में या ढालू क्षेत्र में बांध बनाकर एकत्रित कर लिया जाता है एवं छोटी–छोटी नहरों को निकालकर आवश्यकतानुसार क्षेत्र में सिंचाई करते रहते हैं।

सतही जल के निम्न साधनों द्वारा सिंचाई की जाती है–जैसे तालाब, बांध, नहरें, नदी, टांकों व पोखरों आदि। राजस्थान के अधिकांश जिलों में सिंचाई अधिकांशतः कुएँ एवं नलकूपों से की जाती है जिनमें गंगानगर जिला भी शामिल किया जाता है।

गंगानगर जिला की नौ तहसीलों में छः तहसीलों में शत प्रतिशत में सिंचाई नहरों से की जाती है। गंगानगर जिले में सिंचाई के साधनों में क्रमशः

कुएँ, नहरें एवं तालाब हैं। गंगानगर जिले में कृषि विकास में सिंचाई की आवश्यकता के प्रमुख कारण निम्न हैं–

1. क्षेत्र में वर्षा की कमी एवं वर्षा की असमान वितरण के कारण सिंचाई की महती आवश्यकता है।
2. क्षेत्र में सबसे अधिक कृषि उत्पादन में रबी की फसल में गेहूँ व बाजरा उत्पादित की जाती है। ये दोनों ही फसलें सिंचाई पर आधारित है। अतः सिंचाई अति आवश्यक होती है।
3. क्षेत्र में वर्षा का आगमन एवं प्रस्थान का कोई निश्चित समय एवं सीमा नहीं है एवं कृषक वर्षा के आधार पर कृषि की बुवाई कर देता है एवं वर्षा सही समय पर नहीं हो पाती है, अतः कृषकों को सिंचाई करना आवश्यक हो जाता है।
4. भूमि उपयोग के वितरणानुसार अध्ययन से क्षेत्र में कृषि योग्य भूमि का अधिकांश भाग बंजर भूमि एवं पड़ती भूमि है। इस प्रकार की भूमि पर कृषि करने के लिए सिंचाई की आवश्यकता होती है, अतः सिंचाई आवश्यक है।
5. सघन कृषि हेतु एवं कृषि उत्पादन बढ़ाने के लिए कृषि उत्पादन में नवीन तकनीकी अपनाना आवश्यक है जिसमें उन्नत खाद एवं रसायनों का उपयोग किया जाता है। इन आदानों का लाभ तभी हो सकता है जब फसलों में सिंचाई की जावे।
6. सिंचाई से हानिकारक कीट एवं बीमारियों से छुटकारा मिलता है एवं हानिकारक कीट नष्ट होते हैं।
7. सर्दी की ऋतु में सिंचाई से फसल को पाले से बचाया जाता है।
8. सिंचाई से फसल उत्पादन बढ़ाया जाता है तथा व्यापारिक फसलों एवं साक–सब्जियों की फसल में सिंचाई आवश्यक है।

9. भूमि में हानिकारक लवणों के जमाव को समाप्त करने के लिये पानी के साथ जिप्सम मिलाकर लवणों के हानिकारक प्रभाव को समाप्त किया जाता है।
10. अध्ययन क्षेत्र में शीत ऋतु में भी वर्षा का प्रतिशत बहुत कम एवं अनिश्चित होता है।

4.1 सिंचाई की आवश्यकता के कारण :

1. वर्षा का असमान वितरण राजस्थान राज्य में वर्षा का असमान वितरण पाया जाता है। इसी कारण से गंगानगर जिले में भी वर्षा की कमी एवं सिंचाई सुविधाओं का अभाव में जिले के कई भागों में काश्त क्षेत्रफल बहुत कम है। वर्षा की मात्रा वितरण के अनुसार ही खरीफ की फसलें ही पैदा की जाती हैं। रबी की फसल प्रायः सिंचाई क्षेत्रों में ही पैदा की जाती है। अतः सिंचाई के साधनों का विकास करके जिले में काश्त क्षेत्रफल एवं फसल उत्पादन को बढ़ाया जा सकता है।

2. वर्षा का अभाव जिले में वर्षा की कमी व सिंचाई के साधनों के अभाव में खरीफ फसल नहीं हो पाती है। क्योंकि खरीफ फसल वर्षा पर निर्भर है। 1990–91 और 1998–99 में वर्षा के अभाव के कारण जिले की खरीफ फसलों के उत्पादन पर अत्यधिक प्रभाव पडा है। अकाल का आगमन होने से कृषक अपने खेत छोडकर शहरों में मजदूरी करने को विवश हो जाते हैं। रबी फसलें सिंचाई पर आधारित हैं। लेकिन वे भी सिंचाई सुविधाओं के अभाव में नहीं पनप पाती हैं। अतः सिंचाई साधनों में बढ़ोतरी कर जिले के काश्त क्षेत्र को बढाया जा सकता है।

3. वर्षा की अनिश्चितता वर्षा की मात्रा हर वर्ष भिन्न रहती है किसी वर्ष वर्षा कम होती है तो किसी वर्ष अधिक। ऐसा देखा गया है कि पांच वर्षों में

एक वर्ष ही मानसून शक्तिशाली रहता है। शेष वर्षों में मानसून या तो सामान्य से कम या फिर कमजोर रहता है। उन क्षेत्रों में इसका विशेष प्रभाव पड़ता है जहां वर्षा का औसत सामान्य या कम रहता है। यह अनिश्चितता कृषि के लिए सिंचाई की आवश्यकता को बताती है।

4. वर्षा की अनियमितता जिले में वर्षा के आगमन एवं प्रस्थान का समय निश्चित नहीं है। फसलों के लिए जल की आवश्यकता एवं वर्षा के समय में तालमेल नहीं हो पाता। खरीफ फसलें वर्षा पर आधारित होने के कारण सूखने लगती हैं और अकाल की स्थिति बनने लगती है। अतः वर्षा की अनियमितता के कारण कृषि कार्यों हेतु सिंचाई की आवश्यकता होती है।

5. मानसून की विभंगता का विपरीत प्रभाव वर्षा काल में बीच–बीच में कभी कई सप्ताह तक वर्षा बिल्कुल नहीं होती है अर्थात् सूखा पड़ जाता है जिससे फसलें सूख जाती हैं ऐसे में सिंचाई की सख्त आवश्यकता पड़ती है।

6. भूमि उपयोग में सुधार भूमि उपयोग के अभिलेख के अनुसार कृषि योग्य भूमि को कृषि कार्यों में उपयोगिता बढ़ाने के लिए सिंचाई सुविधाओं में विस्तार की आवश्यकता है। गंगानगर जिले का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का औसत से कम काश्त क्षेत्रफल है। यहां पड़त भूमि, बंजर भूमि का अधिक होना सिंचाई साधनों के अभाव का द्योतक है। अतः काश्त क्षेत्र के विकास हेतु सिंचाई साधनों का विकास आवश्यक है।

7. फसल को हानि से बचाने के लिए सिंचाई करने से कुछ हानिकारक कीटाणु–जीवाणु तथा कुछ बीमारियाँ पानी के प्रभाव के कारण समाप्त हो जाती है।

8. सघन कृषि के लिए जनसंख्या वृद्धि के साथ–साथ कृषि उत्पादन में वृद्धि भी आवश्यकता है। सघन कृषि उत्पादन के लिए आधुनिक आदान, उन्नत बीज, रासायनिक खाद, कीटनाशक दवाईयों का प्रयोग आवश्यक है। इन आदानों से अधिक लाभ पानी की उपलब्धता पर ही मिल सकता है।

9. पाले से बचाने के लिए सर्दी की ऋतु में सिंचाई करने से फसलों को पाले से बचाया जा सकता है।

10. रबी की फसलों के लिए–रबी फसल सिंचाई द्वारा ही उत्पादित की जाती है। अतः सिंचित क्षेत्र में वृद्धि करके रबी क्षेत्र में विस्तार की काफी सम्भावनाएं हैं।

11. कई व्यापारिक फसलों, फलों एवं सब्जियों के उत्पादन हेतु अधिक जल की आवश्यकता होती है, अतः सिंचाई आवश्यक है।

12. प्रतिकूल प्राकृतिक दशाओं जैसे–बलुई मिट्टी, विरल वर्षा और क्षेत्र की शुष्कता के कारण सिंचाई की आवश्यकता होती है।

4.2 सिंचाई सुविधाओं का विकास

राज्य में स्वतन्त्रता से पूर्व सिंचाई के विकास को देखा जाये नगण्य सा प्रतीत होता है। राज्य में पहले जागीरदारी एवं जमींदारी प्रथा थी। राज्य रियासतों में बंटा हुआ था, अधिकांशतः सामन्तों, जागीरदारों एवं जमींदारों का मुख्य ध्येय मात्र अपनी सुख सुविधाओं का विस्तार करना था अपने क्षेत्र के विकास में उन्होंने अधिक ध्यान नहीं दिया। कुछ राजा–महाराजाओं ने अवश्य कृषि एवं सिंचाई आदि कार्यों में रुचि दिखाई एवं उनमें से सराहनीय प्रयास महाराजा गंगासिंह का है, जिन्होंने 1922–27 में गंगनहर का निर्माण करवाया। गंगासिंह ने गंगानगर एवं बीकानेर क्षेत्र में गंगनहर लाकर इन शुष्क जिलों में

लहलहाती फसलों की पैदावार बढ़ाई। स्वतन्त्रता के बाद सिंचाई के विकास के लिए काफी प्रयास किये गये, जिससे सिंचाई क्षेत्र में वृद्धि हुई है।(मानचित्र सख्यां 4.1)

स्वतन्त्रता के बाद राज्य सरकार ने अनेक योजनाएँ बनायी इन योजनाओं के माध्यम से सिंचाई विकास कार्यक्रमों को प्राथमिकता दी गई है। पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा जिले में सिंचाई सुविधाएँ बढ़ाई गई जैसे किसानों को कुएँ व नलकूपों के लिए बैंक द्वारा आर्थिक सुविधाएँ उपलब्ध कराना आदि प्रमुख है।

4.3 सिंचाई के साधन

नहरें (Canals)–नहरें भारत में सिंचाई का प्रमुख साधन है। भारत की कुल सिंचित भूमि का लगभग 39 प्रतिशत क्षेत्र नहरों द्वारा सींचा जाता है। अधिकांश नहरें उत्तर–पश्चिमी भारत के मैदानी भाग में है। इस भाग में अधिक नहरों के निम्नलिखित कारण है :

1) यहां पर बहने वाली नदियां हिमालय के हिमाच्छादित भागों में निकलती हैं। जिनमें वर्षभर जल प्रवाहित होता रहता है। अतः इन नदियों से निकली जाने वाली नहरों को पर्याप्त जलराशि प्राप्त होती रहती है और फसलों को आवश्यकतानुसार सींचा जाता है।
2) यहां की मिट्टी कोमल व मुलायम है जिससे नहरों को आसानी से खोदा जा सकता है।
3) यहां की मिट्टी बहुत ही उपजाऊ है परन्तु वर्षा की मात्रा कम है। अतः कृषि कार्य की सुचारू रूप से चलाने के लिए नहरों की आवश्यकता होती है।

मानचित्र सं. 4.1

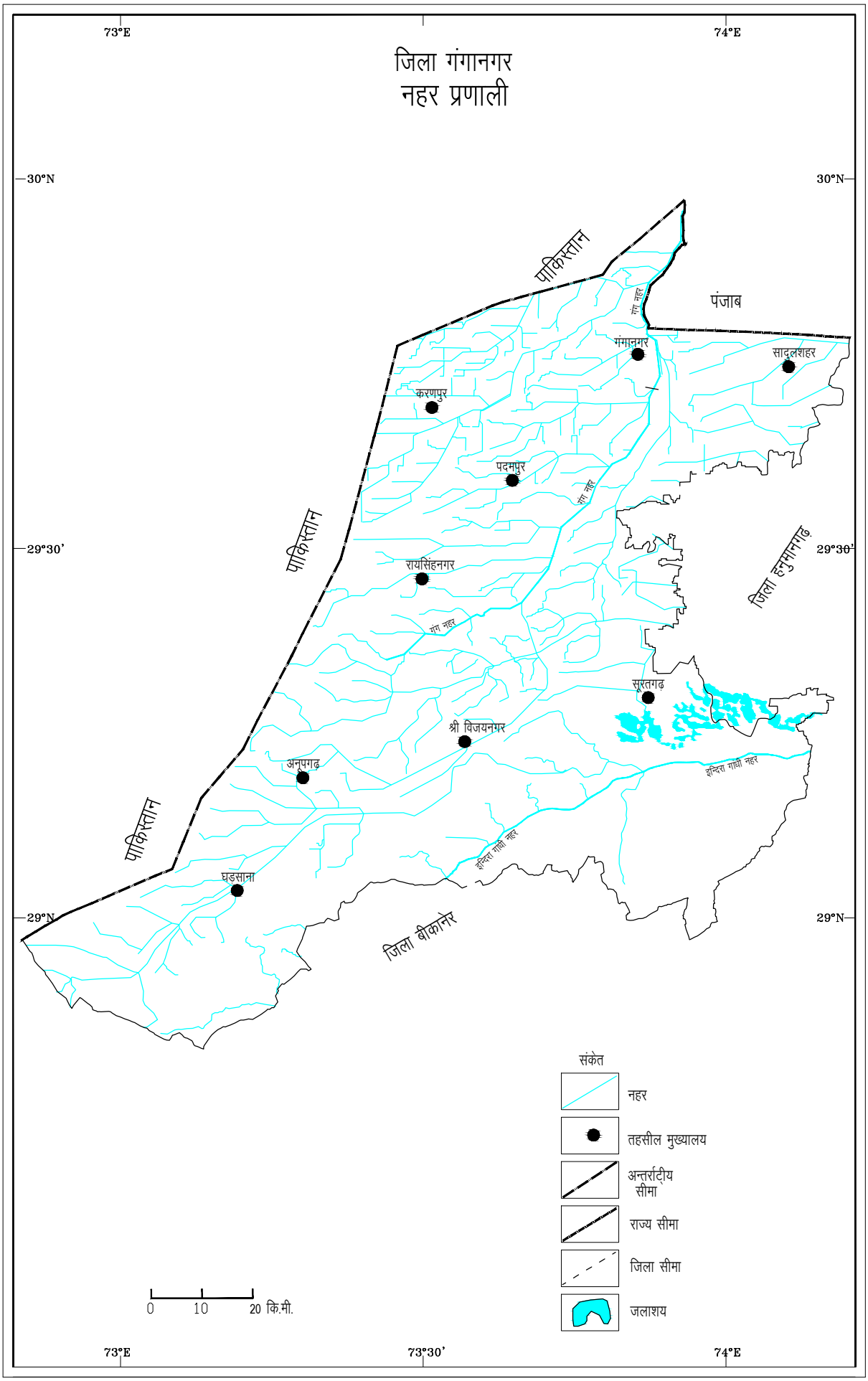
73°E
74°E
जिला गंगानगर
नहर प्रणाली
30°N
29°30'
29°N
पाकिस्तान
पंजाब
गंगानगर
सादुलशहर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
सूरतगढ़
श्री विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
जिला हनुमानगढ़
जिला बीकानेर
गंग नहर
इन्दिरा गांधी नहर
संकेत
नहर
तहसील मुख्यालय
अन्तर्राष्ट्रीय सीमा
राज्य सीमा
जिला सीमा
जलाशय
0
10
20 कि.मी.
73°30'

4) इस भाग में ढाल काफी मन्द है और नहरों के जल को ढाल के सहारे दूर–दूर तक ले जाया जा सकता है।

राजस्थान की नहरें

राजस्थान एक मरूस्थलीय प्रदेश है जहाँ वर्षा बहुत ही कम होती है। इस कारण यहाँ पर बड़ी नदियों का भी अभाव है। अतः राजस्थान की प्रमुख सिंचाई निकटवर्ती राज्यों की नदियों पर निर्भर करती है। प्रमुख नहरें निम्नलिखित हैं :

1. राजस्थान नहर–यह राजस्थान की बहुत बडी निर्माणाधीन परियोजना है जिसका बहुत–सा काम पूरा हो चुका है। अब इसका नाम इंदिरा गांधी नहर रखा गया है। यह विश्व की सबसे लम्बी नहर व्यवस्था है। यह नहर पंजाब से सतलज तथा व्यास नदियों के संगम पर निर्मित हरीके बाँध से निकाली गई है। पंजाब में इस नहर की लम्बाई 132 किमी. है। यहाँ इसका नाम राजस्थान फीडर है और यहाँ यह सिंचाई नहीं करती। राजस्थान में इसकी लम्बाई 470 किमी. होगी। इसके निर्माण का कार्य पूरा हो जाने पर यह श्रीगंगानगर, जोधपुर, बीकानेर, जैसलमेर, बाडमेर तथा कुछ अन्य जिलों की लगभग 2.6 लाभ हेक्टेयर भूमि को सींचेगी। सिंचाई के लिए बनाए गए नालों की लम्बाई 64 हजार किलामीटर होगी।

2. चम्बल योजना–यह राजस्थान तथा मध्यप्रदेश की संयुक्त योजना है। इसके अन्तर्गत चम्बल नदी पर **'गांधीसागर'** बांध बनाया गया है। इससे निकलने वाली नहरों द्वारा 4.5 लाख हेक्टेयर भूमि को सिंचाई की सुविधा प्राप्त होती है। यहाँ पर दूसरा बांध **'राणाप्रताप सागर'** है जो 1.2 लाख हेक्टेयर भूमि को सींचता है। तीसरे चरण में **'जवाहर सागर'** का निर्माण किया जाएगा

3. पार्वती परियोजना–धौलपुर से लगभग 50 किमी. दूर पार्वती नदी पर एक जलाशय का निर्माण किया गया है। इसका निर्माण कार्य 1961 में पूरा हो गया था। इससे निकलने वाली नहर द्वारा हजार हैक्टेयर भूमि को सिंचाई मिलती है।

4. गंगनहर–अध्ययन क्षेत्र में बीकानेर के महाराजा गंगासिंह द्वारा गंगनहर का निर्माण करवाया गया। गंग नहर 1927 के बाद से राजस्थान के गंगानगर जिले से होकर बीकानेर तक जाती है। जिसे राजस्थान एवं भारत सरकार द्वारा विभिन्न पंचायत समितियों में पक्की नहरों पहुँचाया गया। सम्पूर्ण गंगानगर जिले में नहरों द्वारा सिंचाई जारी है। 2006–2007 से 2013–14 के आंकड़ों का अध्ययन किया जाये तो तकरीबन 99 प्रतिशत क्षेत्र में नहरों द्वारा सिंचाई की जा रही है। (मानचित्र सख्यां 4.2)

उपर्युक्त परियोजनाओं के अतिरिक्त बूँदी के निकट गूढ़ा परियोजना, माधोपुर जिले में लालसोट के निकट मोरेल परियोजना, हिन्डौन के निकट जग्गर, परियोजना, कालीसिल नदी पर कालीसिल परियोजना, चित्तौड़गढ़ के 32 किमी. दक्षिण में गंभीर परियोजना तथा सुकड़ी नदी पर बाँकली परियोजना भी राजस्थान में सिंचाई कार्य करती है।

तालिका संख्या 4.1

गंगानगर जिले में साधनों के अनुसार विशुद्ध सिंचित क्षेत्रफल (हैक्टेयर में)

वर्ष / तहसील	कुऐं/नलकूप	तलाब	नहरे	अन्य	विशुद्ध सिंचित क्षेत्र
2006–07	1167	00	584946	00	586112
2007–08	1640	00	556017	00	557657
2008–09	3887	00	887249	197	891333
2009–10	842	00	526562	00	527404
2010–11	5371	00	572042	00	577413
2011–12	00	00	589355	00	590755

मानचित्र सं. 4.2

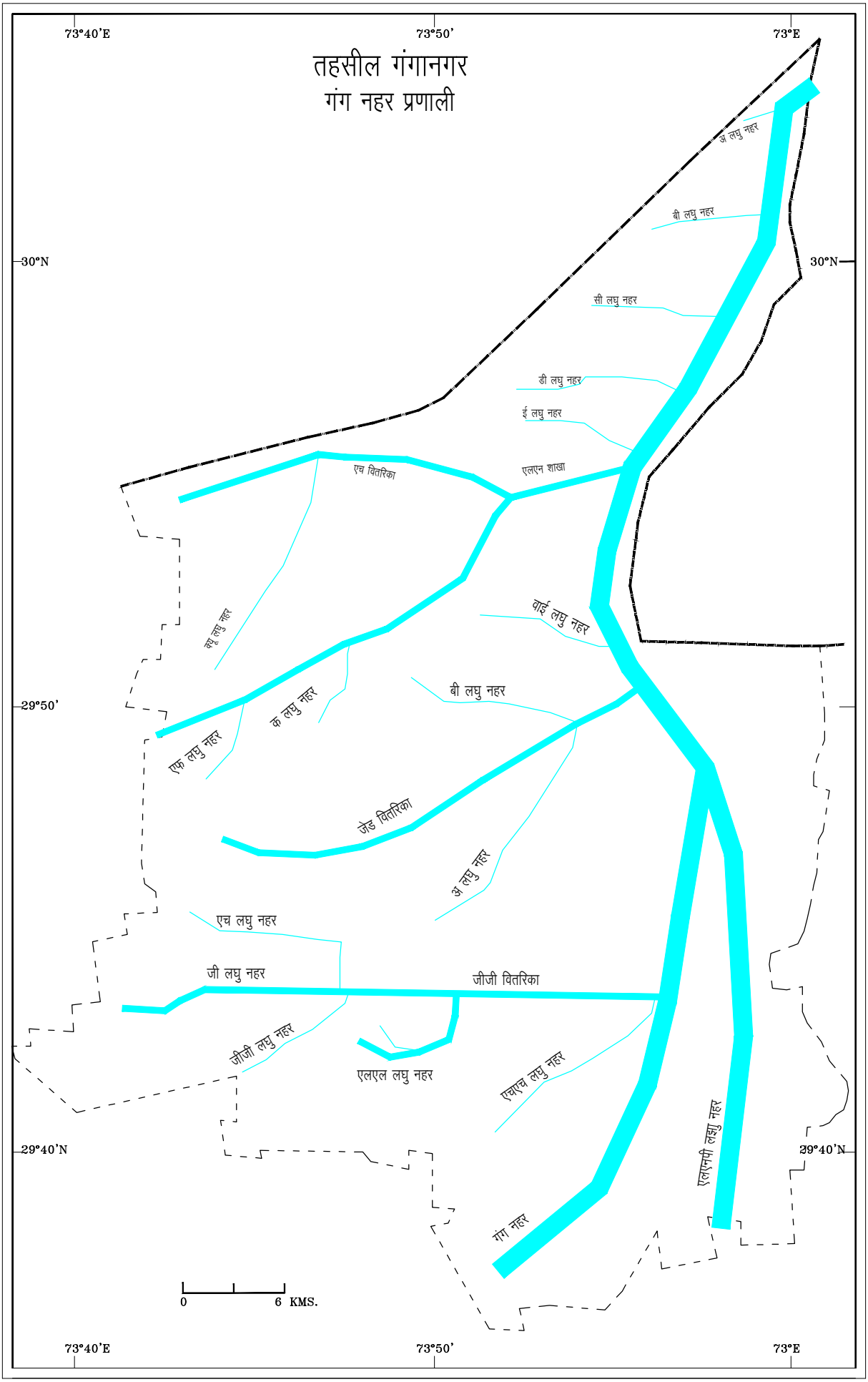
73°40'E
73°50'
73°E
तहसील गंगानगर
गंग नहर प्रणाली
अ लघु नहर
बी लघु नहर
30°N
सी लघु नहर
डी लघु नहर
ई लघु नहर
एच वितरिका
एलएन शाखा
वाई लघु नहर
यू लघु नहर
बी लघु नहर
29°50'
क लघु नहर
एफ लघु नहर
जेड वितरिका
अ लघु नहर
एच लघु नहर
जी लघु नहर
जीजी वितरिका
जीजी लघु नहर
एलएल लघु नहर
एचएच लघु नहर
29°40'N
एलएनी लघु नहर
गंग नहर
0
6 KMS.

2012—13	00	00	600893	00	600893
2013—14	6566	00	596293	00	602859
तहसील (2013–14)					
वर्ष/तहसील	**कुऐं/नलकूप**	**तलाब**	**नहरें**	**अन्य**	**विशुद्ध सिंचित क्षेत्र**
श्रीगंगानगर	00 (0.00%)	00	80857 (100%)	00	80857 (100%)
करणपुर	00 (0.00%)	00	62829 (100%)	00	62829 (100%)
पदमपुर	517 (0.80%)	00	63499 (99.19%)	00	64016 (99.19%)
रायसिंहनगर	00 (0.00%)	00	86169 (100%)	00	86169 (100%)
अनूपगढ़	00 (0.00%)	00	73883 (100%)	00	73883 (100%)
सूरतगढ़	6049 (7.85%)	00	70982 (92.14%)	00	77031 (92.14%)
सादुलशहर	00 (0.00%)	00	43379 (100%)	00	43379 (100%)
विजयनगर	00 (0.00%)	00	49993 (100%)	00	49993 (100%)
घड़साना	00 (0.00%)	00	64702 (100%)	00	64702 (100%)
योग	6566 (1.089%)	00	596293 (98.91%)	00	602859 (98.91%)

स्रोतः कार्यालय जिला कलेक्टर (भू.अ.) गंगानगर

गंगानगर जिले में गंगनहर को जीवनदायनी नहर कहा जा सकता है। गंगानगर जिले की श्रीगंगानगर, पदमपुर, करणपुर, रायसिंहनगर, विजयनगर,

अनूपगढ़, सार्दुलशहर एवं घड़साना तहसीलों में नहरी विकास उच्च होने से शुद्ध सिंचित क्षेत्र 100 प्रतिशत है। जबकि गंगानगर जिले के पश्चिमी क्षेत्र की सूरतगढ़ तहसील में इसका केवल 95 प्रतिशत से कम शुद्ध सिंचित क्षेत्र है।

उपरोक्त मानचित्र 4.3 एवं तालिका संख्या 4.1 से स्पष्ट है कि क्षेत्र में वर्ष 2006–07 में कुल सिंचित क्षेत्र के 99.81 प्रतिशत क्षेत्र में नहरों द्वारा सिंचाई हुई एवं 0.19 प्रतिशत क्षेत्र कुएँ एवं नलकूप द्वारा सिंचाई हुई एवं तालाब एवं अन्य साधनों से कुल सिंचित क्षेत्रफल में सिंचाई नगण्य रही। जबकि वर्ष 2007–08 में कुल सिंचित क्षेत्र के 99.70 प्रतिशत क्षेत्र में नहरों द्वारा सिंचाई हुई एवं 0.30 प्रतिशत क्षेत्र कुएँ एवं ट्यूबवेल द्वारा सिंचाई हुई जबकि 2008–09 में कुल सिंचित क्षेत्र के 99.70 प्रतिशत क्षेत्र में नहरों द्वारा सिंचाई हुई एवं 0.30 प्रतिशत क्षेत्र कुएँ एवं नलकूपों द्वारा सिंचाई हुई, 2009–10 में कुल सिंचित क्षेत्र के 99.84 प्रतिशत क्षेत्र में नहरों द्वारा सिंचाई हुई एवं 0.16 प्रतिशत क्षेत्र कुएँ एवं ट्यूबवेल द्वारा सिंचाई हुई, 2010–11 में कुल सिंचित क्षेत्र के 99.07 प्रतिशत क्षेत्र में नहरों द्वारा सिंचाई हुई एवं 0.93 प्रतिशत क्षेत्र कुएँ एवं ट्यूबवेल द्वारा सिंचाई हुई, 2011–12 में कुल सिंचित क्षेत्र के 99.54 प्रतिशत क्षेत्र में नहरों द्वारा सिंचाई हुई एवं 0.44 प्रतिशत क्षेत्र कुएँ एवं ट्यूबवेल द्वारा सिंचाई हुई जबकि 2012–13 में कुल सिंचित क्षेत्र के 100.00 प्रतिशत क्षेत्र में नहरों द्वारा सिंचाई हुई तथा कुएँ एवं ट्यूबवेल, तालाब एवं अन्य साधनों से कुल सिंचित क्षेत्रफल में सिंचाई नगण्य रही। 2013–14 में कुल सिंचित क्षेत्र के 99.09 प्रतिशत क्षेत्र में नहरों द्वारा सिंचाई हुई एवं 0.91 प्रतिशत क्षेत्र कुएँ एवं ट्यूबवेल द्वारा सिंचाई हुई एवं तालाब एवं अन्य साधनों से कुल सिंचित क्षेत्रफल में सिंचाई नगण्य रही। (मानचित्र संख्या 4.3)

मानचित्र सं. 4.3

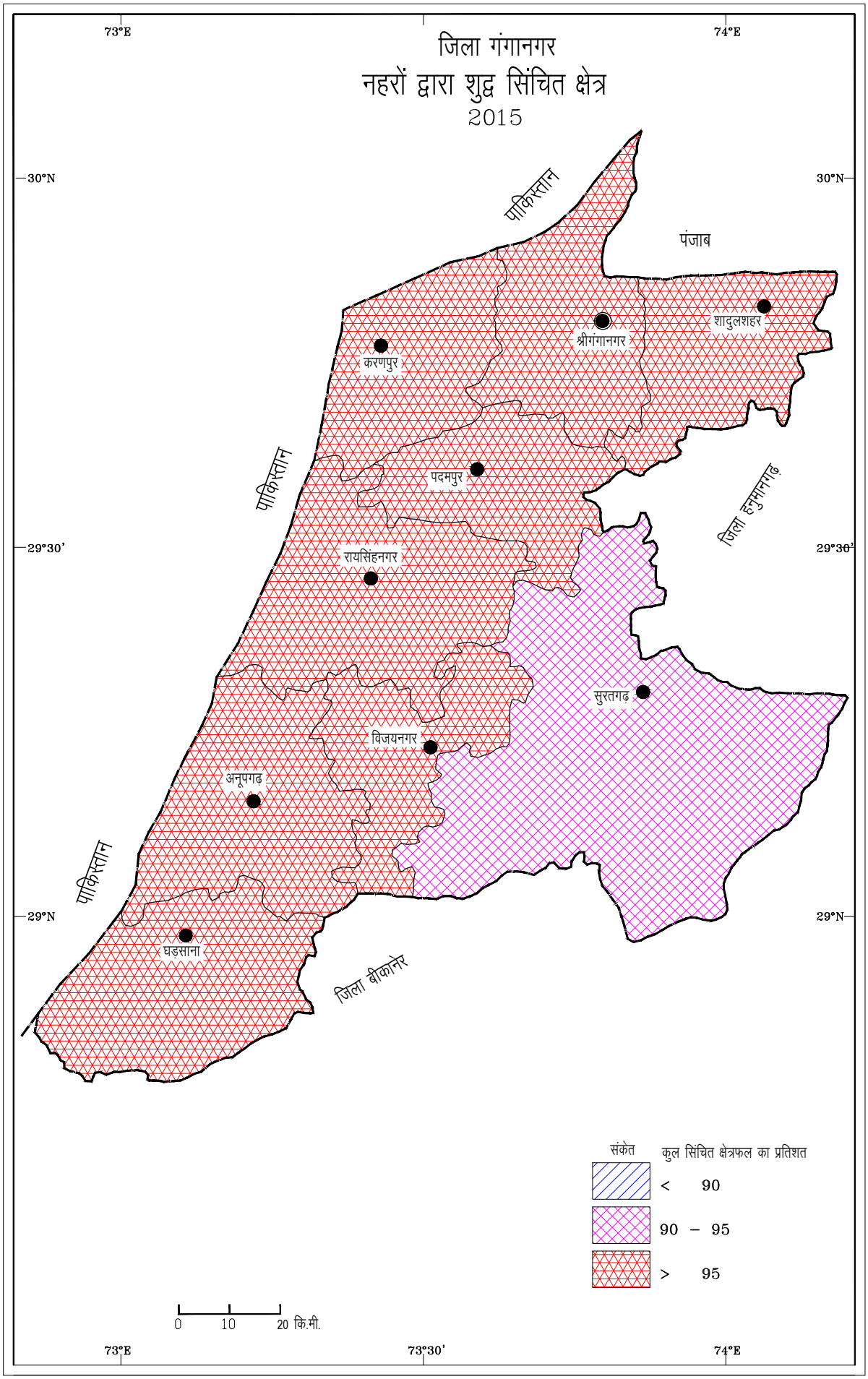
73°E
74°E
जिला गंगानगर
नहरों द्वारा शुद्ध सिंचित क्षेत्र
2015
30°N
29°30'
29°N
पाकिस्तान
पंजाब
शादुलशहर
श्रीगंगानगर
करणपुर
पदमपुर
जिला हनुमानगढ़
रायसिंहनगर
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
कुल सिंचित क्षेत्रफल का प्रतिशत
< 90
90 – 95
> 95
0 10 20 कि.मी.
73°30'

कुएँ तथा नलकूप

भू–पृष्ठ के नीचे अपार जलराशि संचित है जिसका प्रयोग कुओं तथा नलकूपों की सहायता से किया जाता है। हमारे देश में प्राचीन काल से ही सिंचाई तथा पेयजल प्राप्त करने के लिए कुओं का प्रयोग किया जाता है धरातल पर भूमिगत जल स्तर तक एक छिद्र खोदकर जल प्राप्त किया जाता है। देश के विभिन्न भागों में भूमिगत जल मात्रा तथा उसका उपयोग भिन्न–भिन्न है। देश के अधिकांश भागों में पर्याप्त भूमिगत जल उपलब्ध है जिसका प्रयोग कुओं तथा नलकूपों द्वारा सिंचाई के लिए किया जा सकता है। केवल पंजाब तथा हरियाणा ने ही अपने भूमिगत जल–संसाधनों का अधिक उपयोग किया है। आज कुएँ तथा नलकूप मिलकर भारत की लगभग 46 प्रतिशत भूमि को सिंचाई प्रदान करते हैं। (मानचित्र 4.4)

कुएँ – कुओं से सिंचाई करना एक सस्ता एवं सुगम कार्य है। कुएँ दो प्रकार के होते हैं – (1) कच्चे, (2) पक्के। कच्चा कुआँ अस्थायी होता है और उन प्रदेशों में खोदा जाता है जहाँ भौम जलस्तर 3 से 5 मीटर की गहराई पर होता है। यह आसानी से खोदा जाता है परन्तु वर्षा ऋतु में गिर जाता है। पक्के कुएँ अधिक गहराई तक खोदे जाते हैं। ये पक्की ईंटों से चारों ओर से मजबूती से बाँध दिए जाते हैं। इनके निर्माण में अधिक श्रम तथा धन की आवश्यकता होती है। परन्तु लाभ भी अधिक होता है। इसलिए अधिकतर किसान पक्के कुएँ ही पसन्द करते हैं। कुओं में से पानी ढेकली, पुर या चरस तथा रहट की सहायता से निकाला जाता है।

सन् 1950–51 से भारत में लगभग 50 लाख कुएँ थे। उनकी संख्या बढ़कर अब 150 लाख हो गई है। कुएँ प्रायः उन क्षेत्रों में खोदे जाते हैं जहाँ पर्याप्त भूमिगत जल उपलब्ध हो और मिट्टी कोमल हो ताकि कुआँ खोदने में अधिक कठिनाई न आए। इस समय देश के कुल सिंचित क्षेत्र का एक–तिहाई

मानचित्र सं. 4.4

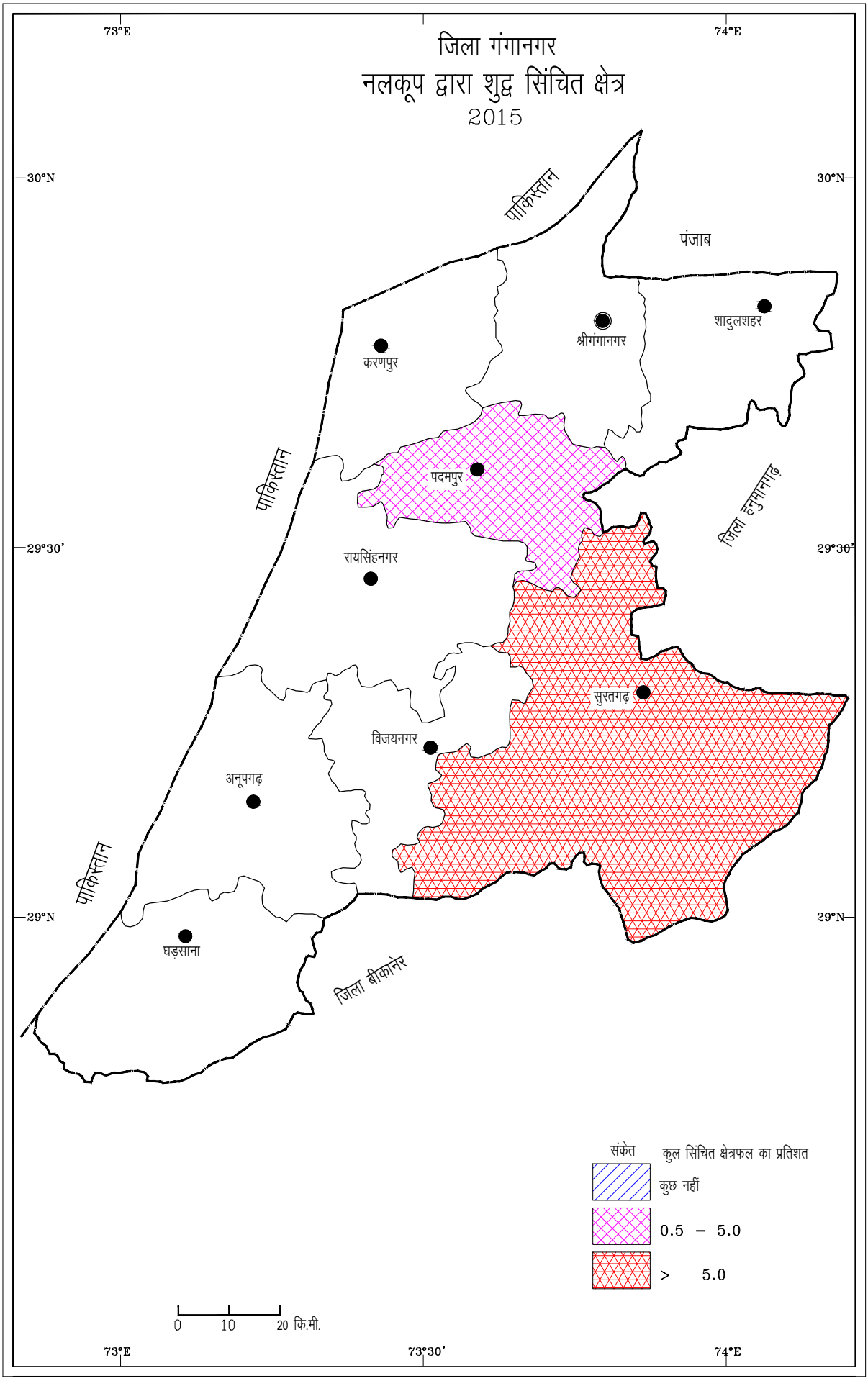
जिला गंगानगर
नलकूप द्वारा शुद्ध सिंचित क्षेत्र
2015
73°E
74°E
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
शादुलशहर
श्रीगंगानगर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
जिला हनुमानगढ़
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
कुल सिंचित क्षेत्रफल का प्रतिशत
कुछ नहीं
0.5 – 5.0
> 5.0
0 10 20 कि.मी.

भाग कुओं से सींचा जाता है। नवीनतम आँकडों के अनुसार गुजरात के कुल सिंचित क्षेत्र का 78 प्रतिशत भाग कुओं द्वारा सींचा जाता है। इसी प्रकार राजस्थान की 62 प्रतिशत, पंजाब व उत्तरप्रदेश की 60 प्रतिशत तथा महाराष्ट्र की 56 प्रतिशत सिंचित भूमि कुओं से ही सींची जाती है। लगभग 50 प्रतिशत कुएँ अकेले उत्तरप्रदेश में है। शेष कुएँ पंजाब, बिहार, राजस्थान, महाराष्ट्र, गुजरात, तमिलनाडु, आंध्रप्रदेश तथा हरियाणा में है।

नलकूप

यह एक साधारण कुएँ जैसा ही होता है। अंतर केवल इतना ही है कि नलकूप से जल अधिक गहराई से नल द्वारा निकाला जाता है। जल प्राप्त करने के लिए बिजली की मोटर, डीजल के इंजन तथा अन्य किसी शक्ति स्रोत का प्रयोग किया जाता है।

नलकूप द्वारा सफल सिंचाई के लिए निम्नलिखित दशाएँ आवश्यक है :

1) भूमि के नीचे पर्याप्त भूमिगत जल होना चाहिए।
2) भूमिगत जल का तल 150 मीटर से अधिक गहरा नहीं होना चाहिए।
3) सस्ती चालक शक्ति उपलब्ध हो ताकि सिंचाई पर व्यय अधिक न हो।
4) मिट्टी पर्याप्त उपजाऊ होनी चाहिए ताकि नलकूप के निर्माण तथा चालक शक्ति पर किया गया व्यय अधिक उत्पादन से पूरा हो सके।

भारत में नलकूपों का प्रयोग सबसे पहले 1930 में गंगा के मैदान में किया गया। 1951 तक भारत में केवल 2500 नलकूप थे। केन्द्र तथा राज्य सरकारों द्वारा किसानों को कर्जे के रूप में नलकूप लगाने के लिए प्रोत्साहन दिया गया जिससे क्रांति को बल मिला। 1960–61 में बिजली से चलने वाले नलकूपों की संख्या केवल दो लाख थी जो 1979–80 में बढकर 39.5 लाख हो गई। इसी अवधि में डीजल से चलने वाले नलकूपों की संख्या 2.3 लाख से बढ़कर 26.5 लाख हो गई।

नलकूपों के वितरण में बहुत अधिक परिवर्तन आया है। सन् 1977 में भारत के 90 प्रतिशत नलकूप पंजाब, हरियाणा, उत्तरप्रदेश, बिहार तथा पश्चिमी बंगाल में थे।

इस समय नलकूपों/कूपों द्वारा सबसे अधिक सिंचाई उत्तर प्रदेश में होती है। 2003–04 में इस राज्य में 9371 हजार हैक्टेयर भूमि कूपों/नलकूपों द्वारा सींची गई जो भारत की कुल नलकूपों/कूपों द्वारा सिंचित भूमि का एक–चौथाई भाग से भी अधिक है। राजस्थान (10.82 प्रतिशत), मध्यप्रदेश (10. 61 प्रतिशत), पंजाब (8.73 प्रतिशत), गुजरात (7.49 प्रतिशत), बिहार (6.39 प्रतिशत), महाराष्ट्र (5.40 प्रतिशत) अन्य राज्य है।

कुओं व नलकूपों द्वारा सिंचाई के गुण : कुओं व नलकूपों द्वारा सिंचाई के निम्नलिखित गुण हैं :

1. कुओं के निर्माण में नहरों तथा तालाबों की अपेक्षा बहुत कम व्यय होता है। अतः भारत के निर्धन कृषक के लिए कुआँ सस्ता, तथा उपयुक्त साधन है।
2. कुओं के जल में अनेक रासायनिक तत्त्व, जैसे नाइट्रेट, क्लोराइट, सल्फेट व सोड़ा आदि घुल रहते हैं। जब ये तत्त्व कुएँ के जल के साथ खेत में जाते हैं तो मिट्टी की उपजाऊ शक्ति बढ़ जाती है जिससे कृषि के उत्पादन में वृद्धि होती है।
3. कुआँ सिंचाई का एक स्वतंत्र साधन है जबकि नहर द्वारा सिंचाई के लिए सरकार पर निर्भर रहना पड़ता है।
4. नहरों द्वारा सिंचाई करने से रेह उत्पन्न हो जाती है और भूमि ऊसर हो जाती है। कुओं द्वारा सिंचाई करने से यह भय नहीं रहता।
5. नहरों का जल अधिक दूर तक नहीं पहुँचाया जा सकता जबकि कुआँ कहीं भी खोदा जा सकता है।

6. नहरों द्वारा सिंचाई करने के लिए कृषक को बार–बार कर देना पड़ता है जबकि कुआँ खोदने के लिए एक ही बार व्यय होता है।

कुओं व नलकूपों द्वारा सिंचाई के अवगुण : यद्यपि कुओं व नलकूपों द्वारा सिंचाई के कई गुण हैं तथापि ये पूर्णतः दोष रहित नहीं है। इसके निम्नलिखित अवगुण है :

1. कुओं द्वारा केवल सीमित क्षेत्र को ही सिंचाईं प्रदान की जा सकती है। सामान्यतः एक कच्चा कुआँ एक से डेढ़ हेक्टेयर तथा पक्का कुआँ 6 से 8 हेक्टेयर भूमि को ही सींच सकता है।
2. लगातार अधिक जल निकलने से कुआँ सूख जाता है और सिंचाई के लिए उपयुक्त नहीं रहता। पंजाब, हरियाणा तथा उत्तरप्रदेश के कई इलाकों में कुओं से जल प्रकृति द्वारा जल आपूर्ति से अधिक निकाला जाता है जिससे इन कुओं में जल स्तर बहुत नीचे चला गया है।
3. कुओं व नलकूपों द्वारा सिंचाई करने में व्यय तथा परिश्रम दोनों ही अधिक होते हैं। अतः यह सिंचाई केवल उन्हीं फसलों के लिए उपयुक्त है जिनसे किसान को अधिक आर्थिक लाभ हो, जैसे–गेहूँ, कपास, गन्ना आदि।
4. सूखे की स्थिति में भूमिगत जल नीचा हो जाता है और कई कुएँ सूख जाते है। इस प्रकार जब जल की सबसे अधिक आवश्यकता होती है तब इन कुओं से जल प्राप्त नहीं होता।
5. कुछ वर्षों के बाद पक्के कुएँ भी अपक्षय के कारण नष्ट हो जाते है।
6. नलकूप दूर–दूर से भूमिगत जल खींच लेते हैं जिससे भूमि के सूख कर अनुपजाऊ हो जाने का भय रहता है।
7. बहुत–से इलाकों में भूमिगत जल खारा होता है। वहाँ पर खोदे हुए कुओं का जल सिंचाई तथा पीने के लिए उपयुक्त नहीं होता। पश्चिमी राजस्थान तथा पंजाब व हरियाणा के दक्षिण–पश्चिमी भागों में भूमिगत

जल प्रायः खारा होता है और इन क्षेत्रों में खोदे गए कुओं का जल प्रयोग नहीं किया जा सकता।

मानचित्र संख्या एवं तालिका से स्पष्ट होता है कि गंगानगर जिले में कुएँ एवं नलकूपों द्वारा शुद्ध सिंचित क्षेत्र कुल 0.83 प्रतिशत है। जिसमें सर्वाधिक कुएँ एवं नलकूपों से शुद्ध सिंचाई सूरतगढ़ तहसील में 5 प्रतिशत से अधिक पायी जाती है जबकि करणपुर, श्रीगंगानगर, सार्दुलशहर, रायसिंहनगर, विजयनगर, अनूपगढ़, घड़साना तहसीलों में कुएँ एवं नलकूपों से सिंचाई शून्य या नगण्य है क्योंकि इन क्षेत्रों में नहरी प्रणाली का उचित विकास हुआ है।

तालाबों द्वारा सिंचाई

भूमि का वह निम्न भाग जिसमें वर्षा का पानी भर जाए तालाब कहलाता है। तालाब दो प्रकार के होते हैं – (1) प्राकृतिक (2) कृत्रिम। प्राकृतिक तालाब वे निचले स्थान हैं जो प्राकृतिक रूप से ही चारों ओर से ऊँचे स्थानों द्वारा घिरे हुए हैं। कृत्रिम तालाबों का निर्माण गड्ढे खोदकर तथा बांध बनाकर किया जाता है।

भारत के अधिकांश तालाब दक्षिण के पठारी भाग में ही पाए जाते हैं। इसका कारण यह है कि यहाँ पर प्राचीन कठोर चट्टानों से निर्मित ऊबड़–खाबड़ तल है जहां नहरें अथवा कुएँ खोदना असम्भव हैं। कठोर होने के कारण अधिकांश चट्टानें अप्रवेश्य हैं जिनमें जल अवशोषण करने की क्षमता नहीं होती। इस प्रकार इन इलाकों में भूमिगत जल का अभाव रहता है। ऐसी परिस्थिति में वर्षा का जल निम्न क्षेत्र में एकत्रित हुए इस जल का प्रयोग सिंचाई के लिए किया जाता है। यहाँ की नदियाँ शुष्क ऋतु में सूख जाती हैं जिनसे नहरें नहीं निकाली जा सकती। इसके अतिरिक्त यहाँ की नदियों की घाटियाँ बहुत पुरानी हैं और अपने आस–पास के इलाकों से काफी नीची हैं। अतः इनका जल नहरों द्वारा खेतों तक नहीं ले जाया जा सकता।

4.4 फसलों के अनुसार सिंचाई

जिले में खरीफ मौसम में फसल उत्पादन लगभग वर्षाश्रित है। खरीफ मौसम में चावल, तिलहन, कपास हेतु पर्याप्त वर्षा न होने पर सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। रबी की फसल पूर्णतया सिंचाई पर ही निर्भर है। रबी मौसम में खाद्यान्न एवं तिलहन दालें सभी को कम या अधिक मात्रा में सिंचाई अथवा पानी की आवश्यकता होती है। जिले के सिंचित क्षेत्र में पैदा की जाने वाली फसलों में खाद्यान्न फसलों की प्रधानता है। लेकिन अब धीरे–धीरे कृषि का व्यवसायीकरण होने से सिंचित क्षेत्रफल में खाद्यान्न फसलों का क्षेत्रफल कम होता जा रहा है और उसका स्थान तिलहन एवं नगदी–फसल लेती जा रही है। सिंचाई सुविधा सम्पूर्ण क्षेत्रफल को उपलब्ध न होने के कारण सिंचाई सुविधा वाले सीमित क्षेत्रफल में ही रबी की फसलें व खरीफ में चावल, कपास, तिलहन पैदा किये जाते हैं। वर्ष 1991–92 में रबी की फसलों में प्रथम क्रम की फसल सरसों थी जो कि सिंचाई के बिना भी हो सकती है। लेकिन अधिक उत्पादन की लालसा, पाले की रक्षा, आधुनिक बीज और रासायनिक खादों के प्रयोग के कारण उसमें भी अब सिंचाई की आवश्यकता होती है।

तालिका संख्या 4.2

प्रमुख फसलों में जल आवश्यकता (मि.मि. में)

रबी फसल	शुद्ध जल की आवश्यकता	खरीफ फसल	शुद्ध जल की आवश्यकता
गेहूँ	500	बाजरा	450
जौ	450	मक्का	700
चना	300	ज्वार	600
सरसों	400	सोयाबीन	600
अलसी	300	मूँगफली	600

स्रोतः भू–राजस्व मण्डल, अजमेर

तालिका से स्पष्ट है कि रबी फसलों की अपेक्षा खरीफ फसलों में जल की आवश्यकता अधिक पड़ती है। हमें उन फसलों को प्राथमिकता देनी चाहिए जो कि कम जल से अपना जीवन चक्र पूर्ण कर अपेक्षित उत्पादन देती है जैसे–सरसों, चना तथा अलसी आदि रबी में तथा खरीफ में बाजरा, ज्वार आदि। खरीफ में सामान्य रूप से जल उपलब्ध होने पर रबी में गेहूँ, जौ तथा सरसों व खरीफ की खेती भी की जा सकती है। जिले में सिंचित क्षेत्र में प्रतिवर्ष वृद्धि हो रही है और अनाज की फसलों की अपेक्षा तिलहन का उत्पादन भी बढ़ता जा रहा है। क्योंकि तिलहन विशेषकर सरसों की फसल का कम पानी से अच्छा उत्पादन होता है। इसलिए जिले में धान्य फसलों का स्थान तिलहन फसलों ने ले लिया है।

4.5 शुद्ध सिंचित क्षेत्र

गंगानगर जिले में जल संसाधनों की पर्याप्त उपलब्धता है जिससे कृषि क्षेत्र के 90 प्रतिशत भाग पर सिंचाई की जा सकती है तथा वर्ष में कई फसलें उत्पादित की जा सकती है। इन संसाधनों का उपयोग धीरे–धीरे बढ़ रहा है, जिसके फलस्वरूप देश के सिंचित क्षेत्र में उत्तरोत्तर वृद्धि हो रही है।

गंगानगर जिले का 2014–15 में कुल भौगोलिक क्षेत्र में शुद्ध सिंचित क्षेत्र 55.14 प्रतिशत है। जिले की श्रीगंगानगर तहसील में सर्वाधिक 98.34 प्रतिशत शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल है जबकि सूरतगढ़ तहसील में न्यूनतम 46.66 प्रतिशत है। करणपुर, सार्दुलशहर, पदमपुर, रायसिंहनगर, विजयनगर, अनूपगढ़ व घड़साना तहसीलों में 50 से 95 प्रतिशत के मध्य शुद्ध सिंचित क्षेत्र आता है। शुद्ध सिंचित क्षेत्र ज्ञात करने हेतु निम्न सूत्र का प्रयोग किया है–

$$\text{शुद्ध सिंचित क्षेत्र} = \frac{\text{वास्तविक सिंचित क्षेत्र}}{\text{वास्तविक बोया गया क्षेत्र}} \times 100$$

गंगानगर जिले का कुल वास्तविक सिंचित क्षेत्र का प्रतिशत 71.84 है। गंगानगर जिले की श्रीगंगानगर एवं सार्दुलशहर तहसील में सर्वाधिक सिंचित क्षेत्र 95 प्रतिशत से अधिक है जबकि करणपुर, पदमपुर अनूपगढ़, विजयनगर, घड़साना तहसीलों में शुद्ध सिंचित क्षेत्र का प्रतिशत 80 से 95 प्रतिशत तक है। तथा रायसिंहनगर, सूरतगढ़, सार्दुलशहर तहसील में शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल का प्रतिशत 50 प्रतिशत से कम है। (मानचित्र 4.5)

4.6 शुद्ध सिंचाई

शुद्ध सिंचाई कृषि प्रारूप एवं विकास के स्तर को मापने का प्रमुख मापक है क्योंकि आज कृषि पारिस्थितिकी में हरित क्रांति के आगमन के कारण पानी की अधिक आवश्यकता होती है यदि हरित क्रांति के आदानों का प्रयोग नहीं किया जाये तो उत्पादन कम हो जाता है। अतः सिंचाई के माध्यम से कृषि उत्पादकता स्तर प्रभावित होता है। प्रस्तुत अध्ययन में सकल सिंचाई से तात्पर्य कुल काश्त भूमि क्षेत्रफल में सिंचित क्षेत्रफल का अनुपात ज्ञात करना है। सिंचाई गहनता ज्ञात करने हेतु निम्न सूत्र का प्रयोग किया है–

$$\text{सकल सिंचाई} \quad \frac{\text{कुल सिंचित भूमि का क्षेत्र}}{\text{कुल काश्त भूमि का क्षेत्र}} \times 100$$

इससे प्राप्त परिणामों से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि क्षेत्र में कुल काश्त क्षेत्रफल में कितने प्रतिशत भाग पर अभी और सिंचाई के विकास की आवश्यकता है। अर्थात् कुल काश्त क्षेत्र की तुलना में क्षेत्र में उपलब्ध सिंचाई के साधन पर्याप्त है अथवा कम है। सिंचाई के साधनों की उपलब्धता होने पर सिंचाई क्षेत्र के विकास एवं वृद्धि की योजना बनाई जा सकती है। यदि यह अनुपात 100 आता है तो सिद्ध होता है कि किसी क्षेत्र में जितना काश्त क्षेत्रफल है वह सभी सिंचित है और 100 से कम निम्न सिंचित सघनता को बताता है। यह काश्त क्षेत्रफल में से सिंचित क्षेत्रफल के अनुपात को व्यक्त

करता है। सिंचाई गहनता का अध्ययन करने से प्रतीत होता है कि जिला स्तर सकल सिंचाई वर्ष 2009–10 में 78.11 प्रतिशत थी तथा वर्ष 2013–14 में 76.75 प्रतिशत हो गयी। इस प्रकार पिछले पाँच वर्षों में इसमें 1.36 प्रतिशत की कमी दर्ज की गयी है जो कि वास्तविक बोये गये क्षेत्रफल की वृद्धि को दर्शाता है।

तालिका संख्या 4.3

गंगानगर जिले में सकल सिंचाई (प्रतिशत में)

वर्ष	**वास्तविक बोया गया क्षेत्र**	**वास्तविक सिंचित क्षेत्रफल**	**सकल सिंचित क्षेत्र (प्रतिशत में)**
2009–10	675175	527404	78.11
2010–11	769860	577413	75.00
2011–12	785782	590755	75.18
2012–13	773854	600893	77.64
2013–14	785440	602859	76.75
योग	**3790111**	**2899324**	**76.50**

स्रोतः भू–राजस्व मण्डल, अजमेर

उपर्युक्त तालिका के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि अध्ययन क्षेत्र में 2009–10 में सकल सिंचाई का प्रतिशत 78.11 प्रतिशत रहा है जो कि सर्वाधिक प्रतिशत है। इसी प्रकार 2010–11 में 75.00 प्रतिशत, 2011–12 में 75.18 प्रतिशत 2012–13 में 77.64 प्रतिशत एवं 2013–14 में 76.75 प्रतिशत रहा है। औसतन सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में पिछले पाँच वर्ष में सकल सिंचाई का प्रतिशत 76.50 प्रतिशत रहा है।

4.7 सिंचाई सुविधा

गंगानगर जिले में तीन नहरी प्रणालियों से सिंचाई सुविधा सृजित की गई है और कुछ क्षेत्रों में कुएं और ट्यूबवैल से भी सिंचाई की जाती है। जिले की कृषि भूमि और सिंचाई की जाने वाली भूमि का विशुद्ध ओर कुल क्षेत्र का आंकलन करने से यह स्पष्ट होता है कि विशुद्ध और कुल सिंचाई क्षेत्र का अन्तर काफी कम है जो यहां की स्थानीय समस्याओं के कारण है। जिले की वर्षवार कृषि भूमि विशुद्ध व कुल सिंचित भूमि का विवरण तालिका संख्या 3.4 में दर्शाया गया है :–

तालिका संख्या 4.4

गंगानगर जिले में सिंचाई सुविधा का उपयोग

वर्ष/ तहसील	कुएँ/नलकूप	तालाब	नहरें	अन्य	विशुद्ध सिंचित क्षेत्र
1	2	3	4	5	6
2006–07	0.20	–	10.06	–	586112
2007–08	0.28	–	94.87	–	557657
2008–09	0.44	–	99.54	0.02	891333
2009–10	0.16	–	99.84	–	527404
2010–11	0.93	–	99.07	–	577413
2011–12	–	–	100.00	–	590755
2012–13	–	–	100.00	–	600893
2013–14	1.09	–	98.91	–	602859
तहसील (2013–14)					
श्रीगंगानगर	–	–	100%	–	80857

मानचित्र सं. 4.4

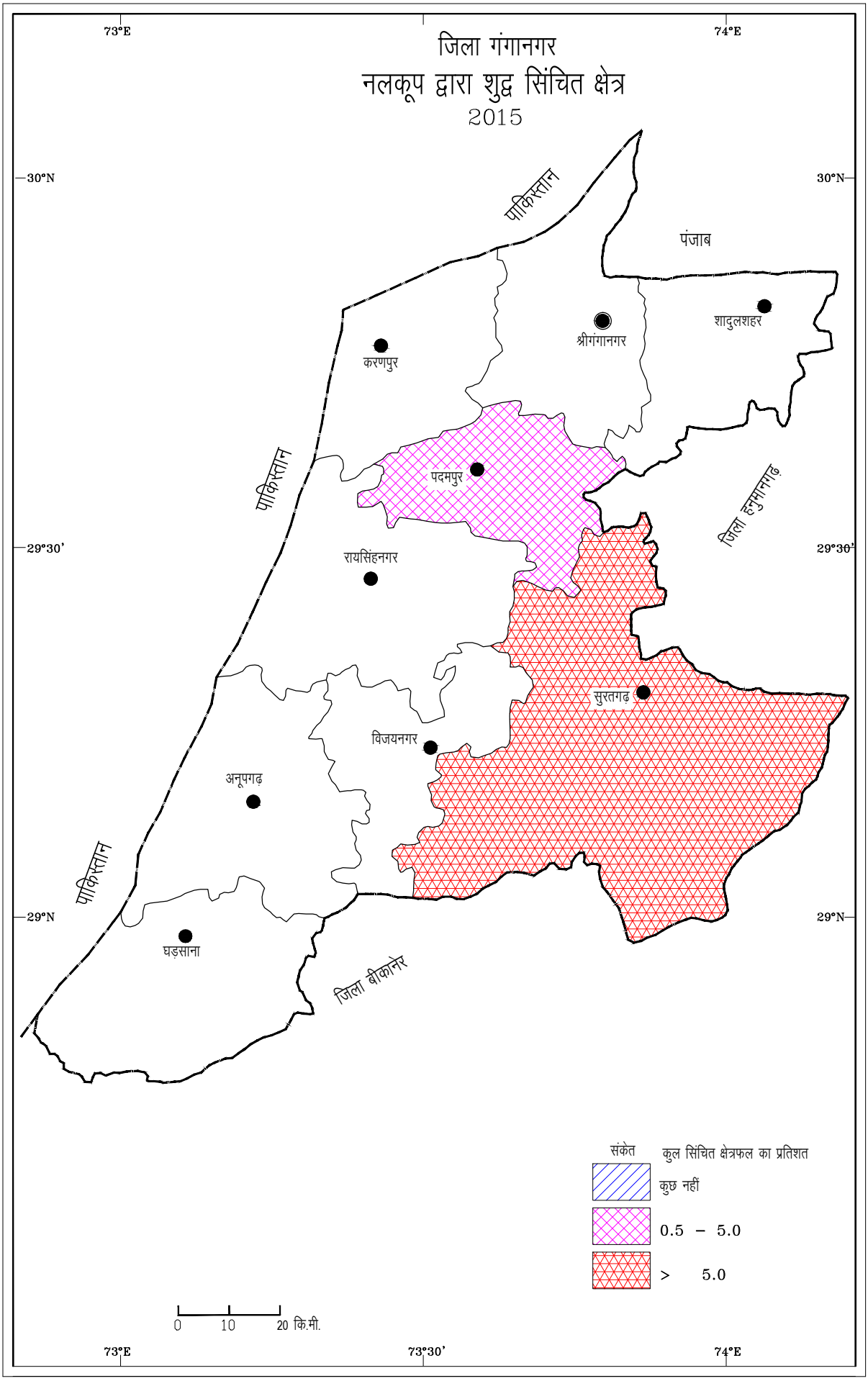
जिला गंगानगर
नलकूप द्वारा शुद्ध सिंचित क्षेत्र
2015
73°E
74°E
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
शादुलशहर
श्रीगंगानगर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
जिला हनुमानगढ़
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
कुल सिंचित क्षेत्रफल का प्रतिशत
कुछ नहीं
0.5 – 5.0
> 5.0
0 10 20 कि.मी.

					(81.97%)
करणपुर	–	–	100%	–	62829 (76.72%)
पदमपुर	0.81%	–	99.19%	–	64016 (75.94%)
रायसिहंनगर	–	–	100%	–	86169 (65.44%)
अनूपगढ़	–	–	100%	–	73883 (64.28%)
सूरतगढ़	7.85%	–	92.15%	–	77031 (27.27%)
सादुलशहर	–	–	100%	–	43379 (56.31%)
विजयनगर	–	–	100%	–	49993 (59.70%)
घड़साना	–	–	100%	–	64702 (46.66%)
योग					602859 (55.14%)

स्रोतः सिचाई विभाग, गंगानगर।

जिले में सृजित सिंचाई सुविधा के उपयोग से यह निष्कर्ष निकलता है कि जिस प्रकार प्रतिवर्ष वास्तविक बोया गया क्षेत्र मानसून से प्रभावित होता है, सिंचाई सुविधाओं पर भी इसका प्रभाव पड़ता है। वर्ष 2006–07 से 2010–11 के मध्य वास्तविक बोया गया क्षेत्र 703002 हेक्टेयर से 769860 हेक्टेयर के मध्य रहा है इसकी तुलना में सिंचाई का उपयोग अधिकतम 586112 हेक्टेयर से न्यूनतम 577413 हेक्टेयर के मध्य रहा है। वास्तविक बोया गया क्षेत्र व

विशुद्ध सिंचित क्षेत्र के बीच का अनुपात दर्शाता है कि वर्ष 2006–07 से वर्ष 2010–11 के मध्य विशुद्ध सिंचति क्षेत्र क्रमशः 70.56, 86.79, 83.23, 75.05, 91. 05, प्रतिशत रहा है जो काफी विविधता लिए हुए और अनिश्चितता की स्थिति दर्शाता है क्योंकि शुद्ध बोये गये क्षेत्र का सिंचित भाग अधिकतम 95.42 से 42. 81 प्रतिशत के मध्य रहा है।

जिले में कुएं और ट्यूबवैल से सिंचाई सीमित भाग में होती है जो विगत इस वर्षों में 1167 से 5371 हेक्टेयर मे मध्य रही है। इसका एक प्रमुख कारण यह है कि नहरों से सिंचित क्षेत्र को छोड़कर शेष भागों में भी कुएं या ट्यूबवैल से सिंचाई की जाती है। जिले में सिचाई सघनता का आंकलन करने से यह स्पष्ट है कि विगत पाँच वर्षों में विशुद्ध सिंचित क्षेत्र से सिंचाई की सघनता क्रमशः 1167, 1640, 3887, 842 तथा 5371 हैक्टेयर रही है जो दर्शाता है कि न्यूनतम 26.01 प्रतिशत व अधिकतम 69.45 प्रतिशत भाग में एक से अधिक बार खेती की गई है। तहसीलवार सिंचाई क्षमता व सघनता का विवरण निम्न प्रकार दर्शाया गया हैः–

1 तहसील गंगानगर में वास्तविक बोये गए क्षेत्र 769860 हेक्टेयर में से 95.62 प्रतिशत क्षेत्र में विशुद्ध सिंचाई की गई और सिंचाई की सघनता 154.64 प्रतिशत रही।

2 करनपुर तहसील में आलोच्य वर्ष में 61080 हेक्टेयर क्षेत्र की कृषि कार्य में लिया गया इसमें से 88.90 प्रतिशत क्षेत्र में सिचाई की गई तथा सिंचाई की सघनता 135.19 प्रतिशत रही।

3 पदमपुर तहसील के अन्तर्गत 61758 क्षेत्र में बुवाई की गई और इसमें से 73.04 प्रतिशत क्षेत्र को सिंचाई सुविधा उपलब्ध हुई। तहसील की सिंचाई सघनता 150.99 प्रतिशत रही।

4 रायसिंहनगर तहसील में आलोच्य वर्ष में 82392 हेक्टेयर में खेती की गई इसमें से 64.96 प्रतिशत क्षेत्र में सिंचाई की गई तथा सिंचाई की सघनता 150.95 प्रतिशत रही।

5 अनूपगढ़ तहसील में 71224 हेक्टेयर क्षेत्र कृषि कार्य में उपयोग किया गया जिसमें से 93.89 प्रतिशत क्षेत्र में सिचाई की गई। तहसील में सिचाई की सघनता 159.60 प्रतिशत रही।

6 सूरतगढ़ क्षेत्र में समीक्षा वर्ष में 74129 हेक्टेयर क्षेत्र में खेती की गई जिसमें से 44.92 प्रतिशत में सिंचाई संभव हो सकी। सिंचाई की सघनता 169.31 प्रतिशत रहा।

7 सादूलशहर तहसील में 41427 हेक्टेयर में खेती की गई जिसमें से 73.43 प्रतिशत क्षेत्र में सिंचाई की गई। सिंचाई की सघनता 158.40 प्रतिशत रही।

8 विजयनगर तहसील में वास्तविक बोया गया क्षेत्र 46746 हेक्टेयर था जिसमें से 90.78 प्रतिशत क्षेत्र में सिंचाई की गई तथा तहसील में सिंचाई की सघनता 166.65 प्रतिशत रही।

9 घड़साना तहसील में समीक्षा वर्ष में वास्तविक बोया गया क्षेत्र 58964 हेक्टेयर था जिसमें से विशुद्ध सिंचित क्षेत्र 92.42 प्रतिशत था तथा सिंचाई की सघनता 163.05 प्रतिशत अंकित की गई।

तालिका संख्या 4.5
गंगानगर जिले की तहसीलों में सिंचाई गहनता (प्रतिशत में)

वर्ष	2010–11			2013–14			प्रतिशत परिवर्तन
	वास्तविक बोया गया क्षेत्र	वास्तविक सिंचित क्षेत्रफल	सिंचाई गहनता (प्रतिशत में)	वास्तविक बोया गया क्षेत्र	वास्तविक सिंचित क्षेत्रफल	सिंचाई गहनता (प्रतिशत में)	
श्रीगंगानगर	82437	79963	96.99	82220	80857	98.34	1.35
करणपुर	68917	61080	88.62	68820	62829	91.29	2.67
पदमपुर	74866	61758	82.49	75464	64016	84.82	2.33
रायसिंहनगर	112682	82392	73.11	112583	86169	76.53	3.42
अनूपगढ़	75328	71224	94.55	80299	73883	92.00	–2.55
घड़साना	618115	58694	94.95	76798	64702	84.24	–10.71
विजयनगर	51941	46746	89.99	56274	49993	88.83	–1.16
सूरतगढ़	174672	74129	42.43	165078	77031	46.66	4.23
सादुलशहर	67202	41427	61.64	67903	43379	63.88	2.24
योग				**785438**	**522082**	**66.47**	

स्रोतः भू–राजस्व मण्डल, अजमेर

कृषि के पोषणीय विकास के लिए जरूरी है कि सिंचाई के साधनों का विकास किया जाये लेकिन उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है। जिले की 9 तहसीलों में पिछले 3 वर्षों में सिंचाई गहनता में वृद्धि हो रही है जिसमें सबसे कम वृद्धि श्रीगंगानगर तहसील में 1.35 प्रतिशत की वृद्धि हुई व घड़साना में 10.71 प्रतिशत की कमी हुई है। सर्वाधिक सिंचाई गहनता सूरतगढ़ तहसील में 4.23 प्रतिशत रहा जबकि रायसिंह नगर में 3.42 प्रतिशत, करणपुर में 2.67, पदमपुर में 2.33 प्रतिशत व सादुलशहर में 2.24 प्रतिशत रहा है। जिले में वर्ष 2013–14 में 76.75 प्रतिशत सिंचाई गहनता है अर्थात् जिले में सिंचाई सुविधाओं का विकास करना है जिले में सिंचाई सुविधाओं का अभाव ही है। यहाँ की सिंचाई नहरों द्वारा होती है, अन्य साधनों का यहाँ अभाव है।(मानचित्र सख्यां 4.6)

कुओं का जलस्तर भी प्रतिवर्ष घटता जा रहा है। इसलिए जरूरी है कि जिले में सिंचाई के अन्य साधनों जैसे नहरों आदि का विकास कर सिंचित क्षेत्र को बढ़ाया जा सकता है। अतः कृषि के पोषणीय विकास हेतु कुओं के अतिरिक्त दूसरे सिंचाई साधनों का विकास करना जरूरी है।

कृषि के पोषणीय विकास के लिए जरूरी है कि सिंचाई के साधनों का विकास किया जाये लेकिन उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि जिले में वर्ष 2013–14 में 98.22 प्रतिशत सिंचाई नहरों द्वारा होती है। जिसके कारण भूमिगत जलस्तर प्रतिदिन गिरता जा रहा है। ऊर्जा की अधिक खपत होती है और प्रति हैक्टेयर में दूसरे साधनों की अपेक्षा लागत भी अधिक आती है। इसलिए जरूरी है कि यहाँ पर वर्षा के पानी का सदुपयोग किया जाए। अतः नदी–नालों पर बांध बनाकर क्षेत्र की भावी पीढ़ी के लिए सिंचाई की स्थायी व्यवस्था हो सकेगी।

मानचित्र सं. 4.6

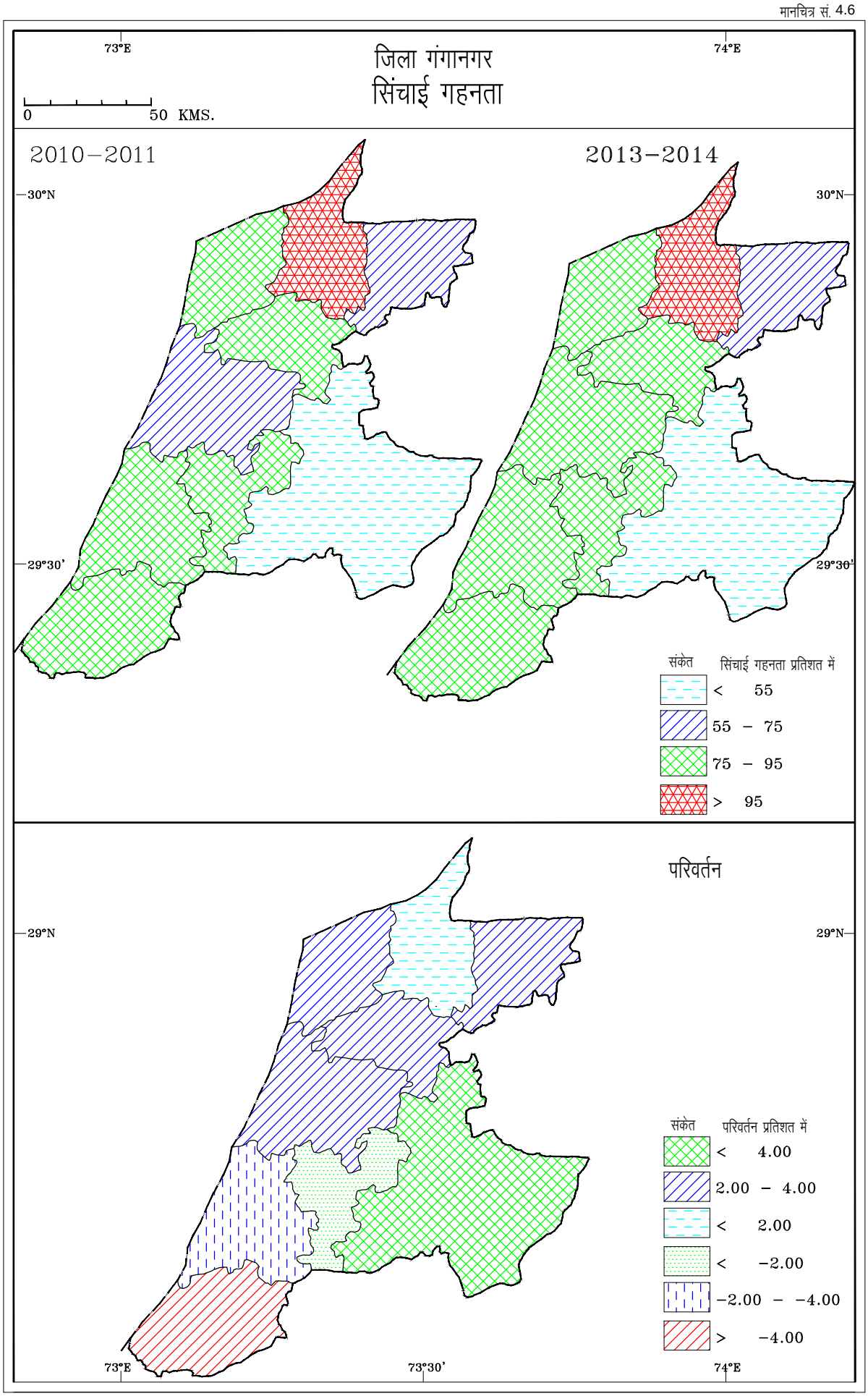
73°E
74°E
जिला गंगानगर
सिंचाई गहनता
0
50 KMS.
2010–2011
2013–2014
30°N
29°30'
संकेत
सिंचाई गहनता प्रतिशत में
< 55
55 – 75
75 – 95
> 95
परिवर्तन
29°N
संकेत
परिवर्तन प्रतिशत में
< 4.00
2.00 – 4.00
< 2.00
< –2.00
–2.00 – –4.00
> –4.00
73°E
73°30'
74°E

4.8 जल उपयोग हेतु प्रयास

जिले में जहाँ पानी का अभाव है वहाँ यह भी आवश्यक है कि जितने भी जल संसाधन हमारे पास वर्तमान में उपलब्ध है उसमें सीमितता को देखते हुए पानी का उपयोग संतुलित ढंग से किया जावे इस कदम हेतु सरकार ने निम्न प्रयास किये हैं जिसमें जिले की जनता को जल उपयोग के प्रति संतुलित आस्था का विकास होना आवश्यक है।

गंगानगर में द्रुतगति से घटते हुए भूमिजल संसाधन के संवर्धन, प्रबन्धन, व्यवहारिक नियंत्रण एवं जल संरक्षण के लिए वृहत पैमाने पर कारगर उपाय लागू करने की महत्त्वपूर्ण चुनौती है इसके लिए निम्नांकित सुझाव समस्या के समाधान में सार्थक साबित हो सकते हैंः–

1. जल संवर्धन एवं कृत्रिम पुनर्भरण

- ❖ खेतों में विद्यमान पड़त कुओं एवं नलकूपों के द्वारा खेत से बहकर जाने/भरने वाले अतिरिक्त वर्षा जल से भूजल का पुनर्भरण करना।
- ❖ नालों से बहने वाले वर्षा जल के ठहराव के लिए नालों में कम ऊँचाई के 'झाडियों के बंध', 'पत्थरों के बंध' एवं 'चिकनी मिट्टी के बंध' बनाकर भूजल पुनर्भरण को बढ़ाना।
- ❖ घरों की छतों एवं पक्के फर्श से व्यर्थ बहकर जाने वाले वर्षा जल को टांके में संचित कर घरेलू उपयोग में लाया जाए तथा संचित जल की मात्रा अधिक होने पर इसे रिचार्ज पिट (गहरा गड्डा) या रिचार्ज ट्रेंच (खाई) में डालने की व्यवस्था की जाए ताकि भूजल का पुनर्भरण हो सके।
- ❖ खेत के चारों ओर पालबन्दी करके वर्षा ऋतु के दौरान खेत का पानी खेत में ठहराना चाहिए जिससे भूजल पुनर्भरण की मात्रा बढ़ सके।

- ❖ क्षेत्र में जहाँ पर मिट्टी की मोटी परत हो उन भागों में खड़ीनों का निर्माण, भूजल का पुनर्भरण एवं मिट्टी की नमी बढ़ानें के लिए किया जा सकता है।

2. भूजल प्रबन्धनः–वर्तमान में बोई जाने वाली अधिक पानी की आवश्यकता वाली फसलों जैसे गेहूँ या अन्य पत्तीदार सब्जियों को सीमित करके कम पानी से होने वाली फसलों जैसे सरसों, चना, जीरा आदि को बढ़ावा देना चाहिए जिससे पानी की काफी मात्रा में बचत हो सके। फसलों की सिंचाई के लिए फव्वारा पद्धति (स्प्रिंकल) एवं वृक्षों के लिए बूंद–बूंद सिंचाई (ड्रिप इटिग्रेशन) पद्धति का उपयोग कर काफी पानी बचाया जा सकता है।

3. कार्यकुशलता के संकेतक–

❖ कुंओं में जल स्तर गिरावट की दर में कमी

- ❖ गैर–सिंचित क्षेत्रों में खरीफ फसलों को प्रोत्साहित करना
- ❖ भूजल के न्यायोचित उपयोग में वृद्धि
- ❖ समुदाय की सक्रिय व सकारात्मक भागीदारी से अच्छे परिणाम प्राप्त होने की संभावना
- ❖ सिंचाई हेतु सतही जल तथा भूजल के सम्मिलित उपयोग में वृद्धि
- ❖ दबाव सिंचाई तकनीकों में शत–प्रतिशत वुद्धि।

इस प्रकार स्पष्ट है कि गंगानगर में बढ़ते शहरीकरण, सघन, कृषि, औद्योगिक विकास, पारम्परिक जल संग्रह, स्थलों पर आवासीय कॉलोनियों का विस्तार होने से जल की मांग तीव्रता से बढ़ती जा रही है जबकि आपूर्ति का प्रतिशत काफी कम है।

जल संग्रहण एवं जल संचयन आज की ज्वलंत आवश्यकता है और समय आ चुका है कि हमें इस ओर तत्काल प्रभावी कदम उठाना चाहिए।

4.9 जल संचयन समय की मांग

वर्तमान में माना जा रहा है कि बहुत से लोग पानी बचाने की इच्छा रखते हुए भी कुछ विशेष नहीं कर पाते हैं। शायद इसलिए कि पानी बचाने के तौर तरीकों के बारे में हमारी जानकारी उतनी नहीं है जितनी हमें जरूरत है। परन्तु थोड़े से प्रयास से हम अपना और समाज का भला कर सकते हैं यह इसलिए भी जरूरी है कि भीषण जल संकट की चपेट में आये हमारे क्षेत्र में जितना जल उपलब्ध है वह और अधिक समय तक लोगों को उपलब्ध रहे।

तालिका संख्या 4.6

पानी के उपयोग का अपना तरीका बदले

ज्यादातर हम करते हैं	हमें करना चाहिए	बचेगा
फव्वारे से स्नान करने पर 180 लीटर	बाल्टी में पानी लेकर स्नान करने पर (खर्च होगा 18 लीटर)	162 लीटर
नल खोलकर टब से स्नान करने पर 25 लीटर	बाल्टी से स्नान करने पर (खर्च होगा 18 लीटर)	7 लीटर
शौचालय में फ्लश टैंक के उपयोग से 20 लीटर	शौचालय में छोटी बाल्टी के उपयोग से (खर्च होगा 5 लीटर)	15 लीटर
नल खोलकर शेव करने पर 10 लीटर	मग में पानी लेकर शेव करने पर (खर्च होगा 1 लीटर)	9 लीटर

नल खोलकर दंतमंजन करने से 10 लीटर	दंत मंजन मग या लौटे से करने पर (खर्च होगा 1 लीटर)	9 लीटर
नल खोलकर कपड़ों की धुलाई करने से 116 लीटर	बाल्टी से कपड़े धाने पर (खर्च होगा 18 लीटर)	98 लीटर
नल द्वारा वाहन धोने पर, 25 लीटर	गीले कपड़े से पोछने पर (खर्च होगा 18 लीटर)	7 लीटर
पाई से फर्श की सफाई करने पर 50 लीटर	बाल्टी में पानी भरकर पोछा लगाने से (खर्च होगा 10 लीटर)	40 लीटर

नल से लगातार प्रति सैकण्ड एक बूँद पानी टपकता रहे तो दिन भर में 17 लीटर पानी व्यर्थ बह जाता है।

4.10 जल का संचयन

जल संचयन का सिद्धान्त यह है कि वर्षा के पानी को स्थानीय आवश्यकताओं और भौगोलिक स्थितियों के हिसाब से संचित किया जाए। इस क्रम में भूजल का भण्डार भी भरता है। जल संचयन की पारम्परिक प्रणालियों से लोगों की घरेलू और सिंचाई सम्बन्धी जरूरतें पूरी होती रही हैं।

जल संचयन के निम्न महत्त्वपूर्ण बिन्दु हैं :–

- जल भरने से पूर्व भरे जाने वाले बर्तन को अच्छी तरह से साफ करना चाहिए।
- आयुर्वेदाचार्यों के अनुसार तांबे के पात्र में रखा जल विकृत नहीं होता है अतः जहाँ तक संभव हो, पीने के पानी को ऐसे पात्र में रखना चाहिए।

तांबा जीवाणुनाशक होने के कारण जल को शुद्ध रखने में सहायक होता है।

- ❖ कुएँ, हौज व बावड़ी में क्लोरीन या लाल दवा समय–समय पर डालनी चाहिए।
- ❖ नालियों तथा गटर लाइनों को जल स्त्रोतों से दूर रखना चाहिए।
- ❖ तालाब का पानी पीने के काम में लेना हो तो उसे उबालकर ठण्डा करके तथा छानकर उपयोग में लेना चाहिए।
- ❖ रिसते हुए नलों का समुचित रख–रखाव करना चाहिए तथा घरों एवं सार्वजनिक स्थानों पर टैंक भरते ही टोटी बन्द कर देनी चाहिए।
- ❖ जलदाय विभाग की जलापूर्ति हेतु पाइप लाइन के टूट जाने पर समीपस्थ कार्यालय में मरम्मत हेतु तुरन्त सूचना देनी चाहिए।
- ❖ जल के संग्रहण एवं दुरूपयोग को बचाने हेतु जनमानस एवं विद्यार्थी वर्ग में चेतना जाग्रत करनी चाहिए व पोस्टर तथा संचार माध्यमों का उपयोग करना चाहिए। बच्चों को शुरूआत से ही जल के किफायती उपयोग की शिक्षा देना वर्तमान परिप्रेक्ष्य में बहुत आवश्यक है।
- ❖ गंगानगर जिले के जनमानस को घटते जल संसाधन एवं जलग्रहण कार्यक्रमों का महत्व बताना।

4.11 सिंचाई प्रबंध एवं प्रशिक्षण

जिले में कठिनाई से प्राप्त होने वाला एवं विकास हेतु आवश्यक संसाधन है। इसके संरक्षण हेतु विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है। संरक्षण के बिना जल का सदुपयोग नहीं हो पाये और समस्या बनी ही रहेगी। जिले में प्रचलित सिंचाई प्रणालियों के परिसंचालन में कमियों के कारण आज कई क्षेत्रों में जल प्लावन एवं खारीयता की समस्या उत्पन्न हो गयी है।

इन समस्याओं हेतु सरकार ने सिंचाई प्रबंध एवं प्रशिक्षण का एक कार्यालय खोला है जो कि किसानों को सिंचाई की उचित व्यवस्था के बारे में जानकारी एवं सुझाव देता है। संस्थान के सुझाव के अनुसार ऐसी फसलें उगाई जावें जिससे कम पानी की आवश्यकता होती है ताकि उस पानी की मात्रा से ही अधिक क्षेत्र में फसलें पैदा की जा सके। दूसरी ओर सरकार सिंचाई प्रबन्ध हेतु कई व्यवस्था को भी कठोरता से पालन करने हेतु प्रयत्नशील है उदाहरण के तौर पर बारां बंदी व्यवस्था है। इस व्यवस्था के अनुसार प्रत्येक किसान को फसल व खेत के अनुसार नियत समय पर उचित मात्रा में पानी की व्यवस्था है।

सिंचाई प्रबन्ध एवं प्रशिक्षण हेतु सरकार ने केन्द्र की सहायता से एक सिंचाई प्रबन्ध एवं प्रशिक्षण केन्द्र खोला गया है। इसके माध्यम से सिंचाई अधिकारियों एवं कर्मचारियों को सिंचाई के उचित प्रबन्ध के सम्बन्ध में प्रशिक्षण कार्यक्रम को प्रभावशाली बनाने हेतु प्रयत्नशील है।

निष्कर्ष –

उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि जिले में वर्ष 2013–14 में 98.22 प्रतिशत सिंचाई नहरों द्वारा होती है। जिसके कारण भूमिगत जलस्तर प्रतिदिन गिरता जा रहा है। ऊर्जा की अधिक खपत होती है और प्रति हैक्टेयर में दूसरे साधनों की अपेक्षा लागत भी अधिक आती है। इसलिए जरूरी है कि यहाँ पर वर्षा के पानी का सदुपयोग किया जाए। अतः नदी–नालों पर बांध बनाकर क्षेत्र की भावी पीढ़ी के लिए सिंचाई की स्थायी व्यवस्था हो सकेगी। औसतन सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में पिछले पाँच वर्ष में सिंचाई गहनता का प्रतिशत 76.50 प्रतिशत रहा है। स्वतन्त्रता के बाद राज्य सरकार ने अनेक योजनाएँ बनायी इन योजनाओं के माध्यम से सिंचाई विकास कार्यक्रमों को प्राथमिकता दी गई है। पंचवर्षीय योजनाओं के द्वारा जिले में सिंचाई सुविधाएँ बढ़ाई गई जैसे किसानों

को कुएँ व नलकूपों के लिए बैंक द्वारा आर्थिक सुविधाएँ उपलब्ध कराना आदि प्रमुख है।

सन्दर्भ सूची

1. भल्ला, एल.आर. (2008), "राजस्थान का भूगोल", कुलदीप पब्लिकेशन्स, जयपुर।
2. भान, सूरज (1999), "मृदा एवं जल संरक्षण", भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद्, नई दिल्ली।
3. हुसैन, माजिद (2010), "कृषि भूगोल", रावत पब्लिकेशन्स जयपुर एवं नई दिल्ली।
4. गुर्जर, रामकुमार (2012), "जल प्रबन्ध विज्ञान", पाइन्टर पब्लिशर्स, जयपुर।
5. लाल, एस.के. (2010), "भारतीय अर्थव्यवस्था सर्वेक्षण तथा विश्लेषण", इलाहाबाद भू उर्वरा स्तर प्रतिवेदन 2008, जिला चित्तौड़गढ़।
6. पाण्डेय, भगवते (2008), "गांवों में जल के बिना कल", कुरूक्षेत्र ।
7. सक्सेना, हरिमोहन (2012), "राजस्थान का भूगोल", हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर।
8. जल ही जीवन है, (जून 2008), "कुरूक्षेत्र", ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली।
9. रोड़डी.के. (1984), "भोम जल विज्ञान", मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल।
10. सिंह, सविन्द्र (2010), "पर्यावरण भूगोल", प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद।

अध्याय–पंचम

कृषि में नवीन तकनीकी का उपयोग

कृषि में तकनिकी के विकास का मूल्यांकन, उत्पादकता में वृद्धि और किसानों की आय में वृद्धि के संदर्भ में किया जाता है। कृषि में नई तकनिकी का विकास भी विभिन्न कृषि–जलवायु परिस्थितियों में अलग–अलग होता है क्योंकि पौधों की विभिन्न किस्मों का व्यवहार, विभिन्न कृषि–जलवायु परिस्थिति में उनके गुण, कीट व बीमारियों के विरूद्ध सहन क्षमता की दृष्टि से अलग–अलग होता है। इसी प्रकार विभिन्न कृषि–विधाओं का जैसे विभिन्न मात्रा में उर्वरक उपयोग, उर्वरक देने के समय व तरीके का, बुवाई में सावधानी व समय का फसल पर भिन्न प्रकार का प्रभाव पड़ता है अतः अलग–अलग मृदा एवं कृषि जलवायु स्थिति का फसल पर होने वाले प्रभाव का जानकारी किसान एवं कृषि विस्तार कार्यकर्ता के लिए आवश्यक है।

भारत एक कृषि प्रधान राष्ट्र है। यहाँ की 70 प्रतिशत जनसंख्या कृषि कार्य में लगी हुई है परन्तु भारतीय कृषि विश्व के अन्य देशों की तुलना में पिछड़ी हुई है। कृषि में खेतों को फसल बुवाई के लिए तैयार करने, बीज बोने, कुओं से सिंचाई के लिए पानी निकालने, पौधे औषधियों का छिड़काव करने, फसल की कटाई, भूसे से अनाज को अलग करने, खेतों को समतल, फसल को मण्डी तक पहुँचाने आदि कार्य के लिए आधुनिक कृषि यन्त्रों का उपयोग कम किया जाता है। वर्तमान में सिंचाई के नवीन तरीकों, उन्नत किस्म के बीजों, उर्वरकों, कीटनाशक औषधियों इत्यादि का उपयोग प्रारम्भ हुआ है और इसके उपयोग में अत्यन्त तीव्र गति से वृद्धि हुई है। कृषि अनुसंधान के लिए सन् 1960 में पंत नगर में कृषि विश्वविद्यालय की स्थापना की गई फिर राजस्थान में भी अनुसंधान केन्द्र खोले गये और उसकी संख्या में वृद्धि हुई।

गत तीन वर्षों (सन् 2009–2012) में कई कृषकों ने कृषि कार्य करने हेतु ट्रैक्टर एवं अन्य कृषि यन्त्र स्वयं ने क्रय कर लिये हैं। मध्यम एवं गरीब कृषक जो कृषि यन्त्रों को क्रय हेतु अधिक पूंजी विनियोजन करने में असमर्थ है, वे कृषि यन्त्रों को किराये पर लेकर कृषि कार्य करने लगे हैं। पशुचालित यन्त्रों की तुलना में ट्रैक्टर एवं अन्य कृषि मशीनों से कम समय में अधिक काम किया जा सकता है। इन कृषि यन्त्रों की वजह से कृषकों की कार्य क्षमता में भी वृद्धि हुई है।

कुओं एवं नलकूपों द्वारा सिंचाई करने हेतु विद्युत उपलब्धता वाले क्षेत्रों में कुओं पर विद्युत मोटर तथा पम्प सेट का उपयोग बढ़ रहा है जिन क्षेत्रों या गांवों में बिजली की सुविधा उपलब्ध नहीं है, वहाँ डीजल–इंजन व पम्पिंग सेट सिंचाई में अधिक उपयोगी एवं लोकप्रिय है। पिछले तीन दशकों में मशीनों के उपयोग के कारण कृषि में क्रान्ति आई है। जिससे कृषि विकास अत्यधिक हुआ है। जिले में कृषि यन्त्रों का उपयोग तीव्र गति से बढ़ रहा है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि प्राचीन समय में किसान अपने जीवन निर्वाह के लिए कृषि कार्य करता था, परन्तु धीरे–धीरे कृषकों ने इसे व्यापारिक स्वरूप प्रदान किया। इसी क्रम में उसने यन्त्रों के उपयोग में भी विकास किया। सिंचाई में भी कुओं से पानी निकालने के लिए पशुओं का उपयोग होता था। धीरे–धीरे कृषि की इस तकनिकी को कृषि–विकास ने वर्तमान तकनीकी द्वारा पूर्ण रूप से प्रतिस्थापित कर दिया है और आज सिंचाई के लिए कुओं पर डीजल पम्प व विद्युत पम्प स्थापित हो चुके हैं। इसी प्रकार खेतों को समतल करने, ढेले तोड़ने, जुताई करने के लिए आधुनिक यन्त्रों जैसे कल्टीवेटर, थ्रेसर का प्रयोग किया जाता है। वर्तमान समय में कृषि में आधुनिक यन्त्रों का उपयोग बढ़ता जा रहा है।

5.1 यांत्रिक शक्ति निवेश

कृषि कार्यों में पूँजी नियोजन का सबसे बड़ा भाग यांत्रिक शक्ति निवेश का है। कृषि यंत्रों के उपयोग से यद्यपि मानव श्रम का विस्थापन होता है फिर भी कृषि कार्य सरलता एवं शीघ्रता से सम्पन्न होता है। कम जनसंख्या वाले देशों के लिए कृषि यन्त्रों का प्रयोग व्यापारिक स्तर पर कृषि करने हेतु वरदान सिद्ध हुआ है। कृषि यन्त्रों के प्रयोग से न केवल उत्पादकता में वृद्धि होती है वरन् कृषि पर प्रति हैक्टेयर व्यय कम होता है। बढ़ती हुई मजदूरी, श्रम का समय पर उपलब्ध न होना तथा पशु शक्ति निवेश की मंदी ने यांत्रिक शक्ति निवेश को प्रोत्साहन दिया है। यांत्रिक शक्ति का अधिकाधिक प्रयोग कृषि के आधुनिकीकरण का महत्त्वपूर्ण अंग है। किसी भी औजार, उपकरण अथवा मशीनों के उपयोग द्वारा कृषक को अधिक फसल उत्पादन में सहायता मिले अथवा जिससे कृषि क्रियाएँ अधिक आराम से कम समय और कम खर्च पर की जा सके उसे यंत्रीकरण कहते हैं। कृषि क्षमता को बढ़ाने के लिए यांत्रिक शक्ति का उपयोग आवश्यक है। इसके द्वारा श्रम और पूँजी के अनुपात में परिवर्तन लाया जा सकता है। कृषि यंत्रों के प्रयोग से प्रति इकाई उत्पादन लागत में कमी, श्रम कार्य क्षमता में वृद्धि, प्रति हैक्टेयर भू–उत्पादकता में वृद्धि, कृषि कार्य में समय की बचत, भूमि उपयोग में सुधार, भू–संरक्षण तथा पशुओं की मांग में कमी लाई जा सकती है। जिले में वर्तमान बदलते परिवेश में कृषि का यंत्रीकरण परम आवश्यक है।

जिले में कृषि के अतिरिक्त अन्य उद्योग धन्धों में कुल धीमी प्रगति रही है। जिले में बडे कृषि फार्म होने के कारण कृषि कार्य उद्योग के रूप में ही किया जाता है और व्यावसायिक फसलों की ओर ध्यान अधिक है इससे कृषकों की अच्छी आय भी होती है। जिले में कृषि कार्यों के लिए आवश्यक यंत्र व औजारों का विवरण तालिका संख्या 5.1 में दर्शाया गया हैः–

तालिका संख्या 5.1
गंगानगर में कृषि यंत्र व औजारों की प्रगति

क्र. सं.	वर्ष/ तहसील	लोहे के हल	डीजल इंजन	विघुत पंप	ट्रेक्टर	योग
	1998	161008	6265	2551	21203	191027
	2003	111621	3797	1684	20010	137112
	2008	36165	3562	1720	25376	66823
	2013	48329	12779	3479	30253	94840
	तहसील (2013) (प्रति 100 हैक्टयर पर संख्या के साथ)					
1.	गंगानगर	3800 (4.62)	822 (0.99)	1060 (1.28)	4783 (5.81)	10465 (12.72)
2.	करणपुर	2100 (3.05)	949 (1.37)	325 (0.47)	3389 (4.92)	6763 (09.82)
3.	पदमपुर	4400 (5.83)	1680 (1.37)	824 (1.09)	3169 (4.19)	10073 (13.34)
4.	रायसिंहनगर	6500 (5.77)	1100 (0.97)	523 (0.46)	4554 (4.04)	12677 (11.26)
5.	अनूपगढ़	3248 (4.04)	1778 (2.21)	420 (0.52)	2410 (3.00)	7856 (09.78)
6.	सूरतगढ़	13680 (8.28)	3756 (2.27)	186 (0.11)	3236 (1.96)	20858 (12.63)
7.	सादूलशहर	7050 (10.38)	233 (0.34)	12 (0.01)	3368 (4.98)	10663 (15.70)
8.	विजयनगर	3351 (5.90)	2416 (4.29)	113 (0.20)	2438 (4.33)	8318 (14.78)
9.	घड़साना	4200 (5.46)	45 (0.05)	16 (0.02)	2906 (3.78)	7167 (09.33)

स्रोतः जिला पशुपालन प्रतिवेदन 2013

5.2 लोहे के हल–

लोहे के हल लकड़ी के हलों की बजाय अधिक उपयोगी एवं टिकाऊ होते हैं। लकड़ी के हलों के अपेक्षा लोहे के हलों से गहरी जुताई भी की जा सकती है। दूसरी ओर लोहे के हल पशु एवं ट्रैक्टरों दोनों से खींचे जाते हैं जबकि लकड़ी के हल ट्रैक्टर आदि आधुनिक यंत्र के हो पाती थी, लेकिन अब पशुओं की सहायता से सिंचाई कार्य बहुत कम किया जाता है।

वर्ष 1998 में जिले में हलों की संख्या 161008 थीं वहीं वर्ष 2003 में यह घटकर 111621 ही रह गई। मानचित्र संख्या 5.1 के अनुसार जिले में 1998 से 2003 पाँच वर्षों के दौरान 30.67 प्रतिशत की कमी हुई है। जिले में सर्वाधिक हलों की प्रति 100 हैक्टेयर संख्या सादुर्लशहर तहसील में 10.38 है। सूरतगढ तहसील में 8.28, श्रीगंगानगर, पदमपुर, रायसिंहनगर, विजयनगर और घड़साना तहसील में 4 से 8 है। आंकड़ों के आधार पर हम कह सकते हैं कि जिले में हलों की संख्या में कमी तेजी से हुई है। इस कमी का कारण जिले में यांत्रिक उपकरणों का प्रसार अधिक होना है। यहाँ पर हलों में किसान पशुओं द्वारा सिंचाई करता था जिसमें अधिक समय व अधिक श्रमिकों की आवश्यकता होती थी तथा बहुत कम क्षेत्र में सिंचाई हो जाती थी। (मानचित्र संख्या 5.1)

5.3 ट्रेक्टर

यह कृषि कार्य हेतु एक बहुउद्देश्यीय महत्वपूर्ण उपकरण है। इससे भूमि की जुताई से लेकर कृषि उपज के विपणन तक का काम लिया जाता है। इसके साथ कल्टीवेटर, डिस्क लेवलर एवं बीज बोने के उपकरण को सम्बधित कर जुताई, बुवाई आदि का कार्य सम्पन्न किया जाता है इससे थ्रेशर को जोड कर फसल की मढाई, पम्पसेट से जोड़कर सिंचाई और ट्रोली को जोड़कार कर ढुलाई का कार्य किया जाता है।

मानचित्र सं. 5.1

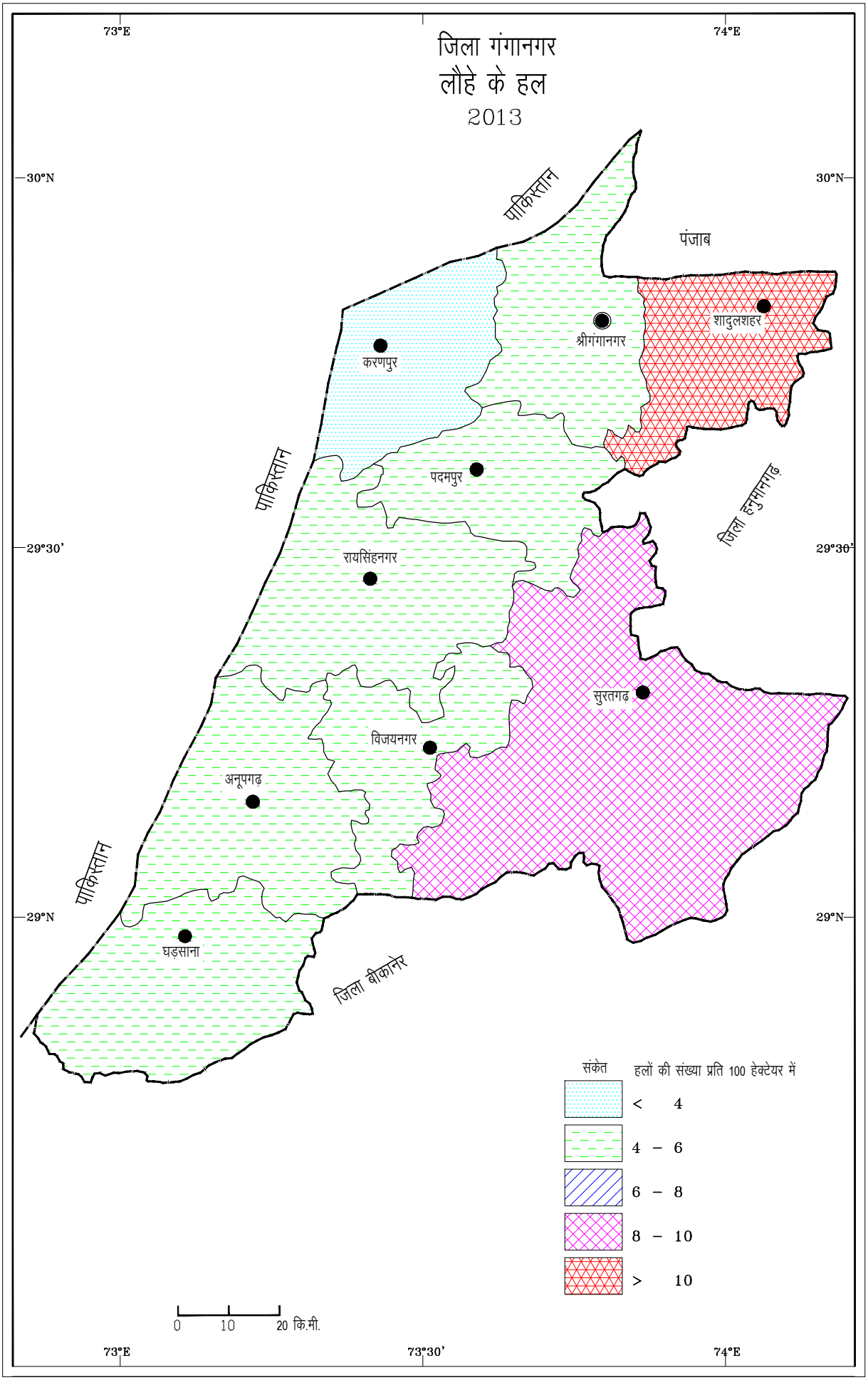
जिला गंगानगर
लौहे के हल
2013
73°E
74°E
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
शादुलशहर
श्रीगंगानगर
करणपुर
पदमपुर
जिला हनुमानगढ़
रायसिंहनगर
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
हलों की संख्या प्रति 100 हेक्टेयर में
< 4
4 – 6
6 – 8
8 – 10
> 10
0 10 20 कि.मी.

ट्रेक्टर के उपयोग से कृषि में दो प्रकार का विकास हुआ है। प्रथम उन क्षेत्रों में कृषि होने लगी है जहाँ परम्परागत उपकरणों से जुताई का कार्य सम्पन्न नहीं हो सकता था। अतः कृषि का क्षैतिज विकास हुआ है। दूसरे उन क्षेत्रों में एक से अधिक शस्य का उत्पादन संभव हो पाया है जहां वर्षा ऋतु के पश्चात् भूमि का जोतना संभव नहीं था। इस प्रकार से कृषि का लम्बवत (Vertical Expansion) विकास हुआ है।

तालिका संख्या 1 के अनुसार गंगानगर जिले में वर्ष 1998–99 में ट्रैक्टरों की संख्या 21203 थी जो बढ़कर 2013–2014 में 30259 हो गई। पिछले पन्द्रह वर्षों में ट्रैक्टरों की संख्या में 70.37 प्रतिशत बढ़ोतरी दर्ज की गई है। गंगानगर जिले में ट्रेक्टरों की संख्या में पिछले वर्षों में अत्यधिक वृद्धि हुई है। मानचित्र संख्या 5.2 से स्पष्ट है कि प्रति 100 हैक्टेयर पर ट्रेक्टरों की सर्वाधिक संख्या 5.81 है इस प्रकार पुराने हलों से जिन्हें पशुओं द्वारा चलाया जाता है, के द्वारा जहाँ 10–15 हैक्टर भूमि पर ही कृषि कार्य किया जाता था वहाँ आज आधुनिक लोहे के हल व ट्रेक्टरों की सहायता से बहुत अधिक क्षेत्र में कृषि की जाती है। (मानचित्र संख्या 5.2)

मानचित्र संख्या 5.2 से स्पष्ट है कि गंगानगर जिले की सूरतगढ़ तहसील में प्रति 100 हैक्टेयर पर ट्रेक्टरों की संख्या 2 से कम, अनूपगढ़, घड़साना तहसील में 2 से 4 एवं विजयनगर, रायसिंहनगर, पदमपुर, करणपुर और सार्दुलशहर 4 से 5 प्रति 100 हैक्टेयर पर ट्रैक्टरों की संख्या है। इसका मुख्य कारण इस क्षेत्र में सिंचित क्षेत्र की अधिकता तथा समतल उपजाऊ भूमि का होना है।

5.4 बिजली द्वारा संचालित पम्प सेट –

यह दूसरा महत्वपूर्ण उपकरण है जो सिंचाई कार्य में प्रयुक्त किया जाता हैं। इसमें भूमिगत जल, तालाबों एवं नदियों के जल को निकाल कर खेतों में पहुचायां जाता है। इसके अतिरिक्त जहां नहरें खेतों के स्तर से नीचे बहती है

मानचित्र सं. 5.2

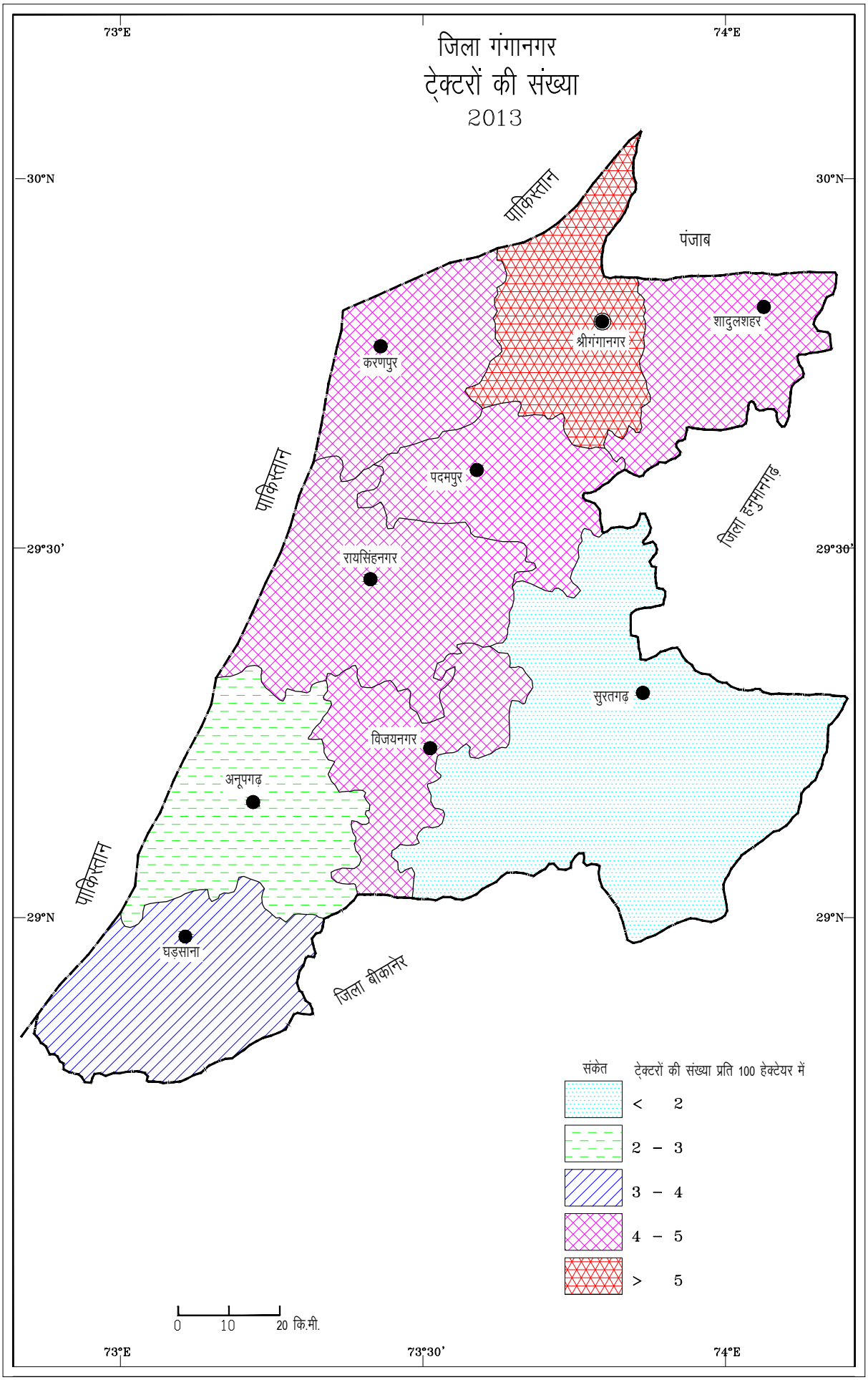
जिला गंगानगर
ट्रेक्टरों की संख्या
2013
73°E
74°E
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
जिला हनुमानगढ़
जिला बीकानेर
श्रीगंगानगर
शादुलशहर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
संकेत
ट्रेक्टरों की संख्या प्रति 100 हेक्टेयर में
< 2
2 – 3
3 – 4
4 – 5
> 5
0 10 20 कि.मी.

उनका भी जल इन पम्पों से खेतो तक लाया जाता है। बिजली के पम्पों का अत्यधिक उपयोग दक्षिणी भारत मे तालाबों एवं कुओं के जल को खेतों तक पहुचाने में किया जाता हैं।

तेल चलित इन्जन तीसरा कृषि उपकरण है जो ट्रेक्टर की भाँति कृषि के कई कार्यो में काम आता है। इसका सबसे अधिक प्रयोग पम्प से जोड़कर सिंचाई में किया जाता है। इसके अतिरिक्त इससे थ्रेशर से जोड़कर मढ़ाई, एक्सपेलर से जोड़कर तेल निकालने, थ्रेशन से जोड़कर गन्ना पेराई आदि का कार्य लिया जाता है। बिजली की बढ़ती मूल्य एवं अनिश्चितता ने तेल चालित इन्जन के प्रयोग एवं महत्व की ओर बढ़ा दिया है। परन्तु इस समय तेल को बढ़ते हुए मूल्य ने इसके प्रयोग पर भी अंकुश लगा दिया है। तेल चालित इंजनो का योगदान कृषि के अन्य कार्यो में अधिक है परन्तु सिंचाई कार्यों में इसका सहयोग कृषि संभव हो गई है और शस्य गहनता में भी अधिक वृद्वि हुई है। फलस्वरूप शस्य उपज एवं उत्पादन वृद्धि हुई है।

वर्ष 1998–99 में विद्युत पम्पों की संख्या 2551 थी जो कि वर्ष 2003–04 में घटकर 1684 रह गई। इस प्रकार 2008–09 में विद्युत पम्पों की संख्या 1720 थी जो 2013–2014 में बढ़कर 3479 हो गई। इस प्रकार पिछले पन्द्रह वर्षों में विद्युत पम्पों की 7.26 प्रतिशत संख्या बढ़ी है। मानचित्र संख्या 5. 2 से स्पष्ट है कि गंगानगर जिले में सर्वाधिक विद्युत पम्पों की संख्या श्रीगंगानगर एवं पदमपुर तहसील में प्रति 100 हैक्टेयर 2 से अधिक है जिसका मुख्य कारण नहरीकरण की अधिकता होना। जबकि गंगानगर की करणपुर, रायसिंहनगर, अनूपगढ़, सूरतगढ़, सार्दुलशहर, विजयनगर एवं घड़साना में विद्युत पम्पों की संख्या नगण्य स्थिति में है। सम्पूर्ण गंगानगर जिला नहरीकरण होने के कारण विद्युत पम्पों की संख्या में कमी आई है।(मानचित्र संख्या 5.3)

मानचित्र सं. 5.3

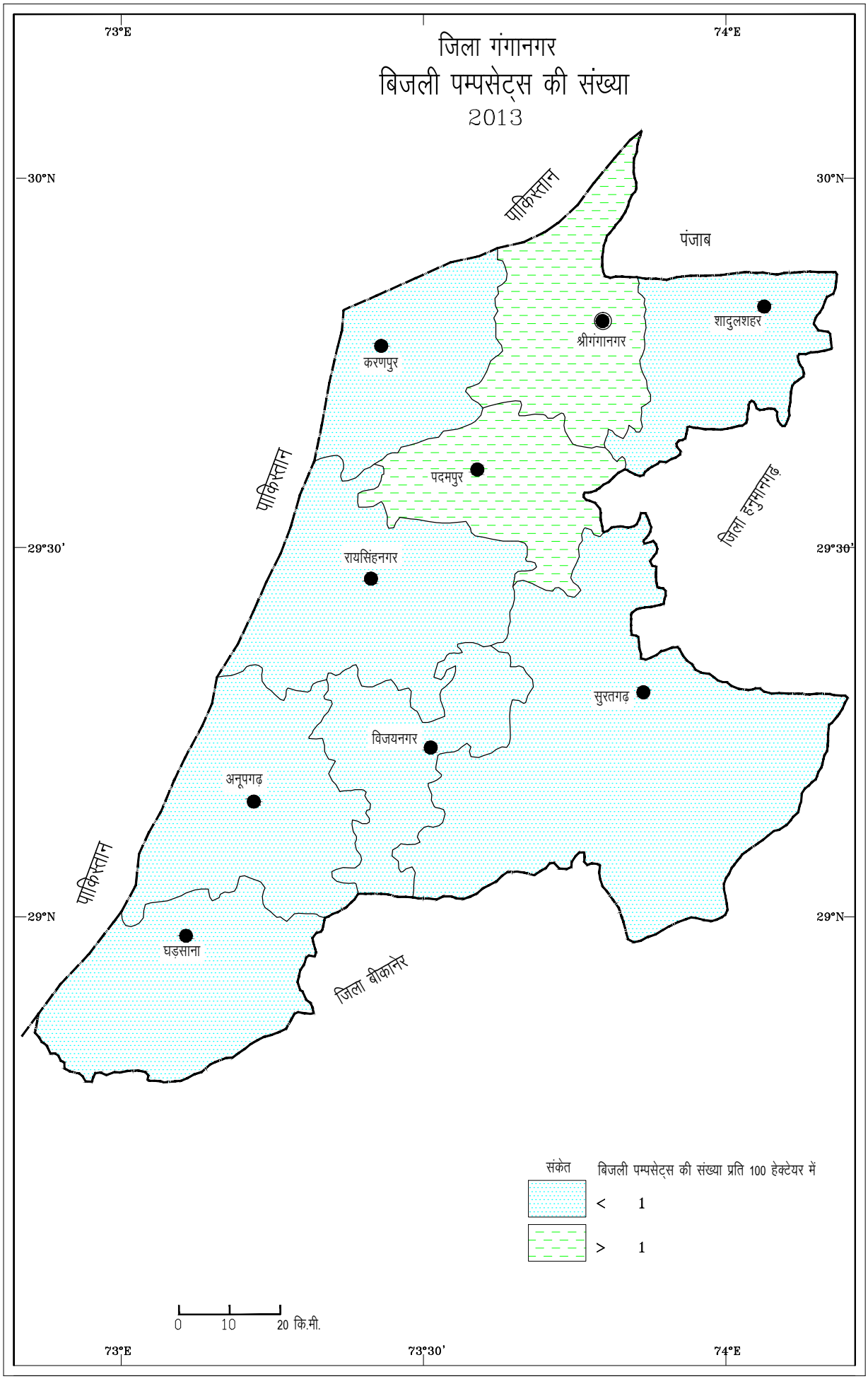
73°E
74°E
जिला गंगानगर
बिजली पम्पसेट्स की संख्या
2013
30°N
29°30'
29°N
पाकिस्तान
पंजाब
शादुलशहर
श्रीगंगानगर
करणपुर
पदमपुर
जिला हनुमानगढ़
रायसिंहनगर
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
बिजली पम्पसेट्स की संख्या प्रति 100 हेक्टेयर में
< 1
> 1
0 10 20 कि.मी.
73°30'

5.5 डीजल पम्प

कृषि में फसलों को पानी देने के साधनों में डीजल पम्प/जनरेटर का उपयोग भी नगण्य–सा ही है। इसका कारण यह है कि इसमें डीजल, पैट्रोल व कैरोसीन शक्ति का उपयोग होने के कारण यह इतना खर्चीला हो जाता है कि इसका उपयोग अनार्थिक साबित होता है। विद्युत आपूर्ति के आपातकालीन समय में फेल हो जाने के कारण एक वैकल्पिक साधन के रूप में ही इसका उपयोग किसान कृषि कार्यों हेतु करते हैं।

तालिका संख्या 5.1 के अनुसार डीजल पम्पों की संख्या में उतार–चढाव देखने को मिलता है। 1998–1999 में 6265 डीजल पम्प थें जो वर्ष 2003–04 में घटकर 3797 रह गयी। वर्ष 2008–09 में 3562 थी जो 2013–14 में बढ़कर 12779 हो गई। पम्पों की संख्या में पिछले पन्द्रह वर्षों में दुगुनें से भी अधिक वृद्धि हुई है। इसका कारण विद्युत आपूर्ति नियमित नहीं होने के कारण अब पुनः कृषक सिंचाई के लिए डीजल पम्प को रखने लग गये है। मानचित्र संख्या 5.2 से स्पष्ट है कि गंगानगर जिले में सर्वाधिक डीजल पम्पों की संख्या विजयनगर तहसील में प्रति 100 हैक्टेयर 4 से अधिक है जबकि सबसे कम संख्या श्रीगंगानगर, सार्दुलशहर, रायसिंहनगर एवं घड़साना तहसील में प्रति 100 हैक्टेयर में 1 से कम है। इसका कारण विद्युत आपूर्ति का ठीक होना है। इसके अलावा जिले की करणपुर, पदमपुर, सूरतगढ़ एवं अनुपगढ़ तहसील में डीजल पम्पों की संख्या 2 से 3 है। वर्तमान में पम्पों की संख्या में धीरे–धीरे कमी आ रही है यह कमी नहरी सिंचाई व्यवस्था की उत्तम व्यवस्था के कारण है। (मानचित्र संख्या 5.4)

इन कृषि यंत्रों के अतिरिक्त अनेक कृषि यंत्र एवं उपकरण जैसे कम्बाइन, मोल्डबोर्डहल, पशु द्वारा चलाये जाने वाले समतलन यंत्र ब्लेड हैरो, रोटावेटर, आदि मशीनों का उपयोग भी जिले में किया जाता है। कृषि यंत्रों की सुविधा उपलब्ध कराने हेतु वर्ष 1969 में कृषि उद्योग निगम की स्थापना की

मानचित्र सं. 5.4

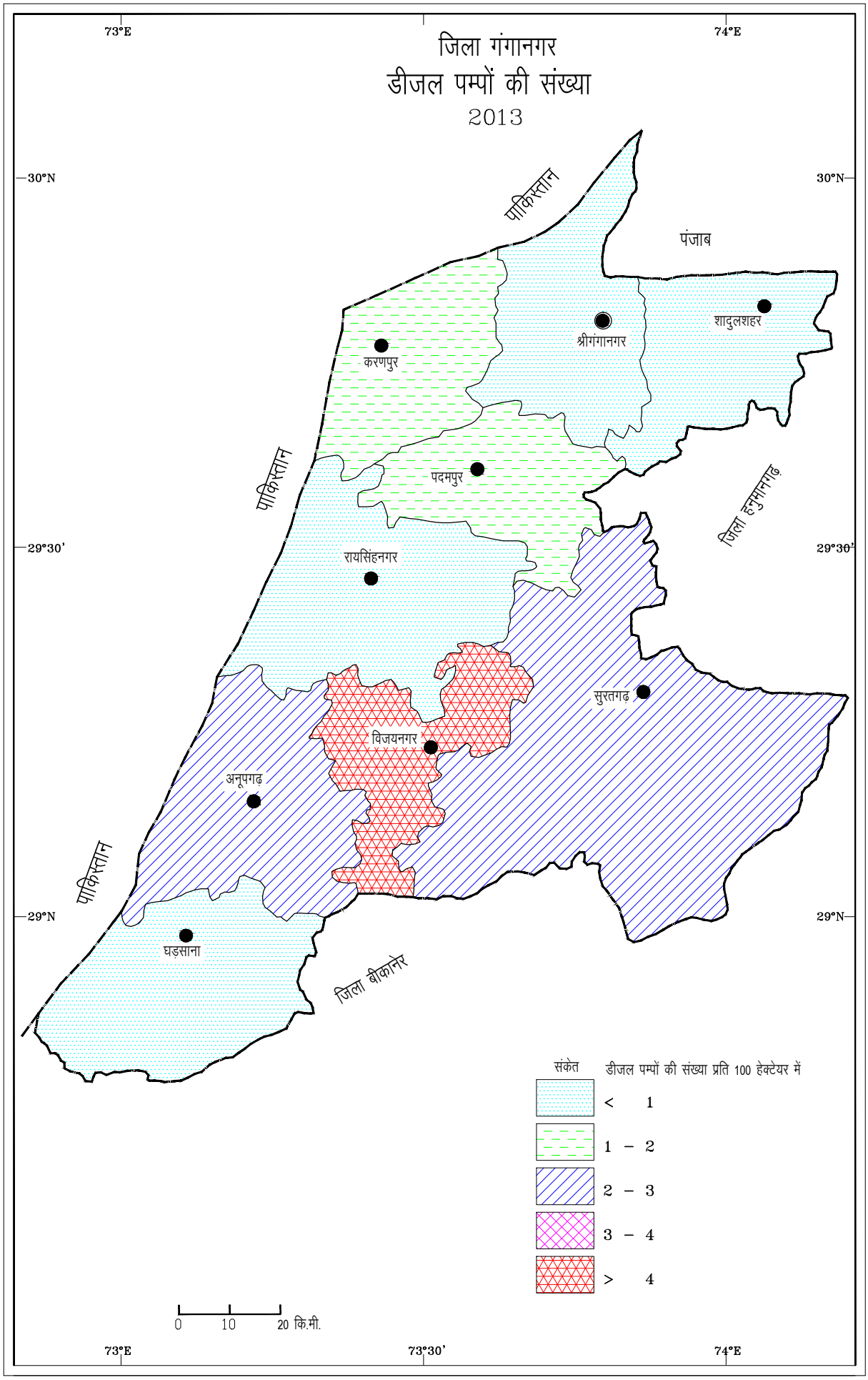
73°E
74°E
जिला गंगानगर
डीजल पम्पों की संख्या
2013
30°N
29°30'
29°N
पाकिस्तान
पंजाब
शादुलशहर
श्रीगंगानगर
करणपुर
पदमपुर
जिला हनुमानगढ़
रायसिंहनगर
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
जिला बीकानेर
संकेत
डीजल पम्पों की संख्या प्रति 100 हेक्टेयर में
< 1
1 – 2
2 – 3
3 – 4
> 4
0 10 20 कि.मी.
73°30'

गई। निगम कृषि यंत्रों का निर्माण एवं पूर्ति का कार्य करता है। किसानों को उचित कीमत पर यंत्र उपलब्ध कराता है। क्षेत्र में खेतों का आकार छोटा होना, सिंचाई सुविधाओं का काश्त क्षेत्र की तुलना में अभाव, किसानों की निरक्षरता एवं अनभिज्ञता और सामान्य किसानों की आर्थिक स्थिति ठीक न होना आदि कारण यंत्रों के उपयोग में धीमी गति बनाये हुए हैं तथा जिले में कई क्षेत्रों में कृषि पर जनसंख्या एवं मजदूरों का अधिक भार होने से भी इस दिशा में धीमी गति से वृद्धि हो रही है।

कृषक, खेतिहर मजदूर और पशुओं को जैविक ऊर्जा के अन्तर्गत आते हैं, और पशु ऊर्जा में कृषि कार्य में सहायक पशु, बैल, भैंस, ऊँट आदि को लिया गया है। जैविक ऊर्जा के अध्ययन हेतु कार्यशील जनसंख्या के आंकड़ों के आधार पर कृषि मजदूर एवं कृषकों की संख्या को लिया गया है। इसी प्रकार पशु ऊर्जा हेतु पशु गणना रिपोर्ट में से बैल, ऊँटों, भैंसों की संख्या को लिया गया है।

5.6 यांत्रिक ऊर्जा

यांत्रिक ऊर्जा में अनेक कृषि उपकरण एवं यंत्र है। प्रस्तुत अध्ययन में सिंचाई में सहायक विद्युत पम्प सैट, डीजल पम्प सैटों की संख्या और गन्ना पैरने की मशीन को शामिल किया गया है जो स्वचालित हैं।

इस प्रकार ऊर्जा वर्गों की ऊर्जा का मापन अश्वशक्ति इकाई के रूप में एफ.ए.ओ. द्वारा प्रस्तावित तालिका संख्या 5.2 के अनुसार लिया गया है जिसमें विभिन्न ऊर्जा स्रोतों की कार्य करने की शक्ति का अश्वशक्ति के रूप में निम्न प्रकार बताया गया है–

तालिका संख्या 5.2

प्रस्तावित ऊर्जा (अश्वशक्ति में)

प्रति विद्युत एवं डीजल पम्प	प्रति गन्ना पैरने की मशीन	प्रति ट्रैक्टर
5.00	7.50	50.00

स्रोतः अनाल्स ऑफ दी एसोसिएशन ऑफ राजस्थान ज्योग्राफर्स, वोल्यूम–3

तालिका संख्या 5.2 में दी गई ऊर्जा स्रोतों की अश्वशक्ति परिवर्तन की इकाई, मानों के आधार पर अध्ययन में शामिल किये गये जैविक एवं यांत्रिक ऊर्जा कृषि यंत्रों की कुल अश्वशक्ति का परिकलन किया है, और परिकलन के आधार पर जिले में कृषि कार्यों में प्रयुक्त यांत्रिक एवं जैविक ऊर्जा उपयोग का विवरण इस प्रकार है।

जिले में कृषि कार्यों में मानवीय ऊर्जा, पशु और यांत्रिक ऊर्जा का वर्ष 2001 में उपयोग इस प्रकार था, जो निम्न तालिका संख्या 5.3 में दर्शाया गया है–

तालिका संख्या 5.3

गंगानगर जिले में विभिन्न प्रकार की ऊर्जा का उपयोग

ऊर्जा वर्ग	ऊर्जा अश्व शक्ति में	ऊर्जा का उपयोग
मानवीय ऊर्जा	32039	10.74
यान्त्रिक ऊर्जा	244047.5	81.77
पशु ऊर्जा	22358.5	7.49

उपरोक्त तालिका संख्या 5.3 से स्पष्ट है कि वर्तमान समय में यांत्रिक ऊर्जा उपयोग बढ़ रहा है और जैविक ऊर्जा का उपयोग घट रहा है। इस प्रक्रिया के निष्कर्ष से स्पष्ट है कि गंगानगर जिले की कृषि पारिस्थितिकी में आधुनिक कृषि के लक्षण स्पष्ट रूप से परिलक्षित हो रहे हैं। पहले जैविक

ऊर्जा का ही उपयोग किया जाता था, जबकि ऊर्जा के उपयोग में भी आधुनिकीकरण के फलस्वरूप यांत्रिक ऊर्जा उपयोग में काफी वृद्धि हुई है।

कृषि के आधुनिक यन्त्रों में ट्रैक्टर, डीजल इंजन विद्युत पम्पिंग सैट, थ्रेसर, कल्टीवेटर्स इत्यादि में तीव्र गति से वृद्धि होती जा रही है। अध्ययन क्षेत्र में इसके वितरण में काफी असमानता देखने को मिलती है।

अतः सारांश में कृषि कार्यों में यांत्रिक ऊर्जा का उपयोग दिन–प्रतिदिन बढ़ रहा है यांत्रिक ऊर्जा उपयोग में वृद्धि के निम्न कारण हैं–

1. यांत्रिक ऊर्जा विस्तृत कृषि हेतु उपयुक्त है।
2. समय की बचत।
3. श्रम की बचत।
4. दीर्घकालीन उपयोग में कम लागत आना।
5. यंत्रों की कार्य कुशलता अधिक होना।
6. सरकारी नीति में उदार ऋण व्यवस्था भी यांत्रिक ऊर्जा उपयोग में वृद्धि में सहायक है।

ऊर्जा उपयोग के उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि कृषि कार्यों में जैविक ऊर्जा की अपेक्षा यांत्रिक ऊर्जा का उपयोग तेजगति से बढ़ रहा है। यांत्रिक ऊर्जा में वृद्धि होना एवं मशीनों का बढ़ता हुआ उपयोग कृषि आधुनिकीकरण प्रक्रिया का ही परिणाम है। लेकिन इससे कृषि पारिस्थितिकी का भविष्य सुरक्षित नजर नहीं आता क्योंकि अधिक यांत्रिक ऊर्जा के प्रयोग से कृषि पारिस्थितिकी में दीर्घकालीन हानि दृष्टिगोचर होती है। अतः इसलिए जरूरी है कि यांत्रिक ऊर्जा के साधनों का प्रयोग किया जाये।

5.7 उन्नत किस्म के बीज एवं रासायनिक उर्वरकों का उपयोग

कृषि आदानों से तात्पर्य कृषि उपयोग में ली जाने वाली विभिन्न विनियोजनों से है। इनको मुख्य रूप से दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। प्रथम जिनके उपयोग हेतु कृषकों के मृदा विनियोजित करनी पड़ती है। इसमें उन्नत बीज, रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक औषधियाँ, खरपतवार नियन्त्रक औषधियाँ कृषियन्त्र एवं सिंचाई इत्यादि है। द्वितीय वर्ग में राइजोबियम एवं भूमि उपचार आदि है। इनमें कोई खर्चा नहीं करना पड़ता, बल्कि खेती की विभिन्न विधियाँ, जिनको वह अपना रहा है, उनमें फेरबदल करना होता है जैसे उर्वरकों का सही समय पर उपयोग, ढाल के विपरीत बुवाई, उचित गहराई पर बीज बोना, कतारों में बुवाई एवं कतारों के मध्य आवश्यक दूरी रखना आदि। वर्तमान में समुचित कृषि आदानों के साथ–साथ विकसित उन्नत विधियों से कृषि की जावे तो प्रति इकाई कृषि उत्पादन में वृद्धि की काफी सम्भावना है। उन्नत किस्म के बीजों, रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशक औषधियों इत्यादि का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है–

तालिका संख्या 5.4

उन्नत तथा अधिक उपज देने वाले बीजों के अन्तर्गत फसलों का क्षेत्रफल

(हैक्टेयर)

वर्ष	गेहूं (मैक्सीकन)	बाजरा	मक्का	ज्वार	जौ	चना	चावल
2006–07	192679	13376	अप्राप्त	अप्राप्त	23428	75887	2779
2007–08	155000	2880	अप्राप्त	अप्राप्त	37700	75500	2580
2008–09	190750	13005	अप्राप्त	अप्राप्त	58750	120250	4088

2009—10	135000	500	अप्राप्त	अप्राप्त	36000	86500	4973
2010—11	235665	4760	अप्राप्त	अप्राप्त	40000	135000	4121
2011—12	252500	अप्राप्त	अप्राप्त	अप्राप्त	34685	115640	6475
2012—13	250500	अप्राप्त	अप्राप्त	अप्राप्त	44775	101885	5110
2013—14	262352	अप्राप्त	अप्राप्त	अप्राप्त	50970	79220	5525

5.7.1 उन्नत किस्म के बीज

उन्नत कृषि विधियों के साथ–साथ उन्नत किस्म के बीजों का उपयोग भी उत्पादन वृद्धि की दृष्टि से विशेष महत्व रखते हैं। उन्नत किस्म के बीजों के कार्यक्रम को जैविक अभियान्त्रिकी का एक महानतम् वरदान माना है। पहले किसान खाने के अनाज में से ही बीजों का उपयोग करता था, इन बीजों का अंकुरण प्रतिशत कम होने के कारण बीज की अधिक मात्रा का उपयोग करना पड़ता था, अन्य बीजों का मिश्रण होने से खरपतवार की समस्या पैदा होती थी एवं फसल का एक साथ न पकना, किस्मों में रोग प्रतिरोधक व सूखा सहने की क्षमता न होना आदि के कारण उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता था।

देश में उन्नत बीजों की दिशा में राफफेशर का फाउण्डेशन की सहायता से सन् 1957 में मक्का की संकर किस्म और सन् 1960 में ज्वार बाजरा की उन्नत किस्मों के विकास का कार्यक्रम प्रारम्भ हुआ। इसी प्रकार सन् 1963 में राष्ट्रीय बीज निगम की स्थापना की गई। जिसके द्वारा प्रजनन बीज, बीज का प्रमाणीकरण, बीज परीक्षण, बीज विपणन आदि कार्य किए जाने लगे। इसी आधार पर अक्टूबर 1968 को देश में बीज अधिनियम लागू हो गया जो किसानों को वितरण से पूर्व बीज की गुणवत्ता पर नियंत्रण रखने के संदर्भ में है।

राजस्थान राज्य में सन् 1966 में सरकार के सहयोग से कृषि विभाग द्वारा मक्का, ज्वार, बाजरा की उन्नत किस्मों के बीजों का उत्पादन, विपणन हेतु एक इकाई की स्थापना की गई। जिससे इस कार्य में राष्ट्रीय बीज निगम द्वारा सहयोग मिलना प्रारम्भ हो गया राजस्थान राज्य में बीज उत्पादन कार्य को राष्ट्रीय बीज निगम एवं भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के माध्यम से सुखाड़िया विश्वविद्यालय, राजस्थान, राजस्थान राज्य बीज निगम, राजस्थान राज्य बीज प्रमाणिकरण संस्था एवं कृषि विभाग में विभाजित कर दिया है।

इस जिले में खरीफ की फसलों के लिए ज्वार, बाजरा, मक्का एवं खरीफ की दालें, मोंठ, मूंग, उड़द, अरहर, मूंगफली के उन्नत बीज एवं रबी फसल हेतु गेहूँ, जौ, चना, राई आदि के उन्नत बीजों का उत्पादन एवं वितरण होता है।

तालिका संख्या 5.5

प्रमुख फसलों के अन्तर्गत उन्नत बीजों का क्षेत्रफल

(प्रतिशत प्रत्येक फसल के कुल काश्त क्षेत्रफल पर)

फसल का नाम	2009–10	2013–14	परिवर्तन
गेहूँ	50.26	72.06	+21.80
जौ	98.67	149.94	+51.27
चना	68.13	139.54	+71.41
चावल	98.17	166.69	+68.52

स्रोतः कार्यालय उपनिदेशक कृषि विस्तार, गंगानगर

तालिका संख्या 5.5 के अन्तर्गत क्षेत्र की प्रमुख फसलों के अन्तर्गत उन्नत बीजों का प्रयोग प्रत्येक फसल के क्षेत्रफल के आधार पर दिखाया गया है। जिसमें सभी फसलों में उन्नत बीजों के बढ़ने का संकेत दिखाई दे रहा है।

जिसमें सबसे अधिक वृद्धि चने की फसल में हुई है। यह वृद्धि 71.41 प्रतिशत है।

5.8.1 गेहूँ –

पहले कृषक गेहूँ की देशी किस्म का ही अधिक उपयोग करता था लेकिन वर्तमान में कृषक कल्याण सोना, सोनालिका, राज 911, ऐ 9–30–1, के 65, राज 1555, लोक–1 डब्ल्यू एल प्रमुख किस्मों का प्रयोग करता है। जिले में गेहूँ प्रमुख खाद्यान्न होने के कारण कृषक उत्पादन में वृद्धि करने एवं गेहूँ की उन्नत किस्मों का उपयोग करता है लेकिन वर्तमान में क्षेत्र में सबसे अधिक कल्याण सोना, सोनालिका व राज–821 का अधिक उपयोग करता है क्योंकि इन किस्मों में कम सिंचाई पर भी अच्छा उत्पादन हो जाता है तथा गेहूँ खाने में भी स्वादिष्ट होता है।

सन् 2009–10 में जिले में 50.26 प्रतिशत क्षेत्र में उन्नत किस्म के बीज बोये गये एवं सन् 2013–14 में 72.06 प्रतिशत भूमि पर उन्नत किस्म के बीच बोये गये जिनका पाँच वर्ष में परिवर्तन का अन्तर 21.80 प्रतिशत रहा। सन् 2013–14 से उन्नत बीजों का उपयोग लगभग गंगानगर की सभी तहसीलों में होने लगा है। गेहूँ की उन्नत बीजों के उपयोग से क्षेत्र में प्रति हैक्टेयर उत्पादन में वृद्धि हुई है। गत पाँच वर्षों के अध्ययन करने से स्पष्ट हुआ है कि गेहूँ के क्षेत्र में सबसे अधिक उन्नत बीजों का उपयोग किया गया है।

5.8.2 जौ –

जौ यह रबी की फसल है लेकिन इसके क्षेत्र में निरन्तर बढ़ोतरी हो रही है। उन्नत किस्में आर.आर.बी. 1, आर.डी.बी. 103, बी.एल. 2, आर.डी.–387 प्रमुख है जो जिले में बोयी जाती है।

सन् 2009–10 में जिले में 98.67 प्रतिशत अन्तर 51.27 प्रतिशत रहा। सन् 2013–14 से उन्नत बीजों का उपयोग लगभग गंगानगर की सभी तहसीलों में होने लगा है। क्षेत्र में उन्नत किस्म के बीज बोये गये एवं सन् 2013–14 में 149.94 प्रतिशत भूमि पर उन्नत किस्म के बीच बोये जिनका पाँच वर्ष में परिवर्तन का जौ की उन्नत बीजों के उपयोग से क्षेत्र में प्रति हैक्टेयर उत्पादन में वृद्धि हुई है। गत पाँच वर्षों के अध्ययन करने से स्पष्ट हुआ है कि जौ के क्षेत्र में सबसे अधिक उन्नत बीजों का उपयोग किया गया है।

5.8.3 चना –

उत्पादन की दृष्टि से रबी की फसल में चना भी एक प्रमुख फसल है। चना व्यापारिक फसल होने के कारण इसका उत्पादन क्षेत्र बढ़ा है। आर.एस. –11, सी. 235, एच. 208, जी. 130 उन्नत किस्में उपयोग में ली जाती है। चने की उन्नत किस्म के उपयोग से प्रति हेक्टर उत्पादन में अधिक वृद्धि होती जा रही है। इस जिले में चने के काश्त क्षेत्र के वर्ष 2009–10 में 68.13 प्रतिशत भाग में उन्नत बीजों का उपयोग किया गया जो वर्ष 2013–14 में बढ़कर 139. 54 प्रतिशत हो गया इस प्रकार पिछले पाँच वर्षों में उन्नत बीजों के क्षेत्र में 71. 41 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। उपरोक्त किस्मों के अलावा जिले में अन्य फसलों जैसे मूंगफली, ग्वार, मूंग, उड़द आदि की उन्नत किस्मों का विवरण इस प्रकार है–

1. मूंगफली–पी.जी.–1, आर.एस.बी.–87, एस. 23
2. ग्वार–डी.सफेद, डी. जय, एफ.एस. –227
3. तिल–टी. 13, प्रताप, पी.बी. 1
4. मोठ–जादिया
5. मूंग–पी.बैसारवी, एस.–8, पी.एस.–7, बी.–44, के.–85

5.8.4 चावल –

उत्पादन की दृष्टि से रबी की फसल में चावल भी एक प्रमुख फसल है। चावल व्यापारिक फसल होने के कारण इसका उत्पादन क्षेत्र बढ़ा है। पूसा राईस, पूसा बासमती, पटना राइस, सोना मसूरी आदि किस्में उपयोग में ली जाती है। चावल की उन्नत किस्म के उपयोग से प्रति हेक्टर उत्पादन में अधिक वृद्धि होती जा रही है। इस जिले में चावल के काश्त क्षेत्र के वर्ष 2009–10 में 98.17 प्रतिशत भाग में उन्नत बीजों का उपयोग किया गया जो वर्ष 2013–14 में बढ़कर 166.69 प्रतिशत हो गया इस प्रकार पिछले पाँच वर्षों में उन्नत बीजों के क्षेत्र में 68.52 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

उपर्युक्त उन्नत किस्म के बीजों के क्षेत्र के सन्दर्भ में अध्ययन से स्पष्ट होता है कि उन्नत बीजों के प्रयोग के प्रति क्षेत्र के किसानों में रुचि बढ़ी है। परम्परागत बीजों को छोड़कर आधुनिक किस्म के बीजों के प्रयोग के निम्न कारण हैं–

1. अधिक फसल उत्पादन करने की लालसा के कारण।
2. सिंचाई सुविधा का अधिक खर्चीला होने के कारण।
3. जनसंख्या की अधिकता के कारण।
4. आधुनिक कृषि सुविधाओं के प्रति चेतना एवं सरकार और संस्थाओं के द्वारा सहायता।

5.7.2 रासायनिक खाद –

जिले में फसलों का औसत उत्पादन कम होने का प्रमुख कारण मृदा में पौषक तत्वों की कमी होना है। उनकी पूर्ति विभिन्न उर्वरकों के द्वारा की जाती है कृषि वैज्ञानिकों ने पौधों की वृद्धि एवं विकास के लिए अब तक 16 प्रमुख तत्वों को ज्ञात कर लिया है जो पौधों के लिए आवश्यक है। इनमें कार्बन, पोटास, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, नाइट्रोजन, फास्फोरस, कैल्सियम, मैग्निशियम्,

गंधक, लोहा, मैगनीज, बोरान, ताम्बा, जस्ता क्लोरिन आदि है। निरन्तर फसलें पैदा करते रहने से भूमि की उर्वरा शक्ति घटती जाती है जिसको बनाए रखने तथा वृद्धि करने हेतु खादों एवं उर्वरकों का प्रयोग आवश्यक है। विपुल उत्पादन देने वाले बीजों से अधिकतम लाभ तभी प्राप्त किया जा सकता है, जब तक उसमें उत्तम जल प्रबन्ध के साथ ही उर्वरकों का भी अनुकूलतम उपयोग हो। वास्तव में उर्वरक केवल सिंचित क्षेत्र में ही उत्पादन नहीं बढ़ाते हैं बल्कि असिंचित क्षेत्र की फसलों के प्रति हेक्टेयर उत्पादन की अभिवृद्धि में भी ये सहायक है। इस कारण रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग सघन कृषि प्रक्रिया के कारकों की एक पूंजी है। वर्ष 1960 के पूर्व जिले में परम्परागत रूप से पशुओं की गोबर खाद का उपयोग उर्वरकों के रूप में किया जाता था परन्तु इनकी मात्रा तथा उपलब्धता दोनों कम होने के कारण शस्य भूमि को पर्याप्त खाद प्राप्त नहीं हो पाती है जिससे उत्पादकता का स्तर न्यूनतम रहा। कृषि के लिए नाइट्रोजन, फास्फोरस एवं पोटास मुख्य पोषक तत्व है जिनकी पौधों के लिए अधिक आवश्यकता होती है। जिनका उपयोग एवं महत्व निम्न प्रकार है–

फास्फोरस का महत्व

1. फास्फोरस पौधों में कोशिकाओं के विकास हेतु आवश्यक है।
2. पौधों के लिए वसा एवं प्रोटीन निर्माण में सहायक एवं जनन के प्रभाव कम या उदासीन करता है।
3. यह फसल को शीघ्र पकाता है।
4. इससे पौधों में सूखा सहन करने की क्षमता में वृद्धि होती है।
5. पौधों में दीमक एवं चीटीयों के आक्रमण को सहन करने की शक्ति को बढ़ता है।
6. जड़ों की वृद्धि एवं तनों को मजबूत करता है।

नाइट्रोजन का महत्व

1. पौधों में प्रोटीन की मात्रा बढ़ जाती है।
2. पौधों की जड़ों का तीव्र विकास करता है।
3. पौधों में वृद्धि एवं पौधों की संख्या में वृद्धि करता है।
4. फलों की वृद्धि एवं उन्नत बीज निर्माण में सहायक।

पोटास का महत्व

1. यह तत्व दानों एवं फलों में अधिक गुदा पैदा करता है।
2. यह तत्व पत्तियों में शर्करा, स्टार्च के निर्माण में वृद्धि करता है।
3. पानी की हानि या नमी को नियन्त्रित करता है।
4. यह पौधों में बीमारी व कीड़ों के नुकसान को सहन करने की शक्ति को बढ़ता है।
5. गेहूँ, धान के पौधों में तने को मजबूत करता है।

5.8 उर्वरकों का उपयोग

अध्ययन क्षेत्र में रासायनिक उर्वरकों का उपयोग 2009–10 में जिले के प्रति हैक्टेयर 138727 मि. टन नाइट्रोजन (अमोनियम सल्फेट के रूप में) उर्वरक उपयोग में लिया गया था जबकि वर्ष 2013–14 में 218243 मि. टन नाइट्रोजन (अमोनियम सल्फेट के रूप में) खाद उपयोग में लिया गया। इस प्रकार पिछले पाँच वर्षों में इसमें प्रति हैक्टेयर 36.43 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। पिछले पाँच वर्षों में हुई प्रतिशत वृद्धि को तालिका संख्या 5.6 में दर्शाया गया है।

तालिका संख्या 5.6

रासायनिक उर्वरक का वितरण (मि. टन) वर्ष 2009–10 से 2013–14

वर्ष/केन्द्र	नाइट्रोजन (अमोनियम सल्फेट के रूप में)	फास्फेटिक (सुपर फास्फेट के रूप में	पोटेशियम
2009—10	138727	19404	551
2010—11	145735	43382	7390
2011—12	163516	34183	4788
2012—13	220773	40645	13994
2013—14	218243	48900	4400

स्रोतः कार्यालय उपनिदेशक कृषि विस्तार, गंगानगर

5.9 जैविक कृषि का महत्व एवं जलग्रहण कार्य

आजादी के समय खाने के लिए अनाज विदेश से आयात करते थे, कृषि उत्पादन बहुत कम होता था, फिर हरित क्रांति का दौर आया। नये–नये बीज व रासायनिक खाद आए। कीड़ों व बीमारियों को रोकने के लिए नई–नई दवाईयाँ आईं। भरपूर मात्रा में अनाज पैदा होने लगा। आज गोदाम गेहूँ, बाजरा आदि से भरे पड़े हैं, लेकिन यह दौर बुराईयाँ भी साथ लाया है। फसलें नये–नये कीड़ों व रोगों से भी ग्रसित हो गई हैं। जमीन का स्वास्थ्य खराब हो रहा हैं खेत से लवणों की मात्रा बढ़ रही है। भूमि की उत्पादन क्षमता में कमी आ रही है। कीटनाशकों से मनुष्यों में कैंसर जैसे भयानक रोग बढ़े हैं। साथ ही अनाज का स्वाद भी पहले जैसा नहीं रहा। यह सब बिना सोच–विचार किए रासायनिक खाद एवं कीटनाशकों के उपयोग के कारण हुआ है। हम अपने कृषि करने के देशी तरीकों को भूल रहे हैं। आज गोबर की खाद, हरी खाद, नीम को फिर याद करना है। देशी तरीकों का वैज्ञानिकों तरीकों से

समन्वय करना है। यह जैविक खेती में ही सम्भव है। इससे भूमि के स्वास्थ्य, अनाज के स्वाद और भूमि की पैदा करने की क्षमता कायम रखी जा सकती है। साथ ही बाजार में उपज की कीमत भी अधिक मिलती है।

जैविक खेती, देशी खेती का उन्नत तरीका है। इसमें रासायनिक खाद, कीटनाशकों, वृद्धि नियंत्रकों का उपयोग नहीं करके खेत में गोबर की खाद, कम्पोस्ट, जीवाणु खाद, फसल अवशेष, फसल चक्र एवं प्रकृति में उपलब्ध खनिज जैसे रॉक फास्फेट, जिप्सम आदि द्वारा पौषों की पोषक तत्व दिये जाते हैं। फसल को प्रकृति में उपलब्ध मित्र कीड़ों जीवाणुओं एवं जैविक कीटनाशकों द्वारा हानिकारक कीड़ों एवं बीमारियों से बचाया जाता है।

सन् 1992 में रियो डी जेनेरियो (ब्राजील) में आयोजित पृथ्वी सम्मेलन में एजेण्डा 21 के अन्तर्गत पृथ्वी बचाओ विषय पर जैविक खेती पर चर्चा हुई। सन् 2002 में जोहान्सबर्ग (दक्षिणी अफ्रीका) में तीसरे विश्व पर्यावरण सम्मेलन में जैविक खेती पर चर्चा हुई। सन् 1992 में कृषि विभाग, राजस्थान द्वारा राजस्थान कृषि महाविद्यालय उदयपुर में सर्वप्रथम जैविक कृषि पर सम्मेलन का आयोजन किया गया जो कि प्रथम राष्ट्रीय जैविक सम्मेलन था। जैविक खेती की, कृषि उत्पादन में टिकाऊपन के लिए, मृदा की जैविक गुणवत्ता बनाये रखने के लिए, प्राकृतिक संसाधनों को बचाने के लिए, वातावरण प्रदूषण को रोकने के लिए, मानव स्वास्थ्य की रक्षा हेतु, उत्पादन लागत को कम करने आदि के लिए अत्यावश्यक है। जैविक खेती को बढ़ावा देने हेतु कृषि विभाग द्वारा निम्न सुविधाएँ किसानों को उपलब्ध करवायी जा रही हैं ताकि कृषि भूमि का संरक्षण किया जा सके।

जैविक खेती को मुख्यतः दो घटकों में बांटा सकते हैं। पहला पोषक तत्व प्रबन्ध तथा दूसरा कीड़ों एवं रोगों से रक्षा अर्थात् समेकित नाशीजीव प्रबन्ध करना।

बंजर भूमि का विकास एवं क्षरीय मृदा का ह्रास–बंजर भूमि के विकास के साथ उपजाऊ भूमि की प्रतिशत बढ़ाना तथा भौतिक कारणों से उपस्थित क्षारीयता को पारंपरिक तरीकों से कम करना या ह्रास करना मुख्य कार्य होते हैं। जिनका समावेश भी एकीकृत जल ग्रहण कार्यक्रमों के दौरान किया गया है।

5.10 जैविक विधि से पौषक तत्व प्रबन्ध

जैविक विधि से पौषक तत्व प्रबन्ध के अन्तर्गत, पौधों को अपना जीवन पूर्ण करने के लिए सोलह प्रकार के पौषक तत्वों की आवश्यकता होती है। इनमें कार्बन, हाइड्रोजन व ऑक्सीजन पौधों को पानी व हवा से मुफ्त मिल जाते हैं, जबकि जस्ता, मैंग्नीज, लोहा, तांबा, बोरोन, मालीब्डेनम एवं कोबाल्ट की बहुत कम मात्रा में आवश्यकता होती है। मिट्टी में कैल्शियम एवं मैग्नेशियम की प्रायः कमी नहीं पायी जाती है। इन तत्वों का बहुत छोटा भाग दोनों में संग्रहित होता है अतः यदि फसल अवशेष, कम्पोस्ट, गोबर की खाद आदि का नियमित उपयोग किया जावे तो पौधों के लिए इन तत्वों के साथ पोटाश की भी कमी नहीं रहती है, क्योंकि मनुष्य के लिए उपयोगी दोनों में पोटाश की बहुत ही कम मात्रा पाई जाती है।

पौधों के लिए शेष तीन महत्त्वपूर्ण पोषक तत्वों में गंधक की व्यवस्था जिप्सम का उपयोग कर की जा सकती है। इसी प्रकार प्रकृति में उपलब्ध रॉक फास्फेट, खनिज एवं पी.एस.बी. व पी.एस.एम. जीवाणु खादों द्वारा फास्फोरस की व्यवस्था की जा सकती है। इसके लिए रॉक फास्फेट को खेत में डालें। बीज को बोने से पहले पी.एस.बी. या पी.एस.एम. जीवाणु खाद से उपचारित करें।

पौधों की नत्रजन की आवश्यकता की पूर्ति निम्नलिखित तरीकों से की जानी चाहिए–

- एक ही प्रकार की फसल हर साल नहीं उगायें। वर्ष में एक बार दाल वाली फसल अवश्य बोनी चाहिए। बाजरा, मक्का, ज्वार, तिल के बाद सदी में चना, मसूर आदि बोयें। गेहूँ, जौ, सरसों के बाद चौमासे में मूंग, मौठ, उड़द, अरहर, मूंगफली बोयें। दाल वाली फसल की जड़ों में राइजोबियम की गांठे होती हैं। ये गांठे यूरिया की छोटी–छोटी फैक्ट्रियों का काम करती हैं।
- फसलों के अवशेष में आधा प्रतिशत तक नत्रजन होता है, इसलिए इसका कम्पोस्ट बनाकर उपयोग करें। इससे पोषक तत्वों के साथ भूमि में कार्बन की मात्रा बढ़ती है, जो जमीन में नत्रजन को रोकने के लिए आवश्यक है।
- पशुओं के पेशाब में गोबर से भी अधिक मात्रा में नत्रजन होती है। इसका समुचित उपयोग करने के लिए पशु के बैठने के स्थान पर रॉक फास्फेट की थोड़ी मात्रा डालनी चाहिए। पशु के पेशाब में मिले हुए रॉक फास्फेट को सुपर कम्पोस्ट बनाने में काम लेना चाहिए, इससे कम्पोस्ट में नत्रजन की मात्रा में काफी बढ़ोतरी हो जाती है।
- उपलब्ध गोबर व कचरे से केंचुआ खाद (वर्मी कम्पोस्ट) तैयार करना चाहिए। वर्मी कम्पोस्ट में पोषक तत्वों की मात्रा सामान्य कम्पोस्ट के मुकाबले ज्यादा होती है।
- दलहनी फसलों के बीच को राईजोबियम जीवाणु खाद से उपचारित करके बुवाई करें। जड़ों में उपस्थित रहकर यह जीवाणु वातावरण की नत्रजन को सीधे पौधों को उपलब्ध कराता है। साथ ही अगले मौसम में उगाये जाने वाली फसल के लिए भी जमीन में नत्रजन की उपलब्धता बढ़ाता है।

- बाजरा, ज्वार, मक्का, गेहूँ व जौ में एजेटोबैक्टर जीवाणु खाद से बीज का उपचार कर बुवाई करनी चाहिए। यह जमीन में स्वतन्त्र रूप से रहकर हवा की नत्रजन को खाता रहता है और बढ़ता रहता है। यह जीवाणु मर जाता है और इसके शरीर की नत्रजन कुछ समय बाद पौधों को मिल जाती है। इसी प्रकार धान की फसल में एजोला का उपयोग कर हवा की नत्रजन का उपयोग सम्भव है।
- ग्वार, ढेंचा, सनई की हरी खाद से जमीन में नत्रजन व कार्बन की मात्रा बढ़ जाती है।
- नीम, अरण्डी, करंज की खलियों का उपयोग भी नत्रजन की आपूर्ति के लिए किया जा सकता है। बुवाई के एक माह पहले 10–12 टन खली को एक हैक्टेयर खेत में मिलावें।
- ऊन की खाद, मुर्गी की बींट, भेड़–बकरियों की मींगनी, खून की खाद, हड्डी की खाद आदि का उपयोग जमीन में पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाता है अतः इसका उपयोग भी फायदेमंद रहता है।

अध्ययन क्षेत्र में उपर्युक्त सभी उपायों को समन्वित रूप से अपना कर नत्रजन की आपूर्ति बनाये रखी जा सकती है।

5.11 बीमारियों का प्रबन्ध

जैविक तरीकों से बीमारियों की रोकथाम कीड़ों की बजाय कठिन होती है। अतः रोगों से बचने के लिए शुरू से सावधान रहना आवश्यक है। एकीकृत जलग्रहण कार्यक्रमों में ऐसी बीमारियों से बचाव एवं उसके लिए उपर्युक्त प्रशिक्षण कृषकों को दिया जाता है।

- भूमि के जीवाणुओं को नष्ट करने के लिए गर्मियों में गहरी जुताई करनी चाहिए। इससे जमीन में छुपे जीवाणु नष्ट हो जाते हैं।

- एक ही फसल की बुवाई लगातार नहीं करनी चाहिए। इससे फसल में लगे कीटाणुओं को अगले मौसम में पोषक पौधे नहीं होने से भोजन नहीं मिलेगा और मर जायेंगे।
- रोगरोधी उन्नत किस्मों की बुवाई करनी चाहिए। क्योंकि इनमें रोगों से लड़ने की शक्ति होती है।
- बीज को गर्मी की तेज धूप में सुखावें। इससे बीज में मौजूद जीवाणु मर जाते हैं।
- ट्राइकोडर्मा मित्र फफूंद है। यह रोग फैलाने वाली फफूंद की बढ़त को रोक देती है। अतः बीज को ट्राइकोडर्मा (फफूंद) से उपचारित करके बोवें। इससे भूमि व बीज जनित रोगों से एक हद तक छुटकारा मिल सकता है।
- फसल में रोगी पौधों को देखते ही उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए। इसके दो फायदें होंगे। पहला रोग का फैलाव नहीं होगा। दूसरा जमीन में जीवाणुओं की संख्या कम होगी, इससे अगले वर्ष फसल पर रोग का प्रकोप कम होगा।

इस प्रकार जैविक खेती में समेकित पोषक तत्व प्रबन्ध एवं समेकित नाशीजीव प्रबन्ध में प्रवृत्ति में उपलब्ध जैविक घटकों का आवश्यकता के अनुसार उपयोग किया जाता है।

5.12 जीवाणु खाद का उपयोग के लिए प्रशिक्षण

वायुमण्डल की नत्रजन व भूमि के फास्फोरस को पौधों को उपलब्ध कराने वाले जीवाणुओं को जीवित अवस्था में लिग्नाइट व कोयले के चूरे में मिलाकर जीवाणु खाद बनाया रखा जाता है। जीवाणु खाद में इन लाभदायक जीवाणुओं की संख्या एक ग्राम में दस करोड़ से अधिक रखी जाती है। ये जीवाणु तीन प्रकार के होते हैं।

- राइजोबियम जीवाणु दलहनी फसलों की जड़ों पर गुलाबी रंग की गांठे बनाकर उनमें रहते हैं तथा हवा में से नत्रजन लेकर पौधों को उपलब्ध कराते हैं। अलग–अलग फसल के लिये राइजोबियम की अलग–अलग प्रजाति होती है।
- एजेटोबेक्टर जीवाणु खाद, गैर दलहनी फसलों में उपयोग की जाती है एजेटोबेक्टर जमीन में स्वतन्त्ररूप से रहकर हवा की नत्रजन को ग्रहण कर भूमि में छोड़ते हैं। यह नत्रजन पौधों को उपलब्ध हो जाती है।
- फास्फेट विलेयक जीवाणु (पी.एस.बी.) फसलों को फास्फोरस मुख्यतः डीएपी एवं सिंगल सुपर फास्फेट के रूप में दिया जाता है। इसका एक बड़ा भाग जमीन में अघुलनशील हो जाता है। जिसे पौधे ग्रहण नहीं कर सकते हैं। पी.एस.बी. इसी अघुलनशील फास्फोरस को पौधों में घुलनशील बनाकर उपलब्ध करता है।

आवश्यकतानुसार पानी में 250 ग्राम गुड़ को घोलकर गर्म करें। इसे ठंड़ा कर, इसमें 600 ग्राम जीवाणु खाद मिलावें। अब इस घोल को एक हैक्टेयर क्षेत्र के बीजों पर छिड़कते हुए हल्के हाथों से बीजों को पलटते जावें। जिससे बीजों के ऊपर स्थान पर सुखाकर शीघ्र ही बुवाई कर देवें।

5.13 किसान मित्र कीटों का संरक्षण एवं वितरण

सभी कीट फसलों को नुकसान पहुँचाने वाले दुश्मन कीट नहीं होते हैं। कुछ कीट ऐसे भी होते हैं जो फसल को नुकसान पहुँचाने वाले कीड़ों को नष्ट करते हैं। अतः नियन्त्रण केवल रसायनों से ही नहीं होता बल्कि 'जीव जीवस्य भोजनम्' के सिद्धान्त पर प्रकृत्ति भी कीट नियन्त्रण करती है। इन लाभकारी कीटों को मित्र कीटों के नाम से जानते हैं। इनमें से कुछ लेड़ी वर्ड बीटल, मेन्टिस, स्पाईडर, रिडुविड, ड्रेगोन, फ्लाईमड–वैस्प, रोबर फ्लाई, क्राईसोपा, किंग क्रो, विभिन्न प्रकार की मकड़ियाँ आदि हैं। इनके अतिरिक्त इनकी संख्या

को मछलियाँ, मेढ़क, छिपकली, सांप, कौवे, मैना व कठ फोड़वा आदि नियन्त्रित करने में सहायक होते हैं। परभक्षी कीटों में लेडीबर्ड बीटल प्रमुख है। इसकी विभिन्न प्रजातियाँ मोयला, चेंपा, माहू, तेला, स्कल, मिलीबग आदि कीटों के नियन्त्रण में प्रमुख योगदान देती है। इनकी वयस्क अवस्था प्रतिदिन 50 मोयला खा जाती है।

क्रायसोपा हरे पंख वाला कीट होता है। यह मोयला, सफेद मक्खियों, चूर्णवत छोटे कीड़ो, और अण्डों तथा कपास के बीच के गोले के कीड़ों के शुरूआती अवस्था की सुण्डियों या लटों को खाकर जिन्दा रहती हैं। जैविक खेती को सफल बनाने के लिए इन मित्र कीटों, पक्षियों आदि को पहचान कर इनका संरक्षण करना चाहिए। यदि फसल में दो कीट व एक मित्र कीट के अनुपात में उपस्थित हैं तो किसी प्रकार के कीटनाशक का छिड़काव करना जरूरी नहीं है।

ट्राइकोग्रामा की एक मित्र कीट है, आकार में इतना छोटा होता है कि एक आलपिन के सिर पर 8–10 वयस्क एक साथ बैठ सकते हैं। यह कीट लेपिडोप्टेरा समूह के हानिकारक कीड़ों के अण्डों में अपने अण्डे देकर अपना जीवन चक्र शुरू करता है एवं प्यूंपा अवस्था तक परपोषी के अण्डों में ही रहता है। वयस्क अवस्था में बाहर निकलकर पुनः हानिकारक कीटों के अण्डों में अपने अण्डे देना प्रारम्भ कर देता है। इसका जीवनचक्र गर्मी में 8–10 दिन में एवं सर्दी में 9–12 दिन में पूरा होता है।

5.15 खरपतवार नियन्त्रण

फसल के साथ–साथ उगने वाले अवांछित पौधों को खरपतवार कहते हैं। कीटनाशक बीमारियों की भांति खरपतवार भी फसल हेतु एक समस्या है। फसल उत्पादन में सामान्यतया 10 से 30 प्रतिशत तक खरपतवार से हानि होती है। कभी–कभी यह मात्रा और भी बढ़ जाती है। ये खेतों में पौधों के

साथ उगकर मृदा नमी, पोषक तत्व आदि के लिए फसल के साथ–स्पर्धा करते हैं एवं कीट बीमारियों को आश्रय देते हैं, जिससे फसल उत्पादन में प्रतिकूल प्रभाव पड़ता हैं खरपतवार को नियन्त्रित करने के लिए खरपतवारों को समूल नष्ट करना और खरपतवारों की रोकथाम करना आवश्यक है।

खरपतवार नियन्त्रण की तीन प्रमुख विधियाँ हैं–

1. यान्त्रिक विधियाँ
2. शस्य पद्धति
3. रासायनिक पद्धति

1). **यान्त्रिक विधि**–हाथ द्वारा उखाड़ना, हाथ द्वारा गुड़ाई, खरपतवार को जलाना, खरपतवार वायवीय भाग को बार–बार काटते रहना, खरपतवार से ग्रसित क्षेत्र को पानी से भरकर बहुवर्षी खरपतवार हेतु जुताई आदि करना प्रमुख है।

2). **शस्य पद्धति**–बदलती हुई फसलों को बोना, खाद का प्रयोग, प्रतिस्पर्धा फसलों को बोना, उर्वरकों सिंचाई एवं बीज बोने की प्रभावी पद्धतियाँ आदि सहायक है।

3). **रासायनिक पद्धति**–विभिन्न रासायनिक पद्धतियों का प्रयोग करके खरपतवार को नष्ट किया जा सकता है एवं मिट्टी संरक्षण कार्य से भी खरपतवार को नियन्त्रित किया जा सकता है। टी.सी.ए. सोड़ियम क्लोरेट, बोरेक्स आदि रसायन जब जड़ों से सम्पर्क करते हैं तो खरपतवार को नष्ट कर देते हैं। इसी तरह वार्षिक खरपतवार हेतु समेजी, डालीपान एवं रेन एक्स, टी. घासों के लिए गेहूँ, जो, रूई में 1–2–4 डी. चौड़ी पत्ती वाली खरपतवार हेतु सिमाजीन एवं 2–2–4 डी., मक्का में एट्रोजन एवं टेफाजीत एवं गन्ने में ट्रापोटोक्स आदि उपयोगी है।

जिले में खरपतवार नियन्त्रण कार्य अधिकांशतः यान्त्रिक विधि से किया जाता है, फिर भी कुछ क्षेत्रों में रसायनों का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार पौध संरक्षण कार्य के अन्तर्गत बीज उपचार, मिट्टी उपचार चूहा नियंत्रण, खरपतवार नियंत्रण आदि के लिए औषधियों का प्रयोग किया जाने लगा है।

निष्कर्ष

उक्त अध्ययन से पूर्णतः स्पष्ट है कि गंगानगर जिले में गंगनहर से गत वर्षों में कृषि के सिंचित क्षेत्र में वृद्धि के साथ–साथ कृषि यंत्रीकरण में वृद्धि हुई है तथा कृषि की दुपज फसलों में बढ़ोतरी हुई है। फसलों का औसत उत्पादन कम होने का प्रमुख कारण मृदा में पोषक तत्वों की कमी होना है। उनकी पूर्ति विभिन्न उर्वरकों के द्वारा की जाती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. घायल ई.. (1978) : ''ए मेजर ऑफ क्रोपिंग इंटेनसिटी, '' प्रोफेशनल ज्योग्राफर।
2. भाटिया, एस.एस. (1965) : ''पैटर्न ऑ्फ क्रोप कन्सन्ट्रेशन एण्ड डाइवरसिफिकेशन इन इण्डिया,'' इकॉनोमिक ज्योग्राफी।
3. नित्यानन्द, (1972) : ''क्रोप काम्बीनेशनस इन राजस्थान'', ज्योग्राफीकल रिव्यू ऑफ इण्डिया।
4. भाटिया एस. एस. (1969) : ''एन इन्डेक्स ऑफ डाइवरसिफिकेशन,'' प्रोफेशनल ज्योग्राफर।
5. घायल, ई. (1984) : ''एग्रीकल्चरल प्रोडक्टीविटी इन इण्डियां,'' ए स्पेशियल एनालिसस।
6. चिशोल्म, एम. (1954) : ''प्रोब्लम इन द क्लासिफिकेशन एण्ड यूज ऑफ फार्मिंग टाइप रीजन्स'', इनसट ऑफ ब्रिटिश ज्योग्राफरस, ट्रान्सेक्शनस नेड पेपर्स।
7. मोहम्मद, अली (1980) :रीजनल इनबेलेसस इन लेवल्स ऑफ प्रोटेक्टीविटी।
8. नाथ वी. (1969) : '' द ग्रोथ ऑफ इण्डियन एग्रीकल्चरल, ए रिजनल एनालिसि'' द ज्योग्राफिकल रिव्यू।

अध्याय षष्ठम

कृषि पारिस्थितिकी

संसार की निरन्तर बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण कृषि का क्षितिजीय एवं लम्बवत विकास हुआ है। इसके कारण पारिस्थितिकी संतुलन बिगड़ता जा रहा है। जिसको बचाने के लिए कृषि की रूपरेखा, पद्धति एवं प्रारूप में परिवर्तन लाना होगा। भारत में जल की मात्रा के आधार पर तीन प्रकार की कृषि की जाती है। वर्षा आधारित कृषि, शुष्क कृषि एवं सिंचित कृषि। शुष्क कृषि प्रायः शुष्क क्षेत्रों में की जाती है जहाँ की पारिस्थितिकी बहुत नाजुक है। इससे अनेक समस्याऐं उत्पन्न हो जाती हैं। सिचिंत कृषि सामान्यतया मैदानी भागों में की जाती है। सिंचाई की अधिक गहनता से भी बहुत समस्याऐं पैदा हो रही है जो पर्यावरण की ह्मस कर रही है।

पर्यावरण के ह्मस से उत्पन्न पारिस्थितिकीय समस्याओं के अनेक कारण हैं परन्तु आधुनिक औद्योगीकरण के युग में वैज्ञानिकों ने अपना ध्यान मनुष्य की ओर केन्द्रित किया है क्योंकि पर्यावरण क्षय में मानव की प्राथमिक भूमिका रही है। निरन्तर तेजी से बढ़ती जनसंख्या, संसाधनों का अन्धाधुन्ध विदोहन, अनियंत्रित विकास, वन विनाश, जहरीले रसायनों का उपयोग, अनियिमित तकनीकों का प्रयोग एवं आणविक शस्त्रों के प्रयोग के फलस्वरूप पर्यावरण की अपूर्व क्षति हुई है जो सम्पूर्ण जीवो के लिए खतरे का प्रतीक है। इन पारिस्थितिकीय समस्याओं का मूलरूप से मानव उत्तरदायी है। अतः मानव ही अध्ययन का केन्द्र बनता जा रहा है। पारिस्थितिकी अब केवल सैद्धान्तिक अवधारणा नही बल्कि व्यवहारिकता में बदलती जा रही है। इनके अध्ययन का उद्देश्य अब व्यापक हो गया है। जैव जगत के संरक्षण सम्बन्ध एवं जैविय विविधता संरक्षण अध्ययन के मुख्य उद्देश्य बन गये हैं। चूंकि कृषि मनुष्य का

सबसे प्राचीन एवं मुख्य व्यवसाय है जिसके विकास के लिए वह निरन्तर अग्रसर रहा है, इसलिए कृषि पारिस्थितिकी की ओर ध्यान आकर्षित करना अधिक आवश्यक है।

6.1 कृषि पारिस्थितिकी की संकल्पनाः

मानव के कृषि युग में प्रवेश के उपरान्त निरन्तर बढ़ती जनसंख्या के फलस्वरूप भरण–पोषण की आवश्यकता निरन्तर बढ़ती गई। अतः एक ओर जनसंख्या का फैलाव नये क्षेत्रों में होता गया वही दूसरी ओर कृषि हेतु वनो की अन्धाधुंध कटाई, सिचांई हेतु बाँधो का निर्माण पशुओं के लिए चरागाहों की व्यवस्था, सड़कों का निर्माण तथा आय, आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक कार्यों के लिए मानव प्रकृति–संघर्ष आरंभ हुआ। परन्तु पहले संसाधन अधिक थे और मानव की जनसंख्या कम थी इसलिए पर्यावरण संतुलित बना रहा। परन्तु मानव जनंसख्या में निरन्तर तीव्र गति से वृद्धि हुई और इसी दर से जनसंख्या वृद्धि होती रही है तो प्रत्येक 35 वर्ष में संसार की जनसंख्या दोगुनी होती जायेगी। जनसंख्या वृद्धि के फलस्वरूप भूमि पर दबा बढ़ता गया। वनों को काटकर कृषि को जाने लगी। कृषि विकास के साथ–साथ औद्योगिक विकास एवं पशुपालन के रूप में बदलवा आ गया। फलस्वरूप पर्यावरण का ह्रास निरन्तर होता रहा है। इसीलिए भारतीय कृषि का पारिस्थितिकी के सन्दर्भ में अध्ययन करना आवश्यक हो गया है।

6.2 शुष्क कृषि –

शुष्क कृषि एवं शुष्क क्षेत्रीय कृषि साधारणतया एक दूसरे के समानार्थी माने जाते है परन्तु दोनों में विशेष अन्तर है। शुष्क कृषि का तात्पर्य उस कृषि से है जो बिना सिंचाई के केवल वर्षा पर आश्रित है जबकि शुष्क क्षेत्रों में की जाने वाली कृषि को शुष्क क्षेत्रीय कृषि कहते है। चाहे वह केवल वर्षा पर आधारित हो या सिंचाई पर आधारित हो या दोनों पर आधारित है। शुष्क

क्षेत्रीय कृषि नाजुक, कम उत्पादक एवं उच्च जोखिम वाली पारिस्थितिकी तंत्र से संबंधित हैं।

शुष्क क्षेत्रीय कृषि भारत के उन भागों में की जाती है जहाँ वार्षिक वर्षा की मात्रा 75 मी.मी. से कम पाई जाती है। इस प्रकार की कृषि लगभग 31,709,000 हे भूमि में की जाती हैं जो देश के समस्त कृषि क्षेत्र का लगभग 22 प्रतिशत है। शुष्क क्षेत्रीय कृषि मूलतः राजस्थान एवं गुजरात में की जाती हैं जहाँ पर इसके अन्तर्गत क्रमशः 75 प्रतिशत एवं 20 प्रतिशत क्षेत्रफल पाया जाता है। शुष्क क्षेत्र में केवल वर्षा की मात्रा ही कम नही है बल्कि यह अत्यन्त अनिश्चित है जिसके कारण यह क्षेत्र दो या तीन वर्षो के अन्दर सूखें एवं भूखमरी के चपेट में आ जाते है। वर्षा की अनिश्चितता इसकी मात्रा, गहनता, एवं मौसमानुसार वर्षा होना, यहाँ पर समस्या है। इसके अतिरिक्त यह थोडी बहुत वर्षा मिट्टी के खोखले होने के कारण जमीन की निचली तह में प्रवेश कर जाती हैं तथा इसकी मात्रा का अधिक तापक्रम के कारण वाष्पीकरण हो जाता है। अन्ततः कृषि में उपयोग के लिए वर्षा की बहुत कम मात्रा रह जाती है।

शुष्क क्षेत्रों की मृदा एवं कम उपजाऊ है। सिंचाई के साधनों का भी अत्यन्त अभाव है। कृषि के नये आयामों जैसे आधुनिक यंत्र रासायनिक उर्वरक, अधिक उपज वाले बीज, कीटनाशक दवाओं आदि का प्रयोग कम है। चूंकि शुष्क क्षेत्रों की पारिस्थितिकी बहुत नाजुक हैं। अतः आधुनिक आयामों का अत्यधिक प्रयोग करके गहन कृषि भी नहीं की जा सकती है। अतः कृषि उपज एवं उत्पादकता भी बहुत कम है।

शुष्क क्षेत्र कृषि प्रधान क्षेत्र है जहाँ पर जनसंख्या का लगभग 75 प्रतिशत भाग कृषि पर आधारित है। जहाँ पर लगभग 65 प्रतिशत क्षेत्र पर कृषि की जाती है जबकि 70 प्रतिशत भूमि कृषि योग्य बन्जर है लगभग 12 प्रतिशत भूमि परती है और केवल 4 प्रतिशत भूमि स्थाई चरागाहों के लिए प्रयोग की

जाती है। कृषि के लिए प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण शस्य उपज एवं उत्पादकता कम है। इन क्षेत्रों में देश का केवल 2.41 उत्पादन होता है। यहाँ पर मुख्य रूप से मोटे अनाज जैसे ज्वार, बाजरा, मक्का आदि पैदा किये जाते है। इसके अतिरिक्त कपास, मूगंफली, दाले एवं तिलहन की भी पैदावार होती है।

6.2.1 शुष्क कृषि की समस्यायें:–

1. यहाँ पर वर्षा की मात्रा कम है जिसका अधिकांश भाग भूमि में प्रवेश करने के बजाय नदियों नालो द्वारा बह जाता है या उसका वाष्पीकरण हो जाता है।
2. यहाँ की वर्षा में हर प्रकार की अनिश्चितताएँ अर्थात यह क्षेत्र साधरणतया 2 या 3 साल में सूखे एवं भूखमरी के चपेट में आते है।
3. उसकी मात्रा, गहनता, आनेजाने का समय, मौसमी–चक्र आदि में अनिश्चितताएँ है।
4. यहाँ की मिट्टी बलुई हैं जिसमें पोषण तत्वों की कमी पाई जाती है।
5. चूंकि यहाँ की मिट्टी बलुई है औरद यहाँ पर वर्षा की गहनता एवं तेज हवाएँ अधिक चलती है अतः मृदा अपरदन की घोर समस्या है।
6. शुष्क कृषि की शस्यों के उगाने का समय लम्बा है, जोकि फसल ऋतुओं से मेल नही खाता है और जिसका प्रभाव शस्यों के उपज एवं उत्पादकता पर पडता है।
7. इन क्षेत्रों में सिंचाई के साधनों का अत्यन्त अभाव है तथा सिंचाई जल की उपलब्धता भी अधिक अनिश्चित है।
8. यहाँ पर कृषि की भौगोलिक सुविधाएँ जैसे बाजार, परिवहन, बैंकिग, आदि का अभाव है जिसका प्रभाव यहाँ की कृषि एवं कृषको पर पड़ता है।

9. जिन क्षेत्रों में सिचाई की व्यवस्था है जैसे इंदिरा गाँधी नहर परिक्षेत्र, वहाँ पर क्षारता एवं लवणता की समस्या है।
10. शुष्क कृषि क्षेत्रों के कृषक गरीब होते है तथा उनकी आर्थिक स्थिति दयनीय होती है जिसके कारण वह कृषि में आधुनिक आयामों का प्रयोग नही कर पाते है।
11. यहाँ के कृषि शिक्षा क्षेत्र में काफी पिछड़े हुए है जिसका भी कृषि पर कई प्रकार से प्रभाव पड़ रहा है।
12. इन क्षेत्रों में जोताकार भी छोटा है तथा यहाँ भी छोटे–छोटे खेतों के रूप में बिखरा हुआ है जिससे कृषि मशीनीकरण की भी समस्या है।
13. शुष्क कृषि क्षेत्रों की पारिस्थितिकी अत्यन्त नाजुक है। वर्षा एवं सिंचाई के साधनों का अभाव एवं अनिश्चितता कृषकों की गरीबी, अनउपजाऊ भूमि, शिक्षा का अभाव आदि के कारण यहाँ के कृषि का सुचारू रूप से आधुनिकरण नही हो सकता है और कृषक नये आयामों का प्रयोग भी नही कर सकते है।

6.3 सिंचित कृषि –

खेत में मनुष्य द्वारा पानी पहुँचाने की प्रक्रिया को सिंचाई कहते है तथा सिंचाई पर अकृषि को सिंचित कृषि कहते हैं। परन्तु आजकल बिरला ही कोई ऐसा क्षेत्र होगा जहाँ कृषि केवल सिंचाई पर आश्रित है। भारत में सामान्यतया प्रत्येक क्षेत्र में कृषि वर्षा एवं सिंचाई दोनों पर निर्भर करती है कुछ क्षेत्रों में कृषि वर्षा पर अधिक निर्भर करती है और कुछ क्षेत्रों पर सिंचाई पर अधिक आश्रित होती है।

भारत में सिंचाई की प्रथा बहुत प्राचीन है। वेद पुराणों में नहरों, कुओं एवं तालाबों का वर्णन मिलता है। मेगस्थनीय ने सिंचाई का वर्णन किया है। द्वितीय शताब्दी में कावेरी पर ग्रान्ड एनीकट बनाना, 11वीं सदी में भोपाल में भोजपुर झील का निर्माण एवं तुगलक तथा मुगल शासकों द्वारा सिंचाई की

नहरों की खुदाई इस तथ्य के प्रमाण हैं कि भारत में सिंचित कृषि का प्रचलन अत्यधिक व्यापक था। तत्पश्चात् अंग्रेजो द्वारा बड़े पैमाने पर देश के विभिन्न क्षेत्रों में नहरों के निर्माण एवं स्वतंत्रता पश्चात् भारत द्वारा विभिन्न पंच वर्षीय योजनाओं में बहुउद्देशीय योजनाओं का निर्माण इस बात के प्रमाण हैं कि भारत में सिंचाई की अत्यधिक आवश्यकता है तथा भारत में सिंचित कृषि का बहुत महत्व है और यह यहाँ पर वृहद पैमाने पर की जाती है।

6.4 कृषि में सिंचाई की आवश्यकता –

1. **वर्षा का असमान वितरणः–** भारत में औसत वार्षिक वर्षा लगभग 100 से.मी. है जोकि देश के सभी भागों में समान नहीं है। पश्चिमी तट तथा पूर्वी भारत में वार्षिक वर्षा 250 से.मी. से अधिक है। जबकि उत्तरी मैदान एवं पूर्वी पठारी भाग में 100–60 से.मी. वर्षा होती है। इसके विपरीत देश के अर्धशुष्क भागों में 60 से.मी. एवं शुष्क भागों में 25 से.मी. से भी कम वर्षा होती है।

2. **वर्षा की मात्रा में विचलनः–** वर्षा कम एवं उसका वितरण असमान है, अपितु इसकी मात्रा में अधिक क्षेत्रीय विचलन है। विशेष रूप से जिन क्षेत्रों में वर्षा की मात्रा कम है वहाँ पर इसका विचलन अधिक है। देश के अधिकांश भागों में वर्षो का विचलन 25 प्रतिशत से अधिक है मगर उत्तर पश्चिमी भाग में यह 60 प्रतिशत से भी अधिक है जिसके कारण देश का यह भाग सूखे एवं भूखमरी के चपेट में प्रायः आया करता है। इसी कारण सुनिश्चित मात्रा में जल उपलब्धता के लिए कृषि को सिंचाई पर आश्रित रहना पड़ता है।

3. **मौसमी वर्षाः–** भारत में वार्षिक वर्षा सम्पूर्ण वर्ष में समान रूप से वितरित नहीं होती है। इसका लगभग 90 प्रतिशत भाग वर्षा ऋतु में प्राप्त होता है और कुछ भागों में इसका 50–60 प्रतिशत केवल जुलाई एवं अगस्त में

होता है। शेष मौसमों में इस वर्षा की मात्रा बहुत कम है अतः सर्दी एवं गर्मी के मौसमों में बोई जाने वाली लगभग सभी शस्य सिंचाई पर आश्रित होती है।

4. **वर्षा की अनिश्चितताः–** वर्षा के आगमन का कोई निश्चित समय नही है। कभी यह जल्दी और कभी देर से आता है इसी प्रकार कभी जल्दी एवं कभी देर से वापस लौट जाता है। इसके कारण शस्यों के बोने एवं काटने के समय के सुनिश्चित करने के लिए सिंचाई की अनिवार्य आवश्यकता है।

5. **कृषि मौसम में वैविधताः–** भारत में तीन मुख्य कृषि मौसम है– खरीफ, रबी और जायद। खरीफ की अधिकतर फसल वर्षा पर आश्रित होती है परन्तु वर्षा के विचलन के कारण इन्हें भी सिंचाई की आवश्यकता होती है। रबी एवं जायद की लगभग सभी फसलें सिंचाई के द्वारा ही संभव है क्योंकि इन मौसमों में वर्षा बहुत कम होती है और मिट्टी में भी नही कम होती है। अतः इस कारण भी सिंचित कृषि करना अपरिहार्य आवश्यकता है।

6. **व्यापरिक फलसों का उत्पादनः–** भारत में व्यापारिक फसलों के अन्तर्गत सम्पूर्ण कृषिगत क्षेत्रफल का 20 प्रतिशत क्षेत्र आता है और कृषि शस्यों के मूल्य मे ये लगभग 33 प्रतिशत का योगदान करती हे। इन शस्यों को अधिक गुणवत्ता एवं उपज के लिए सिंचाई की अधिक आवश्यकता होती है।

7. **मिट्टी की प्रकृतिः–** भारत के एक बडे क्षेत्र में रेतीली या रेतेली दोपट मिट्टी पाई जाती है जिसमें नमी संरक्षण की कम क्षमता होती है। अतः इन क्षेत्रों में सिंचित कृषि की जाती है।

8. **शस्य विशिष्टीकरणः–** यह शस्य विशिष्टीकरण का युग है। इसमें उन शस्यों का चयन किया जाता है जो अधिक लाभप्रद हो। जैसे पंजाब, हरियाण एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश में ज्वार, बाजरा एवं मक्का को छोड़कर धान, गेहूँ एवं गन्ने की कृषि की जाती है क्योंकि ये फसलें अधिक लाभप्रद हैं। परन्तु

इन फसलों को उत्पादन के लिए अधिक एवं सुनिश्चित पानी की आवश्यकता है जो केवल सिंचाई आपूर्ति हो सकती है। अतः इन क्षेत्रों में सिंचित कृषि करना आवश्यक है।

6.5 सिंचाई के मुख्य स्रोत –

केन्द्रीय जल आयोग के अनुसार भारत में लगभग 175 मिलीयन हेक्टयर मीटर सतही जल एवं 55 मिलयिन हेक्टेयर मीटर भूमिगत जल है जिसका केवल 50 प्रतिशत ही सिंचाई के लिए प्रयोग किया जा सका है।

6.5.1 कूप एवं नलकूपों द्वारा सिंचित कृषि– आजकल कूप (कूप एवं नलकूप) सिंचाई के मुख्य स्रोत हो गये हैं। कूपों द्वारा सिंचाई जलोढ़ मैदान में अधिक प्रचलित है जहाँ भूमिगत जल का स्तर उपर है और कूपों का निर्माण सरल है।

पर्वतीय एवं पठारी क्षेत्रों में जहाँ कूपों का लगाना कठिन है एवं जल स्तर भी नीचा है, कूपों द्वारा सिंचाई नहीं के बराबर हैं। इसके अतिरिक्त जहाँ पानी का स्तर नीचा एवं जल खारा है वहाँ भी कूपों से सिंचाई नहीं की जाती है। फिर भी इस काल में कूपों की संख्या तथा इनके द्वारा सिंचित क्षेत्रफल का विकास अधिक हुआ है।

6.5.2 नहरों द्वारा सिंचित कृषि– भारत में प्राचीन काल से नहरी सिंचित कृषि की जाती थी। हमारा देश संसार के बड़े नहरी तंत्रों वाले देशों में एक है यहाँ पर नहरों की कुल लम्बाई लगभग एक लाख किलोमीटर है। नहर सिंचित कृषि का योगदान कम अवश्य हुआ है परन्तु नहर सिंचित कृषि का क्षेत्रफल 1950–51 में 8,29,5000 है, था जो 2000–01 में 16,27,2000 हैक्ट. हो गया। नहरी सिंचाई की व्यवस्था उन क्षेत्रों में अधिक है जहाँ उपजाऊ भूमि में समतल मैदान एवं सदानीर वाली नदियों का जाल है। इस प्रकार नहर सिंचित

कृषि उत्तरी भारत के मैदान, डेल्टा एवं समुद्रतटीय निचले मैदान तथा पठार की चौड़ी घाटियों में विस्तृत है। पठारी क्षेत्र में नहरी पानी आश्रित कृषि का अभाव है।

नहरें दो प्रकार की होती हैः–

1. **बाढ़ीय नहरें–** जो सीधें नदियों से बगैर बैराज या बाँध बनाए निकाली जाती है। यह नहरे बरसात में और विशेष रूप से बाढ़ के समय अधिक प्रभावी होती है क्योंकि इस समय नदियों का अधिक पानी इनमें आता है। इस प्रकार की नहरे पंजाब में सतलज नदी से निकाली गई हैं। (ii) सदानीर नहरें जिसमें सदानीरी नदियों पर वैराज या बाँध बनाकर इनमें पानी छोड़ा जाता है। भारत की अधिकांश नहरे इसी प्रकार की है।

2. भारत में 2000–01 में नहर सिंचित कृषि का क्षेत्र लगभग 30 प्रतिशत था परन्तु इस क्षेत्रफल का वितरण समान नहीं है। पर्वतीय राज्यों में जहाँ कृषि भूमि का क्षेत्रफल कम है, नहरी कृषि 90 प्रतिशत से अधिक (मेघालय 100 प्रतिशत, मीजोरम 100 प्रतिशत, जम्मू एवं कश्मीर 90 प्रतिशत) कृषि क्षेत्रफल में पाई जाती है। आसाम एवं छत्तीसगढ़ में क्रमशः 87 प्रतिशत, एवं 68 प्रतिशत नहरी कृषि क्षेत्र हैं। आन्ध्रप्रदेश, बिहार, कर्नाटक, महाराष्ट्र एवं उड़ीसा में 30–40 प्रतिशत कृषि क्षेत्र नहरी कृषि के अन्तर्गत आता है। इसके अतिरिक्त गुजरात, केरला, मध्यप्रदेश, राजस्थान आदि में 20–25 प्रतिशत कृषि क्षेत्र नहरी कृषि के अन्तर्गत आता है।

6.6 सिंचित कृषि का प्रादेशिक प्रारूप –

यद्यपि कृषि सिंचित क्षेत्रों का क्षेत्रफल 20.85 मिलियन है, (1950–51) से बढ़कर 54.68 मीलियन है, (2000–01) हो गया है जो शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल का क्रमशः 17.56 प्रतिशत एवं 38.75 प्रतिशत है इसका अर्थ यह हुआ कि

2000–01 में लगभग 61.25 प्रतिशत कृषि क्षेत्र पर वर्षा आधारित कृषि की जाती थी। परन्तु सिंचित कृषि के क्षेत्रीय प्रारूप में काफी विषमता है। जलोढ़ मिट्टी के क्षेत्र में जहाँ नदियों का जाल, नमक युक्त भूमिगत जल तथा 125 मी.मी. से कम वर्षा है, अधिकांश रूप से सिंचित कृषि की जाती है। इसके विपरीत साधारणतया पहाड़ी क्षेत्र., शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्र में सिंचित कृषि कम है। 1990–91 के जनपद स्तर के सिंचित कृषि आकड़ों से विदित होता है कि यह शून्य प्रतिशत से लेकर 95 प्रतिशत कृषि क्षेत्रफल पर की जाती है। इस आधार पर सिंचित कृषि वाले क्षेत्रों को निम्न 6 भागों में वर्गीकृत किया जा सकता हैः–

1. अत्यधिक सिंचित कृषि प्रदेश
2. अधिक सिंचित कृषि प्रदेश
3. मध्यम सिंचित कृषि प्रदेश
4. अर्ध मध्यम सिंचित कृषि प्रदेश
5. न्यून सिंचित कृषि प्रदेश
6. न्यूनतम सिंचित कृषि वाले प्रदेश

6.6.1 अत्यधिक सिंचित कृषि प्रदेश

यह वह क्षेत्र है जहां 83.4 प्रतिशत से अधिक क्षेत्रों पर सिंचित कृषि की जाती है इस प्रकार की कृषि पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश, जम्मू कश्मीर, बिहार एवं समुद्र तटीय क्षेत्रों में की जाती है। इसका बहुत बड़ा क्षेत्र पंजाब, हरियाणा एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश में पाया जाता है। दूसरा क्षेत्र श्रीनगर घाटी में पाया जाता हैं तीसरा क्षेत्र दक्षिणी बिहार मैदान में पाया जाता है। इसके अतिरिक्त तमिलनाडु के नागपटनम एवं उसके आसपास के जनपदों में पाया ज ाता है। इन क्षेत्रों में मुख्यतया धान, गेहूँ, गन्ना आदि की खेती होती है।

6.6.2 अत्यधिक सिंचित कृषि प्रदेश

यह वह क्षेत्र है जहां पर 66.77 प्रति से 83.4 प्रतिशत कृषि सिंचित कृषि के अन्तर्गत आता है। 1990–91 के आंकड़ों के अनुसार लगभग 16.7 प्रतिशत शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल इसके अन्तर्गत आता है। इस प्रकार की कृषि हरियाणा, उत्तर प्रदेश, बिहार, आदि राज्यों के छोटे–छोटे क्षेत्रों में की जाती है।

6.6.3 मध्यम सिंचित कृषि प्रदेश

इस वर्ग में वे क्षेत्र आते हैं जहां पर 50 से 66.7 प्रतिशत कृषि क्षेत्र पर सिंचित कृषि की जाती है। इनके अंतर्गत 1990–91 में शुद्ध सिंचित क्षेत्र का लगभग 19.17 प्रतिशत क्षेत्रफल आता है। इस प्रकार की सिंचित कृषि गंगा के मैदान के छोटे–छोटे टुकड़ों में पाई जाती है। इसके अन्तर्गत बिहार, प. बंगाल, उड़ीसा, आंध्रप्रदेश एवं तमिलनाडू तटीय क्षेत्र के छोटे–छोटे भाग आते हैं। यहाँ मुख्य रूप से गेहूं, गन्ना, दालें आदि की कृषि सिंचाई द्वारा की जाती है।

6.6.4 अर्द्ध मध्यम सिंचित कृषि प्रदेश

1990–91 के आंकड़ों के अनुसार भारत के शुद्ध सिंचित क्षेत्र का केवल 15.72 प्रतिशत सिंचित कृषि में सम्मिलित है यहाँ पर 33.3–50.0 प्रतिशत भूमि सिंचित कृषि के अन्तर्गत है। राजस्थान में अरावली के उत्तर पश्चिम में इस प्रकार की सिंचित कृषि का अधिकांश भाग पाया जाता है। इसके अतिरिक्त मणिपुर, नागालैण्ड, हरियाणा, बिहार, कर्नाटक, उड़ीसा आदि राज्यों में भी इस प्रकार के कृषि क्षेत्र के छोटे–छोटे टुकड़े पाये जाते हैं। इन क्षेत्रों में ज्वार, बाजरा, मक्का, राई, मिर्च, तिलहन आदि की कृषि होती है। यहाँ पर कृषि गहनता कम है। अधिकांश भाग में शुष्क कृषि की जाती है।

6.6.5 न्यून सिंचित कृषि प्रदेश

सन् 1990–91 के आंकड़ों के अनुसार, इसकेअन्तर्गत भारत के शुद्ध सिंचित क्षेत्र का लगभग 21 प्रतिशत भाग आता है और इन प्रदेशों में 16.6–33. 3 प्रतिशत भाग पर सिंचित कृषि की जाती हैं शेष भाग में कृषि वर्षा पर आधारित होती है। इस प्रकार के क्षेत्र मेघालय पठार, अरूणाचल प्रदेश, सिक्किम आदि में अधिक वर्षा के कारण सिंचित कृषि का क्षेत्रफल कम है। उड़ीसा, उत्तर प्रदेश एवं बुन्देलखण्ड क्षेत्र, कर्नाटक, आंध्रप्रदेश, तमिलनाडू राज्य में इसी प्रकार की सिंचित कृषि के छोटे–छोटे क्षेत्र पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त गुजरात एवं उत्तरी पश्चिमी राजस्थान में भी इसी प्रकार की सिंचित कृषि पाई जाती है। यहाँ पर अधिकतर मोटे अनाज–ज्वार, बाजरा, मक्का, राई आदि पैदा किये जाते हैं।

6.6.6 न्यूनतम सिंचित कृषि प्रदेश

यह शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल के केवल 9 प्रतिशत क्षेत्र में पाये जाते हैं। यहाँ पर सिंचित कृषि के अन्तर्गत 16.6 प्रतिशत से कम कृषि क्षेत्र पाया जाता है। इन क्षेत्रों के अधिकतर भाग में कृषि वर्षा पर आधारित है। पश्चिमी राजस्थान, महाराष्ट्र, झारखण्ड, उत्तराखण्ड, हिमाचल, त्रिपुरा, आदि इस वर्ग के कृषि के विशेष भूभाग हैं। यहां पर भी मोटे अनाज ही पैदा किये जाते हैं।

6.7 सिंचित कृषि की मुख्य समस्याऐंः–

सिंचित कृषि के वे क्षेत्र जहां 5 प्रतिशत से अधिक कृषि क्षेत्रफल सिंचाई पर आधारित है, वहां पर अधिक एवं अनियमित सिंचाई के कारण कई समस्याऐं उत्पन्न हो गई हैं और ये समस्याऐं दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही हैं। इसमें मुख्य समस्याऐं निम्नलिखित हैंः

1. शुष्क एवं अर्धशुष्क प्रदेशों में सिंचाई की अधिक गहनता से केशिकीय प्रक्रिया से लवण भूमि सतह पर आकार जम जाता है जिससे भूमि क्षारीय एवं नमकीन हो जाती है।
2. नहरी सिंचाई के कारण भूमिगत जल का स्तर निरन्तर बढ़ रहा है जिस से जलमग्नता की समस्या लगातार बढ़ती जा रही है। यह प्रक्रिया राजस्थान, हरियाणा, पंजाब एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश में अधिक है और दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है।
3. जिन क्षेत्रों में नहर के बजाय नलकूपों से सिंचाई होती है वहां पर भूमिगत जल स्तर निरन्तर नीचे जा रहा है जिससे सिंचाई जली के अभाव के साथ–साथ पेय जल का भी अभाव होने लगा है। इसके कालान्तर में और अधिक गंभीर समस्या उभर सकती है।
4. जलमग्न वाले क्षेत्रों में मच्छरों की पैदावार अधिक होती है जिससे मलेरिया जैसी बीमारियाँ फैलती हैं।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः निरन्तर तेजी से बढ़ती जनसंख्या, संसाधनों का अन्धाधुन्ध विदोहन, अनियंत्रित विकास, वन विनाश, जहरीले रसायनों का उपयोग, अनियिमित तकनीकों का प्रयोग एवं आणविक शस्त्रों के प्रयोग के फलस्वरूप पर्यावरण की अपूर्व क्षति हुई है जो सम्पूर्ण जीवो के लिए खतरे का प्रतीक है। इन पारिस्थितिकीय समस्याओं का मूलरूप से मानव उत्तरदायी है। मानव के कृषि युग में प्रवेश के उपरान्त निरन्तर बढ़ती जनसंख्या के फलस्वरूप भरण–पोषण की आवश्यकता निरन्तर बढ़ती गई। एक ओर जनसंख्या का फैलाव नये क्षेत्रों में होता गया वहीं दूसरी ओर कृषि हेतु वनो की अन्धाधुंध कटाई, सिचांई हेतु बाँधो का निर्माण पशुओं के लिए चरागाहों की व्यवस्था, सड़कों का निर्माण तथा आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक कार्यों के लिए मानव प्रकृति–संघर्ष आरंभ हुआ। कृषि विकास के साथ–साथ औद्योगिक विकास एवं

पशुपालन के रूप में बदलाव आ गया। फलस्वरूप पर्यावरण का ह्रास निरन्तर होता जा रहा है।

शुष्क क्षेत्रीय कृषि भारत के उन भागों में की जाती है जहाँ वार्षिक वर्षा की मात्रा 75 मी.मी. से कम पाई जाती है। इसके अतिरिक्त यह थोडी बहुत वर्षा मिट्टी के खोखले होने के कारण जमीन की निचली तह में प्रवेश कर जाती हैं तथा इसकी मात्रा का अधिक तापक्रम के कारण वाष्पीकरण हो जाता है। अन्ततः कृषि में उपयोग के लिए वर्षा की बहुत कम मात्रा रह जाती है। कृषि के लिए प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण शस्य उपज एवं उत्पादकता कम है। इन क्षेत्रों में देश का केवल 2.41 उत्पादन होता है। यहाँ पर मुख्य रूप से मोटे अनाज जैसे ज्वार, बाजरा, मक्का आदि पैदा किये जाते है। इसके अतिरिक्त कपास, मूगंफली, दाले एवं तिलहन की भी पैदावार होती है।

संदर्भ ग्रंथ :

1. सिमोन, एल. (1970), "एग्रीकल्चरल ज्योग्रॉफी", जी बैल एण्ड सन्स लि., लंदन।

2. जे.एन. पाण्डे (2000) कृषि भूगोल, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर।

3. सिंह जसबीर एण्ड डिल्लन एस.एस. (1994), "कृषि भूगोल", टाटा मेक्ग्राहिल पब्लिशिंग कम्पनी, न्यू देहली।

4. नूर मोहम्मद (1980), "प्रोस्पेक्टिव इन एग्रीकल्चरल ज्योग्राफी", वॉल्यूम– I-V, कन्सेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी, न्यू देहली।

5. हुसैन, माजिद (1996), "कृषि भूगोल", रावत पब्लिकेशन, जयपुर।

6. नूर मोहम्मद (1990), "न्यू डिमेन्सेन्शन इन एग्रीकल्चरल ज्योग्रॉफी", वॉल्यूम– I-VII, कन्सेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी, न्यू देहली।

7. आर.एन. तिवारी एवं बी.एन. सिंह (1994) कृषि भूगोल, पुस्तक भवन, इलाहाबाद।

अध्याय सप्तम्

कृषि में नवीन तकनीकी का परिस्थितीकी प्रभाव

भारत में स्वतंत्रता पूर्व लगभग परमपरागत कृषि रही है। कृषि में नवीन का कम उपयोग होता था। हरित क्रांति के पश्चात् भारत सरकार ने विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में कृषि की नवीन तकनीकों का समावेश किया जिसके कारण खाद्यानों का उत्पादन बढ़ा। जिसके फलस्वरूप भारत न केवल खाद्यानों में आत्मनिर्भर ही नहीं बल्कि इसके पास खाद्यानों का अधिक भंडार हो गया।

7.1 कृषि में नवीन तकनीकी के तत्व –

कृषि नवीन तकनीकी में बहुत से तत्व सम्मिलित है, जिनको मुख्य रूप से निम्न पाँच भागों में रखा जा सकता हैः

(1) कृषि के नवीन उपकरण

(2) अधिक उपज देने वाली किस्मे

(3) रसायनिक उर्वरको का उपयोग

(4) सिंचित क्षेत्र में विस्तार

(5) कीट एवं खरपतवार नाशक रसायन

7.2 कृषि के नवीन उपकरण :

मानव सदैव कृषि उपकरणों को विकसित करने में प्रयत्नशील रहा है। उसने परम्परागत कृषि में पुराने उपकरण जैसे लकड़ी का हल, कुदाल आदि का प्रयोग किया है जिससे कृषि कार्य सुचारू रूप से नहीं किये जा सकते थे इसलिए कृषि उपज एवं उत्पादन बहुत कम था। परन्तु धीरे–धीरे मानव ने

नवीन कृषि उपकरणों का आविष्कार किया। जिससे एक ओर कृषि के क्षेत्रफल में विकास हुआ और दूसरी ओर शस्य गहनता भी बढ़ी। फलस्वरूप कृषि उपज एवं उत्पादन में अधिक वृद्धि हुई। कृषि में भूमि की जुताई से लेकर उत्पादन वितरण तक में विभिन्न प्रकार के नवीन उपकरणों का प्रयोग होने लगा है। उदाहरणार्थ भूमि की जुताई के लिए लोहे का हल, ट्रेक्टर, कल्टीवेटर, डिस्क हैरो, बोवाई के लिए बीज ड्रीलर, खेत के बराबर करने के लिए लेवलर, कीटनाशक दवाओं के डालने के लिए छिड़काव मशीन, सिंचाई के लिए बिजली पम्पसेट एवं डीजल पम्पसेट, फसलों काटने एवं अनाज निकालने के लिए थ्रेशर अथवा कम्बाइन हार्वेस्टर, उपजो की विपणन के लिए ट्रेक्टर एवं ट्राली आदि।

निम्न तालिका में अध्ययन क्षेत्र में लौहे के हल, डीजल पंप, विद्युत पंप और ट्रेक्टर का तहसीवार विवरण दर्शाया गया है।

तालिका संख्या 7.1

गंगानगर में कृषि यंत्र व औजारों की प्रगति

क्र. सं.	वर्ष/ तहसील	लोहे के हल	डीजल इंजन	विघुत पंप	ट्रेक्टर	योग
	1998	161008	6265	2551	21203	191027
	2003	111621	3797	1684	20010	137112
	2008	36165	3562	1720	25376	66823
	2013	48329	12779	3479	30253	94840
तहसील (2013) (प्रति 100 हैक्टयर पर संख्या के साथ)						
1.	गंगानगर	3800 (4.62)	822 (0.99)	1060 (1.28)	4783 (5.81)	10465 (12.72)

2.	करणपुर	2100 (3.05)	949 (1.37)	325 (0.47)	3389 (4.92)	6763 (09.82)
3.	प्दमपुर	4400 (5.83)	1680 (1.37)	824 (1.09)	3169 (4.19)	10073 (13.34)
4.	रायसिंहनगर	6500 (5.77)	1100 (0.97)	523 (0.46)	4554 (4.04)	12677 (11.26)
5.	अनूपगढ़	3248 (4.04)	1778 (2.21)	420 (0.52)	2410 (3.00)	7856 (09.78)
6.	सूरतगढ़	13680 (8.28)	3756 (2.27)	186 (0.11)	3236 (1.96)	20858 (12.63)
7.	सादूलशहर	7050 (10.38)	233 (0.34)	12 (0.01)	3368 (4.98)	10663 (15.70)
8.	विजयनगर	3351 (5.90)	2416 (4.29)	113 (0.20)	2438 (4.33)	8318 (14.78)
9.	घड़साना	4200 (5.46)	45 (0.05)	16 (0.02)	2906 (3.78)	7167 (09.33)

स्रोतः जिला पशुपालन प्रतिवेदन 2013

7.2.1 लोहे के हल–

लोहे के हल लकड़ी के हलों की बजाय अधिक उपयोगी एवं टिकाऊ होते हैं। लकड़ी के हलों के अपेक्षा लोहे के हलों से गहरी जुताई भी की जा सकती है। दूसरी ओर लोहे के हल पशु एवं ट्रैक्टरों दोनों से खींचे जाते हैं

जबकि लकड़ी के हल ट्रैक्टर आदि आधुनिक यंत्र के हो पाती थी, लेकिन अब पशुओं की सहायता से सिंचाई कार्य बहुत कम किया जाता है।

वर्ष 1998 में जिले में हलों की संख्या 161008 थीं वहीं वर्ष 2003 में यह घटकर 111621 ही रह गई। मानचित्र संख्या 5.1 के अनुसार जिले में 1998 से 2003 पाँच वर्षों के दौरान 30.67 प्रतिशत की कमी हुई है। जिले में सर्वाधिक हलों की प्रति 100 हैक्टेयर संख्या सादुर्लशहर तहसील में 10.38 है। सूरतगढ तहसील में 8.28, श्रीगंगानगर, पदमपुर, रायसिंहनगर, विजयनगर और घड़साना तहसील में 4 से 8 है। आंकड़ों के आधार पर हम कह सकते हैं कि जिले में हलों की संख्या में कमी तेजी से हुई है। इस कमी का कारण जिले में यांत्रिक उपकरणों का प्रसार अधिक होना है। यहाँ पर हलों में किसान पशुओं द्वारा सिंचाई करता था जिसमें अधिक समय व अधिक श्रमिकों की आवश्यकता होती थी तथा बहुत कम क्षेत्र में सिंचाई हो जाती थी।

7.2.2 ट्रेक्टर

यह कृषि कार्य हेतु एक बहुउद्देशीय महत्वपूर्ण उपकरण है। इससे भूमि की जुताई से लेकर कृषि उपज के विपणनों तक का काम लिया जाता है। इसके साथ कल्टीवेटर, डिस्क लेवलर एवं बीज बोने के उपकरण को सम्बधित कर जुताई, बोवाई आदि का कार्य सम्पन्न किया जाता है इससे थ्रेशर को जोड कर फसल की मढाई, पम्पसेट से जोड़कर सिंचाई और ट्रोली को जोड़कार कर ढुलाई का कार्य किया जाता है।

ट्रेक्टर के उपयोग से कृषि में दो प्रकार का विकास हुआ है। प्रथम उन क्षेत्रों में कृषि होने लगी है जहाँ परम्परागत उपकरणों से जुताई का कार्य सम्पन्न नहीं हो सकता था। अतः कृषि का क्षैतिज विकास हुआ है। दूसरे उन क्षेत्रों में एक से अधिक शस्य का उत्पादन संभव हो पाया है जहां वर्षा ऋतु के

पश्चात् भूमि का जोतना संभव नहीं था। इस प्रकार से कृषि का लम्बवत (Vertical Expansion) विकास हुआ है।

तालिका संख्या 7.1 के अनुसार गंगानगर जिले में वर्ष 1998–99 में ट्रैक्टरों की संख्या 21203 थी जो बढ़कर 2013–2014 में 30259 हो गई। पिछले पन्द्रह वर्षों में ट्रैक्टरों की संख्या में 70.37 प्रतिशत बढ़ोतरी दर्ज की गई है। गंगानगर जिले में ट्रेक्टरों की संख्या में पिछले वर्षों में अत्यधिक वृद्धि हुई है। मानचित्र संख्या 5.2 से स्पष्ट है कि प्रति 100 हैक्टेयर पर ट्रेक्टरों की सर्वाधिक संख्या 5.81 है इस प्रकार पुराने हलों से जिन्हें पशुओं द्वारा चलाया जाता है, के द्वारा जहाँ 10–15 हैक्टर भूमि पर ही कृषि कार्य किया जाता था वहाँ आज आधुनिक लोहे के हल व ट्रेक्टरों की सहायता से बहुत अधिक क्षेत्र में कृषि की जाती है।

मानचित्र संख्या 5.2 से स्पष्ट है कि गंगानगर जिले की सूरतगढ़ तहसील में प्रति 100 हैक्टेयर पर ट्रेक्टरों की संख्या 2 से कम, अनूपगढ़, घड़साना तहसील में 2 से 4 एवं विजयनगर, रायसिंहनगर, पदमपुर, करणपुर और सार्दुलशहर 4 से 5 प्रति 100 हैक्टेयर पर ट्रैक्टरों की संख्या है। इसका मुख्य कारण इस क्षेत्र में सिंचित क्षेत्र की अधिकता तथा समतल उपजाऊ भूमि का होना है।

7.2.3 बिजली द्वारा संचालित पम्प सेट

यह दूसरा महत्वपूर्ण उपकरण है जो सिंचाई कार्य में प्रयुक्त किया जाता हैं। इसमें भूमिगत जल, तालाबों एवं नदियों के जल को निकाल कर खेतों में पहुचायां जाता है। इसके अतिरिक्त जहां नहरें खेतों के स्तर से नीचे बहती है उनका भी जल इन पम्पों से खेतो तक लाया जाता है। बिजली के पम्पों का अत्यधिक उपयोग दक्षिणी भारत मे तालाबों एवं कुओं के जल को खेतों तक पहुचाने में किया जाता हैं।

तेल चलित इन्जन तीसरा कृषि उपकरण है जो ट्रेक्टर की भाँति कृषि के कई कार्यो में काम आता है। इसका सबसे अधिक प्रयोग पम्प से जोड़कर सिंचाई में किया जाता है। इसके अतिरिक्त इससे थ्रेशर से जोड़कर मढ़ाई, एक्सपेलर से जोड़कर तेल निकालने, क्रेशन से जोड़कर गन्ना पेराई आदि का कार्य लिया जाता है। बिजली की बढ़ती मूल्य एवं अनिश्चितता ने तेल चालित इन्जन के प्रयोग एवं महत्व की ओर बढ़ा दिया है। परन्तु इस समय तेल को बढ़ते हुए मूल्य ने इसके प्रयोग पर भी अंकुश लगा दिया है। तेल चालित इंजनो का योगदान कृषि के अन्य कार्यो में अधिक है परन्तु सिंचाई कार्यों में इसका सहयोग कृषि संभव हो गई है और शस्य गहनता में भी अधिक वृद्वि हुई है। फलस्वरूप शस्य उपज एवं उत्पादन वृद्धि हुई है।

वर्ष 1998–99 में विद्युत पम्पों की संख्या 2551 थी जो कि वर्ष 2003–04 में घटकर 1684 रह गई। इस प्रकार 2008–09 में विद्युत पम्पों की संख्या 1720 थी जो 2013–2014 में बढ़कर 3479 हो गई। इस प्रकार पिछले पन्द्रह वर्षों में विद्युत पम्पों की 7.26 प्रतिशत संख्या बढ़ी है। मानचित्र संख्या 5. 3 से स्पष्ट है कि गंगानगर जिले में सर्वाधिक विद्युत पम्पों की संख्या श्रीगंगानगर एवं पदमपुर तहसील में प्रति 100 हैक्टेयर 2 से अधिक है जिसका मुख्य कारण नहरीकरण की अधिकता होना। जबकि गंगानगर की करणपुर, रायसिंहनगर, अनूपगढ़, सूरतगढ़, सार्दुलशहर, विजयनगर एवं घड़साना में विद्युत पम्पों की संख्या नगण्य स्थिति में है। सम्पूर्ण गंगानगर जिला नहरीकरण होने के कारण विद्युत पम्पों की संख्या में कमी आई है।

7.2.4 डीजल पम्प

कृषि में फसलों को पानी देने के साधनों में डीजल पम्प/जनरेटर का उपयोग भी नगण्य–सा ही है। इसका कारण यह है कि इसमें डीजल, पैट्रोल व कैरोसीन शक्ति का उपयोग होने के कारण यह इतना खर्चीला हो जाता है कि इसका उपयोग अनार्थिक साबित होता है। विद्युत आपूर्ति के आपतकालीन

समय में फेल हो जाने के कारण एक वैकल्पिक साधन के रूप में ही इसका उपयोग किसान कृषि कार्यों हेतु करते हैं।

तालिका संख्या 5.1 के अनुसार डीजल पम्पों की संख्या में उतार–चढाव देखने को मिलता है। 1998–1999 में 6265 डीजल पम्प थें जो वर्ष 2003–04 में घटकर 3797 रह गयी। वर्ष 2008–09 में 3562 थी जो 2013–14 में बढ़कर 12779 हो गई। पम्पों की संख्या में पिछले पन्द्रह वर्षों में दुगुनें से भी अधिक वृद्धि हुई है। इसका कारण विद्युत आपूर्ति नियमित नहीं होने के कारण अब पुनः कृषक सिंचाई के लिए डीजल पम्प को रखने लग गये है। मानचित्र संख्या 5.4 से स्पष्ट है कि गंगानगर जिले में सर्वाधिक डीजल पम्पों की संख्या विजयनगर तहसील में प्रति 100 हैक्टेयर 4 से अधिक है जबकि सबसे कम संख्या श्रीगंगानगर, सार्दुलशहर, रायसिंहनगर एवं घड़साना तहसील में प्रति 100 हैक्टेयर में 1 से कम है। इसका कारण विद्युत आपूर्ति का ठीक होना है। इसके अलावा जिले की करणपुर, पदमपुर, सूरतगढ़ एवं अनुपगढ़ तहसील में डीजल पम्पों की संख्या 2 से 3 है। वर्तमान में पम्पों की संख्या में धीरे–धीरे कमी आ रही है यह कमी नहरी सिंचाई व्यवस्था की उत्तम व्यवस्था के कारण है।

7.2.5 अधिक उत्पादित वाले बीज –

इसको यदि उन्नत बीज की संज्ञा दें तो अधिक सही होगा क्योंकि अधिक उत्पादिता वाले बीजों के अतिरिक्त गले बीजों का आविष्कार किया गया है जो विपरीत परिस्थितियों में भी उगाई जा सकती है और अधिक उपज भी देती है। उदाहरणार्थ बाढ़ को सहन करने वाले बीज, सूखा को सहन करने वाले बीज, लवणता को सहन करने वाले बीज शीघ्र पैदा होने वाले बीज आदि। ये सभी प्रकार के बीज विपरीत प्राकृतिक परिस्थितियों में उगकर अधिक पैदावार देते है। बाढ़ग्रस्त क्षेत्रों में कृषि का उत्पादन बढ़ा सकते है। इसी प्रकार सूखा सहन करने वाले बीजों का प्रचलन शुष्क प्रदेशीय कृषि में अधिक

है। इसके फलस्वरूप वह क्षेत्र जहां पर बाढ़ या सूखे के भय से कृषि नहीं की जाती थी वहां पर फसलों का उत्पादन किया जाता है।

भारत में कृषि उपज एवं उतपादिकता बढाने में अधिक उत्पादन वाले बीजो का सहयोग अत्यधिक है। भारतीय कृषि में उत्पादन बढ़ाने में अधिक–उत्पाद बीजों का सहयोग अधिक है। भारतीय कृषि में उन्नति बीजों का सुचारू रूप से प्रयोग 1966–67 से प्रारंभ हुआ जब गेहूँ की बौनी मेक्सिको प्रजाति का मेक्सिको से निर्यात किया गया। इसके अतिरिक्त चावल, मक्का आदि फसलों में भी अधिक उत्पाद वाले बीजों का प्रयोग प्रारंभ हुआ। एच.आई.वी. बीजों के लिए अधिक जल, उर्वरक, कीटनाशक रसायन एवं मशीनकरण की आवश्यकता है। यदि इनका प्रयोग प्रचुर मात्रा में नहीं किया गया तो कृषि उत्पादकता में अधिक ह्यस होगा।

हरित क्रान्ति के प्रारंभ में उन्नत बीजों के अन्तर्गत केवल 19 लाख हेक्टेयर भूमि थी जो 2001–11 में बढ़कर 8.4 करोड़ हेक्टेयर हो गई। इसमें गेहूँ एवं चावल के अन्तर्गत 80 प्रतिशत क्षेत्रफल आता है। सन् 2005–06 में गेहूँ के समस्त क्षेत्रफल का 92 प्रतिशत, ज्वार का 79 प्रतिशत, चावल का 78 प्रतिशत एवं मक्का का 58 प्रतिशत उच्च उत्तादित वाली जातियों के अन्तर्गत था। भारत सरकार राष्ट्रीय बीज निगम तथा भारतीय खाद्य निगम द्वारा उत्तम उत्पादिता वाले बीजों का उत्पादन उवं प्रसारण करती है। सन् 2006–07 में आधारी बीज (Foundation seed) तथा प्रमाणित बीज (Certified Seed) का उत्पादन क्रमशः 79,000 तथा 15,50,000 मैट्रिक टन था जबकि उत्पादिता वाले के प्रयोग से कृषि उपज, उत्पादन एवं उत्पाकता में अधिक वृद्धि हुई है।

राजस्थान राज्य में सन् 1966 में सरकार के सहयोग से कृषि विभाग द्वारा मक्का, ज्वार, बाजरा की उन्नत किस्मों के बीजों का उत्पादन, विपणन हेतु एक इकाई की स्थापना की गई। जिससे इस कार्य में राष्ट्रीय बीज निगम द्वारा सहयोग मिलना प्रारम्भ हो गया राजस्थान राज्य में बीज उत्पादन कार्य

को राष्ट्रीय बीज निगम एवं भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के माध्यम से सुखाड़िया विश्वविद्यालय, राजस्थान, राजस्थान राज्य बीज निगम, राजस्थान राज्य बीज प्रमाणिकरण संस्था एवं कृषि विभाग में विभाजित कर दिया है।

इस जिले में खरीफ की फसलों के लिए ज्वार, बाजरा, मक्का एवं खरीफ की दालें, मोंठ, मूंग, उड़द, अरहर, मूंगफली के उन्नत बीज एवं रबी फसल हेतु गेहूँ, जौ, चना, राई आदि के उन्नत बीजों का उत्पादन एवं वितरण होता है।

तालिका संख्या 7.2

प्रमुख फसलों के अन्तर्गत उन्नत बीजों का क्षेत्रफल

(प्रतिशत प्रत्येक फसल के कुल काश्त क्षेत्रफल पर)

फसल का नाम	2009–10	2013–14	परिवर्तन
गेहूँ	50.26	72.06	+21.80
जौ	98.67	149.94	+51.27
चना	68.13	139.54	+71.41
चावल	98.17	166.69	+68.52

स्रोतः कार्यालय उपनिदेशक कृषि विस्तार, गंगानगर

तालिका संख्या 7.2 के अन्तर्गत क्षेत्र की प्रमुख फसलों के अन्तर्गत उन्नत बीजों का प्रयोग प्रत्येक फसल के क्षेत्रफल के आधार पर दिखाया गया है। जिसमें सभी फसलों में उन्नत बीजों के बढ़ने का संकेत दिखाई दे रहा है। जिसमें सबसे अधिक वृद्धि चने की फसल में हुई है। यह वृद्धि 71.41 प्रतिशत है।

7.2.6 रसायनिक उर्वरक

किसानों को बहुत पहले से पता था कि खाद, अस्थियों एवं राखों के उपयोग से भूमि की उर्वरता में वृद्वि की जा सकती है परन्तु 19वीं सदी में वैज्ञानिको ने खोज किया कि भूमि उर्वरता बनाए रखने में नाइट्रोजन, फासफोरस एवं पोटेशियम की प्रमुख भूमिका है। इन पौषक तत्वों के प्रयोग से न केवल मिट्टी की उर्वरता बढ़ाई जा सकती है बल्कि इन तत्वों के मिट्टी में क्षति होने की भी पूर्ति की जा सकती है। भारत में हरित क्रान्ति को सफल बनाने में उर्वरता का महत्वपूर्ण योगदान रहा है।

भारत की मिट्टी में नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस की कमी पाई जाती है। कुछ क्षेत्रों में पोटाश की कमी है। इस कमी की पूर्ति उर्वरकों से की जा सकती है। भारत में रसायनिक उर्वरकों के प्रयोग में कृषि में अत्यधिक विकास हुआ है। उर्वरकों कें उपयोग से उन भू–भागों को कृषि के अन्तर्गत लाया गया है जो इन पोषक तत्वों की कमी के कारण कृषि अयोग्य थे। इस प्रकार कृषि क्षेत्रफल में वृद्धि हुई। इसी प्रकार दो फसली एवं तीन फसली क्षेत्रों में वृद्धि हुई। फलस्वरूप कृषि की उपज, उत्पादन एवं उत्पादक में वृद्धि हुई है।

भारत में 1950–51 में रसायनिक उर्वरकों का प्रति हेक्टयेर औसत उपयोग केवल एक किलोग्राम से भी कम था और इसके कुल खपत 65.6 हजार मेट्रिक टन थी। 1960–61 में कुल खपत 292 हजार में टन हो गई और प्रति हेक्टेयर उपयोग की मात्रा लगभग 1.90 कि.ग्राम हो गई। हरित क्रान्ति के पश्चात् इसके कुल एवं प्रति हेक्टेयर उपयोग में निरन्तर वृद्धि होती रहती है। वह 2005–06 में 20.34 मीलियन मेट्रिक टन हो गई। सन् 2006–07 में भारत में कुल उर्वरकों की खपत 22.04 मिलियन मेट्रिक टन हो गई। सन् 2010–11 में 28.12 मिलियन मेट्रिक टन हो गई। और वर्ष 2013–14 में 24.48 मिलियन मेट्रिक टन हो गई। परन्तु आज भी हमारे देश में प्रति हेक्टेयर रसायन उरर्वक

की खपत कई देशों में की तुलना में कम है। उदाहरणार्थ मिस्र एवं नीदरलैण्ड में प्रति हेक्टेयर उपयोग क्रमशः 372,351 कि.ग्रा. है।

भारत में रसायनिक उर्वरकों के सकल खपत एवं प्रति एकड़ खपत में विभिन्न राज्यों में समानता नही है। उदाहरणार्थ पंजाब में कुल खपत 12 लाख टन एवं प्रति हेक्टेयर 161 कि.ग्रा. हरियाणा में 5.8 लाख टन, 97 कि.ग्रा., आन्ध्रप्रदेश में 16.2 लाख टन, 123 कि.ग्रा., उत्तरप्रदेश में 22.5 लाख टन, 88.8 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर है। इसके विपरीत नागालैण्ड में 2 कि.ग्रा., राजस्थान में 41 कि.ग्रा., मध्यप्रदेश में 47 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर प्रयोग किया जाता है। इसका उपयोग साधारणतया कम वर्षा एवं सिंचाई वाले क्षेत्रों में अधिक है। शुष्क प्रदेशों में इसका उपयोग कम है। अन्ततोगत्वा रसायनिक उर्वरकों के प्रयोग से भारतीय कृषि की उपज, उत्पादन एवं उत्पादकता में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ है।

अध्ययन क्षेत्र में रासायनिक उर्वरकों का उपयोग 2009–10 में जिले के प्रति हैक्टेयर 138727 मि. टन नाइट्रोजन (अमोनियम सल्फेट के रूप में) उर्वरक उपयोग में लिया गया था जबकि वर्ष 2013–14 में 218243 मि. टन नाइट्रोजन (अमोनियम सल्फेट के रूप में) खाद उपयोग में लिया गया। इस प्रकार पिछले पाँच वर्षों में इसमें प्रति हैक्टेयर 36.43 प्रतिशत की वृद्धि हुई है।

तालिका संख्या 7.3

रासायनिक उर्वरक का वितरण (मि. टन) वर्ष 2009–10 से 2013–14

वर्ष/केन्द्र	नाइट्रोजन (अमोनियम सल्फेट के रूप में)	फास्फेटिक (सुपर फास्फेट के रूप में	पोटेशियम
2009–10	138727	19404	551
2010–11	145735	43382	7390

2011—12	163516	34183	4788
2012—13	220773	40645	13994
2013—14	218243	48900	4400

स्रोतः कार्यालय उपनिदेशक कृषि विस्तार, गंगानगर

7.2.7 सिंचाई की सुविधा

भारत जैसे कृषि प्रधान देश में जहाँ मानसून जलवायु पाई जाती है कृषि के विकास में सिंचाई का अत्यधिक योगदान है। यहाँ की जलवायु में वर्षा के आवागमन मात्रा, गहनता एवं मौसम में काफी अनिश्चितता है। अतः कृषि के लिए सिचाई पर निर्भर रहना पड़ता है भारत में सिंचाई के मुख्य स्रोत नहर, कूप, तालाब एवं नदियां है। सिंचाई की सुविधा बढने से कृषि में तीन प्रकार का विकास हुआ है। प्रथम उन क्षेत्रों को भी कृषि के अन्तर्गत लाया गया है जो मिट्टी में नमी न होने के कारण कृषि अयोग्य थे इससे कृषि के कुल क्षेत्रो में वृद्धि हुई तथा दूसरे जिन क्षेत्रों में नमी के अभाव से केवल एक फसल उगाई जाती थी वहां पर दो/तीन फसलें पैदा की जाती हैं। अतः कृषि के सकल क्षेत्र में वृद्धि हुई है। इस प्रकार कृषि की गहनता भी बढी। फलस्वरूप कृषि की उपज एवं उत्पादन में भी अधिक वृद्धि हुई है।

7.2.8 कीटनाशक एवं खरपतवार नाशक रसायन

कृषि में जहाँ एक ओर सिंचाई एवं नवीन उन्नत बीजों के क्षेत्रफल में वृद्धि हुई है वहीं कीट एवं खरपतवार नाशक रसायन का भी प्रयोग अधिक बढ़ा है क्योकि नवीन उन्नत बीजों पर कीडों एवं अन्य बीमारियों का प्रभाव अधिक पडती है। रसायनिक उर्वरकों के सेवन के कारण खरपतावार भी तेजी से उगते एवं बढ़ते है। अतः सबकी रोकथाम के लिए कीट एवं खरपतवार नाशक रसायनों का प्रयोग आवश्यक है। भारत में इन रसायनों का प्रयोग 2002—03 में 48351 टन था जो 2009—10 में 41822 हजार मेट्रिक टन हो गया। इन

रसायनों से फसलों को बचाने के अतिरिक्त खाद्यन्नों के भण्डार को भी सुरक्षित रखा जाता है। भारत में इन रसायनों का प्रयोग सभी राज्यों में समान नही है। इन का उपयोग साधारणतया आर्द्र एवं अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में अधिक होता है।

तालिका संख्या 7.4

कीटनाशकों की खपत

(टन में)

वर्ष	राजस्थान	भारत
2002—03	3200	48351
2003—04	2303	41020
2004—05	1628	40684
2005—06	1008	39773
2006—07	3567	41515
2007—08	3804	43630
2008—09	3333	43860
2009—10	3527	41822

तालिका संख्या 7.5

बायोपेस्टीसाइड का उपयोग

(मि.टन)

वर्ष	पेस्टीसाइड	बायोपेस्टीसाइड	प्रतिशत
1990—00	46,195	874	1.89
2000—01	43,584	683	15.9
2001—02	47,929	902	1.88

तालिका संख्या 7.6

भारत में इनसेक्टीसाइड की खपत

(टन में)

वर्ष	मात्रा
2003	22,694
2004	21,498
2005	21,783
2006	16,913
2007	14,617
2008	3,278.33
2009	14,810.19
2010	20,618.83

7.3 कृषि नवीनीकरण का कृषि पर प्रभाव

कृषि आधुनिकरण का प्रभाव सामान्य भूमि उपयोग, कृषि भूमि उपयोग, शस्य प्रणाली, कृषि उपज, उत्पादन एवं उत्पादकता पर पडा है। सामान्यतया इन उपयोगों मे क्षेत्रफल का हास हुआ है। जो कृषि कार्य हेतु नही थे जैसे कृषि योग्य बंजर, पेड, पौधे एवं बगीचे, बंजर एवं कृषि अयोग्य क्षेत्र के क्षेत्रफल में अधिक हास हुआ है। उदाहरणार्थ कृषि योग्य बंजर जो 2006–07 में 1.64 प्रतिशत था वह 2012–13 में 0.54 प्रतिशत वन क्षेत्रफल 5.53 प्रतिशत से बढ़कर 5.54 प्रतिशत बंजर एवं कृषि अयोग्य 6.49 प्रतिशत बढ़कर 6.54 इन्हीं वर्षो में हो गया। इसके अतिरिक्त परती भूमि का भी क्षेत्रफल 11.74 प्रतिशत से बढ़कर 13.46 प्रतिशत हो गया। इन सभी वृद्धि का लाभ शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल को हुआ जो, 2006–07 में बढ़ 64.30 प्रतिशत से बढ़कर वृद्धि 2012–13 में 71.84 प्रतिशत हो गया है। आंरभ के दशको में यह क्षेत्रफल अधिक बढ़ा है। परन्तु बाद में इसके वास्तविक वृद्धि कम हुई है। इसका प्रमुख कारण यह है कि जहाँ एक ओर इसकी क्षेत्रफल में वृद्धि होती है वहाँ दूसरी ओर इसके क्षेत्र पर बस्तियों, सड़कों, नहरों आदि का विस्तार हो जाता है अतः इसके क्षेत्र में वास्तविक वृद्धि कम होती है।

7.4 शस्य प्रारूप में परिवर्तन

आधुनिकरण के कारण कृषि भूमि उपयोग एवं शस्य प्रणाली में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ है। शुष्क कृषि क्षेत्र का निरन्तर हास हुआ जबकि सिंचित कृषि प्रणाली में सार्वजनिक वृद्धि हुई है। खाद्यान्नों का क्षेत्रफल 2011–12 में 1053942 हे. था जो 2014–15 में 7854398 हेक्टेयर हो गया है।

7.5 शस्य उपज एवं उत्पादन में वृद्धि –

उपर्युक्त शस्य प्रणाली के बदलते स्वरूप का प्रभाव शस्य उपज एवं उत्पादन पर पड़ा है। खाद्यान्नों के उत्पादन में क्रान्तिकारी वृद्धि हुई है और यह 51 मि.टन (1950–51) की अपेक्षा 230.6 (2007–2008) मि.टन हो गया है अर्थात पिछले 60 सालों में 4.5 गुना वृद्धि हुई है। खाद्यानों में सबसे अधिक योगदान चावल का है जिसका उत्पादन 20.58 मि. टन (1950–51) से बढ़कर 92.76 मि. टन (2006–07) हो गया है। जो कुल खाद्यान्नों का 43 प्रतिशत है। गेहूँ दूसरे स्थान पर है जिसका उत्पादन 6.5 मि. टन (1950–51) से बढ़कर 74.69 मि. टन (2006–2007) हो गया है। जो कुल खाद्यान्नों का 34.7 प्रतिशत हैं इस प्रकार चावल एवं गेहूँ का कुल खाद्यान्नों के उत्पादन में 77.7 प्रतिशत का योगदान हैं आश्चर्यजनक बात यह है कि चावल एवं गेहूँ के प्रति हैक्टेयर उपज में इस काल में क्रान्तिकारी बढ़ोत्तरी हुई है। धान की प्रति हैक्टेयर उपज 668 कि.ग्रा है. (1950–51) से बढ़कर 2127 कि.ग्रा. हैक्टेयर (2006–07) में हो गई जबकि गेहूँ की उपज इसी काल में 663 कि.ग्रा./हैक्टेयर से बढ़कर 2671 कि.ग्रा./हैक्टेयर हो गई है। यद्यपि मोटे अनाजों के क्षेत्रफल में ह्रास हुआ है परन्तु इसका भी उत्पादन प्रति हैक्टेयर उपज बढ़ने के कारण 13.58 मि. टन (1951–51) से बढ़कर 34.25 मि.टन हो गया है। इसकी उपज दर 1950–51 में 408 कि.ग्रा हैक्टेयर थी, जो 2005–06 में बढ़कर 1193 कि.ग्रा हैक्टेयर हो गई है। दलहन के उपज एवं उत्पादन में इस काल मे ंवृद्धि हुई है। सन् 1950–51 में इसकी उपज दर 441 कि.ग्रा./हैक्टेयर थी ओर उत्पादन केवल 8.14 मि. हैक्टेयर था जो 2006–07 में क्रमशः बढ़कर 616 किग्रा/हैक्टेयर तथा 14.23 मि.टन हो गया। तिलहन के क्षेत्रफल, उपजदर एवं उत्पादन में भी विकास हुआ है जो क्रमशः 1950–51 में 10.73 मि. हैक्टेयर, 481 कि.ग्रा. /हैक्टेयर तथा 5.16 मि. टन से बढ़कर 2006–07 में 26.05 मि. हैक्टेयर, 917 कि.ग्रा/हैक्टेयर तथा 23.88 मि.टन हो गया। इसी प्रकार कपास एवं गन्ने के

क्षेत्रफल, उपज दर एवं उत्पादन में वृद्धि हुई है। गन्ने का क्षेत्र, उपज दर एवं उपज 1950–51 में 1.71 मि.हे, 3340 कि.ग्रा/हैक्टेयर एवं 57.05 कि. टन था जो 2006–07 में बढ़कर 4.86 मि.हैक्टेयर, 71081 कि.ग्रा./है. तथा 345.31 मि. टन हो गया है। इसके उपज दर एवं उत्पादन में भी वृद्धि हुई है।

7.6 कृषि का नवीनीकारण एवं पर्यावरणीय ह्रासः–

कृषि आधुनिकरण के गुणात्मक पक्ष का विश्लेषण किया है परन्तु इसका ऋणात्मक पक्ष भी है। वह मुख्यतया पर्यावरण के ह्रास से सम्बन्धित है। कृषि क्षेत्र के विकास के लिए जंगल एवं अन्य प्राकृतिक वनस्पतियों का अन्धाधुन्ध काटना कृषि कार्यों को नाजुक पारिस्थितिकी वाले क्षेत्रों में बढ़ावा देना, कृषि की अत्याधिक गहनता, रसायन उर्वरकों का अवैज्ञानिक तौर से अधिक प्रयोग, कीट एवं खरपतवार नाशक रसायन के अधिक प्रयोग ने पर्यावरण को अत्याधिक प्रदूषित एवं ह्रास किया है।

7.7 पर्यावरणीय ह्रास की संकल्पना (ह्रास/निम्नीकरण)

निम्नीकरण एक लैटिन शब्द है जिसका अर्थ पहले की अपेक्षा कम उपयोगी या कम स्तर तक आना है यह बहुत प्राचीन संकल्पना है परन्तु अध्ययन का नया विषय है तथा वैज्ञानिक शब्द कोष में एक नया शब्द है। इसलिए इसकी कोई विश्वव्यापी परिभाषा नहीं है। परन्तु इसकी संकल्पना पर्यावरण के घटते उपयोग एवं स्तर से है।

7.8 पर्यावरणीय ह्रास के कारण –

यह एक चर्चा का विषय है कि पर्यावरण के ह्रास के मुख्य कारण क्या है ? प्रायः वैज्ञानिक कृषि के आधुनिकरण एवं विकास को पर्यावरण ह्रास का मुख्य कारण मानते हैं परन्तु यह शत प्रतिशत सही नहीं है। क्योंकि किसी क्षेत्र विशेष की सम्पूर्ण विकास परिक्रिया से पर्यावरण का ह्रास एवं हनन होता है।

औद्योगिक विकास, बहुउद्देशीय योजनाओं का विकास, जनसंख्या की वृद्धि आदि अन्य कारण है जिससे पर्यावरण का ह्रास हुआ है। अतः यह संभवतया सही नहीं है कि कृषि एवं उससे संबंधित उपकरणों के विकास से ही पर्यावरण का ह्रास हुआ है।

7.9 पर्यावरणीय ह्रास के चयनित आयाम –

पर्यावरण एक विकास संकल्पना है और इसका विषय क्षेत्र बहुत वृहद है। इसमें बहुत से तत्व सम्मिलित हैं। अतः सबके विषय में यहाँ वर्णन करना उचित नहीं है यहाँ पर केवल वन, पानी एवं भूमि ह्रास की व्याख्या की जावेगी।

7.9.1 जल ह्रास –

पानी पर्यावरण का एक मुख्य तत्व है जो कृषि के क्षैतिज एवं लम्बवत विकास एवं शस्य प्रणाली के बदलते स्वरूप के कारण अधिक प्रदूषित एवं ह्रास हुआ है। कृषि के क्षैतिज विकास से वन अवरोहण हुआ। इससे जल का अधिक तेजी से बहाव हुआ और रिचार्ज की प्रक्रिया धीमी हो गई जिससे भूमिगत जल नीचे जा रहा है। कृषि के लम्बवत विकास के लिए कृषि की गहनता को बढ़ाया गया। जिसके लिए अधिक मात्रा में रसायनिक उर्वरक, कीटनाशक रसायन एवं सिंचाई सुविधाओं में अत्यधिक वृद्धि की गई। जिससे भूस्थलीय एवं भूमिगत जल काफी प्रदूषित हुआ। इसके साथ–साथ कृषि उपज भी प्रदूषित हुई जो मानव स्वास्थ्य को भी प्रतिकूलता से प्रभावित करती है। शस्य प्रणाली में अधिक पानी वाली शस्यों का वरीयता दी गई जैसे हरियाणा पंजाब एवं पश्चिमी उत्तरप्रदेश में चावल एवं गन्ने की कृषि, जिसके कारण नहरी सिंचाई वाले क्षेत्रों में भूमिगत जल का स्तर निरन्तर बढ़ता जा रहा है और जलमग्नता की समस्या उत्पन्न हो गई है। इसके विपरित नलकूपों द्वारा सिंचाई वाले प्रदेशों में भूमिगत जलस्तर निरन्तर गिरता जा रहा है। जिससे न केवल

सिंचाई के जल की समस्या उत्पन्न हो गई है अपितु पेयजल भी मिलना दुर्लभ हो रहा है।

7.9.2 वनो का ह्रास –

किसी क्षेत्र की पारिस्थितिकीय संतुलन में वनों का बड़ा ही योगदान है। वैज्ञानिकी के अनुसार किसी क्षेत्र का पारिस्थितिकीय संतुलन बनाये रखने के लिए वहां के 1/3 भाग का वनों के अन्तर्गत रहना आवश्यक है। इस परिप्रेक्ष्य में भारत की स्थिति अच्छी नहीं है। सरकारी आकड़ों के अनुसार 1950–514 में जगलों के अन्तर्गत देश के कुल क्षेत्रफल का केवल 14.2 प्रतिशत भूमि थी जो हर दशक में निरन्तर बढते बढते 2001–11 में 27.7 प्रतिशत हो गई है परन्तु यह भी 1/3 क्षेत्रफल से कम है। यह एक विडम्बना है क्योकि विभिन्न लेखों एवं पुस्तकों से पता चलता है कि कृषि के आधुनिकरण से वन क्षेत्रफल में ह्रास हुआ है। इस तथ्य की पुष्टि NRSA हैदराबाद द्वारा जंगल के अन्तर्गत उपग्रहीय छायाचित्रों से निकाले क्षेत्रफल से हो रही है। जिस के अनुसार वन के अन्तर्गत केवल 12 प्रतिशत भाग है। इससे मालूम होता है कि 22.7 प्रतिशत आकड़े में कहीं न कहीं कमी है।

वनोन्मूलन से कई समस्याएँ उत्पन्न होती है जिससे विशेषरूप से पर्वतीय क्षेत्रों में एवं नदियों के निचले भाग में बाढ़ का आना, भूमिगत जलस्तर का नीचे गिरना आदि है। अतः हिमालय एवं अन्य पहाडी क्षेत्रों में कृषि की समस्या बढ गई है। झूमिंग खेती के लिए वनावरोहण और आर्द्रवनों में पेडों को काटने से पर्यावरण में बदलाव आया है। तथा कालान्तर में इन प्रक्रियाओं का प्रभाव इतना बढ़ा है कि Biomass के बड़े पैमाने पर नष्ट भ्रष्ट हो जाने से जलवायु में परिवर्तन आए हैं जो चिन्ता का विषय है।

7.9.3 भूमि ह्रास –

भूमि ह्रास की संकल्पना भी बहुत पुरानी है परन्तु अध्ययन का यह एक नया विषय क्षेत्र है अतः विश्वव्यापी स्तर पर मानी गई कोई परिभाषा नही है। Land Degradation and Rehabitation पत्रिका में भूमि ह्रास के दो पक्ष की ओर ध्यान आकर्षित किया गया है। प्रथम भूमिस्थल की जैविक उत्पादकता में निरन्तर कमी होनी चाहिए तथा दूसरे इस कमी का कारण प्राकृतिक घटनाओं के बजाय मानव के क्रियाकलाप होने चाहिए। अतः संक्षेप में मानव के हस्तक्षेप से किसी क्षेत्र विशेष के जैविक उत्पादकता या उसके उपयोग या दोनो में लगातार गिरावट को भूमि ह्रास कहते है। भूमि ह्रास अनेक रूपों में पाया जाता है, जिसमें मुख्य निम्नलिखित है –

7.9.4 क्षारीयता एवं लवणता –

अम्लीय एवं क्षारीय मिट्टी का निर्धारण मिट्टी की pH मान के आधार पर किया जाता है pH मान मिट्टी की सम्भावित क्षमता को दर्शाता है। मृदा घोल में सवतन्त्र हाईड्रोजन आयनों के अनुपात को pH मान के रूप में पाया या व्यक्त किया जाता है। पी.एच. उदासीन (Neutral) होता है जब पी.एच. का मान 7 होता है तो उसे उदासीन प्रतिक्रिया कहते है। इससे नीचे वाले अम्लता (acidity) को तथा ऊपर वाले मान क्षारता (alkalinity) को दर्शाते है सामान्यतया 6.5 से 7.5 पी.एच. मान पौधों के उचित विकास के लिए उपुर्यक्त माना जाता है जिस प्राथमिक पोषण पदार्थ नाइट्रोजन, फासफोरस तथा पोटाश की मात्रा पर्याप्त होती है। विभिन्न फसलों के लिए पी.एच. मान विभिन्न होता है।

कृषि आधुनिकता के कारण भारत में मृदा नमकीन एवं क्षारीय होती जा रही है। साधारणतया शुष्क एवं अर्द्रशुष्क क्षेत्रों में अधिक या कम वर्षा के कारण मिट्टी में लवणता बढती जा रही है। इन शुष्क प्रदेश में लवण वर्षा के पानी

या सिंचाई जल में घुलकर भूमि के अन्दर चला जाता है। परन्तु शुष्क मौसम या तेज धूप होते ही यह लवण घोल भूमि की सतह पर आ जाता है। पानी वाष्प बनकर उड़ जाता है परन्तु नमक की सफेद पर्त भूमि सतह पर जम कर भूमि का अनउपजाऊ/बंजर बना देती है। इस प्रक्रिया को Capillary action कहते हे। यह प्रक्रिया अर्दशुष्क क्षेत्रों में अधिक सिंचाई के कारण होती है।

भारत में नमकीन एवं क्षार मिट्टियों के अंतर्गत 711 हजार हेक्टेयर भूमि है। नमकीन एवं क्षारीय समस्या शुष्क एवं अर्धशुष्क क्षेत्रों में पाई जाती है। भारत में विशेषकर पश्चिमी उत्तरप्रदेश, गुजरात, राजस्थान, हरियाणा, पंजाब आदि में यह समस्या पाई जाती है। भुमला राव खर (1985) के अनुसार भारत में लगभग 711 हजार हे. भूमि में नमकीन एवं क्षारीय समस्या पाई जाती है। जिससे लगभग 130,121, 85, 74, 69 एवं 53 हजार हेक्टेयर भूमि क्रमशः उत्तरप्रदेश, गुजरात, पश्चिमी बंगाल राजस्थान, पंजाब एवं हरियाणा में पाई जाती है। पंजाब, गुजरात एवं हरियाणा के सकल क्षेत्रफल के संदर्भ में क्षारीय एवं लवणता मिट्टी का क्षेत्रफल अधिक है। यह समस्या उन क्षेत्रों में निरन्तर बढ़ती जा रही है, जहां कृषि का अवैज्ञानिक ढंग से आधुनिकरण हुआ है।

7.9.5 मृदा उत्पादकता की क्षय–

कृषि आधुनिकरण के कारण मृदा की उत्पादकता में भी क्षय हुआ है। लगातार फसलों के उगाने से, गहन एवं गहरी जुताई के कारण मिट्टी के बारीक कणों एवं पौष्टिक तत्वों के अपरदन एवं शस्यों के वैज्ञानिक फसल चक्र न अपनाने से मृदा की उत्पादकता में ह्यस हुआ है। यह साधारणतया देश के सभी क्षेत्रों में हुआ है परन्तु उन क्षेत्रों में जहां बढ़ी गहन कृषि होती है, अधिक हुआ है।

7.9.5 मिट्टी अपरदन –

मिट्टी की उपरी सतह से सूक्ष्म कणों के साथ पौधों के खाद्य सामग्री व जैविक पदार्थ का अनाच्छादन वनों द्वारा बहा/उड़ा ले जाने के मिट्टी का अपरदन कहते है। प्रवाहित जल एवं वायु मिट्टी अपरदन कहते है। प्रवाहित जल एवं वायु मिट्टी अपरदन के मुख्य कारक है। कृषि के आधुनिकरण की प्रक्रिया, जंगलों एवं प्राकृतिक वनस्पतियों की अंधाधुन्ध कटाई से भूतल नग्न हो गया है तथा अधिक गहन कृषि से मिट्टी अधिक खोखली हो गई है। चावल, गेहूँ, गन्ना, मक्का, कपास के निरन्तर बोने से मिट्टी की उर्वरता कम हो गई है और इसमें (humus) ह्यूमस का ह्यस हो गया है। वह शीघ्र ही अपर्दित हो जाती है। रसायनिक उर्वरकों के अधिक प्रयोग भी मृदा को अधिक कमजोर एवं खोखला बना देता है। फलस्वरूप अपरदन के कारक जल एवं वायु मिट्टी के बारीक कणों को अपने साथ वहां ले जाते है और मिट्टी को अनउपजाऊ बना देते है। हमारे देश में प्रति वर्ष लगभग 6000 मि.टन मिट्टी का अपछालन हो जाता है।

भारत में सबसे अधिक वर्षा एवं वायु से मिट्टी का अपरदन होता है। एक अनुमान के अनुसार भारत में पानी के अपरदन के कारण 9368 हजार हे. भूमि प्रभावित है जबकि वायु द्वारा अपरदन का क्षेत्रफल 1293 हजार हेक्टेयर है। वायु द्वारा अपरदन मुख्य रूप से राजस्थान, (1062 हजार हे.), हरियाणा (156 हजार हे.) तथा गुजरात (70 हजार हे.) में होती है। इसके अतिरिक्त पंजाब, आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक आदि राज्यों में भी वायु अपरदन होता है। पानी द्वारा अपरदन में मध्यप्रदेश (1270 हजार हे.) का स्थान सर्वप्रथम है। इसके पश्चात् महाराष्ट्र (1103 हजार हे.) कर्नाटक (672 हजार हे.) राजस्थान (666 हजार हे.) तथा उत्तरप्रदेश (534 हजार हे.) का स्थान है। यदि अपरदन क्रिया धीमी गति से जारी रही तो देश की जलीय मिट्टी का बहुत बड़ा भाग आने वाले समय में अनउपजाऊ हो जायेगा।

7.9.6जल मग्नता –

जल जमाव भूमि की ऐसी स्थिति है, जिसके अंतर्गत मृदा जल द्वारा स्थायी या अस्थायी रुप में संतृप्त हो जाती है। जल भराव क्षेत्रों में भूमि जल का स्तर एक हद तक बढ जाता है, जिससे फसलों की जड़ों में हवा का सामान्य संचार रुक जाता है। सामान्यतः भू–जल स्तर जमीन की सतह के 2 मीटर से कम होने पर जल जमाव की स्थिति उत्पन्न होती है।

यह समस्या इन्दिरा गांधी नहर कमाण्ड क्षेत्र में सर्वाधिक है क्योंकि यहां जल निकासी का कोई प्रावधान नहीं रखा गया। जल रिसाव का प्रभाव इस क्षेत्र में सर्वाधिक है तथा स्थानीय परिस्थितियों ने इस समस्या को काफी गंभीर बना दिया है। इसके अतिरिक्त पंजाब व हरियाणा से घग्घर बाढ़ का पानी भी यहां के भूमि अपक्षय व वाटरलोगिंग के लिए उत्तरदायी हैं। सबसे बड़ी समस्या जल के भराव की है क्योंकि यहां एकत्रित जल का निकासी का कोई साधन नहीं है। ऐसी आंशका है कि जिस गति से वाटरलोगिंग हो रही है उससे आगामी दस वर्षों में पूरा कमाण्ड क्षेत्र अनुपजाऊ भूमि में परिवर्तित हो जायेगा। यह समस्या सबसे अधिक उन क्षेत्रों में है जो मुख्य नहर के एक से दो किलोमीटर के बीच स्थित है तथा जहां वितरिकाओं में जल छोड़ा जाता है। इस समस्या का परिणाम जिले की 2.05 प्रतिशत भूमि पर पड़ा है।

7.9.6.1 जल मग्नता के कारण

जल जग्नता एक जल निकासी की समस्या है, जिन क्षेत्रों में बारिश का पानी या अति सिंचाई से जल की अधिकता हो जाती है। जल निकासी की समस्या में समतल मैदान, कम हाइड्रोलिक चालकता और आउटलेट मृदा हो के कारण कम जल बहाव है। सिंचाई से जलमग्नता की समस्या से बचने के लिए संतुलित सिंचाई व ढाल प्रवणता का विशेष ध्यान रखना चाहिए।

7.9.6.2 जल मग्नता का प्रभाव

मृदा पर प्रभाव

1. **वातन का प्रभाव** – जल मग्नता एक संतृप्त स्थिति है जिसके परिणामस्वरुप मृदा रंध्र बंद हो जाते है, जिस कारण फसलों की जड़ों में वायु की कमी से नष्ट हो लगती है। कुछ सूक्ष्म जीव जो की सूक्ष्मजीवविज्ञानी गतिविधि द्वारा भोजन के गठन के लिए आवश्यक है, परिणामस्वरुप जीवित नही रह सकते। जल जमाव भी अम्लता को भी बढातें है, जो की फसलों के लिए हानिकारक है।

2. **मृदा के तापमान में कमी** – जल मग्नता के कारण मृदा के तापमान में कमी होती है, जिस कारण फसलों की जड़ों का विकास, मृदा उपलब्ध नाइट्रोन, बीज अंकुरण और बीज विकास के उत्पदन कर दर कम हो जाती है।

3. **मृदा में लवणीयता** – जब मृदा की उपरी सतह पर केशिका क्रिया द्वारा जल के साथ लवण सतह पर जमा होने लगता है, परिणामस्वरुप मृदा की उत्पादकता कम होने लगती है।

4. **मृदा जीवाणु की गतिविधियां** – जब जल मग्नता से मृदा सरंचना प्रभावित होती है, तो सामान्य मृदा जीवाणु की गतिविधि कम हो जाती है।

5. **अनाइट्रीकरण** – जल मग्नता के कारण मृदा में वायु का संचरण बंद हो जाता है, परिणामस्वरुप सूक्ष्म जीवों की मृदा में नाइट्रोजन एकत्रित करने की प्रक्रिया में कमी आती है जिससे मृदा में नाइट्रोजन की कमी आती है।

7.9.7 पर्यावरण का प्रभाव –

जल जमाव के कारण स्थिर पानी में मलेरिया, घोंघे और मल के रूप एकत्रित होते है। यह स्वच्छता की स्थिति को बाधित और मलेरिया जैसी

बीमारियों को फैलाते है। परिणामस्वरूप मानव आबादी, जानवरो व पौधों के लिए अस्वास्थ्यकर वातावरण बनाते है।

फसलों पर प्रभाव–

1. **कृषि संचालन में विलम्ब** – कृषि क्रिया जुताई, बुवाई या सामान्य कृषि संचालन पर प्रतिकूल मृदा और अतिरिक्त जल की उपस्थिति नकारात्मक प्रभाव डाली है।

2. **जलीय खरपतवार** – जंगली पौधे व जलीय खरपतवार तीव्र गति से वृद्धि करते है तथा फसलों से प्रतिस्पर्धा करते है।

3. जिससे उपयोगी फसलों से खरपतवार हटाने के लिए अतिरिक्त निवेश करना पड़ता है।

4. **रोगग्रस्त फसल** – जल भराव की स्थिति फसलों के लिए शारीरिक बीमारी का कारण है, जड़ो के क्षय, पत्तो का सड़ना आदि।

5. **कम पैदावार** – फसलों की परिपक्वता अवधि होने व जल भराव की स्थिति के कारण फसल का कम उत्पादन होता है।

भूमि ह्रास जलमग्नता से भी होती है। यह बाढीयता (flooding) से अलग प्रक्रिया है। यह साधारणतया नहरी सिंचाई वाले क्षेत्रों में पाई जाती है। सिंचाई की गहनता तथा नहरों में निरन्तर बहते पानी के कारण भूमि में पानी का प्रवेश अधिक होता है जिसके कारण भूमिगत जलस्तर उपर उठकर लगभग भू–सतह पर आ जाता है। इसके उपरान्त थोडे वर्षों या नहरी पानी के बहाव से भूमि का निचला भाग जलमग्न हो जाता है। चूंकि भूमिगत जल लगभग भूमि स्तर पर रहता है इसलिए यह भूमि के अन्दर प्रवेश नहीं हो पाता है और काफी समय तक पानी निचली भूमि पर जमा रहता है। केवल वाष्पीकरण से ही जल का ह्रास होता है। इसका सबसे अधिक प्रकोप राजस्थान, पंजाब,

हरियाणा एवं पश्चिमी उत्तरप्रदेश में है। यहाँ पर अति उत्साही कृषकों भूमि उपयोग में परिवर्तन कर चरागाह या ज्वार, बाजरा, मक्का आदि के क्षेत्र पर धान एवं गेहूँ की कृषि करते है और उसके अधिक उत्पादन हेतु कई बार सिंचाई कर उसे जलरोधित एवं मिट्टी क्षय से ग्रस्त बना देते है। इन्दिरा गांधी नहर के प्रभावी क्षेत्र में राजस्थान की हजारों एकड़ कृषि उत्पादक भूमि एवं चरागाह जलरोधित होकर कृषि के अयोग्य हो गये है। यह समस्या राजस्थान के गंगानगर जिलें की सूरतगढ और अनूपगढ तहसीलों में पायी जाती है। इस समस्या का निवारण उचित जलप्रवाह प्रणाली के विकास, अधिक पानी ग्रहण करने वाले पेड़ों जैसे यूकेलिप्टस का वृक्षारोपण, सिंचाई गहनता में कमी, नहरों का उचित प्रबन्ध, आदि द्वारा किया जा सकता है।

7.10 भूमिगत जलस्तर की गिरावट :

हमारे देश में अजीब विडम्बना है कि एक ओर देश का अधिक भाग बाढग्रस्त होता है तो दूसरी ओर उसी समय दूसरा क्षेत्र सूखे की स्थिति से जूझ रहा होता है। इसी प्रकार कुछ क्षेत्रों में भूमिगत जलस्तर के ऊपर उठने से जल मग्नता बहुत बड़ी समस्या बनती जा रही है तो दूसरे कुछ क्षेत्रों में इसके विपरीत भूमिगत जल की सतह निरन्तर नीचे गिरती जा रही है। जिससे अनेक समस्याएं उत्पन्न हो रही है। कुछ क्षेत्रों में सिंचाई के जल की उपलब्धता दिन प्रतिदिन घटती जा रही है जबकि कुछ क्षेत्रों में इसके साथ पेयजल की पूर्ति भी एक उभरती हुई समस्या के रूप आ रही है।

भूमिगत जल का स्तर प्रायः देश के उन भागों में नीचे उतरा है जहाँ पर नलकूपों द्वारा इसका अन्धाधुन्ध दोहन किया गया है और कम वर्षा के कारण रीजार्च की प्रक्रिया बहुत धीमी रहती है। यह उन क्षेत्रों में नीचे गया है पहाड़ी क्षेत्रों में जहाँ वन अपरोहरण विशेष रूप से कृषि क्षेत्र को विस्तृत करने के लिए किया गया है। वनोन्मूलन के कारण वर्षा का पानी तेजी से नीचे बह जाता है और उसका कुछ ही अंश भूमि में प्रवेश करता है, जिससे जलस्तर नहीं बढता है।

भारत में शुष्क एवं अर्धशुष्क प्रदेशों में विशेषरूप से दक्षिणी पश्चिमी हरियाणा उत्तरप्रदेश में नलकूपों द्वारा भूमिगत जल के अन्धाधुन्ध दोहन से जल स्तर नीचे गया है। सिंचाई के लिए नलकूपों द्वारा भूमिगत जल के दोहन का मुख्य कारण कृषि प्रारूप में परिवर्तन है इन क्षेत्रों में प्रायः ज्वार, बाजरा, मक्का, जौ, चना आदि की कृषि के लिए उचित पारिस्थितिकीय दशाएं उपलब्ध हैं। परन्तु मानव कृषि के आधुनिक उपकरणों की उपलब्धता के कारण इन क्षेत्रों में गेहूँ, चावल एवं गन्ना की खेती करने लगा है। इन फसलों को अधिक पानी की आवश्यकता होती है। जिसकी पूर्ति इन क्षेत्रों में वर्षा से नहीं हो सकती है और नहरी सिंचाई का साधन उपलब्ध नहीं है, इसलिए मानव ने पृथ्वी की छाती को नलकूपों से छलनी कर दिया है और भूमिगत जल का अधिक दोहन किया है। जिससे भूमिगत जल का स्तर बहुत गिर गया है आने वाले वर्षों में इन क्षेत्रों में न केवल सिंचाई के जल की समस्या होगी बल्कि पेयजल भी उचित मात्रा में उपलब्ध नहीं होगा। अतः इन क्षेत्रों में पारिस्थतिकी अनुकूल कृषि प्रणाली अपनानी चाहिए। भूमिगत जल दोहन कम करना चाहिए।

सारांश

1966–67 पहले भारत की कृषि परम्परा गत कृषि थी। परन्तु हरितक्रान्ति के पश्चात् कृषि में क्रान्तिकारी विकास हुआ है। इस काल में कृषि के नये आयामों का भरपूर उपयोग हुआ है। कृषियन्त्र, रसायनिक खादों, अधिक उत्पादन वालों बीजों, सिंचाई के क्षेत्रफल, कीटनाशक रसायन के प्रयोग इनके प्रमुख तत्व है। इसके उपयोग के बढने में भू–कृषि, भूमि उपयोग एवं कृषि उत्पादकता में काफी वृद्धि हुई। परन्तु कृषि के इस आधुनिकरण के कारण पर्यावरण में ह्यस हुआ है। वनों के अन्तर्गत क्षेत्रफल का ह्यस हुआ, जल की मात्रा एवं उनकी गुणवत्ता का भी ह्यस हुआ है। जलमग्नता मृदा क्षारियता एवं लवणता एक बडी समस्या बनकर उभर रही है। इसलिए पारिस्थितिकी अनुकूल कृषि करनी चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ–

1. हुसैन, एम. (1979) : एग्रीकल्चरल जियोग्राफी , इंटर – इण्डिया पब्लिके ान्स, दिल्ली
2. जयरथ (1994) : एग्रीकल्चर रीजन ऑफ पंजाब इकोनोमिक ज्योग्राफी
3. कोस्त्रोविस्की (1956) : लैण्ड यूटीलाइजे ान सर्वे ऑफ मॉस्को डिस्ट्रिक्ट, ज्योग्राफी रिव्यू वोल्यूम 14, नं. 3
4. खत्री, एल.सी. एवं सिंघाड़ा, कल्याणमल (2005) : फसल संयोजनः पंचायत समिति कु ालगढ़ , जिला बांसवाड़ा का एक वि ाि ष्ट अध्ययन, एनाल्स ऑफ दि राजस्थान ज्योग्राफिकल एसोसिए ान, वो. 21–22
5. पाण्डे, निवेदिता, अली, अहमद एवं डॉ. स्वामी, एस.के. (2006) : मरूस्थलीय पारिस्थितिकीय तंत्र में सिंचाई : इंदिरा गांधी नहर परियोजना क्षेत्र का भौगोलिक आंकलन, ज्योग्राफिकल आस्पैक्ट्स, बीकानेर, वो.8
6. राव, प्रका ा वी.एल.एस. (1947–56) : क्रॉप एसो ि ाये ान एण्ड चैन्जिंग पैटर्न ऑफ क्रॉप इन गोदावरी रीजन, वोल्यूम 13

अध्याय–अष्ठम्

कृषि में नवीन तकनीकी का स्तरमापन एवं कृषि पारिस्थितिकी

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के पूर्व अध्यायों में "गंगानगर जिले में कृषि की नवीन तकनीकी का पारिस्थितिकीय प्रभाव" के विभिन्न आयामों पर प्रकाश डालने का प्रयास किया गया है। जिसमें क्षेत्र के भौगोलिक परिवेश के अन्तर्गत कृषि पारिस्थितिकी के लिए उपलब्ध आधुनिक सुविधाओं, कृषि प्रारूप का बदलता हुआ स्वरूप, सिंचाई आदि विषयों की चर्चा की गई है। जिसमें पिछले 10 वर्षों के अध्ययन में सिंचाई सुविधाओं का विकास कृषि में मशीनीकरण एवं आधुनिक कृषि आदानों में धनात्मक परिवर्तन देखने को मिलता है।

आज क्षेत्र की कृषि पारिस्थितिकी परम्परा ढंग की ही नहीं अपितु आधुनिक सुख–सुविधाओं से ओतप्रोत है, तथा यह बढ़ती जनसंख्या की मांग के अनुसार प्रभावित होती है। यहाँ की कृषि में पारिवारिक कृषि के लक्षण उभरने लगे हैं अतः प्रस्तुत अध्याय में कृषि पारिस्थितिकी के आधुनिकीकरण को अध्ययन आयामों में से प्रमुख चयनित चर को आधार मानकर किया गया है। जिसका विवरण तालिका संख्या 8.1 में तहसीलवार दिया गया है। कृषि के तकनीकीकरण हेतु चयनित नौ चर निम्न हैं–

1. शुद्ध बोया गया क्षेत्र (प्रतिशत में)
2. शस्य गहनता सूचकांक
3. शुद्ध काश्त क्षेत्रफल का सिंचित क्षेत्रफल (प्रतिशत में)
4. सिंचाई गहनता

5. कृषक (प्रतिशत में)

6. डीजल–इंजन (प्रति 100 हैक्ट. शुद्ध बोया गया)

7. विद्युत पम्प (प्रति 100 हैक्ट. शुद्ध बोया गया)

8. लौहे हल (प्रति 100 हैक्ट. शुद्ध बोया गया)

9. ट्रेक्टर (प्रति 100 हैक्ट. शुद्ध बोया गया)

उपरोक्त चरों का तहसीलवार वास्तविक मूल्य इस प्रकार है : उपर्युक्त चरों को आधार मानकर गंगानगर जिलें की कृषि की नवीनीकरण का मापन विधि द्वारा किया गया है। यह मानक विचलन कार्लपियर्सन महोदय के लघुरीति के अनुसार ज्ञात किये गये हैं।

प्रथम चरण–

1 – चरों से समान्तर माध्यम ज्ञात करना।

$$\bar{X} = \sum X/N$$

यहाँ पर–

$\bar{X} =$ समान्तर माध्य

$\sum \bar{X} =$ चरों का कुल योग

N = चरो की कुल संख्या

f}rh; pj.k&

2– चरो से प्रमाप विचलन ज्ञात करना

$$\sigma = \sqrt{\frac{\sum d^2}{N}}$$

यहाँ पर σ = प्रमाप विचलन

σ = X - $\bar{X}$ वास्तविक माध्य से ज्ञात किया गया विचलन

$\sum d^2 =$ वास्तविक माध्यम से निकाले गये विचलनों का वर्ग

$\sum dx =$ विचलनों का कुल योग

N = चरो की कुल संख्या

r`rh; pj.k&

प्रमाणीकरण मान $= \frac{X-\bar{X}}{\sigma}$

यहाँ पर X = सूचकांक का वास्तविक मान

$\bar{X} =$ समान्तर माध्य

σ = प्रमाप विचलन

चतुर्थ चरण

3– सामूहिक सूचकांक ज्ञात करना। प्रत्येक तहसील के सभी 9 सूचकांकों के प्रमापीकरण मान को जोड़कर कुल योग में सूचकांकों की संख्या का भाग देते है जो की निम्न उदाहरण से स्पष्ट हैं

तलिका सख्यां 8.1

गंगानगर जिले की नवीन तकनीकी का स्तर मापन (2014–2015)

क्र.स.	तहसील	भौगोलिक क्षेत्र का कुल काश्त क्षेत्रफल हैक्टेयर	शस्य गहनता सूचकांक प्रतिशत में	शुद्ध काश्त क्षेत्रफल का सिंचित क्षेत्रफल हैक्टेयर	सिंचाई गहनता प्रतिशत में	कृषक प्रतिशत में	डीजल इंजनों की संख्या	विद्युत पम्पों की संख्या	लोहे के हलों की संख्या	ट्रेक्टरों की संख्या
1	श्रीगंगानगर	82220	98.34	80857	98.34	12.04	822	1060	3800	4783
2	करणपुर	68820	91.29	62829	91.29	18.29	949	325	2100	3389
3	पदमपुर	75464	84.83	64016	84.82	21.67	1680	824	4400	3169
4	रायसिंहनगर	112583	76.54	86169	76.53	26.02	1100	523	6500	4554
5	अनूपगढ़	80299	92.01	73883	92	30.01	1778	420	3248	2410
6	सूरतगढ़	165078	39.19	64702	84.24	29.14	3756	186	13680	3236
7	सार्दूलशहर	67903	73.62	49993	88.83	25.67	233	12	7050	3368
8	विजयनगर	56274	136.89	77031	46.66	26.29	2416	113	3351	2438
9	घड़साना	76798	56.48	43379	63.88	28.43	45	16	4200	2906
$\bar{x} = \frac{\sum x}{N}$		**87271**	**83.24**	**66984.33**	**80.73**	**24.17**	**1419.9**	**386.56**	**5369.89**	**3350.33**
S.D. = $\sqrt{\frac{\sum d^2}{N} - \frac{(\sum d)^2}{(N)^2}}$		**31080.91**	**25.70**	**13275.84**	**17.74**	**5.52**	**1609.17**	**343.36**	**3475.2**	**762.48**

तलिका सख्यां 8.2

गंगानगर जिले के नवीन तकनीकी का मानक विचलन की गणना 2014–2015

क्र. सं.	तहसील	कुल भौगोलिक क्षेत्रफल (हैक्टर)	शस्य गहनता सूचकांक (:)	शुद्ध काशत क्षेत्र का सिचित क्षेत्र	सिंचाई गहनता (:)	कृषक (:)	डीजल इंजन की संख्या	विघुत पंपो की संख्या	लोहे के हल	ट्रेक्टर	सकल मूल्य	सामूहिक सूचकांक
1	श्रीगंगानगर	0.16	0.58	1.04	0.99	2.19	0.37	1.96	0.45	1.87	9.61	1.068
2	करणपुर	0.59	0.31	0.31	0.59	1.06	0.29	0.18	0.94	0.05	4.32	0.48
3	पद्मपुर	0.37	0.06	0.22	0.23	0.45	0.16	1.27	0.27	0.23	3.26	0.36
4	रायसिंह नगर	0.81	0.26	1.44	0.23	0.33	0.19	0.39	0.32	1.44	5.41	0.61
5	अनूपगढ़	0.22	0.34	0.51	0.63	1.05	0.22	0.09	0.61	1.23	4.9	0.54
6	सूरतगढ़	2.50	1.71	0.17	0.19	0.90	1.45	0.58	2.39	0.14	10.03	1.11
7	सार्दूल शहर	0.62	0.37	1.28	0.45	0.27	0.73	1.09	0.48	0.02	5.31	0.59
8	विजयनगर	0.99	2.08	0.75	1.92	0.38	0.62	0.8	0.58	1.19	9.31	1.03
9	घड़साना	0.33	1.04	1.77	0.94	0.77	0.85	1.08	0.33	0.58	7.66	0.85

तलिका सख्यां 8.3

गंगानगर जिले में ट्रेक्टरों का स्तरमापन 2014–15

क्र.सं.	तहसील	ट्रेक्टरों की संख्या	d= $X - \bar{X}$	d^2
1	श्रीगंगानगर	4783	+1432.67	2052543.32
2	करणपुर	3389	+38.67	1495.36
3	पद्मपुर	3168	-181.33	32880.56
4	रायसिंहनगर	4554	+1103.67	1218087.46
5	अनूपगढ़	2410	-940.33	884220.50
6	सूरतगढ़	3236	-114.33	13071.34
7	सार्दूलशहर	3368	+17.67	312.22
8	विजयनगर	2438	-912.33	832346.02
9	घड़साना	2906	-444.33	197429.14
$\bar{X} = \frac{\Sigma X}{N}$		**3350.33**		**S.D. = $\sqrt{\frac{\Sigma d^2}{N}}$ =762.48**

इसी प्रकार प्रत्येक चर का सकल सूचकांक ज्ञात किया गया है।

V^asDVjksa dk ldy lwpdkad

सकल सूचकांक = $\frac{X-\bar{X}}{S.D.}$

श्रीगंगानगर = $\frac{4783-3350.33}{762.48} = 9.61$

करणपुर = $\frac{3389-3350.33}{762.48} = 0.05$

पदमपुर = $\frac{3169-3350.33}{762.48} = 0.23$

रायसिंह नगर = $\frac{4454-3350.33}{762.48} = 1.44$

अनूपगढ+ = $\frac{2410-3350.33}{762.48} = 1.23$

सूरतगढ़ = $\frac{3236-3350.33}{762.48} = 0.14$

सार्दूलशहर = $\frac{3368-3350.33}{762.48} = 0.02$

विजयनगर = $\frac{2438-3350.33}{762.48} = 1.19$

घडसाना = $\frac{2906-3350.33}{762.48} = 0.58$

सामूहिक सूचकांक प्रमापीकरण के मानों का योग/सूचकांकों की संख्या सामूहिक सूचकांक निम्न तालिका में प्रदर्शित किया गया है।

उपरोक्त सामूहिक सूचकांक कृषि नवीनीकरण के परिणाम में विभिन्न सूचकांकों को क्षेत्र की भौगोलिक दशाओं ने प्रभावित किया है। कृषि के आधुनिकीकरण में सहायक दशाओं आर्थिक एवं सामाजिक दशायें भौगोलिक दशाओं की तुलना में कम है लेकिन उस पर किसान आधुनिक सुविधाओं से विजय प्राप्त करने की भरसक कोशिश कर रहे हैं। आर्थिक, सामाजिक एवं भौगोलिक दशाओं का वर्णन पूर्व अध्यायों में यथावत किया गया है। प्रमापीकरण विधि द्वारा परिकलित परिणामों के आधार पर गंगानगर जिले के क्षेत्र को चार वर्गो में विभाजित किया है।

1. अति निम्न कृषि का नवीनीकरण वर्ग (0.5 से कम)

2. निम्न कृषि का नवीनीकरण वर्ग (0.5 से 1.0)

3. मध्यम कृषि का नवीनीकरण वर्ग (1.0 से 1.5)

4. उच्च कृषि का नवीनीकरण वर्ग (1.5 से 2.0)

1. अति निम्न कृषि का नवीनीकरण वर्ग (0.5 से कम) –

इस वर्ग के अंतर्गत गंगानगर जिले की करणपुर व पदमपुर तहसील शामिल है। जहां सामूहिक सकेंत 0.48 और 0.36 है। इन तहसीलों का पिछड़ापन यहां के कृषकों व डीजल पंपों का कम होना है।

2. निम्न कृषि का नवीनीकरण वर्ग (0.5 से 1.0) –

इस वर्ग के अंतर्गत वे तहसीले शामिल है जहां सूचकांक 0.59 से 0.85 तक है। इसमें रायसिंहनगर, अनूपगढ, सार्दूलशहर और घडसाना है, घडसाना में सिंचाई गहनता और सार्दूलशहर में विद्युत पंप तकनीकी को प्रभावित करते है।

3. मध्यम कृषि का नवीनीकरण वर्ग (1.0 से 1.5) –

इस वर्ग के अंतर्गत क्षेत्र की सूरतगढ और विजयनगर तहसीलें सम्मिलित है, जिनका सामूहिक सूचकांक 1.11 व 1.03 है। यहां पर कृषि तकनीक एवं सिंचाई सुविधा और सिंचाई गहनता रायसिंहनगर, अनूपगढ, सार्दूलशहर और घडसाना की तुलना में धनात्मक पायी जाती है।

4. उच्च कृषि के आधुनिकीकरण वर्ग (2.5 – 3.0) –

इस वर्ग के अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र की श्रीगंगानगर तहसील सम्मिलित है जिसका सामूहिक संकेत 1.068 है। इसका उच्च पाया जाना यहाँ की कृषि

पारिस्थितिकी एवं कृषि तकनीकी का उपयोग एवं यहाँ के यातायात की सुलभता का होना है।(मानचित्र सख्यां 8.1)

कृषि पारिस्थितिकी के आधुनिकीकरण में परिवर्तन एवं कारण

अध्ययन क्षेत्र में कृषि पारिस्थितिकी के नवीनीकरण में बहुत परिवर्तन पाया गया है। जहाँ गंगानगर तहसील में कृषि के तकनीकीकरण में अति उच्च वर्ग पाया जाता है तथा रायसिंहनगर, अनूपगढ, सार्दूलशहर और घड़साना तहसील में जहाँ कृषि पारिस्थितिकी के आधुनिकीकरण वर्ग का निम्न पाया जाता है। अतः कृषि पारिस्थितिकी के नवीनीकरण वर्ग में परिवर्तन आने का मुख्य कारण उस क्षेत्र के कृषि संसाधनों की उपलब्धता मुख्य कारण है। इसके साथ ही भौगोलिक स्थिति तथा तकनीकी शिक्षा तथा यातायात के साधनों का अभाव एवं सिंचाई गहनता का अभाव के कारण कृषि के आधुनिकीकरण में परिवर्तन पाया गया है।

अध्ययन क्षेत्र की सभी तहसीलों में कृषि के आधुनिकीकरण में सभी तहसीलों का स्तर उत्तम नहीं है। अतः भविष्य में कृषि पारिस्थितिकी के आधुनिकरण वर्ग का स्तर उच्च हो सकता है। क्योंकि यहाँ प्राप्त कृषि संसाधनों का समुचित विकास किया जाए तथा वन, जल स्रोतों का संरक्षण बंजर व क्षारीयपन से बचाया ताकि भविष्य में कृषि पारिस्थितिकी के आधुनिकीकरण के वर्ग में धनात्मक योगदान हो सके।

गंगानगर जिले में कृषि के आधुनिकीरण की समस्याएँ

अध्ययन क्षेत्र में कृषि आधुनिकीकरण तीव्र गति से हो रहा है। लेकिन राज्य के पड़ौसी राज्यों, पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश की अपेक्षा कृषि आधुनिकीकरण धीमी गति से हो रहा है। इसका प्रमुख कारण अध्ययन क्षेत्र में प्रतिकूल भौगोलिक परिस्थितियों के साथ अनेक सामाजिक आर्थिक कारण कृषि आधुनिकीकरण में बाधक है। जिनका विवरण इस प्रकार है–

मानचित्र सं. 8.1

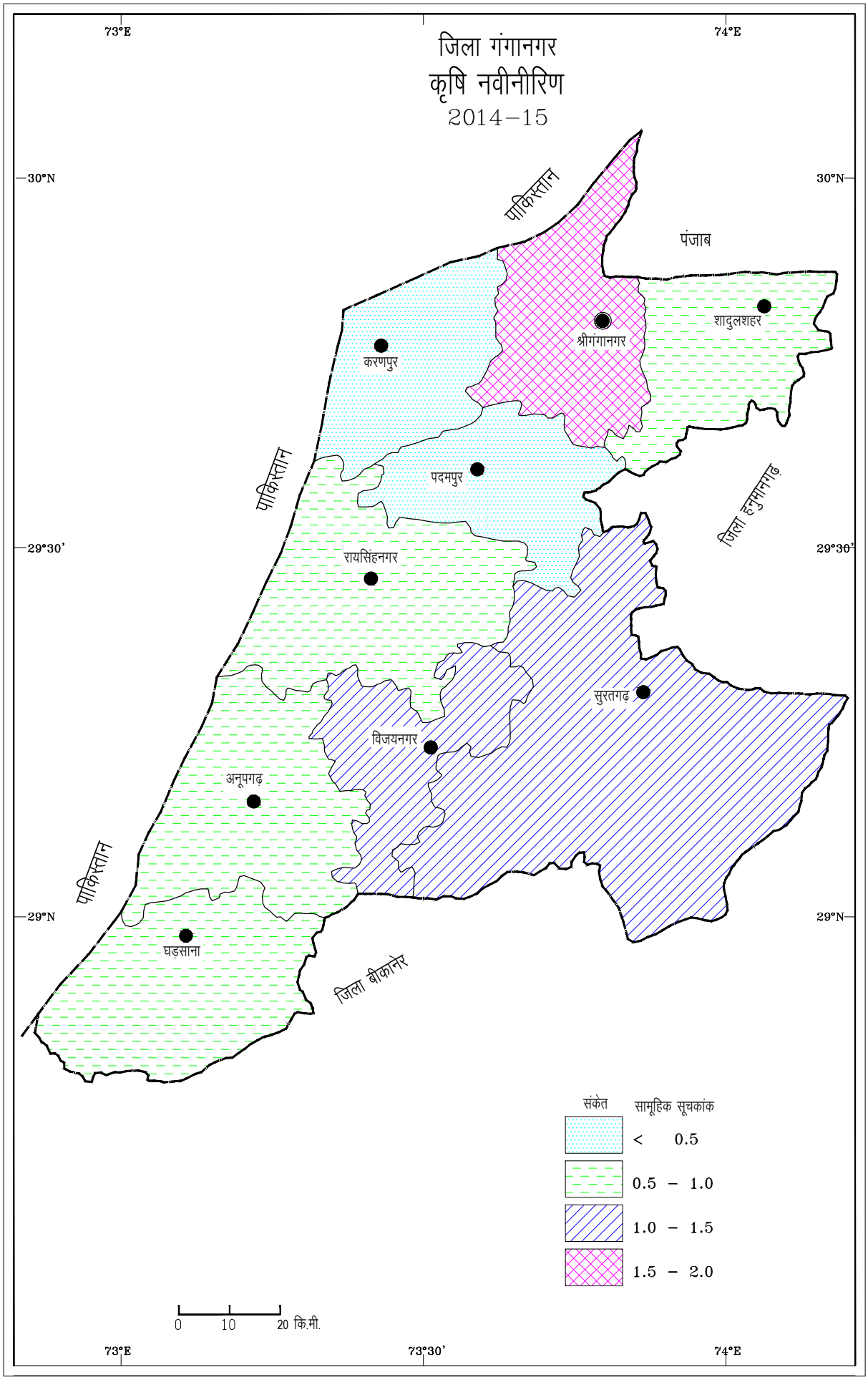
जिला गंगानगर
कृषि नवीनीरिण
2014–15
73°E
74°E
30°N
29°30'
29°N
73°30'
पाकिस्तान
पंजाब
जिला हनुमानगढ़
जिला बीकानेर
श्रीगंगानगर
शादुलशहर
करणपुर
पदमपुर
रायसिंहनगर
सुरतगढ़
विजयनगर
अनूपगढ़
घड़साना
संकेत
सामूहिक सूचकांक
< 0.5
0.5 – 1.0
1.0 – 1.5
1.5 – 2.0
0 10 20 कि.मी.

1. भौगोलिक परिस्थितियों की प्रतिकूलता

अध्ययन क्षेत्र में धरातल विषमता, वर्षा का कम होना, कृषि हेतु उपजाऊ भूमि का अभाव, मिट्टी में क्षारीय व लवणीय अंशों की अधिकता, ग्रीष्म ऋतु के ताप परिसर में अन्तर, कृषि हेतु उपयुक्त भूमिगत जल का अभाव एवं जलतल का नीचा होना आदि भौगोलिक परिस्थितियाँ क्षेत्र की कृषि पारिस्थितिकी के आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में अवरोध के रूप में है। मिट्टी अपरदन की समस्या भी कृषि को प्रभावित करती है। प्रतिवर्ष उपजाऊ भूमि अपरदन के द्वारा नष्ट हो जाती है। क्षेत्र के कई भागों में सिंचाई के साधनों का अभाव होने के कारण पड़त भूमि एवं कृषि योग्य बेकार भूमि की अधिकता है। क्षेत्र में कई तहसीलों में पहाड़ी भाग ऊबड़–खाबड़ धरातल तथा क्षारीय व लवणीय मिट्टियों की अधिकता व रेत के टीबों के कारण शुद्ध बोया गया क्षेत्र कम है।

2. कृषि का वर्षा पर आश्रित होना

अध्ययन क्षेत्र में सिंचाई के साधनों के अभाव के कारण कृषि कार्य वर्षा पर आश्रित है। यहाँ वर्षा की मात्रा एवं वितरण अनिश्चित एवं अनियमित है। सिंचाई साधनों का अभाव भी कृषि के आधुनिकीकरण को प्रभावित करता है। इस क्षेत्र में अधिकतर सिंचाई पक्की नहरों, कुओं एवं नलकूपों द्वारा होती है। अतः प्रतिवर्ष भूमिगत जल का स्तर नीचे गिरता जा रहा है। पानी की उपयुक्त मात्रा पर ही उन्नत बीज, रासायनिक खाद एवं कीटनाशक औषधियों का उपयोग सम्भव है। सिंचाई के अभाव में व्यापारिक फसलों का उत्पादन कम हो पाता है। अतः अध्ययन क्षेत्र में वर्षा की कमी एवं सिंचाई सुविधाओं की कमी कृषि पारिस्थितिकी के आधुनिकीकरण को प्रभावित करती है।

3. अशिक्षित किसान

क्षेत्र में साक्षरता 69.64 प्रतिशत है। क्षेत्र के अधिकांश किसान अशिक्षित हैं। किसान अशिक्षित होने के कारण वर्तमान समय में हो रहे आधुनिक परिवर्तनों व योजनाओं के बारे में लाभ प्राप्त नहीं कर पाते। वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा कृषि में हो रहे परिवर्तनों को किसान स्वयं पर प्रयोग करने से डरते हैं। किसानों के पास पूंजी भी कम होती है। जिससे वह नये प्रयोग नहीं कर पाते हैं।

4. कृषि भूमि पर जनसंख्या का अधिकभार

अध्ययन क्षेत्र की जनसंख्या की व्यावसायिक संरचना से ज्ञात होता है कि 54.34 प्रतिशत कृषक 46.72 प्रतिशत कृषि श्रमिक हैं। कृषि भूमि का विभाजन दिन–प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। इस कारण क्षेत्र में विस्तृत पैमाने की कृषि असंभव है। जनसंख्या भार के कारण ही क्षेत्र में जोत का आकार घटता जा रहा है। क्षेत्र के किसानों की आर्थिक स्थिति कमजोर होने के कारण आधुनिक मशीनों एवं आदानों का उपयोग कम हो पाता है।

5. भूमि की उत्पादकता क्षमता में कमी

अध्ययन क्षेत्र में कृषि भूमि के निरन्तर उपयोग से भूमि के पोषक तत्व कम होते हैं तथा खाद के उचित उपयोग के अभाव में उत्पादन कम होता है तथा पानी के बहाव से भूमि का कटाव होता है और भूमि अनुपयोगी हो जाती है तथा नहरों के विकास से इनके आस–पास रिसाव से भूमि क्षारयुक्त होती जा रही है। अतः उत्पादन कम हो रहा है।

6. जोतों का आकार छोटा होने के कारण कृषि में मशीनीकरण का उपयोग अधिक लाभप्रद नहीं हो पाता है।

7. क्षेत्र में कृषक की आर्थिक स्थिति कमजोर होने से मशीनों का एवं अन्य आदानों का उपयोग कम कर पाते हैं।

8. जिले के कृषक अभी भी रूढ़िवादिता के आधार पर कृषि कार्य करते हैं।

सारांश, निष्कर्ष एवं सुझाव

अध्ययन क्षेत्र गंगानगर राज्य के उत्तर पश्चिमी मरूस्थलीय प्रदेश के अन्तर्गत आता है। जिला मुख्यालय गंगानगर, बीकानेर नरेश गंगासिंह (ई.1887 से ई.1943) के नाम पर प्रसिद्ध है। उससे पहले यह रामनगर कहलाता था। इसके दक्षिण में चूरू और बीकानेर, उत्तर–पश्चिम में पाकिस्तान का बहावलपुर जिला, उत्तर–पूर्व में हनुमानगढ़ जिला स्थित है। जिले का कुल क्षेत्रफल 7944 वर्ग किलोमीटर है यह जिला थार के मरु प्रदेश का हिस्सा है इसकी 204 किलोमीटर लम्बी सीमा पश्चिम में स्थित पाकिस्तान की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा का निर्माण करती है। पहले हनुमानगढ़ जिला भी इसी जिले में शामिल था किन्तु 12 जुलाई 1994 को हनुमानगढ़ पृथक जिला बन जाने से जिले का लगभग आधा क्षेत्रफल हनुमानगढ़ जिले में चला गया। गंगानगर जिला $28^0 4'$ से $30^0 6'$ उत्तरी अंक्षांश और $72^0 2'$ से $75^0 3'$ पूर्वी देशान्तरों के बीच स्थित है इसका भौगोलिक क्षेत्रफल 11,154.66 वर्ग किलोमीटर है। यह पूर्व की ओर हनुमानगढ़ जिले से घिरा है। गंगानगर पंजाबी जनसंख्या की अधिकता के कारण राजस्थान का पंजाब एवं अन्न की अधिकता के कारण अन्न की टोकरी कहलाता है। गंगानगर जिला 9 तहसीलों श्रीगंगानगर, करणपुर, सादुलशहर, पदमपुर, रायसिंहनगर, सूरतगढ़, अनूपगढ़, विजयनगऱ व घडसाना में फैला हुआ है जिसकी कुल जनसंख्या 2011 की जनगणना के अनुसार 19,69,520 है।

गंगानगर जिला मरूस्थलीय शुष्क क्षेत्र है जिसमें नहरी तंत्र के विकास के फलस्वरूप यह तथ्य उजागर हुआ है कि थार के मरूस्थल में केवल पानी की कमी है और यह सुविधा मिलने पर पूरा मरूस्थलीय क्षेत्र एक विशाल अन्न भण्डार के रूप में विख्यात हो सकता है। जिले में गंग नहर, भाखड़ा और इन्दिरा गांधी नहर द्वारा दक्षिणी टीले वाले क्षेत्रों को छोड़कर पूरा क्षेत्र नहरी

सिंचित क्षेत्र में सम्मिलित है। विश्व के अन्य सिंचित नहरी क्षेत्रों की भांति गंगानगर जिले में भी कुछ पर्यावरणीय, परिस्थितिकी और प्राकृतिक समस्याएं विकराल रूप लेने लगी है।

जिले के 10978 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में से कृषि योग्य क्षेत्र भौगोलिक स्वरूप का 81 प्रतिशत है जो राजस्थान के भूमि उपयोग के असन्तुलित स्वरूप को दर्शाता है। कृषि क्षेत्र का 74 प्रतिशत भाग सिंचित है परन्तु मृदा की जल संग्रहण क्षमता की कमी के कारण जल प्लावन की समस्या उत्पन्न हुई है। जिले के एक भाग में जिप्सम की कठोर मोटी परतों के कारण भूमि की निचली सतहों पर रिसने वाला पानी अवरूद्ध होकर जल प्लावन की समस्या को बढ़ाता है। इसके साथ ही लवणीयता व क्षारीयता का प्रभाव भूमि के उत्पादन व उत्पादकता पर गंभीर है। कृषि क्षेत्र में अधिक भूमि प्रयुक्त होने से वन क्षेत्र 5.47 प्रतिशत, आबादी व विकास के अन्तर्गत भूमि 6.24 प्रतिशत और बंजड़ ऊसर, चरागाह आदि क्षेत्र 6.70 प्रतिशत में सीमित रह गए हैं।

जिले में औसत वर्षा 255 मिलीलीटर होती है जो उत्तर पश्चिम से दक्षिण पश्चिम की ओर बढ़ती जाती है। जिले का तापमान गर्मी में 42.1 व 28 डिग्री सेल्सियस क्रमशः दिन व रात में तथा सर्दी में 20 से 5 डिग्री सेल्सियस के मध्य रहता है जिले का 53 प्रतिशत भाग सपाट प्राचीन उपजाऊ मैदान तथा 18 प्रतिशत रेतीले टीलों से आवृत्त है। इसके अतिरिक्त 1.3 प्रतिशत वर्तमान में निर्मित, 15.8 प्रतिशत रेतीले असमतल प्राचीन उपजाऊ मैदान, 15.8 प्रतिशत रेतीले असमतल प्राचीन उपजाऊ क्षेत्र, 7.9 प्रतिशत रेतीले असमतल टीलों के मध्य के मैदान ताकि 3.7 प्रतिशत सपाट टीलों के मध्यवर्ती क्षेत्र और विभिन्न आकृतियों वाले भूस्वरूप है।

जिले के दक्षिणी भागों में मध्यम से उच्च श्रेणी के टीले और बहुत संकरे और छोटे–छोटे रेतीले असमतल क्षेत्र है इस क्षेत्र की मृदा जिप्सम व चूने की निचली पर्तों पर लोमी सेंड से सेण्ड, सेण्डी लोम से लोम के बने हैं। जिले की

मृदा मे एन्टीसोल्स व एरिडीसोल्स का क्षेत्रीय अनुपात क्रमशः 55:45 है। मृदा की जल संग्रहण क्षमता को दृष्टिगत रखकर 24 प्रतिशत क्षेत्र की क्षमता द्वितीय, 20 प्रतिशत क्षेत्र की क्षमता तृतीय, 36 प्रतिशत क्षेत्र की क्षमता चतुर्थ व 20 प्रतिशत मृदा की क्षमता अष्टम श्रेणी की है।

नहरी क्षेत्र के जल प्रवाह की उपलब्धता 0.90 मीटर प्रति हेक्टेयर है जो आवश्यकता के अनुमानित मध्यमान 0.57 मीटर प्रति हेक्टेयर से बहुत अधिक है। नहर प्रणाली के विकास से सतही जल की मात्रा 385 गुनी बढ़ गई है। लगभग 20.97 अरब घनमीटर वार्षिक जल प्रवाह के कारण इंदिरा गांधी नहर में भूमिगत जल का स्तर 1.1 मीटर वार्षिक, भाखड़ा का 0.81 से 0.85 मीटर प्रति हेक्टेयर व गंगानहर का 0.64 मीटर वार्षिक गति से बढ़ रहा है। वर्तमान में भूजल का स्तर 10 से 25 मीटर के बीच है और बढ़ते भूजल स्तर से जलप्लावन की समस्या विकराल रूप लेने की आशंका है।

जिले के 49 प्रतिशत भाग में भूजल स्तर 10 से 20 मीटर, 25 प्रतिशत भाग में 20 से 30 मीटर, 19 प्रतिशत क्षेत्र में 0–10 मीटर तथा 7 प्रतिशत क्षेत्र में भूजल स्तर 30–40 मीटर है। भूजल की गुणवत्ता की दृष्टि से आंकलन करने पर यह परिलक्षित होता है कि 48 प्रतिशत क्षेत्र में लवणीयता सामान्य श्रेणी की 4 से 6 डी.एस./एम के माध्य, 25 प्रतिशत क्षेत्र में बहुत हलकी 2 से 4 डी.एस./एन स्तर की, 20 प्रतिशत क्षेत्र मे अत्यधिक 6 से 8 डी.एस./एम श्रेणी की है। अपवादस्वरूप एक प्रतिशत क्षेत्र जल प्लावन समस्या से ग्रसित है जहां लवणीयता उच्च श्रेणी की पाई गई है। जिले का 6079.72 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र वायु क्षरण व संग्रहण तथा जलप्लावन व लवणीयता जैसी समस्याओं से ग्रसित हैं।

घड़साना व विजयनगर को सम्मिलित नहीं किया गया है क्योंकि इन स्टेशनों पर आगामी आंकलन में वर्तमान विचलन की स्थिति काफी अधिक है। संभाव्यता की दृष्टि से पूरे जिले में 100 मि.मी. वर्षा की पूर्व संभाव्यता है। 300

मि.मी. वर्षा की संभाव्यता सादूलशहर में 71 प्रतिशत व रायसिंहनगर, अनूपगढ़ व सूरतगढ़ में 54 प्रतिशत है। 400 मि.मी. वर्षा की संभाव्यता सादूलशहर में 39 प्रतिशत व पदमपुर में 17 प्रतिशत है। 500 मि.मी. वर्षा की संभाव्यता न्यूनतम रायसिंहनगर में 2 प्रतिशत व सादूलशहर में 18 प्रतिशत है। 600 मि.मी. वर्षा की संभाव्यता पदमपुर में 8 प्रतिशत व रायसिंहनगर में 2 प्रतिशत है। 600 मि. मी. से अधिक वर्षा की संभाव्यता गंगानगर सार्दूलशहर व करणपुर में मानी गई है जो विगत वर्षों की वर्षा पर आधारित है।

जिले में जून 2001 को अधिकतम तापमान 48.8^0 सेल्सियस अंकित किया गया था। अध्ययन क्षेत्र में माध्य मासिक अधिकतम तापमान का परिसर 40^0 से 44^0 सेल्सियस पाया जाता है। जनवरी माह में माध्य अधिकतम तापमान अपेक्षाकृत निम्न होता है।

वर्ष 2003–04 में जिले में वनों के अंतर्गत 632.44 वर्ग कि.मी. भूमि थी। वर्ष 2004–05 में यह क्षेत्र बढ़कर 645.56 वर्ग कि.मी. तथा वर्ष 2005–06 में 633.46 वर्ग कि.मी. हो गया। लेकिन वर्षा 2009–10 में इस क्षेत्र में कमी आयी। यद्यपि वन विकास के विभिन्न कार्यक्रमों के अंतर्गत नहरों के किनारे वृक्षारोपण किया जा रहा है।

अध्ययन क्षेत्र में इसका खनन रावला क्षेत्र में किया जाता है। रावला में राजस्थान राज्य खान व खनिज लिमिटेड द्वारा 700 टन प्रतिदिन जिप्सम ग्राइंडिंग का संयत्र वर्ष 2003 में स्थापित किया गया है। अन्य खनिज ब्रिक अर्थ और कलमी शोरा है।

सन् 2011 की जनगणना के अनुसार जिले की कुल जनसंख्या 1969168 व्यक्ति है। गंगानगर जिला कृषि बाहुल्य होने से यहां राज्य की 2.87 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। जगनणना सन् 2001 के अनुसार जिले कि कुल जनसंख्या 1789423 थी जो सन् 2011 बढ़कर 1969168 हो गई। सन् 2001 से

सन् 2011 तक जिले की जनसंख्या में 9.12 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। सन् 2001 में जिले का जनघनत्व 163 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. था जो बढ़कर सन् 2011 में 179 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. हो गया। जिले कि कुल साक्षरता व महिला साक्षरता दर 59.70 प्रतिशत है। जिले का लिंगानुपात 887 है। जनजणना 2011 के अनुसार जिले कि तहसीलों पर नजर डाले तो सबसे अधिक जन घनत्व गंगानगर तहसील का 488.29 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी है। जबकि सबसे कम जन घनत्व सूरतगढ़ तहसील का मात्र 113.67 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. है। जिले में जनघनत्व के साथ ग्रामीण व नगरीय जनसंख्या में भारी अन्तर मिलता है। जिले में सन् 2001 के अनुसार ग्रामीण जनसंख्या में भी 74.66 प्रतिशत व नगरीय जनसंख्या 25.33 प्रतिशत थी जो कि सन् 2011 में क्रमशः 72.80 व 27.19 प्रतिशत हो गई। इन 10 वर्षों में ग्रामीण जनसंख्या में 1.86 प्रतिशत की कमी व नगरीय जनसंख्या में 1.86 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। जिले कि तहसीलों पर नजर डाले तो सन् 2001 से 2011 तक ग्रामीण व नगरीय जनसंख्या में भारी अंतर मिलता है।

जिले की कुल कार्यशील जनसंख्या वर्ष 2011 के अनुसार 176800 (44.45 प्रतिशत) ग्रामीण पुरुष काश्तकार एवं 36011 (27.90 प्रतिशत) ग्रामीण महिला काश्तकार संलग्न हैं जबकि 172255 (3.18 प्रतिशत) नगरीय पुरुष काश्तकार एवं 35495 (2.27 प्रतिशत) नगरीय महिला काश्तकार कार्यरत हैं। इसका प्रमुख कारण यह है कि कृषि अर्थव्यवस्था ही यहाँ का मूल आधार है, इसलिए महिलाएँ ग्रामीण क्षेत्र में कृषि कार्य अधिक करती हैं अतः क्षेत्र में काश्तकारों की संख्या में महिलाओं में दस वर्षो में वृद्धि हुई तथा पुरुषों में कमी हुई इसका मुख्य कारण महिलाओं का कृषि व्यवसाय में अधिक जुड़ना एवं शिक्षा की कमी है।

गंगानगर जिले में जनसंख्या खाद्य संसाधन तथा कृषि विकास प्रदेश के प्रादेशिकरण के लिए 9 चर मूल्यों को लेकर सामूहिक सूचकांक सांख्यिकीय विधि से इनका सीमांकन किया गया है। सामूहिक सूचकांकों का वर्गीकरण करके निम्न जनसंख्या–खाद्य संसाधन तथा कृषि विकास प्रदेशों का निर्धारण किया है–

क्र.सं.	सामूहिक सूचकांक	कृषि तकनीकी	सम्मिलित तहसीलें
1.	2.5 से 3.0	उच्च कृषि तकनीकी	श्रीगंगानगर
2.	1.0 से 1.5	मध्यम कृषि तकनीकी	सूरतगढ़, विजयनगर
3.	0.5 से 1.0	निम्न कृषि तकनीकी	रायसिंहनगर, अनूपगढ़, सार्दुलशहर और घड़साना
4.	0.5 से कम	अति निम्न कृषि तकनीकी	करणपुर व पदमपुर

अध्ययन क्षेत्र में से प्रतिदर्श सर्वेक्षण के लिए सविचार प्रतिचयन द्वारा 9 तहसीलों का चयन करके प्रश्नावली के माध्यम से प्राथमिक आंकड़ें प्राप्त किये गये हैं।

गंगानगर जिले की करणपुर व पदमपुर तहसील शामिल है। जहां सामूहिक सकेंत 0.48 और 0.36 है। इन तहसीलों का पिछड़ापन यहां के कृषकों व डीजल पंपों का कम होना है।

रायसिंहनगर, अनूपगढ, सार्दूलशहर और घडसाना में सूचकांक 0.59 से 0.85 तक है। घडसाना में सिंचाई गहनता और सार्दूलशहर में विद्युत पंप तकनीकी को प्रभावित करते है।

मध्यम कृषि का नवीनीकरण वर्ग (1.0 से 1.5) इस वर्ग के अंतर्गत क्षेत्र की सूरतगढ और विजयनगर तहसीलें सम्मिलित है, जिनका सामूहिक सूचकांक 1.11 व 1.03 है। यहां पर कृषि तकनीक एवं सिंचाई सुविधा और सिंचाई गहनता रायसिंहनगर, अनूपगढ, सार्दूलशहर और घडसाना की तुलना में धनात्मक पायी जाती है।

उच्च कृषि के आधुनिकीकरण वर्ग (2.5 – 3.0) इस वर्ग के अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र की श्रीगंगानगर तहसील सम्मिलित है जिसका सामूहिक संकेत 1.

068 है। इसका उच्च पाया जाना यहाँ की कृषि पारिस्थितिकी एवं कृषि तकनीकी का उपयोग एवं यहाँ के यातायात की सुलभता का होना है।

कृषि पारिस्थितिकी के आधुनिकीकरण में परिवर्तन एवं कारण के अन्तर्गत गंगानगर तहसील में कृषि के तकनीकीकरण में अति उच्च वर्ग पाया गया है तथा रायसिंहनगर, अनूपगढ, सार्दूलशहर और घड़साना तहसील में जहाँ कृषि पारिस्थितिकी के आधुनिकीकरण वर्ग का निम्न पाया गया है। अतः कृषि पारिस्थितिकी के नवीनीकरण वर्ग में परिवर्तन आने का मुख्य कारण उस क्षेत्र के कृषि संसाधनों की उपलब्धता मुख्य कारण है। इसके साथ ही भौगोलिक स्थिति तथा तकनीकी शिक्षा तथा यातायात के साधनों का अभाव एवं सिंचाई गहनता का अभाव के कारण कृषि के आधुनिकीकरण में परिवर्तन पाया गया है।

अध्ययन क्षेत्र की सभी तहसीलों में कृषि के आधुनिकीकरण में सभी तहसीलों का स्तर उत्तम नहीं है। अतः भविष्य में कृषि पारिस्थितिकी के आधुनिकरण वर्ग का स्तर उच्च हो सकता है। क्योंकि यहाँ प्राप्त कृषि संसाधनों का समुचित विकास किया जाए तथा वन, जल स्रोतों का संरक्षण बंजर व क्षारीयपन से बचाया ताकि भविष्य में कृषि पारिस्थितिकी के आधुनिकीकरण के वर्ग में धनात्मक योगदान हो सके।

अध्ययन क्षेत्र में धरातल विषमता, वर्षा का कम होना, कृषि हेतु उपजाऊ भूमि का अभाव, मिट्टी में क्षारीय व लवणीय अंशों की अधिकता, ग्रीष्म ऋतु के ताप परिसर में अन्तर, कृषि हेतु उपयुक्त भूमिगत जल का अभाव एवं जलतल का नीचा होना आदि भौगोलिक परिस्थितियाँ क्षेत्र की कृषि पारिस्थितिकी के आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में अवरोध के रूप में है। मिट्टी अपरदन की समस्या भी कृषि को प्रभावित करती है।

कृषि तकनीकी के पारिस्थितिकी सुझाव

भौतिक एवं जैविक पर्यावरण के सभी अंशों में उचित एवं संतुलित मात्रा में विद्यमान होने पर ही प्रकृति अपना कार्य सही व सुचारू ढंग से निष्पादित करती है। किन्तु आज बढ़ती जनसंख्या, आधुनिकीकरण व शहरीकरण ने पर्यावरण के इस प्राकृतिक संतुलन को बिगाड़ दिया है। यही नहीं, आर्थिक विकास की अन्धी दौड़ में प्रत्येक क्षेत्र भौतिक एवं तकनीकि प्रगति के सोपानों को शीघ्र प्राप्त करने के लिए प्राकृतिक संसाधनों के क्रूरतापूर्वक दोहन व प्राकृतिक संतुलन के बिगड़ने से पर्यावरण प्रदूषण की समस्या ने विकराल रूप धारण कर लिया है। पर्यावरण के मुख्य आधार वायु, जल, भूमि व वनस्पति के प्रदूषित होने से मानव–जीवन पर घातक प्रभाव पड़ रहा है। जल मानव जीवन के लिए वायु के पश्चात् सर्वाधिक आवश्यक तत्व है। जल के साथ–साथ भूमि भी अमूल्य प्राकृतिक संसाधन है। दोनों ही प्रकृतिक की अनमोल एवं अद्भुत देन हैं जीवधारियों के शरीर में 70–80 प्रतिशत तक जल ही पाया जाता है। अतः जल को अमृत या जीवन भी कहा गया है। प्रसिद्ध विद्वान गोथे ने जल के महत्व को प्रतिपादित करते हुए उचित ही लिखा है कि प्रत्येक वस्तु जल से उद्भवित होती है व जल के द्वारा ही प्रतिपालित होती है।

पृथ्वी के तीन–चौथाई भाग पर जल होने के बावजूद भी इसका केवल 0.01 प्रतिशत भाग ही पीने के लिए उपलब्ध है, लेकिन चिन्ता का विषय है कि इस सीमित जल को भी मानव अपने तुच्छ स्वार्थों की पूर्ति हेतु विभिन्न प्रकार से प्रदूषित कर रहा है। जल एवं भूमि प्रदूषण रूपी इस महाकाल का जनक स्वयं मानव है जो अपनी विभिन्न क्रिया–कलापों से जल प्रदूषण की समस्या गम्भीर बना रहा है। जल स्रोतों में विसर्जित मल–मूत्र, मृतक शरीर व कूड़ा करकट एक तरफ धरातलीय जल स्रोतों का दूषित कर रहा है, वहीं भूमिगत किया गया मल–मूत्र भू–जल को भी विषाक्त कर रहा है जिसको स्वच्छ रखना दुरूह कार्य है।

आधुनिक युग में कृषि उत्पादन में शीघ्र व तीव्र गति से वृद्धि करने के लिए उर्वरकों, कीटनाशकों व जीवनाशक रसायनों का उपयोग अनियंत्रित रूप से किया जा रहा है। पौधों से बचे हुए ये उर्वरक व कीटनाशक रिसाव प्रक्रिया से जल स्रोतों में पहुँचकर जल व भूमि को विषाक्त कर देते हैं। भूमि एवं जल प्रदूषण की भयावह समस्या मानव, जन्तु व वनस्पति जाति पर प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से प्रहार कर रही है। यदि जल प्रदूषण इसी गति से बढ़ता रहा तो आने वाले कुछ वर्षों में भूल जल एवं सतही जल विषाक्त एवं प्रदूषित होगा तथा साथ ही साथ भूमि की गुणवत्ता में इसी प्रकार ह्रास होता गया तो आने वाले दिनों में भूमि बंजर रेगिस्तान के रूप में प्रतीत होगी।

अतः आज समय की मांग है कि तेजी से कम होते जल एवं भूमि संसाधन को संरक्षित एवं पुनर्जीवित किया जाये। उपलब्ध जल एवं भूमि संसाधन को पुनर्जीवित करना उनको संरक्षित किये बिना कठिन है। संरक्षण की प्रक्रिया का प्रारम्भ प्राथमिक संसाधनों, भूमि एवं जल के बेहतर प्रबंध से होता है। भूमि एव जल संरक्षण परस्पर जुड़े हुए हैं। इन दोनों संसाधनों का यह सम्बन्ध जीवन की गुणवत्ता को प्रभावित करता है। इनको संरक्षित करने के लिए सर्वाधिक उपयुक्त विधि यह होगी कि हम अपने प्रयासों को एक सीमित क्षेत्र के अन्दर केन्द्रित करके करें। प्राथमिक संसाधनों के परस्पर सम्बन्ध में लाने तथा इसके उचित प्रबन्धन हेतु भूमि एवं जल के द्वारा निर्धारित क्षेत्र जलग्रहण क्षेत्र में कार्य करना ही सर्वोपयुक्त होगा।

अध्ययन क्षेत्र में कृषि भूमि के सतत् विकास के लिए भूमि एवं जल संसाधन का प्रबन्धन करना अत्यावश्यक है। उत्पादन वृद्धि के मूल मंत्रों के सकारात्मक परिणाम प्राप्त करने के लिए भी यह आवश्यक है। मानवीय हस्तक्षेप तथा प्राकृतिक परिस्थितियों के असंतुलन के परिणामस्वरूप भूमि एवं जल में बाहरी तत्वों का समावेश होने से निरन्तर इनमें गुणात्मक परिवर्तन हो रहे हैं।

एकीकृत जलग्रहण कार्यक्रमों के अन्तर्गत भूमि प्रबन्धन के मुख्य कार्य

- जलग्रहण क्षेत्र में पाये जाने वाले प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण।
- पानी के बहाव की प्रबन्धन व्यवस्था कर भूमि कटाव को रोकना।
- बारानी क्षेत्र में कृषि योग्य भूमि में कृषि उत्पादन में वृद्धि करना।
- अकृषि योग्य भूमि में मृदा संरक्षण कर चारागाह का विकास करना।
- वृक्षारोपण एवं मृदा संरक्षण के कार्यकर सामुदायिक लाभ देना।
- बंजर भूमि का विकास एवं क्षारीय मृदा का ह्रास।
- कृषि वानिकी एवं उद्यानिकी विकास।
- उत्पादकता बढ़ाने के लिए मृदा के पोषक तत्वों का संरक्षण।
- जीविकोपार्जन हेतु जलग्रहण क्षेत्र के भूमिहीन श्रमिक एवं घूमन्तु लोगों को बारानी भूमि को कृषि योग्य बनाकर कृषि के लिए प्रदान करना।
- डेयरी, मुर्गी पालन, बकरी पालन, कुटीर उद्योग, लोहार कार्य के लिए उपयुक्त भूमि तलाश कर उसका प्रबन्धन करना।

भूमि संसाधन प्रबन्धन

"भूमि के भौतिक, रासायनिक या जैविक गुणों में ऐसा कोई भी अवांछित परिवर्तन जिससे भूमि की प्राकृतिक गुणवत्ता तथा उपयोगिता नष्ट हो जाती है, 'भूमि प्रदूषण' कहते हैं।" भूमि प्रदूषण का जन्म घरेलू अपशिष्ट, औद्योगिक अपशिष्ट नगरपालिका अपशिष्ट, खनन, कृषि अपशिष्ट, उर्वरकों का प्रयोग आदि कारणों द्वारा होता है।

जल बहाव की प्रबंधन व्यवस्था कर भूमि कटाव को रोकना–भारत वर्ष में भूमि कटाव एक सर्व उपस्थित प्राचीन समस्या है। वर्षा के दौरान वृक्षों की सघनता कम होने के कारण खेत–खलिहानों की उपजाऊ भूमि बहकर चली जाती है। जिसका प्रभाव उत्पादन पर पड़ता है।

राष्ट्रीय जल ग्रहण कार्यक्रमों के दारान इस समस्या को गंभीरता से लेते हुए सरकार ने इसके उचित प्रबन्धन के लिए प्रयास किये जिनमें वृक्षों की सघनता को बढ़ाना एवं अन्यत्र से बहकर आने वाले पानी को एक स्थान तालाब या अन्य जलग्रहण के माध्यम से एकत्रित करना।

बारानी क्षेत्र में कृषि योग्य भूमि में कृषि उत्पादन करना–सामान्यतः हम देखते हैं कि किसी–किसी भू–भाग पर सैंकड़ों हैक्टेयर जमीन बारानी ही पड़ी रहती है। बारानी होने के दो प्रमुख कारण होते हैं–

1. लम्बे समय तक सिंचाई सुविधा का न होना।
2. आवश्यक पोषक की मृदा में कमी।

जल ग्रहण कार्यक्रमों के दौरान ऐसी भूमि का पता लगाकर आवश्यक तत्वों का समावेश करके उसमें कृषि सम्बन्धी गतिविधियाँ प्रारंभ करने का प्रयास भी किया जाता है। इसमें सरकारी स्तर पर तो सहायता दी ही जाती हैं साथ–साथ कृषकों को उन्नत बीज एवं तकनीकी भी मुहैया करवायी जाती है।

अकृषि योग्य भूमि पर चारागाह विकसित करना–पशुधन भारतीय कृषि व्यवस्था की रीढ़ की हड्डी होती है। कृषि सम्बन्धी गतिविधियों के साथ–साथ अन्य आर्थिक क्रियाओं में भी पशुधन की बड़ी भूमिका होती है। इस के मध्य नजर राष्ट्रीय जलग्रहण कार्यक्रम एवं राज्य जलग्रहण कार्यक्रमों के दौरान पशुओं के विकास में सहायक चारागाह के विकास के लिए एक विस्तृत योजना बनाकर उसका क्रियान्वयन किया जा रहा है। जिसमें बारानी भूमि में चारागाह विकसित कर उसका प्रबन्धन एवं नियमन ग्राम पंचायत स्तर की समिति को करना होता है।

मृदा में जैव तत्वों एवं जल के अनुकूलतम सम्बन्ध को बनाये रखना भी मृदा संरक्षण के लिए अत्यावश्यक है। अध्ययन क्षेत्र में कृषि भूमि का कृषि के

रूप में 'अधिकतम उपयोग' (Maximum Utilization) कृषि पारिस्थितिकी को ध्यान में रखकर करना चाहिए। कृषि प्रतिरूप में ऐसी फसलों का चयन किया जाए कि जिनमें कम लागत तथा अधिक आय वाली स्थिति हो तथा कृषि पारिस्थितिकी में कदापि हस्तक्षेप न हो।

जैविक कृषि का महत्व

हम आजादी के समय खाने के लिए अनाज विदेश से लाते थे, खेती में बहुत कम पैदा होता था, फिर हरित क्रांति का दौर आया। नये–नये बीज व रासायनिक खाद आए। कीड़ों व बीमारियों को रोकने के लिए नई–नई दवाईयाँ आईं। भरपुर मात्रा में अनाज पैदा होने लगा। आज गोदाम गेहूँ, बाजरा आदि से भरे पड़े हैं, लेकिन यह दौर बुराईयाँ भी साथ लाया है। फसलें नये–नये कीड़ों व रोगों से भी ग्रसित हो गई हैं। जमीन का स्वास्थ्य खराब हो रहा हैं खेत से लवणों की मात्रा बढ़ रही है। भूमि की उत्पादन क्षमता में कमी आ रही है। कीटनाशकों से मनुष्यों में कैंसर जैसे भयानक रोग बढ़े हैं। साथ ही अनाज का स्वाद भी पहले जैसा नहीं रहा। यह सब बिना सोच–विचार किए रासायनिक खाद एवं कीटनाशकों के उपयोग के कारण हुआ है। हम अपने कृषि करने के देशी तरीकों को भूल रहे हैं। आज गोबर की खाद, हरी खाद, नीम को फिर याद करना है। देशी तरीकों का वैज्ञानिकों तरीकों से समन्वय करना है। यह जैविक खेती में ही सम्भव है। इससे भूमि के स्वास्थ्य, अनाज के स्वाद और भूमि की पैदा करने की क्षमता कायम रखी जा सकती है। साथ ही बाजार में उपज की कीमत भी अधिक मिलती है।

जैविक खेती, देशी खेती का उन्नत तरीका है। इसमें रासायनिक खाद, कीटनाशकों, वृद्धि नियंत्रकों का उपयोग नहीं करके खेत में गोबर की खाद, कम्पोस्ट, जीवाणु खाद, फसल अवशेष, फसल चक्र एवं प्रकृति में उपलब्ध खनिज जैसे रॉक फास्फेट, जिप्सम आदि द्वारा पौधों की पोषक तत्व दिये जाते

हैं। फसल को प्रकृति में उपलब्ध मित्र कीड़ों जीवाणुओं एवं जैविक कीटनाशकों द्वारा हानिकारक कीड़ों एवं बीमारियों से बचाया जाता है।

सन् 1992 में रियो डी जेनेरियो (ब्राजील) में आयोजित पृथ्वी सम्मेलन में एजेण्डा 21 के अन्तर्गत पृथ्वी बचाओ विषय पर जैविक खेती पर चर्चा हुई। सन् 2002 में जोहान्सबर्ग (दक्षिणी अफ्रीका) में तीसरे विश्व पर्यावरण सम्मेलन में जैविक खेती पर चर्चा हुई। सन् 1992 में कृषि विभाग, राजस्थान द्वारा राजस्थान कृषि महाविद्यालय उदयपुर में सर्वप्रथम जैविक कृषि पर सम्मेलन का आयोजन किया गया जो कि प्रथम राष्ट्रीय जैविक सम्मेलन था। जैविक खेती की, कृषि उत्पादन में टिकाउपन के लिए, मृदा की जैविक गुणवत्ता बनाये रखने के लिए, प्राकृतिक संसाधनों को बचाने के लिए, वातावरण प्रदूषण को रोकने के लिए, मानव स्वास्थ्य की रक्षा हेतु, उत्पादन लागत को कम करने आदि के लिए अत्यावश्यक है। जैविक खेती को बढ़ावा देने हेतु कृषि विभाग द्वारा निम्न सुविधाएँ किसानों को उपलब्ध करवायी जा रही हैं ताकि कृषि भूमि का संरक्षण किया जा सके।

जैविक खेती को मुख्यतः दो घटकों में बांटा सकते हैं। पहला पोषक तत्व प्रबन्ध तथा दूसरा कीड़ों एवं रोगों से रक्षा अर्थात् समेकित नाशीजीव प्रबन्ध करना।

बंजर भूमि का विकास एवं क्षरीय मृदा का ह्रास–बंजर भूमि के विकास के साथ उपजाऊ भूमि की प्रतिशत बढ़ाना तथा भौतिक कारणों से उपस्थित क्षारीयता को पारंपरिक तरीकों से कम करना या ह्रास करना मुख्य कार्य होते हैं। जिनका समावेश भी एकीकृत जल ग्रहण कार्यक्रमों के दौरान किया गया है।

जैविक विधि से पोषक तत्व प्रबन्ध

जैविक विधि से पोषक तत्व प्रबन्ध के अन्तर्गत, पौधों को अपना जीवन पूर्ण करने के लिए सोलह प्रकार के पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। इनमें कार्बन, हाइड्रोजन व ऑक्सीजन पौधों को पानी व हवा से मुफ्त मिल जाते हैं, जबकि जस्ता, मैंग्नीज, लोहा, तांबा, बोरोन, मालीब्डेनम एवं कोबाल्ट की बहुत कम मात्रा में आवश्यकता होती है। मिट्टी में कैल्शियम एवं मैग्नेशियम की प्रायः कमी नहीं पायी जाती है। इन तत्वों का बहुत छोटा भाग दोनों में संग्रहित होता है अतः यदि फसल अवशेष, कम्पोस्ट, गोबर की खाद आदि का नियमित उपयोग किया जावे तो पौधों के लिए इन तत्वों के साथ पोटाश की भी कमी नहीं रहती है, क्योंकि मनुष्य के लिए उपयोगी दोनों में पोटाश की बहुत ही कम मात्रा पाई जाती है।

पौधों के लिए शेष तीन महत्त्वपूर्ण पोषक तत्वों में गंधक की व्यवस्था जिप्सम का उपयोग कर की जा सकती है। इसी प्रकार प्रकृति में उपलब्ध रॉक फास्फेट, खनिज एवं पी.एस.बी. व पी.एस.एम. जीवाणु खादों द्वारा फास्फोरस की व्यवस्था की जा सकती है। इसके लिए रॉक फास्फेट को खेत में डालें। बीज को बोने से पहले पी.एस.बी. या पी.एस.एम. जीवाणु खाद से उपचारित करें।

पौधों की नत्रजन की आवश्यकता की पूर्ति निम्नलिखित तरीकों से की जानी चाहिए–

- एक ही प्रकार की फसल हर साल नहीं उगायें। वर्ष में एक बार दाल वाली फसल अवश्य बोनी चाहिए। बाजरा, मक्का, ज्वार, तिल के बाद सदी में चना, मसूर आदि बोयें। गेहूँ, जौ, सरसों के बाद चौमासे में मूंग, मौठ, उड़द, अरहर, मूंगफली बोयें। दाल वाली फसल की जड़ों में

राइजोबियम की गांठे होती हैं। ये गांठे यूरिया की छोटी–छोटी फैक्ट्रियों का काम करती हैं।

- फसलों के अवशेष में आधा प्रतिशत तक नत्रजन होता है, इसलिए इसका कम्पोस्ट बनाकर उपयोग करें। इससे पोषक तत्वों के साथ भूमि में कार्बन की मात्रा बढ़ती है, जो जमीन में नत्रजन को रोकने के लिए आवश्यक है।
- पशुओं के पेशाब में गोबर से भी अधिक मात्रा में नत्रजन होती है। इसका समुचित उपयोग करने के लिए पशु के बैठने के स्थान पर रॉक फास्फेट की थोड़ी मात्रा डालनी चाहिए। पशु के पेशाब में मिले हुए रॉक फास्फेट को सुपर कम्पोस्ट बनाने में काम लेना चाहिए, इससे कम्पोस्ट में नत्रजन की मात्रा में काफी बढ़ोतरी हो जाती है।
- उपलब्ध गोबर व कचरे से केंचुआ खाद (वर्मी कम्पोस्ट) तैयार करना चाहिए। वर्मी कम्पोस्ट में पोषक तत्वों की मात्रा सामान्य कम्पोस्ट के मुकाबले ज्यादा होती है।
- दलहनी फसलों के बीच को राईजोबियम जीवाणु खाद से उपचारित करके बुवाई करें। जड़ों में उपस्थित रहकर यह जीवाणु वातावरण की नत्रजन को सीधे पौधों को उपलब्ध कराता है। साथ ही अगले मौसम में उगाये जाने वाली फसल के लिए भी जमीन में नत्रजन की उपलब्धता बढ़ाता है।
- बाजरा, ज्वार, मक्का, गेहूँ व जौ में एजेटोबैक्टर जीवाणु खाद से बीज का उपचार कर बुवाई करनी चाहिए। यह जमीन में स्वतन्त्र रूप से रहकर हवा की नत्रजन को खाता रहता है और बढ़ता रहता है। यह जीवाणु मर जाता है और इसके शरीर की नत्रजन कुछ समय बाद पौधों को मिल जाती है। इसी प्रकार धान की फसल में एजोला का उपयोग कर हवा की नत्रजन का उपयोग सम्भव है।

- ग्वार, ढेंचा, सनई की हरी खाद से जमीन में नत्रजन व कार्बन की मात्रा बढ़ जाती है।
- नीम, अरण्डी, करंज की खलियों का उपयोग भी नत्रजन की आपूर्ति के लिए किया जा सकता है। बुवाई के एक माह पहले 10–12 टन खली को एक हैक्टेयर खेत में मिलावें।
- ऊन की खाद, मुर्गी की बींट, भेड़–बकरियों की मींगनी, खून की खाद, हड्डी की खाद आदि का उपयोग जमीन में पोषक तत्वों की उपलब्धता बढ़ाता है अतः इसका उपयोग भी फायदेमंद रहता है।

अध्ययन क्षेत्र में उपर्युक्त सभी उपायों को समन्वित रूप से अपना कर नत्रजन की आपूर्ति बनाये रखी जा सकती है।

बीमारियों का प्रबन्ध

जैविक तरीकों से बीमारियों की रोकथाम कीड़ों की बजाय कठिन होती है। अतः रोगों से बचने के लिए शुरू से सावधान रहना आवश्यक है। एकीकृत जलग्रहण कार्यक्रमों में ऐसी बीमारियों से बचाव एवं उसके लिए उपर्युक्त प्रशिक्षण कृषकों को दिया जाता है।

- भूमि के जीवाणुओं को नष्ट करने के लिए गर्मियों में गहरी जुताई करनी चाहिए। इससे जमीन में छुपे जीवाणु नष्ट हो जाते हैं।
- एक ही फसल की बुवाई लगातार नहीं करनी चाहिए। इससे फसल में लगे कीटाणुओं को अगले मौसम में पोषक पौधे नहीं होने से भोजन नहीं मिलेगा और मर जायेंगे।
- रोगरोधी उन्नत किस्मों की बुवाई करनी चाहिए। क्योंकि इनमें रोगों से लड़ने की शक्ति होती है।

- बीज को गर्मी की तेज धूप में सुखावें। इससे बीज में मौजूद जीवाणु मर जाते हैं।
- ट्राइकोडर्मा मित्र फफूंद है। यह रोग फैलाने वाली फफूंद की बढ़त को रोक देती है। अतः बीज को ट्राइकोडर्मा (फफूंद) से उपचारित करके बोवें। इससे भूमि व बीज जनित रोगों से एक हद तक छुटकारा मिल सकता है।
- फसल में रोगी पौधों को देखते ही उखाड़कर नष्ट कर देना चाहिए। इसके दो फायदें होंगे। पहला रोग का फैलाव नहीं होगा। दूसरा जमीन में जीवाणुओं की संख्या कम होगी, इससे अगले वर्ष फसल पर रोग का प्रकोप कम होगा।

इस प्रकार जैविक खेती में समेकित पोषक तत्व प्रबन्ध एवं समेकित नाशीजीव प्रबन्ध में प्रवृत्ति में उपलब्ध जैविक घटकों का आवश्यकता के अनुसार उपयोग किया जाता है।

जलग्रहण कार्यक्रम एवं लवणीय व क्षारीय भूमि में सुधार

जमवारामगढ़ तहसील की भूमि लवणीयता व क्षारीयता से ग्रसित है। क्षारीय मिट्टी पर काले भूरे रंग के धब्बे दिखलाई पड़ते हैं। इस भूमि की सतह बहुत सख्त होती है और मृदा कणों के संकुचन के कारण हवा और पानी का संचार ठीक प्रकार से नहीं होता है। लवणीय मिट्टी की सतह पर सफेद रंग के लवणों की तह दिखाई देती है तथा भूमि की सतह भुरभुरी हो जाती है। लवण ग्रसित भूमि पर सिंचाई करने पर सतह के लवण पानी के साथ घुलकर मिट्टी की निचली सतह में (Infiltration) चले जाते हैं तथा वाष्पीकरण क्रिया द्वारा लवण वापस मिट्टी की ऊपरी सतह पर जमा हो जाते हैं। इस क्रिया की पुनरावृत्ति होती रहती है तथा लवणता की मात्रा बढ़ती जाती है।

गंगानगर जिले की तहसीलों से लिये गये नमूनों की प्रयोगशाला में पी एच. एवं विद्युत चालकता ज्ञात करवाई गई। पीएच मान के आधार पर अम्लीय मिट्टी का मान 6.5 से कम, सामान्य मिट्टी का मान 6.5 से 8.5 के मध्य तथा क्षारीय मिट्टी का मान 8.5 से अधिक होता है। विद्युत चालकता के आधार पर सामान्य मिट्टी का मान 1.0 मिलीम्होज से कम, लवणीय मिट्टी का मान 1.0 से 3.0 मिलीम्होज के मध्य तथा अधिक लवणीय मिट्टी का मान 3.0 मिलीम्होज से अधिक होता है।

पी.एच. एवं विद्युत चालकता के आधार पर मिट्टी का वर्गीकरण

क्र.सं.	मिट्टी की प्रकृति	पी.एच. मान	मिट्टी की प्रकृति	विद्युत चालकता (मिलीम्होज)
1.	अम्लीय	6.5 से कम	सामान्य	1.0 से कम
2.	सामान्य	6.5 से 8.5	लवणीय	1.0 से 3.0
3.	क्षारीय	8.5 से अधिक	अधिक लवणीय	3.0 से अधिक

स्रोतः भू–उर्वरा स्तर प्रतिवेदन, तहसीलदार, गंगानगर।

क्षारीय भूमि सुधार

अध्ययन क्षेत्र में क्षारीयता की समस्या को देखते हुए क्षारीय भूमि सुधार के लिए निम्न कदम उठाये जा सकते हैं।

- जून माह में परीक्षण आधार पर जिप्सम मिट्टी में मिलाकर क्यारियाँ बनावें तथा 15 से 20 दिन पानी भरा रहने दें।
- क्यारियों से पानी निकालकर ढेंचा की बुवाई करें और फूल आने के पहले पलटकर मिट्टी में मिला दें।
- गहरी जुताई करें जिससे मिट्टी की नीचे की कड़ी परत टूट जावे।

- हरी खाद, गोबर खाद, वर्मी कम्पोस्ट, नेडेप कम्पोस्ट, जीवाणु खाद, ट्राइकोडर्मा–मित्र फफूंद, ट्राइकोग्रामा–मित्र कीट, फसलों की जड़ें आदि मिट्टी में मिलावें।
- क्षारीय भूमि के बीज की मात्रा निर्धारित मात्रा से 20 से 25 प्रतिशत अधिक बोवें।
- फसलों की सिंचाई जल्दी–जल्दी तथा हल्की की जावें अर्थात् फसलों में सिंचाई करते समय क्यारियों को पानी की आवश्यकता से अधिक न भरें तथा फंवारा सिंचाई के दौरान फंवारों को बदलते रहना चाहिए। अध्ययन क्षेत्र में शोधार्थी द्वारा अवलोकन किया गया है कि अधिकतर किसान रात में लगभग एक बीघा में फंवारा लगाकर छोड़ देते हैं तथा रात भर उनको दूसरी जगह परिवर्तित नहीं करते हैं, जिससे रातभर पानी व्यर्थ (केवल एक बीघा में) बहता रहता है। अगर उसी पानी का सदुपयोग किया जावे तो उसी पानी से 3–4 बीघा जमीन से सिंचाई की जा सकती है।
- अम्लीय प्रवृत्ति के उर्वरक अमोनियम सल्फेट, केल्सियम, अमोनियम नाईट्रेट आदि का उपयोग किया जावे।
- क्षार सहनशील एवं अर्द्धसहनशील फसलों का चयन करना चाहिए। क्षारीय भूमि में मक्का व दलहनी फसलें नहीं बोनी चाहिए। अध्ययन क्षेत्र में मिट्टी परीक्षण प्रयोगशाला, टोंक द्वारा चिह्नित की गई क्षारीय असहनशील फसलों की बुवाई नहीं करना चाहिए। अधिकतर क्षार सहनशील फसलों का रोपण करना चाहिए तथा अल्प मात्रा में अर्द्धसहनशील फसलों की बुवाई करनी चाहिए।

क्षारीय सहनशीलता के अनुसार फसलें

क्षार सहनशील फसलें	अर्द्ध–सहनशील फसलें	असहनशील फसलें
धान	गेहूँ	मक्का
शलजम	जौ	मटर
चुकन्दर	जई	मूंग
डाब घास	राई	चना
पारा घास	गन्ना	चंवला
करनाल घास	कपास	मूंगफली
बरमुडा घास	बरसीम	कपास

स्रोतः भ्रमणशील मिट्टी प्रयोगशाला, टोंक।

लवणीय भूमि में सुधार

अध्ययन क्षेत्र की कुछ तहसील लवणीय समस्या से अधिक ग्रसित हैं जिनमें सूरतगढ़, अनूपगढ़ आदि मुख्य हैं। वर्तमान में अवलोकन किया गया है कि कई और गाँव इस समस्या से ग्रसित होने के कगार पर हैं। अतः अध्ययन क्षेत्र में इस समस्या को देखते हुए निम्न प्रभावी कदम उठाये जा सकते हैं–

- सर्वप्रथम ऊबड़–खाबड़ खेतों को पाटों से समतल करें।
- लवणों को भूमि की ऊपरी सतह से ट्रैक्टर में स्क्रैपर लगाकर खीचें।
- लवणीय भूमि का सुधार केवल अच्छे पानी द्वारा संभव है। निक्षालन क्रिया द्वारा भूमि में विद्यमान लवणों की भूमि की निचली सतह में बहा दिया जाता है।
- खेती में डोली बनाकर 15 से.मी. गहराई तक पानी भर देवें और इस लवण मिश्रित जल को जल निकास नाली द्वारा निकाल देवें।

- लवणीय मृदाओं में सिंचाई जल्दी–जल्दी करनी चाहिए तथा प्रत्येक सिंचाई के समय कम मात्रा में पानी खेत में लगाना चाहिए।
- लवणीय मृदाओं में बीज की मात्रा सवा गुनी रखें।
- अध्ययन क्षेत्र के लवणीय समस्या से ग्रसित क्षेत्रों के लिए लवण सहनशील फसलों का चयन करना चाजिए। जैसा कि तालिका से स्पष्ट है–

लवणीय सहनशीलता के आधार पर फसलों का वर्गीकरण

वर्ग	उच्च सहनशील	मध्यम सहनशील	असहनशील
खाद्यान्न	जौ, चुकन्दर, ढेंचा, कपास, राई	गेहूँ, सूरजमुखी, जई, अरण्डी, धान, ज्वार, तारामीरा, गन्ना, सरसों, मेथी, मक्का	चना, मटर, ग्वार, तिल, लोबिया, मूंग, मसूर, मोठ, मूंगफली, चंवला
चारा	साल्ट बुश, बथवा, खरतुआ, दूबघास, जौ, बरमुढ़ा, घास	रिजका, बरसीम, सुडानघास, नेवियर घास, जई, मेथी, मक्का, ज्वार	
सब्जियाँ	पालक, शलजम, शकरकंद	टमाटर, पत्ता गोभी, मिर्च, फूलगोभी, आलू, गाजर, प्याज, मटर	सेम, भिण्डी, तुरई, मूली

स्रोतः भू–उर्वरा स्तर प्रतिवेदन, तहसीलदार, पटवार मण्डल, गंगानगर।

जलग्रहण कार्यक्रमों के अन्तर्गत भूमि की क्षारियता एवं लवणता की ह्रास के लिए पंचायत स्तर पर प्रयास किये जाते हैं। जिसके अन्तर्गत किसानों को फसल चक्र में बदलाव कीटनाशकों का कम उपयोग के लिए प्रशिक्षित किया जाता है तथा समय–समय पर मृदा की जाँच मृदा प्रयोगशाला में करवायी जाती है।

भू–उर्वरता स्तर में सुधार

"भूमि की उर्वरता एवं संरचना का संरक्षण किये बगैर इसी प्रकार सघन खेती करते रहें तो हरियाली का यह बसंत एक न एक दिन रेगिस्तान में बदल जायेगा।"–डॉ. एम.एस. स्वामीनाथन

भारत में किसी क्षेत्र की आर्थिक समृद्धि कृषि उत्पादकता पर निर्भर है। किसी भी क्षेत्र की अर्थव्यवस्था को गति प्रदान करने के लिए प्रति इकाई कृषि उत्पादन में वृद्धि आवश्यक है। कृषि में जहाँ नवीनतम वैज्ञानिक पद्धतियों व तकनीकों का प्रयोग हो रहा है वहीं भूमि का उच्च उर्वरा स्तर होना भी आवश्यक है, इसका सीधा सम्बन्ध कृषि उत्पादकता से है।

भूमि की उर्वरा शक्ति का संरक्षण एक महत्त्वपूर्ण बिन्दु है। विभिन्न रसायनों के असंतुलित उपयोग से भूमि की इस शक्ति का ह्रास न तो इसके लिए समय–समय पर मिट्टी परीक्षण करना आवश्यक है। इससे विभिन्न फसलों की आवश्यकतानुसार उर्वरकों की मात्रा की गणना सम्भव हो पाती है, जिससे संतुलित मात्रा में रासायनिक उर्वरक प्रयोग में लेकर अधिकतम उत्पादन लाभ प्राप्त किया जा सकता है एवं भूमि की उर्वराशक्ति के क्षरण को रोका जा सकता है।

किसी भी क्षेत्र की उत्पादन क्षमता वहाँ की मिट्टी की उर्वरता स्तर एवं सिंचाई के लिए उपलब्ध पानी की गुणवत्ता एवं जलवायु आदि पर निर्भर करती है। उत्पादन क्षमता बनाए रखने व अधिक उत्पादन लेने के लिए संतुलित मात्रा में उर्वरकों का उपयोग तथा मिट्टी व पानी में उपस्थित लवणीय समस्या की पूरी जानकारी आवश्यक है, जिससे कि उस समस्या के निदान के लिए आवश्यक कार्यवाही की जा सके। गंगानगर जिले की समस्त तहसीलों की मिट्टियों का नमूना लेकर परीक्षण किया गया ताकि तहसील के उर्वरा स्तर

का सर्वेक्षण किया जा सके। प्रत्येक गाँव के उसके क्षेत्रफल की संरचना, रंग तथा वर्तमान में ली जाने वाली फसलों के आधार पर 5 से 15 नमूनें इस प्रकार लिये गये जिससे कि पूरे गांव की भूमि का प्रतिनिधित्व हो सके।

मिट्टी की जाँच से भूमि की उर्वरा शक्ति का पता चलता है। भूमि में तत्व विशेष की उपलब्ध मात्रा को आधार मानते हुए फसल के लिए संतुलित उर्वरकों की मात्रा की सिफारिश की जाती है। इसके लिए यदि हर दूसरे वर्ष एक बार खेत की मिट्टी की जाँच करवा ली जाये तो ठीक रहता है, वरना पोषक तत्वों की मात्रा में सन्तुलन बिगड़ने से भूमि के अनुपजाऊ होने का खतरा रहता है। फसल के लिए खाद एवं उर्वरकों की आवश्यक संतुलित मात्रा का पता लगाने, आवश्यकता से अधिक उर्वरक प्रयोग पर रोक लगाने व आवश्यकता के हिसाब से उर्वरक प्रयोग करने से भूमि के खराब होने का खतरा कम रहने के लिए मिट्टी परीक्षण आवश्यक होता है। मिट्टी के नमूनों में उक्त सूचना के साथ गंगानगर जिले की सूरतगढ़, अनूपगढ़, सादुलशहर, विजयनगर, रायसिंहनगर क्षेत्र में 380 मृदा नमूनों का सूक्ष्म पोषक तत्व विश्लेषण भी किया गया, जिससे कि क्षेत्र की मिट्टी में सूक्ष्म पोषक तत्वों की सूचना भी मिल सके।

अध्ययन क्षेत्र में भ्रमणशील मिट्टी परीक्षण प्रयोगशाला, टोंक द्वारा मिट्टी परीक्षण के बाद, उर्वरा शक्ति के आधार पर चार भागों में विभाजित किया तथा प्रत्येक उर्वरा–स्तर वर्ग हेतु भिन्न–भिन्न फसलों के लिए उर्वरकों की सिफारिशें की गई। सिफारिश किए गए उर्वरक मात्रा का उपयोग करना सर्वोपयुक्त होगा जिससे किसान वर्ग अधिकतम उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं।

अध्ययन क्षेत्र में भूमि की उर्वरा–स्तर बढ़ाने के लिए जैविक खेती विशेष लाभदायक सिद्ध होगी। इसके अन्तर्गत विभिन्न जैविक खादों में वर्मी कम्पोस्ट, नेडेफ कम्पोस्ट, जीवाणु खाद (राइजोबियम, एजेटोबेक्टर, फास्फेट, विलेयक

जीवाणु) ट्राइकोडर्मा–मित्र फफूंद किसान मित्र कीटों एवं जीवों (मोन्टिस, स्पाईडर, रिडुविड, ड्रेगोन, फ्लाईमड–वैस्य, रोबर प्लाई, लेडी बर्ड बीटल, क्राईसोपा, किंग क्रो) का संरक्षण, कीट रोग से बचने के देशी उपाय आदि का अध्ययन क्षेत्र में प्रयोग करना चाहिए।

जलग्रहण कार्यों के अन्तर्गत भूमि की उर्वरता बनाये रखने के लिए निम्न प्रयास किये जाते हैं–

वर्मी कम्पोस्ट का प्रयोग पर बल

- वर्मी कम्पोस्ट के लिए सबसे पहले 6–8 फुट की ऊँचाई का एक छप्पर तैयार करते हैं ताकि उपयुक्त तापमान के लिए छाया रखें। इसके लिए क्यारी की लम्बाई 10 फीट, चौड़ाई 3 फीट व ऊँचाई 1.5 फीट होती है। वर्मी कम्पोस्ट के लिए क्यारी में सरसों, मक्का, ज्वार, बाजरा, गन्ने आदि के अवशेष को तीन इंच की तह बिछायें। इस तह पर अब 2 इंच की मोटाई तक आधी सड़ी गोबर की खाद बिछाकर पानी डालकर गीला किया जाता है। इस गीली तह पर एक इंच मोटी वर्मी कम्पोस्ट की परत जिसमें पर्याप्त केंचुए मिले होते हैं, डाली जाती है। इस तीसरी परत पर 3–4 दिन पुराना गोबर का खाद या गोबर के साथ घास–फूस, पत्तियाँ मिले हुए टुकड़ों का कचरा 2 इंच मोटाई में बिछा दिया जाता है।
- अन्त में इस परत पर 10–12 इंच मोटाई में गोबर के साथ घास–फूस, पत्तियों के मिले हुए टुकड़ों का कचरा बिछाते हैं, ताकि सबसे निचली सतह से ऊपर की सतह तक की ऊँचाई लगभग डेढ़ फुट हो जाए। नमी बनाये रखने के लिए हर परत पानी छिड़का जाता है। अब इनको बोरी के टाट से अच्छी तरह से ढ़ककर 30 प्रतिशत तक नमी बनाये रखें।

- 45–60 दिन के अन्दर ही गोबर एवं गोबर मिश्रित घास–फूस पत्तियाँ एवं कचरा वर्मी कम्पोस्ट में बदल जाते हैं। ढेर का रंग काला होना और केंचुओं का ऊपरी सतह पर आना वर्मी कम्पोस्ट तैयार होने का सूचक है।
- वर्मी कम्पोस्ट से केंचुएँ अलग करने के लिए 3–4 फुट ऊँचा वर्मी कम्पोस्ट का ढेर बनायें तथा पानी छिड़कना बन्द कर देंवे। ज्यों–ज्यों ढेर सूखता जायेगा व केंचुए नमी की तरफ नीचे चले जायेंगे। कुछ समय बाद अधिकांश केंचुए नीचे चले जायेंगे और ऊपर से वर्मी कम्पोस्ट इकट्ठा करके प्रयोग करते हैं। तैयार कम्पोस्ट को अनाज फसलों में 5 टन प्रति हैक्टेयर, सब्जी फसलों में 7 टन प्रति हैक्टेयर व फलदार वृक्षों में 8–10 कि.ग्रा. प्रति वृक्ष डालते हैं।

नैडेफ कम्पोस्ट का प्रयोग

नैडेफ कम्पोस्ट कम–से–कम गोबर का उपयोग करके अधिक–से–अधिक मात्रा में खाद बनाने की पद्धति है। इस विधि को तैयार खाद में नत्रजन 0.5 से 1.5, फास्फोरस 0.5 से 0.9 प्रतिशत तथा पोटेशियम 1. 2 से 1.4 प्रतिशत होता है।

- नींव भरकर जमीन के ऊपर ईंट का एक हवादार टांका बनाया जाता है। इसके लिए टांका बांधते समय चारों दीवारों में छेद रखे जाते हैं। दीवारें 9 ईंच चौड़ी होती हैं। टांके की लम्बाई 12 फुट, चौड़ाई 5 फुट एवं ऊँचाई 3 फुट तथा आयतन 180 घन फुट होता है।
- टांका भरने से पहले टांके के अंदर की दीवार एवं फर्श पर गोबर के पानी का घोल छिड़कें। पहले 6 इंच तक वानस्पतिक पदार्थ (घास–फूस, कचरा) भर देवें। इस तीन घनफुट में 90 से 110 किग्रा. वानस्पतिक पदार्थ प्रयोग में आयेंगे। दूसरी परत में 125 से 150 लीटर पानी में 4

किग्रा. गोबर घोलकर पहली परत पर इस प्रकार छिड़के कि पूरा कचरा अच्छी तरह भीग जाये। गोबर के स्थान पर अगर गोबर गैस संयंत्र की स्लरी प्रयोग में लाई जाये तो गोबर की मात्रा ढाई गुना यानि 10 लीटर स्लरी काम में ली जावे। इस प्रकार 11–12 तहों में टांका भर जायेगा। टांका भरी सामग्री के ऊपर तीन इंच मिट्टी की तह जमायें और उसे गोबर के घोल से लीप देंवें।

- 15–20 दिन में टांके में भरी सामग्री सिकुड़कर टांके के मुँह से 8–9 इंच नीचे खिसक जाये तब पहली भराई की तरह कचरा, गोबर का घोल, छनी मिट्टी की परतों से पुनः टांके को सतह से डेढ़ फुट की ऊँचाई तक पहले जैसा ही भरकर ऊपर तीन इंच मोटी मिट्टी की परत देकर लीप कर सील कर देंवे।
- तीन–चार माह में खाद गहरे भूरे रंग की हो जाती है और दुर्गन्ध समाप्त हो जाती है। इस खाद को एक फुट में 35 छेद वाली छलनी से छानना चाहिए। छना हुआ कम्पोस्ट खाद उपयोग में लाना चाहिए और छलनी में शेष अधपका कच्चा खाद, नया टांका भरते समय कचरे के साथ उपयोग में लाना चाहिए।

जीवाणु खाद का उपयोग के लिए प्रशिक्षण

वायुमण्डल की नत्रजन व भूमि के फास्फोरस को पौधों को उपलब्ध कराने वाले जीवाणुओं को जीवित अवस्था में लिग्नाइट व कोयले के चूरे में मिलाकर जीवाणु खाद बनाया रखा जाता है। जीवाणु खाद में इन लाभदायक जीवाणुओं की संख्या एक ग्राम में दस करोड़ से अधिक रखी जाती है। ये जीवाणु तीन प्रकार के होते हैं।

- राइजोबियम जीवाणु दलहनी फसलों की जड़ों पर गुलाबी रंग की गांठे बनाकर उनमें रहते हैं तथा हवा में से नत्रजन लेकर पौधों को उपलब्ध

कराते हैं। अलग–अलग फसल के लिये राइजोबियम की अलग–अलग प्रजाति होती है।

- एजेटोबेक्टर जीवाणु खाद, गैर दलहनी फसलों में उपयोग की जाती है एजेटोबेक्टर जमीन में स्वतन्त्ररूप से रहकर हवा की नत्रजन को ग्रहण कर भूमि में छोड़ते हैं। यह नत्रजन पौधों को उपलब्ध हो जाती है।
- फास्फेट विलेयक जीवाणु (पी.एस.बी.) फसलों को फास्फोरस मुख्यतः डीएपी एवं सिंगल सुपर फास्फेट के रूप में दिया जाता है। इसका एक बड़ा भाग जमीन में अघुलनशील हो जाता है। जिसे पौधे ग्रहण नहीं कर सकते हैं। पी.एस.बी. इसी अघुलनशील फास्फोरस को पौधों में घुलनशील बनाकर उपलब्ध करता है।

आवश्यकतानुसार पानी में 250 ग्राम गुड़ को घोलकर गर्म करें। इसे ठंड़ा कर, इसमें 600 ग्राम जीवाणु खाद मिलावें। अब इस घोल को एक हैक्टेयर क्षेत्र के बीजों पर छिड़कते हुए हल्के हाथों से बीजों को पलटते जावें। जिससे बीजों के ऊपर स्थान पर सुखाकर शीघ्र ही बुवाई कर देवें।

किसान मित्र कीटों का संरक्षण एवं वितरण

सभी कीट फसलों को नुकसान पहुँचाने वाले दुश्मन कीट नहीं होते हैं। कुछ कीट ऐसे भी होते हैं जो फसल को नुकसान पहुँचाने वाले कीड़ों को नष्ट करते हैं। अतः नियन्त्रण केवल रसायनों से ही नहीं होता बल्कि 'जीव जीवस्य भोजनम्' के सिद्धान्त पर प्रकृत्ति भी कीट नियन्त्रण करती है। इन लाभकारी कीटों को हम मित्र कीटों के नाम से जानते हैं। इनमें से कुछ लेड़ी वर्ड बीटल, मेन्टिस, स्पाईडर, रिडुविड, ड्रेगोन, फ्लाईमड–वैस्प, रोबर फ्लाई, क्राईसोपा, किंग क्रो, विभिन्न प्रकार की मकड़ियाँ आदि हैं। इनके अतिरिक्त इनकी संख्या को मछलियाँ, मेढ़क, छिपकली, सांप, कौवे, मैना व कठ फोड़वा आदि नियन्त्रित करने में सहायक होते हैं।

परभक्षी कीटों में लेडीबर्ड बीटल प्रमुख है। इसकी विभिन्न प्रजातियाँ मोयला, चेंपा, माहू, तेला, स्कल, मिलीबग आदि कीटों के नियन्त्रण में प्रमुख योगदान देती है। इनकी वयस्क अवस्था प्रतिदिन 50 मोयला खा जाती है।

क्रायसोपा हरे पंख वाला कीट होता है। यह मोयला, सफेद मक्खियों, चूर्णवत छोटे कीड़ो, और अण्डों तथा कपास के बीच के गोले के कीड़ों के शुरूआती अवस्था की सुण्डियों या लटों को खाकर जिन्दा रहती हैं। जैविक खेती को सफल बनाने के लिए इन मित्र कीटों, पक्षियों आदि को पहचान कर इनका संरक्षण करना चाहिए। यदि फसल में दो कीट व एक मित्र कीट के अनुपात में उपस्थित हैं तो किसी प्रकार के कीटनाशक का छिड़काव करना जरूरी नहीं है।

ट्राइकोग्रामा की एक मित्र कीट है, आकार में इतना छोटा होता है कि एक आलपिन के सिर पर 8–10 वयस्क एक साथ बैठ सकते हैं। यह कीट लेपिडोप्टेरा समूह के हानिकारक कीड़ों के अण्डों में अपने अण्डे देकर अपना जीवन चक्र शुरू करता है एवं प्यूंपा अवस्था तक परपोषी के अण्डों में ही रहता है। वयस्क अवस्था में बाहर निकलकर पुनः हानिकारक कीटों के अण्डों में अपने अण्डे देना प्रारम्भ कर देता है। इसका जीवनचक्र गर्मी में 8–10 दिन में एवं सर्दी में 9–12 दिन में पूरा होता है।

- जलग्रहण क्षेत्रों में स्थित प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण

राष्ट्रीय जलग्रहण कार्यक्रम की समीक्षा के दौरान इस बात को महसूस किया गया कि डब्ल्यू.एस. क्षेत्रों में स्थित प्राकृतिक संसाधनों यथा खनिज, वन आदि का संरक्षण का प्रबन्ध भी इनकी साथ किया जाये।

इसके लिए पंचायत/ब्लॉक स्तर पर समिति बनायी गयी तथा उनको इन सभी गतिविधियों के लिए प्रशिक्षित किया गया।

- उत्पादकता बढ़ाने के लिए मृदा के पोषक तत्वों का संरक्षण
- भूमि एवं नमी संरक्षण की तकनीक तथा सामुदायिक एवं व्यक्तिगत विकासक कार्यों का क्रियान्वयन एवं रख–रखाव
- उन्नत कृषि विधियाँ
- उद्यानिकी
- मत्स्य पालन

गंगानगर जिले में कृषि की नवीन तकनीकी का पारिस्थितिकीय प्रभाव

Impact of New Techniques of Agriculture on Ecology in Ganganagar District

कोटा विश्वविद्यालय, कोटा पीएच.डी. की उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध–सारांश

निर्देशकः
प्रो. एस.सी. कलवार
सेवानिवृत्त विभागाध्यक्ष,
भूगोल विभाग,
राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

शोधार्थी
कमल नावरिया
भूगोल विभाग

भूगोल विभाग
कोटा विश्वविद्यालय, कोटा

अगस्त 2018

सारांश

प्रस्तुत अध्ययन में कृषि का तकनीकी एवं पारिस्थितिकी विश्लेषण का अध्ययन सभी तथ्यों के साथ किया गया है जिसमें गंगानगर जिले में भूमि उपयोग, कृषि विशेषताएँ, सिंचाई, कृषि पारिस्थितिकी को प्रभावित करने वाले तत्व एवं आधुनिक कृषि का कृषि पारिस्थितिकी पर प्रभाव, का नवीन स्तर पर मापन किया गया है।

उद्देश्य

अध्ययन के निम्न उद्देश्य रखे गये है–

1. जिलों के वर्तमान कृषि स्वरुप एवं संसाधनों का संख्यात्मक एवं गुणात्मक स्वरुप को प्रस्तुत करना।
2. कृषि आधुनिकीकरण के लिए उपलब्ध आधारभूत सुविधाओं का क्षेत्रीय आंकलन करना।
3. जिलों में वर्तमान कृषि आधार पर भविष्य के विकास के लिए उचित सुझाव प्रस्तुत करना।
4. कृषि में नवीन तकनीकों के उपयोग का पारिस्थितिकीय प्रभाव को ज्ञात करना।

आंकडो के स्रोत विधि तंत्र

प्रस्तुत शोध संबंधित आंकड़ों को एकत्रित करने के लिए प्राथमिक, द्वितीय और स्रोतों का प्रयोग किया गया है। शोध मुख्यतः आंकडों के प्राथमिक स्रोंत पर आधारित रहा जिसे निम्न तरीकों से प्राप्त किया गया है–

1. जिलों का सर्वेक्षण

2. चयनित क्षेत्रों का सर्वेक्षण

3. कृषकों, ग्रामीणों एवं सरकारी पदाधिकारियों के साथ बातचीतों एवं साक्षात्कार द्वारा।

द्वितीयक स्रोतों द्वारा आंकड़ों का संग्रहण मुख्यतः सरकारी प्रतिवेदनों, विभिन्न कृषि बुलेटिनों और कृषि संबंधित पत्र–पत्रिकाओं द्वारा किया। अध्ययन के सही परिणाम प्राप्त करने के लिए एकत्रित अव्यवस्थित आंकडों का संक्षेपण, सारणीयन और विश्लेषण करके विभिन्न गणितीय व सांख्यिकीय सूत्रों का प्रयोग किया गया। कृषि के अध्ययन को सारणी और मानचित्रों द्वारा प्रस्तुत किया जायेगा। कृषि उत्पादन के दशक 2010–2011 को आधार मानकर मानक वर्ष 2010–2011 में आये दशकीय सामाजिक परिवर्तन से सम्बन्धित अध्ययन किया गया है तथा जिलों को क्षेत्रीय इकाई आधार मानकर कृषि के विभिन्न आयामों का अध्ययन किया तथा विविध गणितिय एवं सांख्यिकी सूत्रों द्वारा अध्ययन का विश्लेषण किया गया है। एवं अध्ययन को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए मानचित्रों, आरेखों का प्रयोग किया गया है।

प्रस्तुत अध्ययन में गंगानगर जिले में कृषि का नवीनीकरण एवं पारिस्थितिकी विश्लेषण देखने के लिए दो तथ्यों को चुना है। सामयिक अन्तर देखने के लिए 2006–07 से 2014–2015 तक कृषि कार्यों और कृषि क्षेत्र में आये विभिन्न परिवर्तनों को तथा तकनिकीकरण के प्रभाव को आंकडों के अन्तर के आधार पर धनात्मक व ऋणात्मक रूप में प्रदर्शित किया जायेगा। क्षेत्रीय अध्ययन की विभिन्न कार्टोग्राफी विधियों के माध्यम से गंगानगर जिले कि विभिन्न तहसीलों में आयामों द्वारा दिखाया गया है।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में जिन द्वितीय आंकड़ों का सहारा लिया गया जिनमें मुख्यतः आंकड़े सरकारी व गैर सरकारी विभिन्न संस्थाओं से संकलित किये

गये। इस शोध कार्य के लिए द्वितीय आंकडे निम्न स्रोतों से एकत्रित किये गये–

1. जिला गजेटियर्स गंगानगर ।
2. भारतीय मौसम विभाग, क्षेत्रीय केन्द्र जयपुर।
3. सांख्यिकी कार्यालय, गंगानगर ।
4. उपक्षेत्रीय विकास मण्डल कार्यालय, गंगानगर ।
5. भारतीय सर्वेक्षण विभाग, जयपुर।
6. राजस्थान कृषि निदेशालय, जयपुर।
7. मृदा सरंक्षण निदेशालय, जयपुर।
8. भू–राजस्व मण्डल, अजमेर।
9. जिला सिंचाई विभाग, गंगानगर ।
10. उपनिदेशक कृषि विभाग, गंगानगर ।
11. उपनिदेशक कृषि विस्तार, गंगानगर ।
12. मिट्टी सर्वेक्षण विभाग, गंगानगर ।
13. भारतीय जनगणना विभाग।

प्रथम अध्याय परिचय के रूप में प्रस्तुत किया गया हैं जिसमें अध्ययन से सम्बन्धित उद्देश्य, शोध समस्या, परिकल्पाना की समीक्षा उपलब्ध साहित्य अध्ययन क्षेत्र, अध्ययन विधि तंत्र और अध्ययन की विस्तृत रूपरेखा प्रस्तुत की गयी है। **द्वितीय अध्याय** में अध्ययन क्षेत्र की भौगोलिक पृष्ठभूमि का विश्लेषण किया गया है जिसमें गंगानगर जिले की भूगर्भिक संरचना, भौतिक स्वरूप, उच्चावच अपवाह तंत्र, मिट्टी, जलवायु, जनसंख्या, प्राकृतिक वनस्पति, खनिज संसाधन, एवं उद्योगों की स्थिति को समझाने का प्रयास किया गया है। r`rh; **अध्याय** में भूमि उपयोग का वन, कृषि के लिये अनुपलब्ध भूमि, कृषि अयोग्य भूमि, परती भूमि, शुद्ध बोया गया क्षेत्र, मुख्य फसलें उनकी विशेषताओं, फसली

गहनता एवं शस्य सम्मिश्रण प्रदेश आदि के माध्यम से विस्तृत विश्लेषण किया गया है।

चतुर्थ अध्याय में सिंचाई के स्रोत, सिंचाई के साधनों एवं कृषि में प्रयुक्त सिंचाई की नवीन तकनीकियों एवं उनके विकास को समझाने का प्रयास किया गया है। **पंचम् अध्याय** में कृषि औजार, कृषि में जैविक एवं यांत्रिक ऊर्जा का उपयोग, उन्नत बीज, रसायनिक उर्वरकों का उपयोग, कीटनाशकों का प्रयोग, पोध–संरक्षण औषधियों एवं खरपतवार से सम्बन्धित अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। **षष्ठम् अध्याय** में कृषि पारिस्थितिकी के प्रभाव को ज्ञात किया गया हैं जिसमें नवीन तकनीकी पर पड़ने वाले प्रभावों का विश्लेषण किया गया है। **सप्तम् अध्याय** में कृषि में नवीन तकनीकी का पारिस्थितिकी पर प्रभावों का विश्लेषण कर कृषि पारिस्थितिकी के तत्वों क्रमशः नवीन तकनीकी, रासायनिक उर्वरकों एवं सिंचाई सुविधाओं का विश्लेषण किया गया है।

अष्ठम अध्याय में कृषि में नवीन तकनीकी का स्तर मापन एवं कृषि पारिस्थितिकी का अध्ययन किया गया है जिसमें नवीन तकनीकी हेतु स्तरमापन के सूचकांक वर्ग, अति निम्न स्तर, मध्य स्तर, उच्च स्तर एवं अति उच्च स्तर का विस्तृत विवेचन किया गया हैं। अन्त में शोध प्रबन्धक द्वारा समस्त दृष्टिकोणों से आंकलन करते हुए अध्ययन के निष्कर्षों एवं सुझावों का प्रस्तुतीकरण प्रतिदर्श सर्वेक्षण के आधार पर किया गया है, जो मौलिक है, अनुकरणीय है और अध्ययन की सफलता और सार्थकता को प्रदर्शित करता है।

अध्ययन क्षेत्र गंगानगर राज्य के उत्तर पश्चिमी मरूस्थलीय प्रदेश के अन्तर्गत आता है। जिला मुख्यालय गंगानगर, बीकानेर नरेश गंगासिंह (ई.1887 से ई.1943) के नाम पर प्रसिद्ध है। उससे पहले यह रामनगर कहलाता था। इसके दक्षिण में चूरू और बीकानेर, उत्तर–पश्चिम में पाकिस्तान

का बहावलपुर जिला, उत्तर–पूर्व में हनुमानगढ़ जिला स्थित है। जिले का कुल क्षेत्रफल 7944 वर्ग किलोमीटर है यह जिला थार के मरु प्रदेश का हिस्सा है इसकी 204 किलोमीटर लम्बी सीमा पश्चिम में स्थित पाकिस्तान की अन्तर्राष्ट्रीय सीमा का निर्माण करती है। पहले हनुमानगढ़ जिला भी इसी जिले में शामिल था किन्तु 12 जुलाई 1994 को हनुमानगढ़ पृथक जिला बन जाने से जिले का लगभग आधा क्षेत्रफल हनुमानगढ़ जिले में चला गया। गंगानगर जिला $28^0 4'$ से $30^0 6'$ उत्तरी अंक्षांश और $72^0 2'$ से $75^0 3'$ पूर्वी देशान्तरों के बीच स्थित है इसका भौगोलिक क्षेत्रफल 11,154.66 वर्ग किलोमीटर है। यह पूर्व की ओर हनुमानगढ़ जिले से घिरा है। गंगानगर पंजाबी जनसंख्या की अधिकता के कारण राजस्थान का पंजाब एवं अन्न की अधिकता के कारण अन्न की टोकरी कहलाता है। गंगानगर जिला 9 तहसीलों श्रीगंगानगर, करणपुर, सादुलशहर, पदमपुर, रायसिंहनगर, सूरतगढ़, अनूपगढ़, विजयनगऱ व घडसाना में फैला हुआ है जिसकी कुल जनसंख्या 2011 की जनगणना के अनुसार 19,69,520 है।

गंगानगर जिला मरूस्थलीय शुष्क क्षेत्र है जिसमें नहरी तंत्र के विकास के फलस्वरूप यह तथ्य उजागर हुआ है कि थार के मरूस्थल में केवल पानी की कमी है और यह सुविधा मिलने पर पूरा मरूस्थलीय क्षेत्र एक विशाल अन्न भण्डार के रूप में विख्यात हो सकता है। जिले में गंग नहर, भाखड़ा और इन्दिरा गांधी नहर द्वारा दक्षिणी टीले वाले क्षेत्रों को छोड़कर पूरा क्षेत्र नहरी सिंचित क्षेत्र में सम्मिलित है। विश्व के अन्य सिंचित नहरी क्षेत्रों की भांति गंगानगर जिले में भी कुछ पर्यावरणीय, परिस्थितिकी और प्राकृतिक समस्याएं विकराल रूप लेने लगी है।

जिले के 10978 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में से कृषि योग्य क्षेत्र भौगोलिक स्वरूप का 81 प्रतिशत है जो राजस्थान के भूमि उपयोग के असन्तुलित स्वरूप को दर्शाता है। कृषि क्षेत्र का 74 प्रतिशत भाग सिंचित है परन्तु मृदा की जल

संग्रहण क्षमता की कमी के कारण जल प्लावन की समस्या उत्पन्न हुई है। जिले के एक भाग में जिप्सम की कठोर मोटी परतों के कारण भूमि की निचली सतहों पर रिसने वाला पानी अवरूद्ध होकर जल प्लावन की समस्या को बढ़ाता है। इसके साथ ही लवणीयता व क्षारीयता का प्रभाव भूमि के उत्पादन व उत्पादकता पर गंभीर है। कृषि क्षेत्र में अधिक भूमि प्रयुक्त होने से वन क्षेत्र 5.47 प्रतिशत, आबादी व विकास के अन्तर्गत भूमि 6.24 प्रतिशत और बंजड़ ऊसर, चरागाह आदि क्षेत्र 6.70 प्रतिशत में सीमित रह गए हैं।

जिले में औसत वर्षा 255 मिलीलीटर होती है जो उत्तर पश्चिम से दक्षिण पश्चिम की ओर बढ़ती जाती है। जिले का तापमान गर्मी में 42.1 व 28 डिग्री सेल्सियस क्रमशः दिन व रात में तथा सर्दी में 20 से 5 डिग्री सेल्सियस के मध्य रहता है जिले का 53 प्रतिशत भाग सपाट प्राचीन उपजाऊ मैदान तथा 18 प्रतिशत रेतीले टीलों से आवृत्त है। इसके अतिरिक्त 1.3 प्रतिशत वर्तमान में निर्मित, 15.8 प्रतिशत रेतीले असमतल प्राचीन उपजाऊ मैदान, 15.8 प्रतिशत रेतीले असमतल प्राचीन उपजाऊ क्षेत्र, 7.9 प्रतिशत रेतीले असमतल टीलों के मध्य के मैदान ताकि 3.7 प्रतिशत सपाट टीलों के मध्यवर्ती क्षेत्र और विभिन्न आकृतियों वाले भूस्वरूप है।

जिले के दक्षिणी भागों में मध्यम से उच्च श्रेणी के टीले और बहुत संकरे और छोटे–छोटे रेतीले असमतल क्षेत्र है इस क्षेत्र की मृदा जिप्सम व चूने की निचली पर्तों पर लोमी सेंड से सेण्ड, सेण्डी लोम से लोम के बने हैं। जिले की मृदा मे एन्टीसोल्स व एरिडीसोल्स का क्षेत्रीय अनुपात क्रमशः 55:45 है। मृदा की जल संग्रहण क्षमता को दृष्टिगत रखकर 24 प्रतिशत क्षेत्र की क्षमता द्वितीय, 20 प्रतिशत क्षेत्र की क्षमता तृतीय, 36 प्रतिशत क्षेत्र की क्षमता चतुर्थ व 20 प्रतिशत मृदा की क्षमता अष्टम श्रेणी की है।

नहरी क्षेत्र के जल प्रवाह की उपलब्धता 0.90 मीटर प्रति हेक्टेयर है जो आवश्यकता के अनुमानित मध्यमान 0.57 मीटर प्रति हेक्टेयर से बहुत अधिक

है। नहर प्रणाली के विकास से सतही जल की मात्रा 385 गुनी बढ़ गई है। लगभग 20.97 अरब घनमीटर वार्षिक जल प्रवाह के कारण इंदिरा गांधी नहर में भूमिगत जल का स्तर 1.1 मीटर वार्षिक, भाखड़ा का 0.81 से 0.85 मीटर प्रति हेक्टेयर व गंगानहर का 0.64 मीटर वार्षिक गति से बढ़ रहा है। वर्तमान में भूजल का स्तर 10 से 25 मीटर के बीच है और बढ़ते भूजल स्तर से जलप्लावन की समस्या विकराल रूप लेने की आशंका है।

जिले के 49 प्रतिशत भाग में भूजल स्तर 10 से 20 मीटर, 25 प्रतिशत भाग में 20 से 30 मीटर, 19 प्रतिशत क्षेत्र में 0–10 मीटर तथा 7 प्रतिशत क्षेत्र में भूजल स्तर 30–40 मीटर है। भूजल की गुणवत्ता की दृष्टि से आंकलन करने पर यह परिलक्षित होता है कि 48 प्रतिशत क्षेत्र में लवणीयता सामान्य श्रेणी की 4 से 6 डी.एस./एम के माध्य, 25 प्रतिशत क्षेत्र में बहुत हल्की 2 से 4 डी.एस./एन स्तर की, 20 प्रतिशत क्षेत्र मे अत्यधिक 6 से 8 डी.एस./एम श्रेणी की है। अपवादस्वरूप एक प्रतिशत क्षेत्र जल प्लावन समस्या से ग्रसित है जहां लवणीयता उच्च श्रेणी की पाई गई है। जिले का 6079.72 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र वायु क्षरण व संग्रहण तथा जलप्लावन व लवणीयता जैसी समस्याओं से ग्रसित हैं।

घड़साना व विजयनगर को सम्मिलित नहीं किया गया है क्योंकि इन स्टेशनों पर आगामी आंकलन में वर्तमान विचलन की स्थिति काफी अधिक है। संभाव्यता की दृष्टि से पूरे जिले में 100 मि.मी. वर्षा की पूर्व संभाव्यता है। 300 मि.मी. वर्षा की संभाव्यता सादूलशहर में 71 प्रतिशत व रायसिंहनगर, अनूपगढ़ व सूरतगढ़ में 54 प्रतिशत है। 400 मि.मी. वर्षा की संभाव्यता सादूलशहर में 39 प्रतिशत व पदमपुर में 17 प्रतिशत है। 500 मि.मी. वर्षा की संभाव्यता न्यूनतम रायसिंहनगर में 2 प्रतिशत व सादूलशहर में 18 प्रतिशत है। 600 मि.मी. वर्षा की संभाव्यता पदमपुर में 8 प्रतिशत व रायसिंहनगर में 2 प्रतिशत है। 600 मि.

मी. से अधिक वर्षा की संभाव्यता गंगानगर सार्दूलशहर व करणपुर में मानी गई है जो विगत वर्षों की वर्षा पर आधारित है।

जिले में जून 2001 को अधिकतम तापमान 48.8^0 सेल्सियस अंकित किया गया था। अध्ययन क्षेत्र में माध्य मासिक अधिकतम तापमान का परिसर 40^0 से 44^0 सेल्सियस पाया जाता है। जनवरी माह में माध्य अधिकतम तापमान अपेक्षाकृत निम्न होता है।

वर्ष 2003–04 में जिले में वनों के अंतर्गत 632.44 वर्ग कि.मी. भूमि थी। वर्ष 2004–05 में यह क्षेत्र बढ़कर 645.56 वर्ग कि.मी. तथा वर्ष 2005–06 में 633.46 वर्ग कि.मी. हो गया। लेकिन वर्षा 2009–10 में इस क्षेत्र में कमी आयी। यद्यपि वन विकास के विभिन्न कार्यक्रमों के अंतर्गत नहरों के किनारे वृक्षारोपण किया जा रहा है।

अध्ययन क्षेत्र में इसका खनन रावला क्षेत्र में किया जाता है। रावला में राजस्थान राज्य खान व खनिज लिमिटेड द्वारा 700 टन प्रतिदिन जिप्सम ग्राइंडिंग का संयत्र वर्ष 2003 में स्थापित किया गया है। अन्य खनिज ब्रिक अर्थ और कलमी शोरा है।

सन् 2011 की जनगणना के अनुसार जिले की कुल जनसंख्या 1969168 व्यक्ति है। गंगानगर जिला कृषि बाहुल्य होने से यहां राज्य की 2.87 प्रतिशत जनसंख्या निवास करती है। जगनणना सन् 2001 के अनुसार जिले कि कुल जनसंख्या 1789423 थी जो सन् 2011 बढ़कर 1969168 हो गई। सन् 2001 से सन् 2011 तक जिले की जनसंख्या में 9.12 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। सन् 2001 में जिले का जनघनत्व 163 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. था जो बढ़कर सन् 2011 में 179 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. हो गया। जिले कि कुल साक्षरता व महिला साक्षरता दर 59.70 प्रतिशत है। जिले का लिंगानुपात 887 है। जनजणना 2011 के अनुसार जिले कि तहसीलों पर नजर डाले तो सबसे

अधिक जन घनत्व गंगानगर तहसील का 488.29 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी है। जबकि सबसे कम जन घनत्व सूरतगढ़ तहसील का मात्र 113.67 व्यक्ति प्रति वर्ग कि.मी. है। जिले में जनघनत्व के साथ ग्रामीण व नगरीय जनसंख्या में भारी अन्तर मिलता है। जिले में सन् 2001 के अनुसार ग्रामीण जनसंख्या में भी 74.66 प्रतिशत व नगरीय जनसंख्या 25.33 प्रतिशत थी जो कि सन् 2011 में क्रमशः 72.80 व 27.19 प्रतिशत हो गई। इन 10 वर्षों में ग्रामीण जनसंख्या में 1.86 प्रतिशत की कमी व नगरीय जनसंख्या में 1.86 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। जिले कि तहसीलों पर नजर डाले तो सन् 2001 से 2011 तक ग्रामीण व नगरीय जनसंख्या में भारी अंतर मिलता है।

जिले की कुल कार्यशील जनसंख्या वर्ष 2011 के अनुसार 176800 (44.45 प्रतिशत) ग्रामीण पुरुष काश्तकार एवं 36011 (27.90 प्रतिशत) ग्रामीण महिला काश्तकार संलग्न हैं जबकि 172255 (3.18 प्रतिशत) नगरीय पुरुष काश्तकार एवं 35495 (2.27 प्रतिशत) नगरीय महिला काश्तकार कार्यरत हैं। इसका प्रमुख कारण यह है कि कृषि अर्थव्यवस्था ही यहाँ का मूल आधार है, इसलिए महिलाएँ ग्रामीण क्षेत्र में कृषि कार्य अधिक करती हैं अतः क्षेत्र में काश्तकारों की संख्या में महिलाओं में दस वर्षो में वृद्धि हुई तथा पुरुषों में कमी हुई इसका मुख्य कारण महिलाओं का कृषि व्यवसाय में अधिक जुड़ना एवं शिक्षा की कमी है।

गंगानगर जिले में जनसंख्या खाद्य संसाधन तथा कृषि विकास प्रदेश के प्रादेशिकरण के लिए 9 चर मूल्यों को लेकर सामूहिक सूचकांक सांख्यिकीय विधि से इनका सीमांकन किया गया है। सामूहिक सूचकांकों का वर्गीकरण करके निम्न जनसंख्या–खाद्य संसाधन तथा कृषि विकास प्रदेशों का निर्धारण किया है–

क्र.सं.	सामूहिक सूचकांक	कृषि तकनीकी	सम्मिलित तहसीलें
1.	2.5 से 3.0	उच्च कृषि तकनीकी	श्रीगंगानगर
2.	1.0 से 1.5	मध्यम कृषि तकनीकी	सूरतगढ़, विजयनगर

3.	0.5 से 1.0	निम्न कृषि तकनीकी	रायसिंहनगर, अनूपगढ़, सार्दुलशहर और घड़साना
4.	0.5 से कम	अति निम्न कृषि तकनीकी	करणपुर व पदमपुर

अध्ययन क्षेत्र में से प्रतिदर्श सर्वेक्षण के लिए सविचार प्रतिचयन द्वारा 9 तहसीलों का चयन करके प्रश्नावली के माध्यम से प्राथमिक आंकड़ें प्राप्त किये गये हैं।

गंगानगर जिले की करणपुर व पदमपुर तहसील शामिल है। जहां सामूहिक सकेंत 0.48 और 0.36 है। इन तहसीलों का पिछड़ापन यहां के कृषकों व डीजल पंपों का कम होना है।

रायसिंहनगर, अनूपगढ, सार्दूलशहर और घडसाना में सूचकांक 0.59 से 0.85 तक है। घडसाना में सिंचाई गहनता और सार्दूलशहर में विद्युत पंप तकनीकी को प्रभावित करते है।

मध्यम कृषि का नवीनीकरण वर्ग (1.0 से 1.5) इस वर्ग के अंतर्गत क्षेत्र की सूरतगढ और विजयनगर तहसीलें सम्मिलित है, जिनका सामूहिक सूचकांक 1.11 व 1.03 है। यहां पर कृषि तकनीक एवं सिंचाई सुविधा और सिंचाई गहनता रायसिंहनगर, अनूपगढ, सार्दूलशहर और घडसाना की तुलना में धनात्मक पायी जाती है।

उच्च कृषि के आधुनिकीकरण वर्ग (2.5 – 3.0) इस वर्ग के अन्तर्गत अध्ययन क्षेत्र की श्रीगंगानगर तहसील सम्मिलित है जिसका सामूहिक संकेत 1. 068 है। इसका उच्च पाया जाना यहाँ की कृषि पारिस्थितिकी एवं कृषि तकनीकी का उपयोग एवं यहाँ के यातायात की सुलभता का होना है।

कृषि पारिस्थितिकी के आधुनिकीकरण में परिवर्तन एवं कारण के अन्तर्गत गंगानगर तहसील में कृषि के तकनीकीकरण में अति उच्च वर्ग पाया गया है तथा रायसिंहनगर, अनूपगढ, सार्दूलशहर और घड़साना तहसील में जहाँ कृषि पारिस्थितिकी के आधुनिकीकरण वर्ग का निम्न पाया गया है। अतः कृषि पारिस्थितिकी के नवीनीकरण वर्ग में परिवर्तन आने का मुख्य कारण उस क्षेत्र के कृषि संसाधनों की उपलब्धता मुख्य कारण है। इसके साथ ही भौगोलिक स्थिति तथा तकनीकी शिक्षा तथा यातायात के साधनों का अभाव एवं सिंचाई गहनता का अभाव के कारण कृषि के आधुनिकीकरण में परिवर्तन पाया गया है।

अध्ययन क्षेत्र की सभी तहसीलों में कृषि के आधुनिकीकरण में सभी तहसीलों का स्तर उत्तम नहीं है। अतः भविष्य में कृषि पारिस्थितिकी के आधुनिकरण वर्ग का स्तर उच्च हो सकता है। क्योंकि यहाँ प्राप्त कृषि संसाधनों का समुचित विकास किया जाए तथा वन, जल स्रोतों का संरक्षण बंजर व क्षारीयपन से बचाया ताकि भविष्य में कृषि पारिस्थितिकी के आधुनिकीकरण के वर्ग में धनात्मक योगदान हो सके।

अध्ययन क्षेत्र में धरातल विषमता, वर्षा का कम होना, कृषि हेतु उपजाऊ भूमि का अभाव, मिट्टी में क्षारीय व लवणीय अंशों की अधिकता, ग्रीष्म ऋतु के ताप परिसर में अन्तर, कृषि हेतु उपयुक्त भूमिगत जल का अभाव एवं जलतल का नीचा होना आदि भौगोलिक परिस्थितियाँ क्षेत्र की कृषि पारिस्थितिकी के आधुनिकीकरण की प्रक्रिया में अवरोध के रूप में है। मिट्टी अपरदन की समस्या भी कृषि को प्रभावित करती है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. एडमनिस्ट्रेटिव रिर्पोट आन दी बीकानेर स्टेट, 1944–45
2. एग्रीकल्चर स्टाटिस्टिक्स (खरीफ क्रोप) 1956–2000, राजस्थान कृषि निदेशालय जयपुर।
3. एग्रीकल्चर स्टाटिस्टिक्स ऑफ बीकानेर ऑफ श्रीगंगानगर डिसट्रिक्ट (रबी एण्ड खरीफ क्रोप) 1956–2000 रा.कृ.नि. जयपुर।
4. अली, अहमद एवं डॉ. स्वामी, एस.के. (2006): इरिगेटेड एग्रीकल्चरल इन दि डेजर्ट इकोसिस्टम ऑफ गंगानगर डिस्ट्रिक्ट : एन असेसमेन्ट, ज्योग्राफिकल आस्पैक्ट्स, बीकानेर
5. अली, अहमद एवं रंगा, शशिकला (2006) : बीकानेर जिले में जल प्रबन्ध : समस्याएं व सम्भावनाएं, ज्योग्राफिकल आस्पैक्ट्रस, बीकानेर।
6. अली, अहमद, सिंघवी, एस.एल.व. अन्य (2004) : मरूस्थलीय पारिस्थितिकीय तंत्र में सिंचाईः इंदिरा गांधी नहर परियोजना क्षेत्र का भौगोलिक अध्ययन, ज्योग्राफिकल आस्पैक्ट्स, बीकानेर।
7. अली, अहमद, स्वामी एस.के. व अन्य (2002) : इंदिरा गांधी नहर क्षेत्र में सेम समस्याः हनुमानगढ़ जिले के संदर्भ में विशेष भौगोलिक अध्ययन।
8. अली, एस.एम. (1949): लैण्ड यूटीलाइजेशन सर्वे इन इण्डिया, द ज्योग्राफिकल – 2
9. अरिहन्त (2014–15) : पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी, अरिहन्त पब्लिकेशन (इण्डिया) लिमिटेड।
10. आलविन, बीय गौडी ए. हेज के.टी.एम. (1970) द प्री हिस्ट्री एण्ड पैलियोग्राफी ऑफ दी ग्रेट इण्डियन डेजर्ट लंदन एकेड, प्रेस. पृ. 1–370.

11. बाकलीवाल,पी.सी. एण्ड ग्रोवर, ए.के. (1999) सिगनेचर्स एण्ड माइग्रेशन ऑफ सरस्वती रीवर इन थार डेजर्ट, वेस्टर्न इण्डिया, मेमायर्स, जियोलिजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया न. 42, पृ. 113–115.

12. भल्ला, लाजपतराय (2000): राजस्थान का भूगोल, कुलदीप पब्लिकेशन हाउस, जयपुर।

13. बरलो, आर. (1958): लैण्ड रिसोर्स इकोनोमिक्स–द पोलिटिकल इकोनोमी ऑफ रूरल एण्ड अरबन लैण्ड रिर्सोस यूज, प्रेन्टिस हॉल, इग्लैण्ड

14. बरलोव (1954) : लैण्ड ऑफ ब्रिटेन – इट इज यूज एण्ड मिसयूज, लंदन

15. बरलो, आर.एवं विलफ, एन.जे., (1961): सॉयल सर्वे एण्ड लैण्ड इवोल्यूशन, जार्ज व अलेन एण्ड अनवीन, लन्दन, वोल्यूम 6

16. भारद्वाज, ओ.पी. (1964): लैण्डयूज लोलैण्ड ऑफ सतलुज इन द जालंधर दोआब, सिम्पल स्टडीज नेशनल ज्योग्राफी जर्नल्स ऑफ इण्डिया, वोल्यूम 10

17. भाटिया, हुसैन, एम. (1960): पैटर्न ऑफ क्रॉप कोम्बिनेशन एण्ड डायवरसीफिकेशन इन इण्डिया, इकोनोमिक ज्योग्राफी, वोल्यूम 41

18. भारद्वाज, ओ.पी. (1960–64) : लैण्डयूज इन लो लैण्ड ऑफ सतलुज इन दी बीस्त – जालंधर दोआब, सिम्पल स्टडीज एन.जी.जे.आई.,

19. सी.ए.डी., बीकानेर (2008) : प्रोग्रेस ऑफ दी थ्री ईयर एक्शन प्लान ऑफ वारटलोगिंग एक्शन प्लान रिर्पोट

20. चटर्जी, एस.पी. (1945–52) : चैन्जिंग पैटर्न ऑफ क्रॉप लैण्डयूज इन द वेस्ट बंगाल, द ज्योग्राफर वोल्यूम 15

21. चौहान, डी.एस. (1966) : क्रॉप कोम्बिनेशन इन द जमुना – हिण्डोन ट्रेक्ट, द ज्योग्राफिकल ऑब्जर्वेशन, वोल्यूम 7

22. चौहान टी.एस. (1987) : एग्रीकल्चर जीयोग्राफी,

23. चक्रवती, एस.सी. (1965) : स्टेटिस्टिकल प्रजेन्टेशन ऑफ चेन्जेस इन लैण्डयूज डाटा, बाम्बे ज्योग्राफिकल मैग्जीन, वोल्यूम 10, नं. 1

24. देवड़ा, जी.एल.एल : सम आस्पेक्टस ऑफ सोशियो इकोनोमिक हिस्ट्री ऑफ राजस्थान।

25. देवड़ा जी.एस.एल : बीकानेर राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था।

26. देवड़ा जी.एस.एल. (1977) : मध्ययुगीन बीकानेर राज्य में रेगिस्तान रोकने के प्रयास, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस।

27. देवड़ा जी.एस.एल. (1978) : क्रोप पेट्रन एण्ड रूरल सैटलमेंट इन दी बीकानेर स्टेट (1650–1700):, शोध पत्र, सेमिनार, इतिहास विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर।

28. देवड़ा जी.एस.एस. : अनूपगढ़ खेत व गांव री जही, वि.स. 1950/1963, नं. 69 जी.राजस्थान की प्रशासनिक व्यवस्था

29. देवड़ा जी.एस.एस. (1976) : रेगिस्तानी क्षेत्र में कृषि भूमि व उसका वर्गीकरण, राजस्थान हिस्ट्री कांग्रेस प्रोशिडिंग।

30. धवन, बी.डी. (1988) : एग्रीकल्चर प्रोडक्टीविटी इन इण्डिया – ए स्पेशियल एनालिसिस, वोल्यूम 69 एवं 70

31. धाबाई, सुमन (1999), राजस्थान में कृषि परिवर्तन का स्वरूप, राजस्थान विश्वविद्यालय जयपुर।

32. फोक्स (1956) : लैण्डयूज ऑफ लोकेशन, येल यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यू हेवन।

33. फोर डिकेट्स ऑफ प्रोग्रेस इन बीकानेर, 1937.

34. गौड़, महेश कुमार (1994): लैण्डयूज पैटर्न इन पोकरण : लैण्डयूज डीग्रेशन एण्ड इम्पैक्ट ऑन इकोसिस्टम

35. गवर्नमेन्ट ऑफ राजस्थान (2008) : डिस्ट्रिक्ट इण्डस्ट्रीज सेन्टर, जिला हनुमानगढ़।

36. गुप्त आशुतोश (1998) : राजस्थान सुजस संचय।

37. गुप्त, ओमप्रकाश (1988) : गंगानगर परिचय, अग्रवाल साहित्य सदन, श्रीगंगानगर।

38. गुप्ता मोहन : बीकानेर सम्भाग का जिलेवार सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक अध्ययन

39. गुर्जर आ.के. भाुक्ला, एल. (1990) : केनाल इरीगेशन मेनेजमेंट प्रॉब्लम ऑफ टाइम एण्ड युज रिलेशनशिप,

40. गुर्जर, रामकुमार द्ध 1992 ऋ : इंदिरा गांधी नहर क्षेत्र का भूगोल, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी , जयपुर

41. हुसैन, एम. (1976) : ए न्यू एप्रोच ऑफ दि एग्रीकल्चरल प्रोडक्टिवटी ऑफ दि सतलज – गंगा प्लेन ऑफ इण्डिया, जियोग्राफिकल रिव्यू ऑफ इण्डिया

42. हुसैन, एम. (1979) : एग्रीकल्चरल जियोग्राफी , इंटर – इण्डिया पब्लिकेशन्स, दिल्ली

43. इम्पीरियल गजेटियर ऑफ इण्डिया, भाग – 8

44. इण्डस्ट्रियल पोटेन्शियल सर्वे श्रीगंगानगर (2008–09), गवर्नमेन्ट ऑफ राजस्थान, डिस्ट्रिक्ट इण्डस्ट्रीज सेन्टर, श्रीगंगानगर

45. जल संसाधन विभाग वार्शिक रिपोर्ट, 2009

46. जनकी, वी.ए. (1985) : इकोनोमिक ज्योग्राफी, फैक्टर्स इनफ्लूएन्सिंग दी लोकेशन ऑफ इकोनोमिक एक्टीविटी, कान्सेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी, न्यू दिल्ली,

47. जयरथ (1994) : एग्रीकल्चर रीजन ऑफ पंजाब इकोनोमिक ज्योग्राफी

48. झा,बी.एन. (1999) : प्रॉब्लम ऑफ लैण्ड यूटीलाइजेशन ''ए केस स्टडी ऑफ कोसी रीजन'', क्लासिकल पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली

49. जाट, बी.एल. एवं डॉ.सिंह, जगसीर (2008) : हनुमानगढ़ जिले में सिंचाई तंत्र का विकास एवं सेम समस्या, ज्योग्राफिकल आस्पैक्ट्स, गंगानगर, वो. 10

50. जोशी, यशवन्त गोविन्द (1999) : नर्बदा बेसिन का कृषि भूगोल, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी

51. ज्योरकिन, के.वी. (1946) : कैपेसिटी ऑफ एग्रीकल्चर लैण्ड, वेस्टर्न एशिया ए जियोलोजिकल सर्वे नं. 42

52. कागदों की बही नं. 93–94, रामपूरिया रिकार्ड, रा.रा.अ. बीकानेर, रेवेन्यू डिपार्टमेन्ट की फाइल – वर्श 1921, 34 , 41

53. कालिया, सरीना एवं शर्मा, वत्सला (2003) : अजमेर जिला में कृषि आधारित उद्योगों का भौगोलिक विवचेन, ज्योग्राफिकल आस्पैक्टस, चितौड़गढ़, वो. 6

54. कर्नल जेम्स टॉड (2008) : कर्नल टॉड कृत राजस्थान का इतिहास, भग प्रथम,

55. केरियल , एच.जी. (1972) : एग्रीकल्चर एटलस ऑफ इंग्लैण्ड, लंदन

56. करीम कोस्थे , एम.एच. (1995) : चेन्जिंग इकोसिस्टम ऑफ इरीगेशनः ए केस स्टडी ऑन आई.जी.एन.पी

57. कार, ए. एण्ड घोश बी (1984), दी दृशाद्वती रीवर सिस्टम ऑफ इण्डिया

58. कस्वां एन.आर.एवं यादव, अनीता (2009) : वाटर मैनेजमेन्ट इन एरिड इकोसिस्टम ऑफ इं.गा.न.प. : एन असेसमेन्ट ऑफ खेतावाली डिस्ट्रीब्यूटरी, एनाल्स ऑफ दि एनाल्स ऑफ दि राजस्थान ज्योग्राफिकल एसोसिएशन, भीलवाड़ा वो. 26

59. कोस्त्रोविस्की (1956) : लैण्ड यूटीलाइजेशन सर्वे ऑफ मॉस्को डिस्ट्रिक्ट, ज्योग्राफी रिव्यू वोल्यूम 14, नं. 3

60. केन्डाल, एम.पी. (1939) : द ज्योग्राफिकल डिस्ट्रीब्यूशन ऑफ क्रॉप प्रोडक्टीविटी इन इंग्लैण्ड, जनरल ऑफ रॉयल स्ट्रीट, सोशल वोल्यूम 162

61. खान, एम.जेड.ए. एवं जादौन, कीर्ति (2006) : हरिपुरा जलग्रहण क्षेत्र (लाडपुरा तहसील , कोटा) का संविकास : एक आंकलन, ज्योग्राफिकल आस्पैक्टस, बीकानेर, वो दृ 8

62. खत्री, एल.सी. एवं सिंघाड़ा, कल्याणमल (2005) : फसल संयोजनः पंचायत समिति कुशलगढ़ , जिला बांसवाड़ा का एक विशिश्ट अध्ययन, एनाल्स ऑफ दि राजस्थान ज्योग्राफिकल एसोसिएशन, वो. 21–22

63. खुल्लर, डी.आर. (2007) : सरस्वती भूगोल द्वसीबीएसई, कक्षा 12, सरस्वती हाउस प्रा.लि. एजुकेशनल पब्लिशर्स, नई दिल्ली

64. क्राफोर्ड, ए.आर. (1970) प्री कैम्ब्रियन जियोक्रोनोलोजी ऑफ राजस्थान एण्ड बुंदेलखण्ड, नोदर्न इण्डिया, कनाडियन जर्नल अर्थ सांईस, वोल्यूम 125, पृ. 91–110

65. मण्डल, आर.बी. (1982) : लैण्ड यूटीलाइजेशन थ्योरी एण्ड प्रैक्टिस, कॉन्सपेट पब्लिकेशन कम्पनी, नई दिल्ली

66. मोहम्मद हारून (2005) : आर्थिक भूगोल के मूल तत्व, वसुंधरा प्रकाशन, गोरखपुर

67. मोहम्मद, नूर (1980) : पर्सपेक्टिव इन एग्रीकल्चर जियोग्राफी, वोल्यूम –4 कॉन्सपेट पब्लिशिंग कम्पनी, न्यू दिल्ली

68. मोर्डनाइजेशन भाखड़ा केनाल प्रोजेक्ट (1979) : सिंचाई विभाग, राजस्थान सरकार, प्रोजेक्ट रिपोर्ट – वॉल्यम प्रथम,

69. मॉडनीईजेशन ऑफ गंगकेनाल सिस्टम (2000) श्रीगंगानगर प्रोजेक्ट प्रोफाइल

70. मुंशी सोहन लाल : तवारीख राजश्री बीकानेर,

71. नित्यानन्द (1945) : क्रॉप कोम्बिनेशन रिजन्स इन राजस्थान, जियोग्राफिकल रिव्यू ऑफ इण्डिया

72. नेगी, बी.एस. (2014–15) पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण, कमल प्रकाशन मेरठ

73. पाल.एस.पी. (1985) : ऑल इण्डिया सोयल्स एण्ड लैण्डयूज सर्वे , ऑर्गनाइजेशन सॉयल सर्वे मैनुअल, नई दिल्ली

74. पन्नीकर के.एम. (1937) : हिज हाइनैस दी महाराजा ऑफ बीकानेर,

75. पाण्डेय , जे.एन. एवं डॉ. कमलेश, एस.आर. (2001) : कृषि भूगोल, वसुन्धरा प्रकाशन, गोरखपुर

76. पाण्डे, निवेदिता, अली, अहमद एवं डॉ. स्वामी, एस.के. (2006) : मरूस्थलीय पारिस्थितिकीय तंत्र में सिंचाई : इंदिरा गांधी नहर परियोजना क्षेत्र का भौगोलिक आंकलन, ज्योग्राफिकल आस्पैक्ट्स, बीकानेर, वो.8

77. पाण्डे, आर.पी. (1984) ओरियेन्टेशन, डिस्ट्रीब्यूशन एण्ड ओरिजन ऑफ सैण्ड ड्यून्स इन दी सेन्ट्रल लूणी बेसिन, प्रोसेडिंग्स सिम्पोजियम, प्रॉब्लम ऑफ इण्डियन एरिड जोन, गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया, देहली, पृ. 16

78. पाउलेट , गजेटियर ऑफ दी बीकानेर स्टेट,,

79. पेमाराम (1986) : एग्रेरियन मूवमेन्ट इन राजस्थान

80. प्रसाद, राजेन्द्र (2003) : भूमि अवनयन की समस्याएंः साहिबी नदी क्षेत्र (जिला अलवर, राजस्थान) का विशेश अध्ययन, ज्योग्राफिकल आस्पैक्ट्स, चितौड़गढ़ , वो.6

81. प्रसाद, राजेन्द्र (2008): भीलवाड़ा जिले में भूमि उपयोग प्रतिरूप, ज्योग्राफिकल आस्पैक्टस, गंगानगर , वो. 10

83. राय, बी.के. (1967) : क्रॉप एसोसियेशन्स एण्ड चेन्जिंग ऑफ क्रॉप इन द गंगा – घाघरा दोआब ईस्ट, नेशनल ज्योग्राफिकल जरनल ऑफ इण्डिया, वोल्यूम 13 नं. 4

84. राय.बी.के. (1972) : मेजरमेन्ट ऑफ रूरल लैण्डयूज इन आजमगढ़, इन शफी मोहम्मद, एम., आनस, सिद्दीकी फराग (सम्पादित), प्रोसीडिंग्स ऑफ सिम्पोजियम ऑन लैण्डयूज इन डवलपिंग कन्ट्रीज, अलीगढ़

85. राजस्थान कॉन्सिल ऑफ डिप्लोमा इंजिनियर्स की स्मारिका (2009) : प्रकाशित लेख ''गंगनहर प्रणाली एक परिचय'' रायसिंह साहू, श्रीगंगानगर

86. राजस्थानी खेती (सं. शिव कुमार स्वामी) (2000) श्रीगंगानगर,

87. राजस्थान पत्रिका (15 सितम्बर 2001) : प्रकाशित लेख – भाखड़ा सिंचाई परियोजना प्रारम्भ से वर्तमान।

88. राव, प्रकाश वी.एल.एस. (1947–56) : क्रॉप एसोशियेशन एण्ड चैन्जिंग पैटर्न ऑफ क्रॉप इन गोदावरी रीजन, वोल्यूम 13

89. रिचर्ड, जे.एफ.एवं हेगन, जोन्सन (2001) : स्टडीज इन द यूटीलाइजेशन ऑफ एग्रीकल्चर लैण्ड, बिहार, इरीगेटेड एण्ड नॉन इरीगेटेड एरिया इन हरियाणा स्टेट

90. सेन्सस् रिपोर्ट (1981) : बीकानेर स्टेट, भाग प्रथम,

91. सेन्सस् रिपोर्ट (1901) : बीकानेर स्टेट, भाग प्रथम,

92. सेन्सस् रिपोर्ट (1911) : बीकानेर स्टेट, भाग प्रथम,

93. सेन्सस् रिपोर्ट (1921) : बीकानेर स्टेट, भाग प्रथम,

94. सेन्सस् रिपोर्ट (1931) : बीकानेर स्टेट, भाग प्रथम,

95. सेन्सस् रिपोर्ट (1941) : बीकानेर स्टेट, भाग प्रथम,

96. सेन्सस् रिपोर्ट (1931) : बीकानेर स्टेट, भाग प्रथम,

97. सेन्सस् रिपोर्ट (1941) : बीकानेर स्टेट, भाग प्रथम,

98. सेन्सस् रिपोर्ट (1951) : राजस्थान एण्ड अजमेर डिस्ट्रीक हेन्डबुक, चुरू, श्रीगंगानगर, बीकानेर।

99. शर्मा एच.एस. शर्मा एम.एल. (2002) :, राजस्थान का भूगोल पंचशील प्रकाशन जयपुर।

100. शर्मा अयोध्या प्रसाद (1977) : कृषि विकास प्रसारिका

101. सहगल . के.के. (1972) : राजस्थान डिस्ट्रिक्ट गजेटियर्स, गंगानगर गवर्नमेन्ट ऑफ राजस्थान, महावीर प्रिटिंग प्रेस, जयपुर।

102. सहारण, राकेश कुमार (2008) , श्रीगंगानगर जिले में कृषि आधारित उद्योगों का भौगोलिक अध्ययन,

103. सिंह, जे.एण्ड ढिल्लो, एस.एस. (1984) : एग्रीकल्चरल जियोग्राफी, टाटा मैक्ग्रा हिल पब्लिशिंग कम्पनी लिमिटेड, नई दिल्ली

104. सिंघवी, ए.के., कार, अमल एवं अन्य (1992) : चैन्जिंग पैटर्न ऑफ क्रॉप कोम्बिनेशन इन डेजर्ट इकोसिस्टम, नेशनल ज्योग्राफर , वोल्यूम 18

105. सिंघवी, एस.एल. (2002) : इंदिरा गांधी नहर क्षेत्र में जल प्रबन्धन :

समस्या एवं सम्भावनाएं, ज्योग्राफिकल आस्पैक्टस, बीकानेर

106. सिंघवी, स्नेहलता, अली अहमद, सैनी, विपिन (2009): लैण्ड डीग्रेशन इन द रावतसर कमाण्ड एरिया ऑफ इं.गा.न.प. (स्टेज–1) : एन

एन्वायर्नमेन्टल इम्पैक्ट असेसमेन्ट, एनाल्स ऑफ दि राजस्थान ज्योग्राफिकल एसोसियेशन, भीलवाड़ा, वो. 26

107. सिंह, यू. एवं पाण्डेय, जे.एन. (1973) : रीसेन्ट चेन्जेस इन लैण्ड यूटीलाइजेशन इन सरयू पार मैदान, उत्तर भारत भूगोल पत्रिका, सितम्बर–दिसम्बर

108. सिंह,बृजभूशण (1971) : भूमि उपयोग क्षमता एवं अनुकूलतम उपयोग, उत्तर–भारत भूगोल पत्रिका, गोरखपुर, वोल्यूम 7 , नं. 2

109. सिंह, बब्बन (1971) : ज्योग्राफिकल एनालिसिस ऑफ द डिस्ट्रीब्यूसन एण्ड चेन्जिंग पैटर्न ऑफ कल्चरेबल वेस्ट लैण्ड इन भाहगंज तहसील, उत्तर भारत भूगोल पत्रिका

110. सिंह राजरबिन्द (2009): राजस्थान कौंसिल ऑफ डिप्लोमा इंजिनियर्स स्मारिका में प्रकाशित लेख– ''राजस्थान को रावी व्यास एवं सतलुज नदियों से कृषि व पेयजल हेतु पानी का आवंटन''

111. सिंह, बी.बी. (1971) : लैण्डयूज एफीशियेंसी स्टेज एण्ड ऑप्टीमम लैण्डयूज, उत्तर भारत भूगोल पत्रिका, गोरखपुर

112. सिंह, ब्रह्मानन्द (1996) : उत्तर प्रदेश की देवरिया तहसील में कृषि भूमि उपयोग , अप्रकाशित, डी.फिल., भोध प्रबन्धन, इलाहबाद विश्वविद्यालय

113. सिंह, ब्रजभूशण (2003) : कृषि भूगोल, तारा पब्लिकेशन्स वाराणसी

114. सिंह, जसबीर (1972) : स्पेसियों टेम्पोरल डवलपमेन्ट्स एण्ड लैण्डयूज एफीसेन्सी इन हरियाना, ज्योग्राफिकल रिव्यू ऑफ इण्डिया, कलकत्ता, वोल्यूम 34, नं. 4

115. सिंह, जसवीर (1974) : एग्रीकल्चरल एटलस ऑफ इण्डिया, ए. ज्योग्राफिकल एनालिसिसस, विशाल पब्लिकेशन, कुरूक्षेत्र

116. सिन्हा, वी.एम. (1968) : एग्रीकल्चरल एफीसेन्सी इन इण्डियाः द ज्योग्राफर, 15 नवम्बर, स्पेशल नं. 21 इंटरनेशनल ज्योग्राफिकल कांग्रेस

117. शर्मा, एच.एस. शर्मा, एम.एल. (2006) : राजस्थान का भूगोल, पंचशील प्रकाशन, जयपुर

118. शफी, एम. (1963) : एग्रीकल्चर एफीशियेन्सी इन रिलेशन टू लैण्डयूज सर्वे इन उत्तर प्रदेश, ज्योग्राफिकल आउटलुक, वोल्यूम 3

119. शर्मा, पी.डी. (2012) पर्यावरण जैविकी एवं विशविज्ञान, रसतोगी प्रकाशन मेरठ

120. शर्मा, बी.एल. (2004): कृषि भूगोल, साहित्य भवन, आगरा

121. शर्मा, सुरेशचन्द्र (1970) : जिला इटावा में भूमि उपयोग : उत्तर भारत भूगोल पत्रिका, अंक 6

122. शफी, एम. (1965) : पेटर्न ऑफ क्रॉप लैण्डयूज इन द गंगा यमुना दोआब, ज्योग्राफर।

123. शफी, एम. (2006): एग्रीकल्चरल जियोग्राफी, पब्लिश्ड बाय डार्लिंग किंडर्सले (इण्डिया) प्रा लिमिटेड, दिल्ली

124. सक्सेना, एच.एम. एवं सक्सेना पूजा (2005) : चैन्जिंग पैटर्न ऑफ एग्रीकल्चरल मार्केटिंग एण्ड सोशल स्ट्रक्चर इन राजस्थान, एनाल्स ऑफ दि राजस्थान ज्योग्राफिकल एसोसिएशन, वो. 21–22

125. सायमन, एल. (19940) : कृषि भूगोल, अनुवादक श्यामसुन्दर कटारे, हिन्दी संस्करण, मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रंथ अकादमी, भोपाल

126. सोनी, विजय (2008): इंदिरा गांधी नहर परियोजना क्षेत्र में सेम समस्या (हनुमानगढ़ जिले के संदर्भ में विशेश भौगोलिक अध्यन), ज्योग्राफिकल आस्पैक्टस्, गंगानगर, वो. 10

127. स्वामी, एस.के. (2002) : वाटर लॉगिंग प्रोब्लम इन राजस्थान – इवेल्यूएशन स्टडी ऑफ रावतसर एरिया

128. स्टेम्प, एल.डी. (1931) : द लैण्ड यूटीलाइजेशन सर्वे ऑफ ब्रिटेन, ज्योग्राफिकल जरनल, 78

129. श्रीवास्तव, वी.के. राव बी.पी. (2005) : आर्थिक भूगोल, वसुंधरा प्रकाशन, गोरखपुर

130. शेख, एम.एम. एवं ओझा, अंजू (2006) : लाइवस्टोक कोम्बीनेशन रिजन इन चुरू डिस्ट्रिक्ट, ज्योग्राफिकल आस्पैक्टस् बीकानेर, वो. 8

131. सक्सेना, एच.एम. (2002) : पर्यावरण एवं पारिस्थितिकी भूगोल, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी

132. त्रिपाठी, वी.बी. एवं उषा अग्रवाल (1968) : चेन्जिंग पैटर्न ऑफ क्रॉप लैण्डयूज इन द लोअर गंगा यमुना दोआब, द ज्योग्राफर, वोल्यूम 15

133. तिवारी, आर.सी. एवं सिंह, बी.एन (2006) : कृषि भूगोल, प्रयाग पुस्तक सदन, इलाहबाद

134. तिवारी, आत्मप्रकाश (2008) : श्रीगंगानगर में गन्ना उत्पादन में भौगोलिक कारकों की भूमिका, ज्योग्राफिकल आस्पैक्ट्स, गंगानगर, वो. 10

135. त्यागी, बी.एस. (1972) : एग्रीकल्चरल इन्टेन्सिटी इन चुनार तहसील, डिस्ट्रिक्ट मिर्जापुर, यू.पी. नेशनल ज्योग्राफिकल जनरल ऑफ इण्डिया, वोल्यूम 18

136. वर्मा, एन.पी. (1990) : एग्रीकल्चरल डवलपमेन्ट इन उत्तर प्रदेश, यू.पी. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, लखनऊ

137. वासन, आर.जे (1983), जियोमोर्फालोजी, लेट क्वाटर्नरी स्ट्रेटिग्राफी एण्ड पेलियो क्लाईमेटोलोजी आफ दी आर. ड्यू फील्ड जोन जियोमोर्फालोजी, पृ. 117—151

138. वोल्पर्ट, जे. (1964) : रिवर्स एण्ड लैण्डकैप, ज्योग्राफिकल रिव्यू ऑफ स्वीडन, वोल्यूम 45

139. वुड, एच.ए. (1972) : द लोकेशन ऑफ इकोनोमी एक्टीविटी, मैक्ग्रा – हिल, न्यूयॉर्क

Annexure

प्रश्नावली

जिला ..... तहसील ..... गांव/चक.....
. गांव/चक की सामान्य विशेषताएं

1 गांव का इतिहास (संक्षेप में) नहर आने से पहले/बाद में, बसाव का वर्ष आदि।

.....

.....

.....

2 जनसंख्या ..... 3 घरों की संख्या .....

4 खेतों की जनसंख्या ..... 5 भूमिहीनों की संख्या .....

6 गांव का मुख्य फसल प्रारूप .....

.....

.....

7 परिवहन की उपलब्धता उच्च/मध्यम/निम्न

परिवहन का प्रकार बस/जीप/कार/रेलगाड़ी/अन्य

8 सड़कों की स्थिति कच्ची/डामरयुक्त/खंडजा/

9 नजदीकी नगर केन्द्र की दूरी ..... किमी.

नजदीकी कृशि बाजार की दूरी . ..... किमी.

10 गांव में विद्युतीकृत घरों की संख्या .....

11 पेयजल सुविधा डिग्गी / कुआं / वाटरवर्क्स / अन्य

कब से .....

कितने घरों में पाईप द्वारा जल .....

12 शिक्षा का स्तर

पुरूष .....

महिलाऐं .....

13 अन्य .....

.....

.....

परिवार का सामाजिक – आर्थिक स्तर

	नहर आगमन से पूर्व	नहर आगमन के पश्चात्	वर्तमान	विषेश
मुख्य व्यवसाय (खेती, पशुपालन, स्वयं का व्यवसाय, जिले से बाहर, सेवा, आदि)				
शिक्षा का स्तर				
संचार उपकरणों /				
साधनों का प्रयोग				
स्वयं का परिवहन				
साधन				

कृषि एवं सिंचाई	नहर आगमन से पूर्व का समय	नहर आगमन के पश्चात् का समय	वर्तमान समय	विषेश
सिंचाई का साधन				
सिंचित क्षेत्र				
सिंचित का तरीका				
फसल व उन का क्षेत्र				
रबी				
खरीफ				
उत्पादन/हैक्टेयर				
कीमत/क्विण्टल				
भू जल गुणवत्ता में अंतर				
संकर बीज का प्रयोग				
रासायनिक खाद का प्रयोग				
ट्रेक्टर का प्रयोग				
कम्बाइन का प्रयोग				
उपज ढोने का साधन				
अन्य				

(1) क्या सरकारी कृषि विभाग किसी फसल विषेश हेतु प्रोत्साहित अथवा बाध्य करता है ?

यदि हां तो कैसे .....

– क्या मिट्टी की जांच की जाती है ? .....

– फसल उत्पादन हेतु सुझाव दिया जाता है ? .....

– क्या सिंचाई, बीज, उर्वरको अथवा कीटनाशकों के संबंध में जानकारी दी जाती है?

.....

.....

–नहर द्वारा सिंचाई से क्या

– भूमि खराब हुई ?

– लवण की समस्या पैदा हुई ?

– सेम आई ?

– मिट्टी अम्लीय हुई ?

– मिट्टी की गुणवत्ता में अंतर आया ?

– जल जनित अथवा बीमारियों में वृद्धि ?

– पशुओं में बीमारियों में वृद्धि ?

– क्षेत्र में कसी प्रकार की वनस्पति लुप्त हुई अथवा नई पैदा हुई ?

– क्षेत्र में किसी प्रकार के जीव लुप्त हुए अथवा नये पैदा हुए ?

– जनसंख्या का स्थानान्तरण ?

– आत्महत्या/हत्या/नशा/लूट/चोरी आदि में नहर एक कारण

– समाज में असमानता बढ़ाने में योगदान

आपकी नजर में उपरोक्त समस्याओं का समाधान

.....

.....

.....

नहर आने के पश्चात् हुए परिवर्तन

क्या वर्षा, तापमान, व्यवसाय, पैदावार, उपज का स्वाद, स्वास्थ्य, रहन–सहन आदि में परिवर्तन देखते है ?

.....

.....

.....

Indian Streams Research Journal

ISSN: 2230-7850 Impact Factor : 4.1625(UIF) Volume - 6 | Issue - 11 | December - 2016

GEOSPATIAL APPLICATIONS IN LAND RESOURCE MANAGEMENT

Dr. Vandana Tyagi[1] and Kamal Navriya[2]
[1]Associate Professor , Head Of Department (Geog.) ,
S.D. PG College Muzaffarnagar (U.P)
[2] Research Scholar

ABSTRACT

Land' plays multidimensional role in maintaining many global process, therefore sustainable planning and management of land resources is an important issue in the world forum. Information on the nature, extent, and spatial distribution of lands resources is pre-requisite for ensuring optimal use of land resources for sustainable development, poverty alleviation and food security. The process of land resources management and associated decision-making invariably involves multiple objectives, multiple criteria and multiple social interests and preferences. Such complexity necessitates a systematic approach to the decision-making process to accommodate the multiplicity and multidimensionality of the problem to improve the reasonability of decisions and to justify the to be taken. Geospatial technologies like satellite remote sensing, Global Positioning System (GPS) and Geographic Information System (GIS) play a vital role in providing precise information on nature, extent, and spatial distribution of land resources to assess their potentials and limitations for planning and management towards sustainable development. The application of space technology are rapidly advancing in land resources inventory, mapping and generation of databases on a regular basis for better planning, management, monitoring and implementing the land use plans at large scales. GIS techniques are playing an increasing role in facilitating integration of multilayer spatial information with statistical attribute data to arrive at alternate development scenarios in sustainable management of land resources. The approach process in this research makes use of expert knowledge extensively to model land use suitability.To demonstrate the application of geospatial technology in land resources management, in this research, geospatial technologies in land resources inventory, mapping, evaluation and management including digital terrain database generation, hydrological analysis, Digital terrain modelling, soil resource inventory, soil loss assessment, watershed prioritization, land use system analysis and Spatio-temporal dynamics land use systems for sustainable land resource management have been discussed. Thus the use of modern geospatial technologies such as high resolution satellite data, GPS and GIS can be effectively used in land resources inventory, mapping, monitoring and management.

KEYWORDS:*Geographic InformationSystem, Land resource management, Geospatial technology.*

INTRODUCTION:

Geospatial technologies (photogrammetry, satellite remote sensing, Global Positioning System and Geographic Information System) play a vital role in providing precise information on nature, extent, and spatial distribution of land resources to assess their potentials and limitations for planning, monitoring and management towards sustainable development. High resolution remotely sensed data provide an

unparalleled view of the Earth for studies that require synoptic or periodic observations such as inventory, surveying, mapping and monitoring in land resources, land use/land cover and environment. The applications of space technology are rapidly advancing in land resources inventory, mapping and generation of databases on a regular basis for better planning, management, monitoring and implementing the land use plans at large scales. The integration of spatial data and their combined analysis could be performed through GIS and simple database query systems to complex analysis and decision support systems could be developed for effective land resource management. The scope and potential applications of geospatial technologies in inventory, mapping and management of land resource for land use planning and food security have been discussed with few examples.

DIGITAL TERRAIN DATABASE GENERATION

Geospatial technology play significant role in development of digital terrain database in replacing the qualitative and nominal characterization of topography. The availability of satellite based new topographic datasets has opened new venues for hydrologic and geomorphologic studies including analysis of surface morphology (Frankel and Dolan, 2007). Seamless mosaic of Shuttle Radar Topographic Mission (SRTM) digital elevation data (90m) for India has been developed at NBSS&LUP to analyse and characterize the selected geomorphological parameters namely slope, aspect, hill shade, plane curvature, profile curvature, total curvature, flow direction, flow accumulation and topographic wetness index at state and agro-ecological regions of India (Reddy et al., 2011). Nowadays, several satellite based DEMs like SRTM 90m, ASTER 30m and Cartosat DEM 30m are available for the public but the choice of the DEM, which better suits the target of the study is crucial.

SURFACE AND SUB-SURFACE HYDROLOGICAL ANALYSIS

The remote sensing and GIS tools have opened new paths in large scale hydrological studies. The high resolution DEMs have immense potential in generation of detailed drainage pattern, 3-D perspective views, viewshed analysis and other terrain variables, which can be used as a input in land resource inventory, mapping and management. Temporal data from remote sensing enables identification of groundwater aquifers and assessment of their changes along with the land use changes, whereas, GIS enables integration of multi-thematic data. Analysis of surface and sub-surface hydrological parameters through analysis of remotely sensed data in conjunction with field surveys provides a mechanism to identify hydro-geomorphological units.

DIGITAL TERRAIN MODELING

Digital terrain modelling has many applications in hydrological and geomorphological studies (Moore et al., 1991) . Delineation of terrain parameters, such as drainage network and watershed boundaries from collateral data and remotely sensed data crucially depends on generation of an accurate DEM. DEM have been used in terrain analysis and it involves both interactive and interpretative methods, requiring repeated visualization of the resulting classified maps and adjustment of classification parameters.

Moreover, it is specific to physiographic units having similar topographic and geologic characteristics affecting geomorphic and hydrologic processes. Landform analysis with respect to their nature, extent, spatial distribution, potential and limitations is very useful for evaluation and optimal utilization of land resources. In quantitative approach for landform mapping and classification based on high resolution DEMs, slope, elevation range, contours and stream network pattern can be used as basic identifying parameters. High resolution satellite data provides reliable source of information to prepare comprehensive and detail inventory of landforms (Reddy and Maji, 2003) and land degradation mapping (Reddy et al., 2004a).

SOIL RESOURCE INVENTORY

Soil survey provides an accurate and scientific inventory of different soils, their kind and nature, and extent of distribution so that one can make prediction about their characters and potentialities (Manchandaet al., 2002). Landform units have been used as basic landform descriptors in soil resource mapping. GIS application in soil survey and mapping can be divided into two parts. Firstly, a detailed landform map, derived from topographical sheets and satellite data analysis through visual interpretation, can be prepared to form a base map in soil survey, which shows spatial variation in terrain features and their characteristics. Secondly, based on the interpretation, the potentials and limitations of the soils can be obtained and such information can be used to construct geospatial database in GIS.

LAND EVALUATION

Land suitability evaluation is an examination process of the degree of land suitability for a specific utilization type (Sys et al., 1991). Since land suitability analysis requires the use of different kind of data and information (soil, climate, land use, topography, etc.), the GIS offers a flexible and powerful tool than conventional data processing systems, as it provides a means of taking large volumes of different kinds of data sets and combining the data sets into new data sets. Matching of the land attributes with the specific crop growth requirements and definition of the preliminary suitability classes was workout.

SOIL LOSS ASSESSMENT

Soil erosion is a major concern in landscape management and conservation planning. Geospatial technologies play a critical in the generation of spatial data layers and their integration to estimate soil loss by adopting the suitable models like Universal Soil Loss Equation (Wischmeier and Smith, 1978). GIS techniques have been used extensively in quantification of USLE parameters to estimate soil erosion. The factors of rainfall erosivity (R), soil erodibility (K), slope length (LS), cover (C) and management (P) are the components of USLE and can be computed in GIS using rainfall data, series-wise soil information, slope generated from contours, land use/land cover interpreted from remotely sensed data and field data, respectively. GIS helps in integrated analysis of USLE parameters in quantification of potential and actual soil loss (Reddy, et al., 2004b).

WATERSHEDS PRIORITIZATION

Remote sensing and GIS techniques have been used extensively in quantification of USLE (R, K, LS, C and P) parameters for soil loss assessment (Biswaset al., 1999). These layers can be integrated in GIS to quantify potential and actual soil loss. Computation of morphometric parameters and USLE parameters at watershed level in GIS has been found very useful in evaluation of erosion characteristics for their prioritization(Reddy et al., 2004b).

The comparative analysis of ranks obtained from morphometric, estimated potential and actual soil loss parameters shown good inter-relationships and the ranks of morphometric parameters were considered to accretion the validity of ranks obtained from USLE parameters.Further, the erosion susceptibility zone map generated by grouping the watersheds based on their ranks has been used in identification of priority zones for the evaluation and suggestion of soil conservation measures.

LAND USE SYSTEMS ANALYSIS

Land use information is a key input to a wide range of interventions on issues of local to global interest, including land degradation, climate change, food security, poverty and environmental sustainability. A land utilization type is a kind of land use described or defined in a higher degree of detail than that of a major kind of land use, as an abstraction of actual land use systems, which may be single, compound or multiple. Land use system is a complex system, which is determined by the interaction in space and time of biophysical factors and human factors at different scales. Land use system is composed of one land utilization type practiced on one land unit, complex forms of land use systems are aggregations of different single land use systems. Land use systems are dynamic, change over time and space through natural and human induced interventions and their analysis must account the dynamics of the system (Driessen and Konijn, 1992). The spatial and temporal patterns of land use succession can be studied using spatially referenced land use data from two or more dates.

Precise spatio-temporal information on land use systems is essential to analyse their dynamics for their optimal use and sustainable management. At farm and regional level, systems approaches have made eco-regional studies possible, where new tools such as GIS can help to organize and utilize huge data bases that can be made more valuable through the use of systems models for interpretation. Systems approaches have become important tools in agricultural research for crop management and planning (Kropff et al., 1997). GIS applications provide newer dimensions in characterization, spatio-temporal analysis and monitoring of land use systems in an integrated manner.In order to generate geospatial database on land use systems, parcel level land use data has been collected from 1985-86 to 2005-06 at five year interval. To understand the spatio-temporal changes and land transformation processes of different land use systems in detail, the parcel wise secondary data on land use for kharif and rabiseasons has been collected during the field surveys from the respective village records for a period of 25 years (1980-81 to 2005-06) ie., 1980-81, 1985-86, 1990-91, 1995-96, 2000-01 and 2005-06 at five year interval in the watershed.

Parcel level database has been designed and developed in GIS to generate spatio-temporal agro- informatics on land use systems for the selected years. To identify and characterize the different land use systems, land use classes were identified in kharifand rabiseasons, then combined them to identify the different land use systems in a year. Based on the parcel level temporal data on land use, the land use systems have been characterized in GIS to identify different land use systems and to analyze their spatio-temporal changes over a period of 25 years (1980-81 to 2005-06) at five year interval. Major land use systems have been identified to analyze their spatio-temporal patterns and land transformation processes over a period of 25 years (1980-81 to 2005-06) at five year interval.

The analysis of arable land use systems in Mohari watershed has been carried out for the year 1980-81 to 2000-01 and analysis shows that irrigated rice under tanks, canals and rainfed rice, rice/pigeonpea (pigeonpea cultivating along the bunds) are the main crops and to some extent sorghum, maize and vegetables are cultivated in kharif season under rainfed conditions (Reddy et al., 2008). Majority of the rice cultivated area is in association with deep to very deep soils upper, middle and lower depositional plains, narrow valleys and main valley floor. Along the valleys, the other crops like vegetables and banana are also cultivated under irrigated conditions. Sorghum, wheat, bengal gram, linseed and some extent irrigated rice and vegetables under wells are growing in the rabi season.

SPATIO-TEMPORAL DYNAMICS OF LAND USE SYSTEMS

In Mohari watershed, the spatio-temporal changes and land transformation processes over a period of 25 years (1980-81 to 2005-06) shows that area under rainfed rice-fallow system has been reduced from 31.0 to 14.1 per cent. At the same time area under irrigated rice-fallow system has been increased 12.3 to 32.4 per cent. This phenomenal shift might be due to introduction of canal irrigation in the mid 1980's. The area under rainfed rice-sorghum/wheat/bengal gram/linseed systems has been reduced from 3.0 to 0.8 per cent. During same time the area under rice/pigeonpea-fallow system under irrigated condition has been increased from 0.1 to 1.2 per cent. The area under rice-vegetables system (irrig.) has been increased marginally from 0.3 to 0.4 per cent. Further, analysis indicates that single cropped area has been increased by 6.9 per cent over a period of 25 years in the watershed. At the same time the sharp decline was noticed in double cropped area by reduction of over 41.5 per cent. The net cultivable area is increased marginally by 1.0 per cent over a period of 25 years.

Similarly, the marginal reduction of 3.6 per cent has been noticed in gross cropped area. At the same time, due to reduction in double cropped area, the overall cropping intensity was reduced by 5.1 per cent.

The spatio-temporal analysis shows that the majority of the area under rainfed rice has been transformed under irrigated rice over a period of 25 years (1980-81 to 2005-06) due to introduction of canal irrigation. The traditional land use systems like sorghum-fallow and sorghum-wheat/bengal gram/linseed have been totally replaced by other systems. At the same time the sharp decline was noticed in double cropped area by reduction of over 41.5 per cent.

Due to reduction in double cropped area, the overall cropping intensity was reduced by 5.1 per cent. It was observed that after introduction of canal system, rice-fallow (irrig.) system emerged as a major land use system in the watershed.

The study demonstrates the potential of geospatial technologies in spatio- temporal analysis of land use systems and land transformation processes, which in turn helps to plan and manage them for optimum utilization of land resources in order to achieve sustained production levels.

CONCLUSIONS

The use of modern geospatial technologies such as high resolution satellite data, GPS and GIS can be effectively used in land resources inventory, mapping, monitoring and management. The satellite data provides integrated information on landforms, geological structures, soil types, erosion, land use/land cover, surface water bodies and qualitative assessment of groundwater potentials. Geospatial technologies can be effectively used in generation of digital terrain database, inventory and mapping of landforms, soils, land use systems, soil suitability evaluation, soil loss assessment and prioritization of watersheds.

REFERENCES

1.Biswas, S., Sudhakar, S. and Desai, V.R. (1999). Prioritization of sub watersheds based on Morphometric analysis and drainage basin: A remote sensing and GIS approach, Journalof Indian Society of Remote sensing Vol.27, No.3: 155-166.

2.Driessen, P.M., &Konijn, N.T., (1992). Land use systems analysis. Dept of Soil Science and Geology, Wageningen Agricultural University, 216 pp.

3.Frankel, K. L. and Dolan, J. F. (2007).Characterizing arid region alluvial fan surface roughness with airborne laser swath mapping digital topographic data.Journal of GeophysicalResearch, 112, F02025.

4.Kropff, M.J., Teng, P.S., Aggarwal, P.K., Bouma, J., Bouman, B.A.M., Jones, J.W., van Laar, J.W., (eds). 1997. Applications of systems approaches at the field level. Volume 2. Dordrecht (Netherlands): Kluwer Academic Publishers. 465 p.

5.Manchanda, M. L., Kudrat, M. and Tiwari, A. K. (2002). Soil survey and mapping using remote sensing, Tropical Ecology 43(1): 61-74

6.Moore, I. D., Grayson R. B. and Ladson, A. R. (1991). Digital Terrain Modelling: A Review of Hydrological, Geomorphological, and Biological Applications, Hydrological Processes, 5(1): 3-30.

7.Reddy, G. P. O. and Maji, A. K. (2003). Delineation and Characterization of Geomorpholo-gical features in a part of Lower Maharahstra Metamorphic Plateau, using IRS-ID LISS-III data, Journal ofthe Indian Society of Remote sensing, Vol.31 (4):241-250.

8.Reddy, G. P. O.,Maji, A. K. and Gajbhiye K. S. (2004a).DrainageMorphometry and Its Influence on Landform Characteristics in Basaltic Terrain – A Remote Sensing and GIS Approach.International Journal of Applied Earth Observation and Geoinformatics, Vol.6 (1):1-16.

9.Reddy, G. P. O.,Maji, A. K., Chary, G. R., Srinivas, C.V., Tiwary, P. and Gajbhiye, K. S. (2004b). GIS and Remote sensing Applications in Prioritization of River sub basins using Morphometric and USLE Parameters - A Case study. Asian Journal of Geoinformatics, Vol.4 (4): 35-49.

10.Reddy, G. P. O., Maji, A. K., Nagaraju, M. S. S., Thayalan, S. and Ramamurthy, V. (2008). Ecological evaluation of land resources and land use systems for sustainable development at watershed level in different agro-ecological zones of Vidarbha region, Maharashtra using Remote sensing and GIS techniques, Project Report, p. 270, NBSS&LUP, Nagpur, India.

11.Reddy, G. P. O., Maji, A. K., Srivastava, R. and Das, S.N. (2011).Development of GIS based Seamless Mosaic of SRTM Elevation Data for India to analyse and characterize the selected geomorphometric parameters, Project Report, NBSS&LUP, Nagpur, pp 1-54.

12.Sys, C., Vanranst, E. and Debvay, J. (1991). Land Evaluation, Part: III. General Adminstration for Development Coopration Agriculture, Brussels, Belgium.

13.Wischmeier, W.H. and Smith, D.D. (1978). Predicting rainfall erosion losses - A guide toconservation planning, USDA Agricultural Handbook No. 587.

IJCRT

International Journal for Current Research and Techniques

ISSN: 2348-4446 (Print)
ISSN: 2349-3194 (Online)

Internationally Indexed

Peer Reviewed

Multidisciplinary

Published By
Parth Earth & Environment Consultancy (PE&E)

35/23, Rajat Path, Mansarovar
Jaipur Rajasthan, INDIA
Email: raih56@yahoo.in
parth.raih@gmail.com
Contact: +91-99292-44894

Vol. 03/ Issue 03/ September 2016
Frequency: Quarterly
Language: English and Hindi
www.ijcrt.org

IJCRT

INDEX

S.N	TITLE	AUTHORS	Pg. N.
1	DEVELOPMENT OF THEORETICAL FRAMEWORK FOR ANALYZING USER ACCEPTANCE OF MOBILE BANKING IN INDIA	Ganpat Joshi	1-8
2	IMPACT OF SERVICE QUALITY ON CRM IN THE BANKING SECTOR OF UDAIPUR CITY	Dr.Mohit Wadhwani Dr. Lokesh Mali	9-18
3	Land Use changes in Urban Fringe of Jodhpur City	Hemraj Mahawar	19-28
4	जयपुर नगर निगम चुनाव 2004, 2009 एवं 2014 के मतदान व्यवहार का तुलनात्मक विश्लेशण	Sudhir Baswal	29-39
5	भूमि उपयोग परिवर्तन की प्रवृति (आमेर तहसील का एक भौगोलिक अध्ययन)	डॉ. गोविन्दराम यादव अमित शर्मा	40-46
6	पर्यटन की विविधताओं एवं संभावनाओं से सम्पन्न हिल स्टेशन माउण्टआबू	डॉ. सरीना कालिया नन्दकिशोर मीना	47-50
7	बांडी नदी बेसिन की चौमूं तहसील में जनसंख्या दबाव एवं भूमि उपयोग में बदलाव	उमेश कुमार	51-58
8	गगांनगर जिले में कृषि की नवीन तकनीकी का पारिस्थितिकीय प्रभाव	Kamal Navriya	59-66
9	सांगानेर तहसील में भूमि उपयोग की स्थानिक -कालिक गत्यात्मक (1991-2011)	अश्वनी कुमार मीना डॉ.आर.के.मोर्य	67-75

International Journal for Current Research and Techniques
ISSN 2348-4446 (Print), 2349-3194 (Online)
Vol. III, Issue III, July – September 2016

गगांनगर जिले में कृषि की नवीन तकनीकी का पारिस्थितिकीय प्रभाव

Kamal Navriya
Research Scholar, Department of Geography
University of Kota

मानव, कृषि, जलवायु, भूमि एवं सभी जीव–जन्तु मिलकर पारिस्थितिकी का निर्माण करते है। पारिस्थितिकी एक क्रियाशील अवधारण है इसमें जीवों व उनके पर्यावरण के मध्य आदान–प्रदान का क्रम चलता रहता है अर्थात पारिस्थितिकी उन समस्त घटकों का समूह है जो जीवों के एक समूह की क्रिया प्रतिक्रिया में योगदान देते है। फ्रेसर डालिंग (1963) के अनुसार पारिस्थितिकी समस्त पर्यावरण के संदर्भ में जीवों का उनके अन्तर्जातिय एवं आपसी संबंधों का विज्ञान है। जिसमें वनस्पति एवं जीव–जन्तुओं के साथ ही मानव को भी सम्मलित किया जाता है, मानव कृषि पर आधारित प्राणी है।

किसी क्षेत्र की कृषि पारिस्थितिकी पर कृषि में नवीन तकनीकियों के प्रभावों का अध्ययन कर उसके सदुपयोग में ही राष्ट्र की सुरक्षा है अतः कृषि में नवीन तकनीकी का पारिस्थितिकी पर प्भाव को परिलक्षित करना बहुत जरूरी है।

कृषि में नवीन तकनीकी प्रयोग की शुरूआत 19वीं सदी के छठे दशक से हो चुकी थी जिसके परिणामस्वरूप प्रथम हरित क्रांति को देखा जा सकता है जिसके बाद लगातार कृषि में नवीन तकनीकी का प्रयोग यांत्रिक एवं जैविकीय रूप से किया जा रहा है जिससे कृषि में पैदावार बढ़ रही है फलस्वरूप हम खाद्यानों में आत्मनिर्भता प्राप्त कर रहे है । किसान परंपरागत कृषि तकनीकों से उठ कर नवीन तकनीकों का प्रयोग कर रहा है जिससे उसका आर्थिक स्तर उँचा उठ रहा है ।

बंजर एवं अनुपजाऊ भूमि को कृषि के नवीन तकनीकों द्वारा उपजाऊ बनाया जा रहा है, साथ ही सिंचाई में नवीन तकनीकों का प्रयोग निरंतर किया जा रहा है जिससे कृषि उतपादकता बढ़ी है परिणामस्वरूप बढ़ती जनसंख्या को खाद्य सुरक्षा प्राप्त हो रही है इस प्रकार कृषि में नवीन तकनीकों का जहाँ सकारात्मक प्रभाव पड़ा है, वही नकारात्मक प्रभाव भी पड़ रहा है।

कृषि में नवीन तकनीकों का प्रयोग कर जंगलों को काटकर कृषि योग्य खेतों व फार्मों का निर्माण किया जा रहा है। कृषि में नवीन तकनीकों का प्रयोग द्वारा अब प्रतिवर्ष 2 से 3 फसलों का उत्पादन किया जा रहा है जिससे मृदा की उर्वरकता में कमी होती जा रही है और फसल चक्र को अनदेखा किया जा रहा है। पैदावार बढ़ाने के लिए लगातार संकर बीजों का प्रयोग किया जा रहा है, जिस कारण सिंचाई के लिए अधिक पानी की आवश्यकता बढ़ी है जो कि राजस्थान के सदंर्भ में नकारात्मक प्रभाव डालती है।

कृषि में नवीन तकनीकों के अन्तर्गत जीवाश्म ईंधन का प्रयोग बढ़ा है, जिससे पर्यावरण प्रदूषण की समस्या ने जन्म लिया है। वर्तमान कृषि में जैविक खाद के स्थान पर रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग किया जा रहा है जिससे मृदा की उत्पादक क्षमता पर नकारात्मक प्रभाव पड़ा है साथ ही मिट्टी में पाये जाने वाले मित्र कीटों पर बुरा प्रभाव पड़ा है। कृषि में नवीन तकनीकों के अन्तर्गत फसलों में परंपरागत कीटनाशकों के स्थान पर विषैलें रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग किया जाने लगा है जिसका दुष्प्रभाव फसलों के साथ पर्यावरण में उपस्थित समस्त जीवों पर भी पडता है जिससे पारिस्थितिकी खाद्य श्रृंखला प्रभावित होती है।

कृषि के नवीन तकनीकों के अन्तर्गत जेनेटिक मोडिफाइड बीजों का प्रचलन भी बड़ा है जिसका दुष्प्रभाव उत्पादों के प्रयोगकर्ता व पर्यावरण पर भी पड़ रहा है, कृषि की नवीन तकनीकी के अन्तर्गत केवल निश्चित फसलों का ही उत्पादन किया जा रहा है, जिससे पर्यावरण में फसल विशेष के कीटों की संख्या में बढ़ोतरी होती चली जा रही है।

इस प्रकार वर्तमान में कृषि में नवीन तकनीकों का प्रयोग युद्व स्तर पर किया जा रहा है जिसके कारण पौष्टिक आहार में कमी, भूमि प्रदूषण व अपरदन, जैविक विनाश, जलवायु में परिर्वतन एवं खाद्य श्रृंखला में बदलाव के साथ–साथ मानव शरीर को अनेक बीमारियों से ग्रसित कर दिया है। कृषि में नवीन तकनीकों के कारण एक तरफ अधिक परिर्वतन से कृषि का संतुलन बिगड़ा है वही जनाधिक्य के लिए खाद्यानों में आत्म निर्भरता प्राप्त कि है जो हमे खाद्य सुरक्षा प्रदान करता है।

प्रस्तुत शोध ग्रंथ में गंगानगर जिले की कृषि में प्रयुक्त की जाने वाली नवीन तकनीकियों एवं उनके पारिस्थितीकीय प्रभाव को जाने का प्रयास किया जाना प्रस्तावित हैं। जिसके अन्तर्गत कृषि, नवीन तकनीक एवं पारिस्थितीय प्रभाव को एवं इनके परस्पर अन्तसम्बन्धों को जानने का प्रयास किया गया हैं। अतः शोध कार्य को प्रभावी रूप से सम्पन्न करने के लिये सबसे पहले इनका अवधारणात्मक अध्ययन करना अत्यन्त आवश्यक है। क्योंकि कृषि, नवीन तकनीक, मानव, पारिस्थिति सभी भौगोलिक तत्व परस्पर अन्तः एवं अर्न्तसम्बिन्धित है।

अध्ययन क्षेत्र गंगानगर जिले में कृषि क्षेत्र में अत्याधिक आधुनिक तकनीकी के प्रयोग से जो परिणाम निकलकर सामने आ रहे हैं, उसका प्रभाव न सिर्फ मानव पर बल्कि मिट्टी, जल, हवा, जीव–जन्तु, पेड़–पौधों सभी पर नजर आ रहा हैं। **नूस्फेयर के अनुसार** मनुष्य द्वारा तीव्रगति से कार्य करने, शीघ्र परिणाम प्राप्त करने से पर्यावरणीय प्रक्रम प्रभावित हो रहे हैं एवं ऊर्जा प्रवाह, तत्व संचरण रासायनिक चक्र आदि के द्वारा पारिस्थितिक तंत्र में सन्तुलन बना रहता है। मनुष्य का हस्तक्षेप इनकी क्रियाओं को अव्यवस्थित कर रहा है, जिससे पर्यावरण असन्तुलन की ओर अग्रसर है। प्रस्तुत अध्ययन में गंगानगर जिले में कृषि क्षेत्र में प्रयोग की जा रही नवीन तकनीके एवं उनके प्रभावों को जानने का प्रयास किया गया है कि वहाँ नवीन तकनीक ने पारिस्थितिकीय परिवर्तन एवं प्रभाव उत्पन्न किये है। जिससे मनुष्य, जीव–जन्तु, पेड़–पौधे वहाँ की मिट्टी, जल, सभी परिवर्तित हो रहे हैं उन्ही प्रभावों को और इससे उत्पन्न समस्याओं को प्रस्तुत शोध में समझने का प्रयत्न किया गया है।

उद्देश्य

अध्ययन के निम्न उद्देश्य रखे गये है–

1. जिलों के वर्तमान कृषि स्वरुप एवं संसाधनों का संख्यात्मक एवं गुणात्मक स्वरुप को प्रस्तुत करना।
2. कृषि आधुनिकीकरण के लिए उपलब्ध आधारभूत सुविधाओं का क्षेत्रीय आंकलन करना।
3. जिलों में वर्तमान कृषि आधार पर भविष्य के विकास के लिए उचित सुझाव प्रस्तुत करना।
4. कृषि में नवीन तकनीकों के उपयोग का पारिस्थितिकीय प्रभाव को ज्ञात करना।

परिकल्पानाऐं

वर्तमान अध्ययन में निम्नलिखित परिकल्पनाओं की जांच करने का प्रयास किया गया है–

1. कृषि में लगी हुई जनसंख्या एवं ट्रैक्टरों की संख्या में प्रत्यक्ष सम्बन्ध है।
2. जहाँ सिंचित क्षेत्र अधिक है उन क्षेत्रों में ट्रेक्टरों की संख्या भी अधिक हैं।
3. कृषि विकास उन्हीं क्षेत्रों मे हुआ जहाँ कृषि की दृष्टि से नवीन तकनीकी का उपयोग किया है।
4. शुद्ध बोया गया क्षेत्र व सिंचित क्षेत्र में समान रूप से वृद्धि हुई है।
5. जैसे–जैसे कृषि की नवीन तकनीकी बढ़ती जा रहा है वैसे–वैसे खाद्य फसलों के क्षेत्रों में कमी होती जा रही है।

अध्ययन क्षेत्र

कृषि में नवीन तकनीकियों के अत्यधिक प्रयोग के कारण अध्ययन क्षेत्र के रूप में राजस्थान राज्य के गंगानगर जिले का चयन किया गया है। राजस्थान क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत का सबसे बडा राज्य है जो भारत का कुल क्षेत्र का 10.41 प्रतिशत है। राजस्थान $23^{0}3'$ से $30^{0}12'$ उत्तरी अंक्षांश तथा $69^{0}30'$से $78^{0}17'$ पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है। राजस्थान उत्तर–पश्चिमी मरूस्थलीय प्रदेश, मध्यवर्ती अरावली पर्वतीय प्रदेश पूर्वी मैदानी प्रदेश एवं दक्षिण पूर्वी पठारी प्रदेश में विभाजित है।

आंकडो के स्रोत विधि तंत्र

प्रस्तुत शोध संबंधित आंकड़ों को एकत्रित करने के लिए प्राथमिक, द्वितीय और स्रोतों का प्रयोग किया है। शोध मुख्यतः आंकडों के प्राथमिक स्रोंत पर आधारित रहेगा जिसे निम्न तरीकों से प्राप्त किया जाता है–

1. जिलों का सर्वेक्षण
2. चयनित क्षेत्रों का सर्वेक्षण
3. कृषकों, ग्रामीणों एवं सरकारी पदाधिकारियों के साथ बातचीतों एवं साक्षात्कार द्वारा।

द्वितीयक स्रोतों द्वारा आंकड़ों का संग्रहण मुख्यतः सरकारी प्रतिवेदनों, विभिन्न कृषि बुलेटिनों और कृषि संबंधित पत्र–पत्रिकाओं द्वारा किया जायेगा।

अध्ययन के सही परिणाम प्राप्त करने के लिए एकत्रित अव्यवस्थित आंकडों का संक्षेपण, सारणीयन और विश्लेषण करके विभिन्न गणितिय व सांख्यिकीय सूत्रों का प्रयोग किया जायेगा। अध्ययन क्षेत्र में कृषि का अध्ययन के लिए सारणी और मानचित्रों द्वारा अध्ययन को प्रस्तुत किया जायेगा। कृषि उत्पादन के दशक 2010–2011 को आधार मानकर मानक वर्ष 2010–2011 में आये दशकीय सामाजिक परिवर्तन से सम्बन्धित अध्ययन किया गया है तथा जिलों को क्षेत्रीय इकाई आधार मानकर कृषि के विभिन्न आयामों का अध्ययन किया तथा विविध गणितिय एवं सांख्यिकी सूत्रों द्वारा अध्ययन का विश्लेषण किया जायेगा। एवं अध्ययन को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए मानचित्रों, आरेखों का प्रयोग किया जायेगा।

प्रस्तुत अध्ययन में गंगानगर जिले में कृषि का नवीनीकरण एवं पारिस्थितिकी विश्लेषण देखने के लिए दो तथ्यों को चुना है।

1. सामयिक अन्तर देखना।
2. क्षेत्रीय अन्तर देखना।

सामयिक अन्तर देखने के लिए 1982–83 से 2000–2001 तक कृषि कार्यों और कृषि क्षेत्र में आये विभिन्न परिवर्तनों को तथा तकनिकीकरण के प्रभाव को आंकडों के अन्तर के आधार पर धनात्मक व ऋणात्मक रूप में प्रदर्शित किया जायेगा। क्षेत्रीय अध्ययन की विभिन्न कार्टोग्राफी विधियें के माध्यम से गंगानगर जिले कि विभिन्न तहसीलों में आयामों द्वारा दिखाया जायेगा।

अध्ययन के सही परिणाम प्राप्त करने के लिए विभिन्न स्थानों के आंकड़े एकत्रित करके अव्यवस्थित आंकड़ों का सर्वेक्षण, सारणीयन, विश्लेषण व परिवर्तन करके विभिन्न गणितीय व सांख्यिकीय सूत्रों को प्रयोग किया जायेगा। इन सांख्यिकीय सूत्रों में मुख्यतः औसत, समान्तर माध्य, प्रमाप–विचलन आदि विधियों की सहायता ली जायेगी। सामयिक क्षेत्रीय व संरचनात्मक प्रभाव देखने के लिए सांख्यिकीय आंकड़ों का अन्तर देखकर परिणाम प्राप्त किये जायेंगे। आंकड़ों व अध्ययन को अधिक प्रभावशाली बनाने के लिए मानचित्रों व आरेखों की सहायता ली जायेगी।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध में जिन द्वितीय आंकड़ों का सहारा लिया जायेगा वे आंकड़े सरकारी व गैर सरकारी विभिन्न संस्थाओं से संकलित किये जायेंगे इस शोध कार्य के लिए द्वितीय आंकडे निम्न स्रोतों से एकत्रित किये जायेंगे।

शोध अंतर्गत श्रीगंगानगर जिले में निम्नलिखित निष्कर्ष परिलक्षित पाए गए :–

1) जिले में अधिकतर सिंचाई नहरों एवं कुओं द्वारा होती है। यहां की नहरों में फसलों के लिए पानी पर्याप्त मात्रा में नहीं आता है तथा धरातल क जल भी पर्याप्त नहीं है। अनूपगढ़ तहसील के 76 प्रतिशत, घड़साना के 70 प्रतिशत, विजयनगर के 75 प्रतिशत और रायसिंहनगर के 67 प्रतिशत किसानों का मानना हैं कि यहां की फसलों के लिए सिंचाई जल पर्याप्त नहीं है।

अध्ययन क्षेत्र भारतीय थार मरूस्थल में अवस्थित है। जिसमे सिंचाई की पर्याप्तता के कारण फसलों का उत्पादन सम्पन्न हुआ है। यहां मुख्य रूप से नहरों तथा कुओं से सिंचाई होती है। क्षेत्र में होने वाली सिंचाई से कई प्रकार के लाभ है। 20 प्रतिशत किसानों का मानना हैं कि सिंचाई के उपरान्त जमीन में पर्याप्त नमी रहती है। 16 प्रतिशत किसानों का मानना हैं कि खाद्यान्न फसलों के उत्पादन में वृद्धि तथा वायु से अपरदन में कमी आई है। 13.27 प्रतिशत किसानों के अनुसार उत्पादन में वृद्धि एवं 14.77 प्रतिशत किसानों के यहां पशुओं की संख्या में वृद्धि हुई है और 16.8 प्रतिशत किसानों ने कहा कि क्षेत्र में फसलों को पर्याप्त पानी मिल जाता है तथा प्रतिशत किसानों के अनुसार रोजगार में वृद्धि हुई हैं।

2) अध्ययन क्षेत्र में सर्वेक्षण के दौरान सिंचाई के परिणामस्वरूप कृषि तथा पर्यावरण पर दुष्प्रभाव के बारे में स्थानीय निवासियों ने उत्सुकता से बताया। किसानों ने बताया जब सिंचाई शुरू हुई थी उस समय सिंचाई से हानि बिल्कुल भी नहीं थी, लेकिन जैसे–जैसे सिंचाई में विस्तार हुआ है, उनके साथ ही इसके द्वारा हानि भी होने लगी है। जैसे कीटों में वृद्धि एवं पर्यावरण प्रदूषण, सेम की आंषका, मिट्टी में क्षारीयपन, फसलों का कम उत्पादन आदि। क्षेत्र में 38.87 प्रतिशत हानि कीटों में वृद्धि एवं पर्यावरण प्रदुषण से हुई है। 16.08 प्रतिशत किसानों ने बताया कि मिट्टी में क्षारीयपन में वृद्धि हुई है, 18. 87 प्रतिशत हांनि कम उत्पादन से हो रही है तथा 16.75 प्रतिशत किसानों ने बताया कि क्षेत्र में सेम के विस्तार से फसलों में हानि हो रही है। क्षेत्र सर्वेक्षण का अध्ययन करने से ज्ञात हुआ हैं कि क्षेत्र में कृषि की कई समस्याओं का जन्म सिंचाई के उपरान्त हुआ है जिले में अधिक सिंचाई के कारण सेम की समस्या पैदा हुई हैं।

3) कृषि की समस्याओं में अपरदन, अनिश्चित सिंचाई, भूमि का समतल न होना, क्षारीयता, मिट्टी की कम उर्वरता एवं कृषि जोत का छोटा आदि। ये सब समस्याएं मिलकर कृषि प्रारूप एवं उत्पादन को प्रभावित कर रही हैं।

4) जिले के सिंचित क्षेत्रों में फूलों तथा फलों में कीड़ों का उत्पन्न होना एक गम्भीर समस्या है। इन कीड़ों से फलों एवं फसलों में बड़ी–बड़ी लटें पड़ जाती है तथा कुछ क्षेत्रों में दीमक उत्पन्न हो जाती है, जिससे उत्पादन में कमी होती है। हाल ही में इस क्षेत्र के कपास में "मिलीबग" नाम की एक नई बीमारी आई हुई है, जिसने उत्पादन को बहुत अधिक प्रभावित किया है। क्षेत्र में कई प्रकार की कीटनाशकों का प्रयोग किया जा रहा है। जिसमे ट्रेसर, मोनोसिल, रोगोर, मेलाथीन तथा कई अन्य प्रकार की दवाईयों का प्रयोग किया जाता है।

5) जिले के किसानों के अनुसार आज से 35 वर्ष पूर्व यहां के गांवों के आस–पास काफी बड़े–बड़े चारागाह पाये जाते थे। लेकिन जैसे–जैसे जनसंख्या में वृद्धि हुई है, इनके साथ–साथ सिंचित क्षेत्र भी बढ़ा है, जिसके कारण चारागाह क्षेत्र कम होते जा रहे है। क्षेत्र के 93 प्रतिशत किसान यह मानते हैं कि सिंचाई के उरांत चारागाहों का क्षेत्रफल कम हुआ है। जिले के 7 प्रतिशत किसान यह मानते हैं कि क्षेत्र में चारागाहों की स्थिति पहले जैसी है, उसमें कोई खास परिवर्तन नहीं आया है। इन्होंने बताया कि चारागाहों की तो कमी हुई है लेकिन सिंचित क्षेत्रों में चारें का उत्पादन बढ़ा हैं।

6) क्षेत्र में 23.85 प्रतिशत छोटी जोतों की समस्या है तथा 10.25 प्रतिशत किसानों के यहां क्षारीयता की समस्या बनी हुई है। 5.70 प्रतिशत किसानों के खेतों में सेम की समस्या है। 16.38 प्रतिशत किसानों ने बताया कि उसके खेतों में मिट्टी की कम उर्वरता की समस्या है।

7) अध्ययन क्षेत्र में कीटनाशकों का प्रभाव काफी पड़ा है। किसानों ने बताया कि सिंचाई उपरांत यहां कीटनाशकों का अधिक प्रयोग होने लगा ह। जिस कारण यहां का पर्यावरण कीटनाशकों से दूषित हो रहा है। किसानों ने बताया कि कीटनाशकों का दुष्प्रभाव जमीन पर भी पड़ा है। क्षेत्र अध्ययन के अनुसार 71 प्रतिशत किसानों के अनुसार बुरा प्रभाव पड़ रहा है, 7.20 प्रतिशत किसानों ने बताया कि प्रभाव सामान्य ही है, इसका प्रत्यक्ष असर नही है जबकि 21.80 प्रतिशत किसानों के अनुसार इसका दुष्प्रभाव नही के बराबर है। इस प्रकार अध्ययन क्षेत्र के किसानों ने कीटनाशकों का मिश्रित प्रभाव बताया हैं।

8) सर्वेक्षण से प्राप्त आंकड़ों के अनुसार पिछले दो–तीन दशकों से यहां पर्यावरण का अवनयन हो रहा है। लगभग दो–तिहाई किसानों के मतानुसार स्थिति गंभीर बनी हुई हैं। यहां पर कीटनाशक, रासायनिक खाद, वनों में कमी, अधिक सिंचाई आदि के कारण पर्यावरण प्रदूषण अधिक हो रहा है। 80.80 प्रतिशत किसानों के अनुसार प्रदूषण बढ़ रहा हैं। 3.80 प्रतिशत के अनुसार प्रदूषण कम हुआ है, 15.4 प्रतिशत के अनुसार स्थिति पहले जैसी ही हैं।

9) पर्यावरण एक जटिल पारिस्थितिकी तंत्र है जिसने पादप एवं जीव–जंतुओं की विविध प्रजातियों का उद्भव होता है। अनुकूल प्राकृतिक परिस्थितियों में इसका विकास एवं विस्तार होता है। प्रत्येक प्रजाति की एक विशिष्ट संरचना होती है। जैव विविधता पारिस्थितिकी तंत्र का आधार है। इस पर संकट आने से पारिस्थितिकी का संतुलन खतरे में पड़ जाता है। अतः जैव विविधता के प्रति आज सम्पूर्ण विश्व सचेत हैं।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

गुप्ता, एन.एल. (1979) "राजस्थान में कृषि का विकास" हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।

मोधे बसन्त, (1985) "राजस्थान में कृषि उत्पादन" हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर।

सिंह, छिद्दा (1984) "खरीफ की फसलों की वैज्ञानिक खेती एवं फसल परिस्थितिकी", भारती भारत प्रकाशन, मेरठ।

सक्सेना, के.सी.शर्मा (1976) "शस्य विज्ञान के आधुनिक सिद्धान्त अनुवाद एवं प्रकाशन निर्देशालय", गोविन्द बल्लभ पंथ विश्वविद्यालय, पन्तनगर, उत्तर प्रदेश।

साधना कोठारी (1999), "एग्रीकल्चर लैण्ड यूज एण्ड पॉपुलेशन ए ज्योग्राफिकल एनालायसिस", उदयपुर शिवा पब्लिसर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स।

ओ.एस.श्रीवास्तव (1996), एग्रीकल्चर इकोनोमिक्स", रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर।

ओ.एस. श्रीवास्तव (1995), "नेशनल एण्ड इन्टर स्टेट डवलपमेंट ऑफ एग्रीकलचर इन इंडिया", पोइन्टर पब्लिकेशन्स, जयपुर।

सुखपाल सिंह (2004), "क्राइसिस एण्ड डाइवरसिटीफिकेशन इन पंजाब एग्रीकल्चर–रोल ऑफ स्टेट एण्ड एग्रीबिजिनेस", पंजाब।

सी.के.जैन, (1988), "पैटर्नस ऑफ एग्रीकल्चर डवलपमेन्ट इन मध्यप्रदेश", नोरथन बुक सेन्टर नई दिल्ली।

इन्द्रपाल एवं लक्ष्मी शुक्ला (1981) "चेन्जिंग एग्रीकल्चर लैण्ड यूज इन दी दिल्ली ट्रेक्टर्स ऑफ राजस्थान", कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली।

भल्ला एल.आर. (2009) : "राजस्थान का भूगोल", कुलदीप पब्लिकेशन, जयपुर।

शर्मा एच.एस. (2008): "राजस्थान का भूगोल" पंचशील प्रकाशन, जयपुर।

पी.एस.गुप्ता, डॉ राजमल शर्मा (2006): "भारतीय संसाधन एवं प्रादेशिक विकास",. माध्यमिक शिक्षा बोर्ड, अजमेर।

सिंह काशीनाथ तथा जगदीश सिंह (1984) : "आर्थिक भूगोल के मूल तत्व",

एस.सी. कलवार (2002) : "रिसोर्स एण्ड डवलोपमेन्ट" पोस्टर पब्लिषर्स।

चौहान, तेजसिंह (1999) : "राजस्थान का भूगोल" विज्ञान प्रकाशन, जयपुर।

शर्मा, एच.एस. एवं. एम. एल. (2004) : राजस्थान भूगोल", पंचशील प्रकाशन, जयपुर।

सिंह, यशपाल (2004) : "भूगोल" केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड कक्षा ग्याहवीं एवं बाहरवीं, बी. के. एन्टरप्राईजेज, नई दिल्ली।

सक्सेना एस. एम. (1989) : "पर्यावरण भूगोल" रावत पब्लिकेशन, जयपुर।
सिंह, रविन्द्र (2003) : "पर्यावरण भूगोल" प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद।

कैलाश नाथ नागर (2001) : "सांख्यिकी के मूल तत्व" मिनाक्षी प्रकाशन, मेरठ।

एस. सी. गुप्ता एण्ड वी. के. कपूर (2000) : "फन्डामेण्टब्ल ऑफ मैथमेटिकल स्टेटिसटिक्स", सुलतान चन्द एण्ड संस पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली।

भल्ला, एस.आर. (2000) : राजस्थान का भूगोल, अजमेर, कुलदीप पब्लिकेशन्स।

चौहान, डी.एस. (1966) – स्टेडिज इन द यूटिलाइजेशन ऑफ एग्रीकल्चरल लेण्ड, आगरा। शिवाला एण्ड कां.।

चौहान, टी.एम. (1987) : एग्रिकल्चरल न्योग्राफी : ए स्टडी ऑफ राजस्थान, जयपुर । एकेडमिक पब्लिशर्स।

दोई, आर.डी. (1978): एग्रिकल्चरल ज्योग्राफी, इश्यूज एण्ड एप्लीकेशन्स, नई दिल्ली : जायन पब्लिशिंग हाउस।

दुबे, आर. एस. (1978) : एग्रिकल्चरल ज्योग्राफी, इशयूज एण्ड एप्लीकेशन्स्, नई दिल्ली : जायन पब्लिशिंग हाउस।

गोविन्द, नलिनी (1986) :रीजनल परसपेक्टिक्स इन एग्रीकल्चरल डवलपमेन्ट, नई दिल्ली : पब्लिशिंग कम्पनी।

हुसैन, माजिद (1979) : एग्रिकल्चरल ज्योग्राफी (अवधारण), नई दिल्ली। इंटर इंडिया पब्लिकेशन्स ।

जैन, सी.के. (1988) पैंटर्नस ऑफ एग्रीकलचरल डवलपमेन्ट मध्य प्रदेश, नई दिल्ली। नोरथन बुक सेन्टर।

कोठारी, साधना (1999), एग्रीकल्चरल लैण्ड यूज एण्ड पॉपुलेशन ए ज्योग्राफिकल एनालिसिस, उदयपुर। शिवा पब्लिशर्स डिस्ट्रीब्यूटर्स।

कुमार, प्रमिला एवं श्री कमल शर्मा (1986) : कृषि भूगोल, भोपाल । मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, (चतुर्थ संस्करण।)

मॉरगन, डब्लू, बी. एण्ढड आर.जे.सी. मॉउटनख 1971) : एग्रीकल्चरल ज्योग्राफी लॅदन। मैथुन।

नूर मोहम्मद (सम्पादक) ज्योग्राफी लैण्ड यूज एण्ड प्लानिंग, परसपेक्टिवज़ इन एग्रीकलचरल, नई दिल्ली। कॉन्सेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी।

रैना, जे.एल. (1988) : ड्राईलैण्ड फारमिंग इन इण्डिया, जयपुर। पाइन्टर पब्लिशरस्।